गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य का

विशेष -अध्ययन

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की
पी.एच.डी. उपाधि के लिए
प्रस्तुत शोध - प्रबन्ध)

शोध - प्रबन्ध - 2004

निर्देशिका

डा. कुसुम गुप्ता

एम.ए. पी.एच.डी.
रीडर - हिन्दी विभाग
बुन्देलखण्ड महाविद्यालय
झाँसी
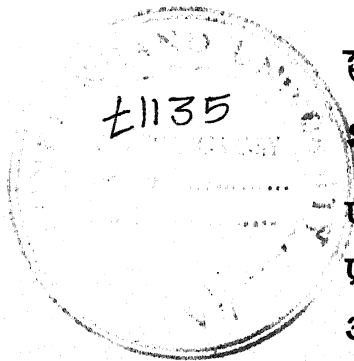
शोधार्थी

श्रीमती वन्दना गुप्ता

एम.ए.(हिन्दी) बी.एड.
प्रवक्ता - हिन्दी विभाग
आदर्श विद्यामन्दिर
बनारहॉट, जलपाईगुड़ी
(पश्चिम बंगाल)

प्रमाण पत्र

(1) यह प्रमाणित किया जाता है,कि शोधार्थी का कार्य मौलिक हैं।

(2) यह प्रमाणित किया जाता है,कि उसने यथोचित समय देकर मेरे निर्देशन में अपने शोध कार्य को पूर्ण किया।

(3) यह प्रमाणित किया जाता है,किशोधार्थी ने निर्धारित समय में अपना कार्य पूर्ण किया हैं।

Kusum Gupta

डॉ0 कुसुम गुप्ता
रीडर, हिन्दी विभाग
बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झांसी

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य का विशेष अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की पी०एच–डी० की उपाधि के लिये प्रस्तुत–शोध प्रबन्ध

(शोध दृष्टि से संत्याश के उद्‌घाटन का प्रयास)

शोध–प्रबन्ध

सन् 2004

वन्दना गुप्ता

शोधार्थी

श्रीमती वन्दना गुप्ता

एम०ए० हिन्दी बी०एड०

प्रवक्ता हिन्दी विभाग

आदर्श विद्या मन्दिर हाई सै० स्कूल

बनारहॉट, जलपाईगुड़ी (पश्चिम बंगाल)

निर्देशिका –

(डॉ०) कुसुम गुप्ता एम०ए० पी–एच० डी०

रीडर, हिन्दी विभाग

बुन्देलखण्ड महाविद्यालय झांसी

विषय अनुक्रमांणिका

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य का विशेष अध्ययन

पृ0स0

पहला अध्यायः— कथाकार गोविन्द मिश्र एवं कथा—साहित्य 3—65

(1)उपन्यास साहित्य— एक परिचय
(2) कहानी साहित्य— एक परिचय
(3) कथाकार की समकालीन परिस्थितियाँ
(4) मिश्र जी का व्यक्तित्व एव कृतित्व

द्वितीय अध्याय— मिश्र जी के कथा साहित्य का वस्तुविधान 66—179

(1) वस्तु विधान एव मिश्र जी के विचार
(2) उपन्यासो एव कहानियों की कथावस्तु
(3) कथानक मे वस्तु— विधान की सगति
(4) कथानक में इतिहास एवं कल्पना
(5) कथानक में आंचलिकता
(6) कथायोजना का वैशिष्ट्य

तृतीय अध्याय— मिश्र जी के कथा साहित्य की पात्र योजना और चरित्रांकन शिल्प 180—252

(1) पात्रों का वर्गीकरण—
(2) प्रमुख पात्र (1) नारी पात्र (2)पुरुष पात्र (3) बाल पात्र
(3) पात्र चयन में इतिहास एव कल्पना
(4) चरित्रांकन शिल्प

चतुर्थ अध्याय– मिश्र जी का कथा –साहित्य और देशकाल वातावरण 253–286

(1) कथा साहित्य की सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना
(2) कथा साहित्य की धार्मिक पृष्ठभूमि
(3) कथा साहित्य का राजनैतिक परिप्रेक्ष्य
(4) कथा साहित्य और प्राकृतिक चेतना
(5) कथा साहित्य और बुन्देली संस्कृति
(6) कथा साहित्य और युगबोध

पंचम अध्याय– मिश्र जी के उपन्यासों का शिल्प–सौष्ठव 287–326

(1) भाषा सौष्ठव
(2) शैली सौष्ठव
(3) कथोपकथन सौष्ठव
(4) शिल्प सौष्ठव का वैशिष्ट्य

षष्ठ अध्याय– मिश्र जी के कथा साहित्य का उद्देश्य 327–372

(1) कथा साहित्य की मूल संवेदना
(2) कथा साहित्य में निहित विचार
(3) कथा साहित्य की समस्यायें–समाधान
(4) उद्देश्य एवं आधुनिक बोध

सप्तम अध्याय– उपसंहार– विशिष्ट उपलब्धियाँ और उनका मूल्यांकन373–398

(1) कथा साहित्य की सारभूत अलोचना
(2) कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धियाँ
(3) कथा साहित्य में मिश्र जी का गौरवान्वित स्थान

8 शोध ग्रन्थ हेतु साक्षात्कार गोविन्द मिश्र से 399–402

प्राक्कथन

हिन्दी के आधुनिक कथा–साहित्य में मिश्र जी के उपन्यास और कहानियॉ अपना एक विशिष्ट स्थान रखती हैं,क्योंकि इसमें आजादी के पूर्व की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण हैं, इसके साथ ही आजादी के बाद के यथार्थ परिवेश के बहुआयामी चित्र उभरे हैं। इस समस्त अध्ययन में मिश्र जी द्वारा ग्रहण किए गये सामाजिक,राजनैतिक, आर्थिक व धार्मिक सन्दर्भो के गहन गर्भित विषय को शोध का विषय बनाया गया हैं, इसके साथ कथाकार की मातृभूमि बुन्देलखण्ड के समाज, संस्कृति की गहन पहचान, व बुन्देली जीवन में व्याप्त भयानकता, अमानवीयता और यांत्रणा को अभिव्यक्ति प्रदान की गयी हैं और स्पष्टतः यह सिद्व कर दिया गया है, कि कथाकार ने जिए और भोगे हुए जीवन सत्य को तथा स्वतन्त्रता के बाद बदली हुयी परिस्थितियों के यथार्थ को अपने कथा साहित्य में उभारा है। और वर्तमान युग की नवीन परिस्थितियों को दृष्टिगत कर रचना प्रकिया में परम्परागत स्थूल निकषों को अस्वीकार कर नवीन प्रयोग धर्मिता के स्वर बुलन्द किए गये हैं।

1. इस शोधग्रंथ के प्रथम अध्याय में हिन्दी के प्रथम मौलिक उपन्यास तथा मौलिक कहानी की चर्चा की गयी हैं। चौथे दशक से लेकर दसवें दशक के प्रमुख उपन्यासों और कहानियों की कथा वस्तु के माध्यम से कथा साहित्य के स्वरुप में आये बदलाव को उद्घाटित किया गया हैं,तथा इसके साथ ही कथाकार की समकालीन परिस्थितियों तथा उनके व्यक्तित्व और उनकी विभिन्न कृतियों पर प्रकाश डाला गया हैं।
2. द्वितीय अध्याय में मिश्र जी के कथा साहित्य के 'वस्तु –विधान पर विस्तार से चर्चा की गई हैं।
3. तृतीय अध्याय में मिश्र जी के कथा साहित्य के पात्र– योजना तथा चरित्रांकन शिल्प पर प्रकाश डाला गया हैं।
4. चतुर्थ अध्याय देशकाल और वातावरण के अर्न्तगत आलोच्यकाल में मिश्र जी की सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना, धार्मिक पृष्ठ भूमि, राजनैतिक परिप्रेक्ष्य, प्रकृतिक चेतना, बुन्देली संस्कृतिक तथा युगबोध को आधार बनाकर उनकी कृतियों का मूल्यांकन किया गया।
5. पंचम अध्याय में मिश्र जी के शिल्प सौष्ठव पर विचार पूर्वक विचार किया गया ।
6. षष्ठ अध्याय में मिश्र जी के कथा–साहित्य के कथा उद्देश्य तथा आधुनिक बोध की चर्चा की गई हैं।

7. सप्तम अध्याय उपसंहार के अर्न्तगत मिश्र जी के कथा साहित्य की सारभूत आलोचना के साथ–साथ कथा साहित्य में उनका गौरान्वित स्थान तथा उनकी विशिष्ठ उपलब्धियों के आंकलन का प्रयास किया गया।

प्रस्तुत अध्ययन में मिश्र जी के ग्रन्थों से मुझे जो अमूल्य सहायता प्राप्त हुई हैं उसके लिये सर्वप्रथम मैं उनके प्रति ही अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

प्रस्तुत अध्ययन के लिये आलोचकों, विद्वानों के ग्रन्थों से मुझे जो अमूल्य सहायता प्राप्त हुई सर्वप्रथम मैं उन सुधी जनों के प्रति अपना आभार ज्ञापित करती हूँ,जिनके विचार बिन्दुओं सूत्रों की सहायता से मेरा अध्ययन आगे बढ़ सका।

आदरणीय गुरुमाँ डॉ0 कुसुम गुप्ता के प्रोत्साहन व मार्गदर्शन के बल पर मैं आज तक के अपने अनुसंधान मार्ग में आगे बढ़ सकी हूँ, उनके प्रोत्साहन व मार्गदर्शन के बिना मेरी लेखनी दिग्भ्रमित ही रहती।

डॉ0 उर्मिला शिरीष डॉ नर्भदा प्रसाद गुप्त (अब–स्वर्गीय) जी से समय–समय पर मुझे ठोस सहयोग एवं प्रेरक प्रोत्साहन भी मिला, उनके इस सहयोग और समर्थन को शब्दों में वर्णित कर मैं उनकी गरिमा को बेमानी नहीं करना चाहती।

मेरे माता–पिता श्रीमती शकुन्तला गुप्ता व श्री हरिश्चन्द्र गुप्ता,मेरे सास–ससुर श्रीमती राजाबाई, श्री रामकिशन गुप्ता का स्नेह और प्रोत्साहन मुझे सदैव मिलता रहा। मेरे पतिदेव हरीश स्नेह भरा साथ और सहयोग मेरा संबल बना। मेरे बच्चों चि0 कंचन व चि0 रोहित का योगदान मुझे स्वीकार करना ही होगा।

इसके साथ ही मेरे पूर्व सहकर्मी मित्र कु0 सन्तोष कुमार की मैं आभारी हूँ। जिसने मेरी परिस्थितिवश सुप्त पड़ी पी0एच0डी0 करने की आकांक्षा को पुनः जीवित कर मेरे कार्य में मुझे पूर्ण समर्थन और सहयोग प्रदान किया।

जिला पुस्तकालय झाँसी, हिन्दी हिमाचल भवन पुस्तकालय दाजिर्लिंग अलावा निम्नलिखित संस्थानों के पुस्तकालयों से भी सामग्री प्राप्त करने में सहायता प्राप्त हुई, केन्द्रीय तिब्बती विद्यालय दार्जिलिंग,केन्द्रीय तिब्बती विद्यालय सुनादा,सन्त जोजेफ कॉलेज दार्जिलिंग। मैं उन संस्थानों के प्रमुखों को भी आभार ज्ञापित करती हूँ।

श्री गोपाल नन्द सक्सेना और कु0 रचना शर्मा ने इस शोधग्रन्थ के मुद्रण का भार संभालकर इस क्षेत्र की परेशानियों से उबारने में मुझे जो योगदान दिया। मैं उनकी आभारी रहूँगी। हो सकता है,मेरे इस प्रयास में कुछ खामियाँ हों, विद्वत्जनों के सुझाव मेरे पाथेय बनेगें।

उपन्यास एक परिचय

आधुनिक गद्य साहित्य की विद्याओं में उपन्यास जीवन के सभी पक्षों को उद्घाटित करने वाली सर्वाधिक सशक्त और लोकप्रिय विद्या हैं। लगभग सौ वर्षो की अपनी अन्तहीन यात्रा में हिन्दी उपन्यास ने कई सोपानों और पड़ावों को पार किया हैं,और साहित्य के विकास के चरम–बिन्दुओं को छूने का प्रयास किया हैं। समकालीन युग तथा उसके परिवेश के समस्त सामाजिक,राजनैतिक,आर्थिक,धार्मिक परिप्रेक्ष्यों के अत्यन्त प्रभावशाली यथार्थ व प्रामाणिक दस्तावेज इसने प्रस्तुत किये हैं। मानव जीवन और उसके परिवेश में निरन्तर परिवर्तन की स्थितियां आती रही हैं और उपन्यास नये परिवेशों,यथार्थ बोधों, आधुनिक बोधों के अनछुए पहलुओं को उदघाटित करने के लिये अग्रसर होता रहा हैं।

उपन्यास साहित्य की विकास यात्रा

गद्य साहित्य की यह विद्या निम्नलिखित चरणों से गुजरकर निरन्तर विकासमान हैं ➡

पहला चरण: चौथे दशक तक के कुछ उपन्यास और उपन्यासकार ➡

उपन्यास साहित्य के इतिहास में हिन्दी का प्रथम उपन्यास किसे माना जाए? यह एक विवादास्प्रद प्रश्न हैं। कुछ विद्वानों ने रचनाकाल की दृष्टि से विचार किया हैं, तो कुछ ने औपन्यासिक गुणों के आधार पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। अधिकांश समीक्षकों ने लाला निवास कृत 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना हैं। राम दरश मिश्र ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष ' में 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास मानते हुए लिखा हैं ''कि 'परीक्षा गुरु' हिन्दी में वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से उपन्यास साहित्य की शुरुआत करता हैं; जब तक अन्य कोई कृति प्रकाश में नहीं आती,तब तक उसे हिन्दी के प्रथम उपन्यास के गौरव से वंचित नहीं किया जा सकता हैं।'' (1)

अतः विवादों के बावजूद लाला श्री निवास दास कृत 'परीक्षा गुरु' सन्(1882) को हिन्दी का पहला उपन्यास माना जा सकता हैं। इसी काल में मनोरंजन प्रधान,तिलस्मी,ऐयारी और जासूसी उपन्यास भी लिखे गये,परन्तु हिन्दी में उन्हें कोई उल्लेखनीय स्थान नहीं मिल सका। फिर भी इन उपन्यासों ने लोगों को हिन्दी सीखने के लिये प्रेरित किया । अगर इन कृतियों को तत्कालीन परिवेश परखा जाए तो हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास को नयी दिशा प्रदान की। उन्होंने अपने युग की समस्याओं को उनके वास्तविक स्वरुप में उदघाटित किया। उनका प्रत्येक उपन्यास अपने युग के समाज की समस्याओं पर प्रकाश डालता हैं। 'सेवासदन'(1918) के प्रकाशन से इनका पर्दापण हिन्दी उपन्यास में हुआ। इसके बाद इन्होंनेप्रेमाश्रय(1922), निर्मला(1923), रंगभूमि(1924–28), कायकल्प(1928), प्रतिज्ञा(1929), गबन(1930),गोदान(1936),और मंगलसूत्र(1936) अपूर्ण इत्यादि उपन्यास लिखें।

सेवासदन में इन्होंने वेश्यावृत्ति,दहेजप्रथा ,'प्रतिज्ञा' में विधवा विवाह 'निर्मला' में बेमेल विवाह,गबन में आभूषण प्रियता,प्रर्दशन प्रयिता,'कायाकल्प' में भोगविलास प्रवृत्ति, 'रंगभूमि' में अवैध
रुप से जमीन हड़पने,खेती के स्थान पर मिलकारखाने लगाने,'कर्मभूमि'में राजनीति जागरण,'प्रेमाश्रय' में जमींदारी प्रथा का उन्मूलन आदि पर प्रकाश डाला हैं। इनके कुछ उपन्यास जिनमें ''प्रतिज्ञा'', 'निर्मला' सेवासदन,गबन,प्रेमाश्रय,कायाकल्प और कर्मभूमि

इत्यादि में उठाई गयी समस्याओं का हल गॉधीवाद में खोजा गया हैं। गोदान, में इन्होंने किसानों के जीवन के समस्त पक्षों को उभारा हैं। इसी कृति के कारण इन्हें किसानों का वकील कहा गया। रामदरश मिश्र ने लिखा हैं'कि ''प्रेमचन्द ने तो सामाजिक यथार्थ की पहचान को उत्कर्ष पर पहुँचा दिया। उन्होंने एक ओर अपने समय के समाज की पूरी अर्न्तरचना को उभारा,दूसरी ओर उसके सन्दर्भ मे मानव मन की पहचान की। व्यक्ति और समाज एक दूसरे के परिपेक्ष्य में जटिल और बड़ें यथार्थ का उदधाटन करने में समर्थ हुए।''[2]

चतुरसेन शास्त्री नें हृदय की परख(1918),'व्याभिचार'(1924),ख्बास का विवाह(1932),अमर अभिलाषा(1933),आत्मदाह(1936),मन्दिर की नर्तकी (1937)रक्त की प्यास(1939), वैशाली की नगरवधू (1940) इत्यादि सामाजिक समस्याओं को उदघाटित करने वाले उपन्यास लिखें हैं।

भगवती चरण वर्मा की 'पतन (1927), चित्रलेखा(1934),तीन वर्ष (1936) इनकी प्रारम्भिक कृतियां हैं। चित्रलेखा इनकी प्रौढ़ कृति हैं। यह उपन्यास ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर निर्मित हुआ हैं।

भगवती प्रसाद वाजपेयी ने 'मीठी चुटकी'(1927),'अनाथ पत्नी'(1928),मुस्कान(1929),त्यागगमयी (1932),साधना(1936),पिपासा (1937),दो बहनें (1940) इत्यादि उपन्यासों में मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन की समस्याओं को उभारा हैं। तथा काम,प्रेम,विवाह,यौन विकृतियों,काम कुंठाओं को अधिक सूक्ष्मताओं के साथ उकेरा हैं।

जी0पी0 श्रीवास्तव हास्य प्रधान उपन्यासों में 'भडामसिंह शर्मा'(1919),' प्राणनाथ'(1923), 'गुदगुदी'(1927),'लतखोरी लाल'(1931), 'दिलजले की' आत्मकथा' (1932) 'स्वामी चौपटानंन्द'(1936) उल्लेखनीय हैं।''साधारण होते हुए भी ये उपन्यास हिन्दी में हास्य के अभाव को किसी सीमा तक पूरा करते हैं।''[3] पांडेय बेचन शर्मा उग्र ने सामाजिक व्यवस्था के दोषों पर गम्भीर प्रहार करने वाले कुछ उपन्यास लिखे हैं,जिनमें प्रमुख उपन्यास– 'चन्द हसीनों के खतूत(1927), 'दिल्ली का दलाल'(1927), चाकलेट(1927), 'चुम्बन'(1928), बुधुआ की बेटी(1928), 'शराबी'(1930), 'घन्टा'(1937), सरकार तुम्हारी ऑखों में (1937) हैं,ये उपन्यास समाज सुधार की भावना से प्रेरित हैं। वृंदावनलाल वर्मा इनके सामाजिक,ऐतिहासिक उपन्यास बुन्देलखण्ड की धरती को उकेरते हैं–'गढ़ कुण्ड्रार' (1928),'संगम'(1928),प्रत्यागता(1929),'लगन'(1929),'विराटा की पदमिनी'(1930),'प्रेम की भेंट'(1931)'कुण्डीचक्र'(1932) इत्यादि उपन्यास इन्होंने लिखें। बुन्देलखण्ड की पृष्ठभूमि में उन्होंने सामाजिक आर्थिक,राजनीतिक परिस्थितियों को उभारते हुए भारतीय सामाजिक संरचना को प्रकारांतर से दर्शाया हैं। जयशंकर प्रसाद ने अपने उपन्यास 'कंकाल' (1929) में अवैध सम्बन्धों से उत्पन्न अवैध सन्तानों की कथा को

अपना कथ्य बनाया हैं। 'कंकाल' प्रसाद और उनके काल की कृतियों के बीच यथार्थ का एक नया आयाम लेकर उभरता हैं। इसे शुद्ध यथार्थ वादीकृति कहा जा सकता हैं।इसमें समाज में व्याप्त दार्शनिक और धार्मिक विसंगतियों की जटिल कुरुपतांओं को उघाड़ा गया हैं। 'तितली' में इन्होंने भारतीय ग्राम जीवन के सजीव चित्र खींचे हैं। कृषि परिवेश में व्याप्त दुख–दर्द,आशा निराशा अभाव और संधर्ष के बीच भारतीय स्त्री की महत्ता का चित्रण किया जाता हैं। 'इरावती' इनका अधूरा उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में उन्होंने सामाजिक यथार्थ का उद्घाटन किया हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने अपने उपन्यासों में नारी की पीड़ा को मार्मिकता के साथ चित्रित किया हैं। उनके उपन्यास 'अप्सरा'(1931), 'निरुपमा'(1931), 'प्रभावती'(1936), 'अलका'(1933) सभी में नारी की व्यथा कथा हैं। कहीं–कहीं उनके उपन्यास में यथार्थ पुट भी झलकता हैं।

विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक ने 'भिखारिणी '(1929) और 'मॉ (1929) उपन्यास लिखें। इनके उपन्यास चरित्रप्रधान हैं। भिखारिणी में इन्होंने 'भिखारिणी' के जीवन को कई रुपों और स्थितियों में उभारा हैं। तथा मां में एक आदर्श मां को प्रस्तुत किया है जो अभाव ग्रस्त होकर भी अपने पुत्र को योग बनाती हैं। शर्मा जी सुधारवादी लेखक हैं,उन्होंने उपन्यास के पात्रों के माध्यम से सामाजिक विकृतियों पर क्षोम व्यक्त किया हैं। जैनेन्द्र कुमार ने नारी मनकी विडम्बनाओं,विवशताओं और उलझनों का स्वाभाविक चित्रंण किया हैं। 'परख'(1929) में उन्होंने नारी को सहजता, सरलता, सात्विकता और पुरुष की प्रेरक शक्ति के रुप में चित्रित किया हैं। सुनीता (1936) उनके श्रेष्ठ उपन्यासों में से है। 'त्यागपत्र' (1937) में नारी जीवन के अनेक पक्षों को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया हैं। "जैनेन्द्र ने मृणाल के माध्यम से भारतीय विशेषकर हिन्दू समाज की रीति–नीति,उसके व्यभिचार,उसके पाखण्ड और उसकी आतंककारी मानसिकता की चिन्दियां उधेड़ी और उसके साथ–साथ पूरे समाज को कठघरे में लाकर खड़ा कर दिया।"[4] चिन्तन की एकांगिता, असंगति और नकारात्मकता के बावजूद भी यह महत्वपूर्ण कृति हैं।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने 'विदा' (1927) में नारी के विविध रुप चित्रित किया हैं 'विजय' (1938) में विभिन्न वर्गो की नारियों की सामाजिक आर्थिक स्थितियों के माध्यम से पुरुष की सारी प्रवृत्तियों को दृष्ट्गिोचर किया गया हैं तथा 'विकास' (1938) में लेखक ने तत्कालीन समाज को चित्रित किया हैं।

राधिका रमण प्रसाद सिंह ने 'तरंग'(1921),'रामरहीम'(1936),'सावनी सभा'(1938),'गांधी टोपी'(1938),'पुरुष और नारी'(1940) इत्यादि सामाजिक समस्याओं को विषय–वस्तु बनाकर उपन्यास लिखें हैं। राम रहीम इनका प्रसिद्ध उपन्यास हैं। ऋषभ चरण जैन

अपने उपन्यासों में सामाजिक बुराइयों पर प्रकाश डाला हैं। इनके उपन्यास दिल्ली का व्यभिचार (1928), 'बुर्केवाली'(1930), 'चांदनी रात'(1931), 'दुराचार के अड्डे'(1936), 'चम्पाकली'(1937), 'बुरदा फरोश'(1938), 'तीन इक्के'(1939) हैं।

श्रीनाथ सिंह ने 'जागरण' (1937),'उलझन'(1938) उपन्यास लिखे इनके उपन्यासों में नैतिकता का अभाव हैं। उपेन्द्रनाथ अश्क ने सितारों के खेल उपन्यास के माध्यम से उपन्यास साहित्य में पदार्पण किया । उषा देवी मित्र ने अपने उपन्यासों में नारी को उसकी स्वाभाविकता में दर्शाया हैं। इनके उपन्यास 'वचन का मोल'(1936),जीवन की मुस्कान(1939),'पथचारी'(1940) हैं।

सियाराम शरण गुप्त ने 'गोद'(1933),'अन्तिम आकांक्षा'(1934),'नारी'(1937) इत्यादि उपन्यास लिखें हैं। सामाजिक यथार्थ की परम्परा में आने वाले ये उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

राहुल सांकृत्यायन ने उपन्यासों में मार्क्सवादी विचारधारा का प्रवृत्तन किया। उन्होंने सामाजिक विषमता का कारण आर्थिक विषमता को माना। इस युग दशक में उन्होंने 'विस्मृति के गर्भ में'(1937),'सोने की ढाल' (1937),'जादू का मुल्क'(1938),'जीने के लिये'(1940) लिखे।

चण्डी प्रसाद हृदयेश के 'मनोरमा'(1928),'मंगलप्रभात'(1926),प्रकाश में आए। 'मनोरमा' उपन्यास में त्यागवादी और भोगवादी दो विरोधी प्रवृतियों को कथा का केन्द्रबिन्दु बनाया गया हैं।

इस दशक के अन्य उपन्यासों में गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश के 'प्रेम की पीड़ा (1925),'पाप की पहेली'(1929),'बाबूसाहब'(1930) 'बहतापानी'(1934),'नादिरा'(1940)हैं।इनके उपन्यास भाषा की सहज़ता,और सरलता के कारण लोकप्रिय हुए। गोविन्द बल्लभ पंत ने 'प्रतिमा'(1934),'मदारी'(1934),'जूनिया'(1938) में व्यक्ति चरित्र के माध्यम से स्वस्थ सामाजिकता का आग्रह किया हैं। जगदीश झां 'विमल' ने 'खरा सोना'(1921),'जीवन ज्योति'(1922),'आशा पर पानी'(1925),'केशर'(1926),'सरिता'(1937),'गरीब की मार'(1938) इत्यादि उपन्यासों में सामाजिक जीवन को उसके यथार्थ में उभारा हैं। देवनारायण द्विवेद्वी ने 'कर्तव्याधात' (1923),'प्रणय'(1935),'पश्चाताप'(1937) में सामाजिक यथार्थ को अंकित किया हैं। परिपूर्णानन्द वर्मा ने 'प्रेम का मूल्य(1927),मेरी आह(1932) उपन्यास लिखें। द्वारकाप्रसाद ने 'सुनील एक असफल आदमी' में प्रमुख पात्रा का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं।श्रीराम बेरी ने 'प्यार की जीत'(1927), ने 'सत्यानंद' (1924),'शुक्ल और सोफिया'(1929),कार्तिकेस चरण ने 'प्रेम निकुंज'(1936) 'मोहन लाल महतों ने 'भाई बहन'(1940),शिवपूजन सहाय ने देहाती दुनियां'(1926) सर्वदानन्द वर्मा का 'प्रश्न'(1938) इत्यादि उपन्यास लिखें।

इस दशक के उपन्यासों पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता हैं कि इस दशक के उपन्यासकारों ने सामाजिक समस्याओं पर गम्भीरता से विचार किया और विधवा विवाह, बाल विवाह, बेमेल विवाह,दहेज प्रथा, जातिभेद, छूआछूत, धार्मिक आडम्बर पाखण्ड,कर्मकाण्ड आदि को अपना विवेच्य विषय बनाया। सामाजिक परिदृश्य के साथ–साथ राजनीतिक परिदृश्य को भी चित्रित किया तथा जीवन की अनेक स्थितियों,घटना प्रसंगों पर अपनी–अपनी लेखनी चलाई। पारिवारिक रिश्तों के बीच नारी के भव्यतर रुप को उभारा उसके आर्थिक दृष्टि से जागरुक नारी के आत्मनिर्भर रुप को कम उभारा गया। नैतिकता के सन्दर्भ में ही नर नारी के यौन सम्बन्धों की चर्चा की गयी।

दूसरा चरणः पॉचवें–छठे दशक के कुछ उपन्यास और उपन्यासकार– इन दशकों में वे ही उपन्यासकार सक्रिय रहे जो पूर्व के दो दशकों में सर्जनारत थें। कुछ नये उपन्यासकारों के भी महत्वपूर्ण उपन्यास सामने आए। इन दशकों के उपन्यासकारों में सामाजिक और राजनीतिक चेंतना की सम्पृक्ति सधनतर होती दिखाई देती हैं–

वृन्दावन लाल वर्मा ने इस दशक में सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों प्रकार के उपन्यास लिखे,परन्तु उन्हें अधिकाधिक सफलता ऐतिहासिक उपन्यासों में मिली। इनके अधिकांश उपन्यास बुन्देलखण्ड की सामाजिक और आर्थिक चेतना को उभारते हैं। जिनमें 'कभी न कभी'(1945), 'झांसी की रानी'(1946), 'मुसाहिबज्'(1946), 'कचनार'(1947), 'अचल मेरा कोई (1948), 'सोना'(1952), 'अमरबेल'(1953), 'टूटे कॉटे'(1954), 'अहिल्याबाई'(1955), 'माधोजी सिंधियां'(1956), 'भुवन विक्रम'(1957), 'उदयकिरण'(1960) और 'आहत'(1960) इत्यादि उल्लेखनीय हैं। इनके ऐतिहासिक उपन्यासों को इतिहास के मानदण्डों में नहीं परखा जाना चाहिए। इन्होंने अपने उपन्यासों में चिरन्तन उन्मुक्त भावों के चित्र दिए तथा प्रेम उदात्त और कोमल भावों की व्यजंना की हैं।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक राजनीतिक धटना चक्रों तथा सामाजिक जीवन में हो रहे सम्बन्धों को परिलक्षित किया हैं तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सामाजिक जीवन मूल्यों में हो रहे ह्रास को उभारा हैं। इनके उपन्यास 'बयालीस' (1947) में भारत छोड़ो आन्दोलन और अंग्रेजों के दमनकारी कार्यो का चित्रण हैं 'बेकसी का मजार'(1957) उपन्यास में प्रथम स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि को उभारा गया हैं। 'विषमुखी'(1958),'बेदना'(1959) तथा 'विश्वास की बेदी पर (1959) लिखे इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। विश्वास की बेदी पर 'उपन्यास में चीन के भारत पर आक्रमण के पूर्व दिल्ली में फैले षड़यंत्र के जाल का पर्दाफाश किया गया हैं। भगवती प्रसाद वाजपेयी ने अपने उपन्यासों में मध्यवर्ग के जीवन की समस्याओं तथा नारी जीवन की विडम्बनाओं पर प्रकाश डाला हैं।इनके उपन्यासों में 'गुप्तधन'(1942)'सूनी

राह'(1949),'चलते–चलते(1951), 'यथार्थ से आगे'(1952),' मनुष्य और देवता'(1954) , हिलोर'(1955), 'भूदान'(1955), 'धरती की सांस(1954), 'उतार चढाव'(1956) 'विश्वास का बल'(1956), 'रात और प्रभात'(1956),'एक प्रश्न'(1956), 'त्यागमयी'(1958),'पाषण की लोच'(1959), दशर और धुंआ'(1960) इत्यादि उल्लेखनीय हैं।
राधिकारमण प्रसाद सिंह प्रेमचन्द की परम्परा के लेखक माने जाते हैं। अपनी रचनाओं में इन्होंने भारतीय और पाश्चात्य जीवन शैलियों में अन्तर को दर्शाते हुए उदात्त मूल्यों की हिमायत की हैं। 'टूटा तारा'(1951),देव और दानव'(1945),'नारी एक पहेली'(1950),'पूरब और पश्चिम'(1951),'सूरदास'(1950),'चुम्बन और कांटा'(1956),इन दो दशकों मे लिखे गये इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

जैनेन्द्र कुमार ने दर्शन और मनोविज्ञान के ताने बानों से अपने उपन्यास बुने हैं और नर–नारी के सम्बन्धों को रहस्यमय रुपों में उदधाटित किया हैं इन दशकों में लिखे जाने वाले इनके उपन्यास 'सुखदा'(1952),'विवर्त'(1953),'व्यतीत' (1953) प्रमुख हैं।

इलाचन्द्र जोशी ने अपने उपन्यासों का विवेच्य विषय कामकुंठाओं को बनाया हैं। इनके उपन्यासों के पात्र सामाजिक परिस्थितियों,समस्याओं और हलचलों के बीच भी अपनी यौन–कुंठा, हीनता और अहं को लिये चलते हैं। इनके उपन्यास 'सन्यासी'(1942) में यौन भावना का मनौवैज्ञानिक विश्लेषण हैं। 'पर्दे की रानी'(1942),में एक वेश्या पुत्री की ओर बाप और बेटा दोनों के आकृष्ट होने की कथा हैं। 'प्रेत और छाया'(1945), में हीनता–ग्रन्थि की भंयकर प्रतिकियाओं को दिखाया गया हैं। निर्वासित (1946) में दमित वासनाओं के कारण स्वाभाविक विकृतियों पर प्रकाश डाला गया हैं।'मुक्तिपथ'(1950),में दमित वासनाओं,,हीनता बोध कुठांओं को उभारकर उससे मुक्ति दिलाई गयी हैं। 'सुबह के भूले'(1951) उपन्यास स्वाभाविक विकृतियों, कुठांओ, हीन, भावनाओं, विसंगतियों के बीच व्यक्ति के विचित्र आचरण की ओर प्रकाश डालता हैं। 'जिप्सी'(1952) वृहद् उपन्यास हैं। इसमें सामाजिक भावना और मनोविश्लेषणवाद का समन्वय हैं। 'जहाज का पंछी'(1956) भी लेखक की प्रौढ़ कृति हैं। भगवती चरण वर्मा ने समाज में आए परिवर्तनों को अपने उपन्यासों में लक्षित किया हैं। 'टेड़े मेड़ें रास्ते'(1946) में इन्होंने पिता–पुत्र के बीच मत भेदों को राजनीतिक धटना चकों की प्रस्तुति के माध्यम से उभारा हैं। 'आखिरी दाव' में फिल्म के आर्कषण के कारण भागकर बम्बई आई युवतियों की व्यथा –कथा को अपनी विषय वस्तु बनाया गया हैं। 'अपने अपने खिलौने' (1957)में सामंती संस्कारों के भोग विलास को दर्शाया हैं। 'भूले बिसरे चित्र'(1959) में संयुक्त परिवार के टूटने विखरने की कथा के माध्यम से 1850 से लेकर 1930 तक भारत की राजनीतिक गतिविधियों और भारतीय समाज के बदले मूल्यों,सम्बन्धों ,द्वन्द्वों को उभारा गया हैं। 'वह फिर नहीं आई'(1960) लघु उपन्यास में भारत पाक विभाजन के फलस्वरुप समाज की कूरताओं का

साहसपूर्ण सामना करने वाली पात्र के संघर्ष को चित्रित किया गया हैं। वर्मा जी अपनी किस्सागोंई शैली के लिये प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपनी इस शैली में सामाजिक परिवेश में व्यक्ति के स्वभाव का प्रभावशाली चित्रण किया हैं।

यशपाल के उपन्यासों की शैली भी किस्सगोई हैं। इनके उपन्यास 'दादा कामरेड'(1941) में इन्होंने नई परिस्थिति के बदलती करवटों और कसमसाती ऐतिहासिक चेतना को प्रस्तुत किया हैं। तथा भिन्न–भिन्न संस्कारों और भिन्न प्रकृति की नारियों के माध्यम से सामाजिक जागृति को उभारते हुए नारी समस्या पर विचार किया हैं। 'देशद्रोही'(1943)में राजनीतिक चेतना का प्रतिपादन हैं। 'दिव्या'(1945) में मार्क्सवादी विचारधारा का प्रतिपादन बौद्धकालीन राजनीतिक प्रसंगों के माध्यम से किया गया हैं। 'पार्टीकामरेड' में भी राजनीतिक विचारों का प्रतिपादन हैं। 'मनुष्य के रुप में प्रेम को केन्द्र बिन्दु बनाकर मनुष्य के अनेक रुपों को उद्घाटित किया गया हैं। 'झूठा–सच'(1958–60) में त उपन्यास में भारत के विभाजन की पूर्वपीठिका,विभाजन की विभीषिका और उसके प्रभाव का चित्रण हैं। यशपाल जी के इस उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए उपेन्द्र नाथ अश्क ने अपने उपन्यासों में निम्नमध्यवर्ग के जीवन को उभारा हैं।'गिरती दीवारें'(1947) में निम्नमध्यवर्ग की आर्थिक विवशताओं और काम कुंठाओं तथा सामाजिक रुढ़ियों को उभारा गया हैं तथा सामाजिक रुढ़ियों और कुरीतियों की कड़ी आलोचना की गई हैं। 'गर्मराख' इनका उल्लेखनीय उपन्यास हैं। बड़ी–बड़ी आंखें(1953) में आश्रमों या सर्वोदयी संस्थाओं की विसंगतियों को उभारा गया हैं। 'पत्थर अल पत्थर 'में निम्नवर्ग के जीवन के संघर्ष को उभारा गया हैं।

अमृतलाल नागर के उपन्यास 'महाकाल' (1947) में बंगाल के अकाल में दुर्भिक्ष से पीड़ित पात्रों का चित्रण हैं। 'सेठ बांकेलाल'(1955) में हास्य व्यंग्य प्रसंगों के माध्यम दो मित्रों की कहानी कही गयी हैं। 'बूंद और समुद' (1956) उपन्यास में बूंद और समुद्र के माध्यम से व्यक्ति और सामाजिक जीवन को उद्घाटित किया गया हैं।

'शतरंज के मोहरे' (1959),में 1800 के आस–पास की लखनबी नबावी व्यवस्था का चित्रण हैं। 'सुहाग के नूपुर' में (1960) भी तमिल महाकवि इंलगोवन के महाकाव्य 'शिलापदिगारम्' की कथा को उद्घाटित किया गया हैं। अज्ञेय का शेखरः एक जीवनी(दो भाग 1941–1944) में लिखा गया उन्यास हैं, जो जीवनी शैली में लिखा गया हैं। इस उपन्यास के प्रमुख पात्र शेखर का व्यक्तित्व अनेक व्यक्तित्वों के सम्पर्क में आकर उनके घात–प्रतिघात से प्रभाव ग्रहण कर विकसित होता चलता है, और उसकी संवेदनाएँ नये–नये आयामों को छूती हैं। अपने विशाल कलेवर और बहुआयामी रुप और श्रेष्ठतम् कृति होने के बावजूद भी यह अधूरी रचना मानी जाती है। 'नदी के द्वीप'(1951) प्रतीकात्मक उपन्यास हैं। इसमें व्यक्ति द्वीप का और नदी समाज का प्रतीक हैं।

रांगेय राघव एक सामाजिक चिन्तन लेखक हैं। इन्होंने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक,सामाजिक कथानकों के माध्यम से सामाजिक जीवन की समस्याओं पर प्रकाश डाला हैं। इस दशकों में लिखे गये उपन्यासों में 'धरौदे'(1941),'विवादमठ'(1946),'मुर्दो का टीला'(1948),'चीवर'(1951) 'हुजूर' (1952) 'काका'(1953),'अधेरे की भूख'(1955) 'सीधा–सादा रास्ता'(1955), 'बोलते खण्डहर'(1955) 'रत्ना की बात'(1956),'यशोधरा जीत'(1956),'लोई का ताना'(1956),'लरुमा की आंखें'(1957),'बौने और धायल फूल'(1957),'कब तक पुकारु'(1958),'पक्षी और आकाश'(1958),'जब आवेगी काल घटा'(1958),'बन्दूक और वीणा'(1958),'राह न रुकी'(1958),'राई और पर्वत'(1958),'पॉच गधे'(1960) प्रमुख हैं। 'कब तक पुकारु','मुर्दो का टीला', 'सीधा–सादा रास्ता' इनकी उल्लेखनीय कृतियॉ हैं। 'कब तक पुकारु' उपन्यास में भरतपुर के नटों के जीवन को उभारा गया हैं। मुर्दो का टीला' में मोहन जोदड़ों की संस्कृति और सभ्यता को आधार बनाया हैं।

नागार्जुन ने आंचालिक उपन्यास लिखे हैं। इन्होंने अपने उपन्यासों में मिथिला प्रदेश के जीवन,आचार,विचार संस्कार,रीति रिवाज अन्धविश्वासों को अपनी विषय वस्तु बनाया हैं। 'रति नाथ की चाची'(1949) 'बलचनमा'(1952),नई पौध(1953),'बाबा बटेसर नाथ' (1954),दुखमोचन(1957),वरुण के बेटे (1957),कुंभीपाक(1960) इत्यादि महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। 'बलचनमा'इनका बहुचर्चित उपन्यास हैं। इसमें 'बलचनमा' नामक निम्नवर्गीय कृषक पुत्र की व्यथा–कथा है 'बलचनमा' में सामन्ती शोषण के प्रति जो विद्रोह हैं वह मानसिक स्तर को छोड़कर सन्देह और सशस्त्र होते जाने का द्योतक हैं। ' बलचनमा' को 'गोदान'के गोबर का विकसित रुप कहा गया हैं।[5] वास्तव में इस उपन्यास में किसान का दुख–दर्द और सधंर्ष का चित्रण हैं। 'बलचनमा सामन्ती साजिशों से धराशायी होने के बावजूद भी लड़ने का हौसला रखता हैं।

फणीश्वरनाथ 'रेणु' मैला आंचल (1954) प्रसिद्ध आंचलिक उपन्यास में लेखक ने पूर्णिया जिले के एक गॉव के माध्यम से गॉवों में व्यापक बढ़ती जा रही राजनीतिक चेतना को दर्शाया हैं।लेखक ने अपनी व्यंग्य शक्ति से प्राचीन और नवीन के संधर्षो,राजनीति धर्म और समाज की नयी–पुरानी मर्दायाओं संघर्षो तथा इनके बीच उलझते–सुलझते अर्न्तविरोधों को चित्रित किया हैं। 'परती परिक था'(1957), इनका दूसरा महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। जिसमें इन्होंने बिहार के एक गॉव परानपुरा को उकेरा है। बंजर भूमि को प्रतीक बनाकर लेखक ने इसमें मानवीय मूल्यों को प्रश्रय देने में मानवता का कल्याण समझा हैं।

राहुल सांकृत्यायन ने 'सेनापति'(1942),'जय यौधेय'(1944),शैतान की ऑखें (1945),किन्नरों के देश में (1948)'मधुर स्वप्न'(1950) 'राजस्थनीय रनिवास'(1953),इनके

इन दशकों के उल्लेखनीय उपन्यास हैं। सिंह सेनापति इनका प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इसमें बौद्ध कालीन भारत के ऐतिहासिक प्रसंगों के माध्यम से साम्यवादी विचारधारा का प्रतिपादन हैं।

भैरव प्रसाद के 'मशाल (1951),'गंगा मैया'(1953),'सती मैया का चौरा' (1959),'आदमी और जंजीरें उल्लेखनीय उपन्यास हैं। 'सती मैया का चौरा' उपन्यास में समाज की विसंगतियों और अमानवीय नग्नताओं पर प्रकाश डाला गया हैं।

'पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र' ने 'जीजीजी'(1955),'कला का पुरस्कार'(1955)'फागुन के दिन चार' उपन्यास लिखें। इन्होंने अपने उपन्यासों में कुछ ऐसे चित्र दिए हैं, जो अश्लील और फूहड़ कहे जा सकते हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेद्वी ने 'वाणभट्ट की आत्मकथा'(1946) उपन्यास लिखा ,विशिष्ट शैली में लिखा गया यह ऐतिहासिक उपन्यास हर्षकालीन भारतीय समाज पर प्रकाश डालता हैं, तथा राज परिवेश की विंसगतियों और कुरुपताओं को उधाड़ता हैं। डॉ० देवराज ने 'पथ की खोज' (1951),'बाहर भीतर'(1954),रोडे और पत्थर(1958),अजय की डायरी (1960)उपन्यास लिखें। इन्हें मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार माना जाता हैं।

मन्मथनाथ गुप्त ने कान्तिकारियों के जीवन को उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया हैं। 'सुधार'(1946), जिच(1946), दुश्चरित्रा(1949), 'अवसान'(1950) अन्धेरनगरी(1951), 'रक्षक–भक्षक'(1952) रैन अन्धेरी (1959), 'अपराजिता'(1960) और 'रंगमंच'(1960) इत्यादि इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

राजेन्द्र यादव ने अपने उपन्यास 'उखड़े हुए लोग'(1956) में स्वतन्त्रता के बाद आयी कांग्रेसी नेताओं की अवसरवादिता ,धूर्तता, कूरता और पॉखण्डता का चित्रण किया हैं। यह उपन्यास में कहीं –कहीं इनका चिन्तन इनकी सृजन प्रकिया को अवरुद्ध करता हैं। इसका कारण यह है "कि यादव की रचना प्रक्रिया दो पाटों में विभाजित हैं। वह वैयक्तिक अनुभूतियों को जब सामाजिक चिन्तन के चौखटे में फिट करना चाहते हैं तब इनमें मेल नहीं बैठ पाता। इससे सृजन –प्रकिया बाधित होने की गवाही देने लगती हैं।"[6] फलस्वरुप इनकी अनुभूतियों और चिन्तन में तारतम्य का अभाव हो जाता हैं। इन्होंने अपने अन्य उपन्यास 'कुलटा'(1958) में मध्यवर्ग वर्ग के शहरी जीवन का चित्रण किया हैं। 'शह और मात में प्रेम कहानी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हैं। 'सारा आकाश' पूर्व प्रकाशित 'प्रेत बोलते का संशोधित रुप हैं, अनदेखे अनजाने पुत्र में एक कुरुप स्त्री की मानसिकता का चित्रण हैं।'एक इंच मुस्कान' लेखक की सहयोगी रचना हैं।

देवेन्द्र सत्यार्थी ने 'रथ के पहिए'(1953),'ब्रह्मपुत्र '(1956),और 'दूध गाछ'(1958) इत्यादि उपन्यास लिखें। दूधगाछ इनकी प्रसिद्दि का कारण बना।इसमें लेखक आधुनिक जीवन

की चकमक और शास्त्रीय संगीत कला में विरोधाभास दिखाते हुए मानवीय मूल्यों का प्रतिपादन किया हैं।

गोविन्द वल्लभ पन्त ने अपने उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया हैं।'एक सूत्र'(1946),'अमिताभ'(1946),'अनुरागिनी'(1947),'नूरजहां'(1949),मुक्ति के बन्धन (1950) चन्द्रकांत(1951) 'यामिनी'(1953), 'पंर्णा' (1955), 'जल समाधि'(1955), 'मैत्रीय'(1959) 'तारों के सपने' (1960) 'फॉरगेट मी नॉट'(1960) इन दशकों के उपन्यास हैं।

यज्ञदत्त शर्मा ने सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं को अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया हैं।'झुनिया की शादी'(1954), 'परिवार'(1955) बाप बेटी (1956), 'निर्माण पथ'(1956), 'दबदबा'(1959), 'वसन्ती बुआजी'(1960), 'सबका साथी'(1960), 'स्वप्न खिल 'उठा'(1960) इनके उपन्यास हैं।

यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र ने 'पथहीन'(1956),सन्यासी और सुन्दरी,अनावृत(1959),मिट्टी का कलंक(1956), अभ्भा अनदाता(1958), सपना(1958), प्रोफेसर(1959) इत्यादि उपन्यास लिखे हैं।

कमल शुक्ल ने 'देवता'(1956),'शिल्पी'(1958),'गुंजाल'(1958),'कोई कुछ कह गया'(1959),'किसका कौन' (1960) इत्यादि उपन्यास लिखें।

प्रभाकर माचवें के उपन्यासों में सामाजिक जीवन की समस्याओं को उकेरा गया हैं।'परन्तु' (1941),'एकतारा'(1952),'सांचा'(1956),'द्वाया' इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

रामप्रसाद घिल्डियाल पहाड़ी ने 'चलचित्र'(1941),'सराय' (1944),उपन्यास लिखें।

नरेश मेहता ने आत्मकथात्मक शैली में डूबते मस्तूल(1954),में लिखा। इसमें इन्होंने काम भावना का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं। इस दशक में अन्य महत्वपूर्ण उपन्यास भी लिखे गये हैं।

इन दशकों के उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में व्यक्ति को उसके परिवेश में उभार कर उसकी पहचान अंकित कराई। व्यक्ति जीवन को सामाजिक राजनीतिक,आर्थिक सन्निवेश में उभारा । युग की नवीनताओं को सामाजिक परम्परा के प्रकाश में ही स्वीकार किया तथा सामाजिक परम्पराओं से जोड़कर साम्यवादी विचारों को प्रतिपादन किया। नर–नारी के सम्बन्धों की विविधता को सामाजिक जीवन की परिवर्तनशीलता, परम्परा और स्थिति विशेष की प्रासांगिकता में विचारा–परखा। तथा नारी को उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व में उभारा । गॉवों में बढ़ती जा रही राजनीतिक चेतना भी इस दशक के उपन्यासों के विषय रहें। आइंसटीन के विचारों के साथ–साथ गॉधीवाद,फ्रायडवाद,मार्क्सवाद का प्रभाव भी उपन्यासों में झलकता दिखाई देता है। शैल्पिक दृष्टि से भी कई विशेषताएं उपन्यासों में उभरी जैसे गुम्फित कथानक

चित्रांत्मकता इत्यादि। अधिकांश उपन्यास कथात्मक शैली में लिखे गये इसके साथ –साथ आत्मकथात्मक डायरी शैली काव्यात्मक शैली के भी प्रयोग हुए।

तीसरा चरण:सातवें आठवें दशक के कुछ उपन्यास तथा उपन्यासकार

सॉतवें–आठवें दशक में कुछ पुरानी पीढ़ी के उपन्यासकारों महत्वपूर्ण उपन्यासों की रचना की। इस दशक के उपन्यास समसामाजिक स्थितियों का दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं–

अज्ञेय के उपन्यास 'अपने–अपने अजनवी' (1961) में जीवन को मृत्यु के माध्यम से पहचानने के दर्शन को प्रतिपादित किया हैं। आज के वास्तव और जीवन वास्तव को पकड़ने की कोशिश उपन्यास में की गयी हैं।

मोहन राकेश के उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरें'(1961) में महानगरी में मानवीय सम्बन्धों की टूटने की स्थिति तथा अकेलेपन के बोध को दर्शाया गया हैं। इस अकेलेपन की अनुभूति को परिस्थिति में ऑकने की बजाय स्थिति में ऑका गया हैं। ऊब,खीज, बासीपन एकरसता,ईर्ष्या ,घुटन इसके मुख्य विषय हैं 'न आने वाला कल' (1968) में 'पहाड़ी मिशन स्कूल' में एक जगह रहने वाले लोग अपने अपने दायरों में बन्द होकर कल की प्रतीक्षा करते हैं जो नहीं आता। अस्तित्व बोध अकुलाहट,छटपटाहट,खीज,ऊब इस उपन्यास के मुख्य प्रतिपाघ हैं। अन्तराल में इन्हीं स्थितियों को दर्शाया गया हैं। भगवती प्रसाद वाजपेयी ने राजनीतिक परिस्थितियों के कारण समाज में आ रहे परिवर्तनों को अपने उपन्यासों का विषय बनाया हैं। 'सपना बिक गया '(1961) 'टूटा टीसेट' (1962),'चन्दन और पानी'(1962),और 'टूटते बन्धन'(1963) इत्यादि उपन्यास इन्होंने इन दशकों में लिखें।

भगवती चरण वर्मा ने 'सामर्थ और सीमा'(1962),रेखा(1964),'थके पॉव'(1963),'सच्ची बातें'(1968),'सबहिं नचावत राम गोसाई'(1970) तथा 'प्रश्न और मीरचिका' (1973) इत्यादि लिखें हैं।

सत्ता पक्ष में स्वार्थ परिता से मानवीय मूल्यों की हो रही क्षति और सामाजिक विकृतियों को उभारना लेखक का मुख्य विषय रहा हैं।

उपेन्द्रनाथ अश्क का उपन्यास शहर में 'धूमता हुआ आइना' (1963),उनके पूर्व प्रकाशित 'गिरती दीवारें ' उपन्यास का ही विस्तार हैं। । इस उपन्यास पर यह आरोप लगाया गया हैं "कि यह उपन्यास न होकर कहानियों का संकलन–मात्र हैं।" [7] लगता है जैसे उपन्यास खण्डित या खण्डचित्रों का ही संकलन हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेद्वी ने ऐतिहासिक तथा पौराणिक उपन्यास लिखें।परन्तु इन्होंने ऐतिहासिक तथा पौराणिक तथ्यों को वर्तमान सन्दर्भ में प्रस्तुत किया ।चारुचन्द्र लेख (1963),में इन्होंने मध्यकाल की भारत की राजनीतिक,सामाजिक,धार्मिक और आर्थिक स्थितियों को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। इस उपन्यास को मध्य कालीन भारत का दर्पण भी माना जा सकता हैं। पुनर्नवा (1974) में ऐतिहासिक तथ्यों और सन्दर्भो के आधार पर चौथी शती की सामाजिक राजनैतिक ,धार्मिक और सांस्कृतिक स्थितियों का चित्रण हैं। 'अनामदास का पोथा'(1976) में भी पौराणिक अख्यान द्वारा समसामयिक सांमाजिक जीवन का चित्रण हैं।

अमृत लाल नागर ने 'ये कोठे वालियां' (1961),अमृत और विष(1966),'सात धूंघट वाला मुखड़ा(1968),'मानस का हंस'(1972),''नाच्यौ बहुत गोपाल'(1978),'एकदा नैमिषारण्यें(1972),खंजन नयन इत्यादि उपन्यास लिखें। 'कोठे वालियां' में सामाजिक समस्याओं को उठाकर वेश्यावृत्ति का तार्किक और भावनापूर्ण निरुपण किया गया हैं।'अमृत और विष' में सामाजिक रुंढ़ियों बाह्म आडम्बरों ,राजनीतिक विसंगतियों पूजीपतियों की शोषण वृतियों को उपन्यास की विषय वस्तु बनाया गया हैं 'मानस का हंस' तुलसी के जीवन पर आधारित विशिष्ट उपन्यास हैं, जिसमें इन्होंनें तुलसीदास के जीवन की घटनाओं को अत्यन्त विश्वसनीय और प्रभावशाली रुप में व्यक्त किया हैं। 'सात घुघट वाला मुखड़ा' ऐतिहासिक तथा 'एकदा नैमिषारण्यें' सांस्कृतिक उपन्यास है। 'नाच्यौं बहुत गोपाल' में भंगी समाज की समस्याओं को उभारा गया हैं।

नरेश मेहता ने 'यहँ पथ बंधु था (1962) में मध्यवर्ग के व्यक्ति और परिवार के टूटन की समस्या को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं।

इसके अलावा इन्होंने 'धूमकेतु एक श्रुति'(1963) 'नदी यशस्वी है (1967) 'धूमकेतु एक श्रुति' का दूसरा खण्ड 'दो एकान्त'(1964),'प्रथम फाल्गुन'(1968) में लिखें। निर्मल वर्मा का 'वे दिन' (1964) में द्वितीय महायुद्ध की भयंकरता के पश्चात् पनपी योरोपीय मानसिकता का चित्रण हैं।

'लाल टीन की छत'(1974) उपन्यास मे भी अस्तित्ववादी जीवन दर्शन को उभारा गया हैं। एकाकीपन,घुटन,संत्रास,कुंठा इसके मुख्य विषय हैं।

नागार्जुन ने 'हीरक जयंती' (1961)'उग्रतारा'(1963)उपन्यासों में साम्यवादी विचार धारा एवं सामाजिक, आर्थिक विषमताओं को अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया हैं। फणीश्वर नाथ रेणु ने 'दीर्घतपा'(1963) उपन्यास में महिला संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार,महिलाओं की विवशता और समाज सेंवियों समाज सुधारकों व्यवस्थापकों के भ्रष्ट आचरणों को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। जुलूस'(1965) में लिखा जाने वाला उपन्यास

हैं। उदयशंकर भट्ट ने 'दो अध्याय' (1963) में आर्थिक अभावों से ग्रस्त नारी समस्या का निरुपण किया हैं।

हिमांशु श्रीवास्तव ने 'नदी फिर बह चली'(1961), 'सिकन्दर'(1963), 'नई यात्रा(1964), धर्मचेता(1964), रिहर्सल(1978) उपन्यास लिखे। 'नदी फिर बह चली' में राजनीतिक विद्रुपताओं के कारण सामाजिक जीवन में आ रही कटुताओं का चित्रण हैं। 'सिकन्दर की पृष्ठभूमि' ऐतिहासिक उपन्यास है, तथा 'धर्मचेता' एक सांस्कृतिक उपन्यास हैं।

कमलेश्वर ने 'एक सड़क सत्तावन गलियां' (1961)'तीसरा आदमी'(1976) 'काली आंधी' और 'डांक बंगला' इत्यादि उपन्यास लिखें। एक सड़क सत्तावन गलियां में कस्बाई मानसिकता में आ रहे परिवर्तनों का चित्रण हैं। 'काली आंधी' में।गिरीराज किशोर ने 'वह चिड़ियाघर'(1962),लोग(1966),यात्राएं(1971),जुगलबन्दी(1973),दो(1974),इन्द्र सुनें(1978)इत्यादि उपन्यास लिखें हैं। रवीन्द्र कालिया का 'खुदा सही सलामत' उपन्यास में तत्कालीन राजनीतिक सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का दस्तावेज प्रस्तुत किया हैं। महेन्द्र भल्ला एक पति का नोट्स (1966) और दूसरी तरफ(1976) में लिखे उपन्यास हैं। "एक पति का नोट्स उपन्यास नोट्स शैली में लिखा गया उपन्यास हैं जिसमें उपन्यास का नायक अपनी पत्नी की एकरसता से बोर होकर अपने पडोसी की पत्नी को बुलाकर संभोग करता हैं। वह क्षण के सुख की खोज में वर्तमान को झूठलाता हैं इस उपन्यास में मानव की नियति का निरुपण उसकी यथास्थिति में किया जाता हैं।"[8]

शैलेश ने अपने उपन्यास 'छोटे –छोटे पक्षी में महानगरीय परिवेश के युवा साहित्यकारों और पत्रकारों की दिशाहीन सोच का चित्रण किया हैं तथा 'रामकली' (1978) उपन्यास लिखा। श्रीकांत ने 'दूसरी बार 'उपन्यास(1968)में संभोग के प्रसंगों के माध्यम से अस्तित्वबोध के संत्रास को गहराया हैं।

श्रीलाल शुक्ल ने 'राग दरबारी'(1968)लिखा। इसे समेटने की कोशिश की हैं।

गोविन्द मिश्र जी ने 'वह अपना चेहरा'(1967) में अपना पहला उपन्यास लिखा।

इस उपन्यास में दफ्तरी माहौल के दूषित वातावरण,सड़ी मानसिकता,कर्मचारियों को स्वार्थपरिता के बीच उपन्यास के नायक 'मैं' के द्वन्द्व को प्रस्तुत किया हैं। " 'लाल–पीली जमीन'(1976) उपन्यास में लेखक ने बुन्देलखण्ड के एक कस्बे मे रहने वाले लोगों की कस्बाई मानसिकता का चित्रण किया हैं। साथ ही युबावर्ग में व्याप्त हिंसा,दिशाहीनता के बहाने समाज में व्याप्त हिंसा ,स्वार्थ वर्ग जाति अमानवीय कूरता सामन्ती ताकतों द्वारा युवा वर्ग का उपयोग, इत्यादि कारणों की पड़ताल की हैं।"[9]

बदीउज्जमान 'एक चूहें की मौत'(1971) उपन्यास में लेखक ने फैण्टेसी का सहारा लिया हैं। इस उपन्यास में कार्यालयी विसंगतियों को उभारा गया हैं। छठा तंत्र (1977)

प्रतीकात्मक उपन्यास हैं। जिसमें लेखक ने चूहे और बिल्ली के प्रतीकों के माध्यम से राजनितिक नेताओं के छद्म व्यवहार और शोषण वृत्तियों पर प्रकाश डाला हैं। गिरीश अस्थाना का उपन्यास 'धूप छांही रंग'(1970) दो भागों में विभक्त विशालकाय उपन्यास हैं। पहले खण्ड में युद्ध की विभीषका का चित्रण हैं तथा दूसरे खण्ड में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सामाजिकार्थिक ,राजनीतिक जीवन की विंसगतियों तथा सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के विघटन का प्रमाणिक दस्तावेज हैं।

जगदम्बा प्रसाद दीक्षित ने कटा हुआ आसमान (1971) में महानगरीय जीवन के खोखलेपन अजनबीपन तथा अकेलेपन को उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। इस उपन्यास में कामू के जीवन–दर्शन का प्रभाव झलकता हैं। 'मुरदाघर' (1974) में बम्बई की झोपड़पट्टी में रहने वाली देह व्यापार के लिये विवश नारियों की यातना को मुखरित किया गया हैं।

हिमांशु जोशी ने 'समय साथी है,(1977) उपन्यास में राजनीतिक जटिलताओं,दॉव–पेच, मूल्यहीनता को उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। 'कगार की आग'(1978) में अल्मोड़ा के पर्वतीय अंचल के माध्यम से भारतीय गॉवों की सामाजिक एँवं राजनीतिक स्थितियों को उकेरा हैं।

जगदीश चन्द्र ' धरती धन न अपना'(1972) उपन्यास में पंजाब के एक गॉव चमादड़ी की हरिजनों की बस्ती के जीवन को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। 'कभी न छोड़े खेत' (1976)उपन्यास मे दिल्ली–हरियाणा के आठ किसानों के जीवन के यथार्थ को उभारा गया हैं, .

तथा 'मुट्ठी भर कांकर'(1976) में विस्थापित पंजाबियों का दिल्ली प्रभुत्व तथा वहॉ के किसानों के बेघर हो जाने की व्यथा कथा का चित्रण हैं।

भीष्म साहनी ने 'कडियां' (1970) में दाम्पत्य जीवन की कड़वाहट और पुरुष स्त्री के सम्बन्धों की टूटी काड़ियों के यथार्थ का चित्रण किया हैं।'तमस'(1973) इनका प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इसमें इन्होंने भारत विभाजन की घटना,साम्प्रदायिक दंगो, और अमानवीय कृत्यों ,विभाजन की विभीषिका का चित्रण हैं।

राही मासूम रजा के आधा गॉव '(1968) तथा 'कटरा बी आर्जू'(1979) में उल्लेखनीय उपन्यास हैं शिव प्रसाद सिंह ने अलग–अलग वैतरणी(1968) में स्वाधीनता के पश्चात् गॉवों बढ़ती राजनितिक चेतना और उसके प्रभाव से प्रभावित सामाजिक जीवन को चित्रित किया हैं।

गंगा प्रसाद विमल 'मृगातंक(1978) उपन्यास में तन्त्रसाधना के अमानवीय कियाओं के माध्यम से अमानवीय कृत्यों की परतें खोली हैं।

राम दरश मिश्र ने 'पानी के प्राचीर' (1961)में ग्राम्य जीवन के परिवेश के सामाजिक जीवन में बढ़ती राजनीतिक कलुषताओं का चित्रण किया हैं। इसके अलावा इन्होंने 'आदिम राग' 'दूसरा घर,'आकाश की छत' 'बिना दरवाजे का मकान' 'सूखता हुआ तालाब' (1988)उपन्यास लिखें हैं।

इस दशक के अन्य उपन्यासकारों में 'शरद देवड़ा' ने 'टूटती इकाइयां' (1964) में 'खोखलेपन' ,रीतेपन,और अस्तित्व बोध की गहराया हैं। राजकमल चौधरी ने 'शहर था,शहर नहीं था(1966) में विघटन,अजनबीपन संत्रास को उभारा हैं। गिरिजाघर गोपाल ने 'कंदील और कुहासे'(1969) में मध्यवर्ग की कुंठा, भटकाव,अनिश्चितता को उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। प्रमोद सिंह का 'उसका शहर'(1970) उपन्यास कामू के दर्शन से प्रभावित हैं। हंसराज रहबर के आदिम पुरखे (1977) उपन्यास का कथानक प्रागैतिहासिक हैं। अमृतराय ने धुआं'(1976) में वाराणसी के स्थितियों के माध्यम से देश में व्याप्त भ्रष्टाचार मूल्यहीनता आयातित पश्चिमी मूल्यपरस्ता का उद्‌धाटन किया हैं, प्रभाकर माचंवे ने 'किसलिएं' (1970) में मध्यवर्ग में बढ़ती अनैतिकता अर्थलोलुपता, अनास्था को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया हैं। 'कुरु कुरुस्वाहा'(1980)बम्बई के अपराध जगत् को प्रस्तुत करने वाला प्रयोगात्मक उपन्यास हैं। देवेश ठाकुर के उपन्यास 'भ्रमभंग(1975) में महत्वाकांक्षी मध्यवर्ग के युवक के टूटते स्वप्न को दर्शाया गया हैं। शिवसागर मिश्र ने 'अक्षत्'(1976) में ग्राम्य जीवन में घुल रही कुटिलता, बनते–बिगड़ते पारिवारिक सम्बन्धों को अपने उपन्यास की विषय–वस्तु बनाया हैं। वीरेन्द्र कुमार जैन ने अनुत्तर योगी (तीन खण्ड 1976,77,78) में महावीर स्वामी को मानवीय मूल्यों के रक्षक तथा अग्रदूत के रुप प्रकाशित किया हैं। विवेकी राय ने 'लोकऋण' में ग्राम्यजीवन में बढ़ रही विषमताओं ,विद्रूपताओं और कुरुपताओं का चित्रण किया हैं। 'बबूल', 'पुरुष पुराण','श्वेत पत्र' भी इनके उपन्यास हैं। आनन्द प्रकाश जैन ने 'कुड़ाल की ऑखें' (1967) में अशोक की शान्ति अंहिसा यशलिप्सा के बीच छिपी हिसंक प्रवृत्ति का चित्रण किया हैं। योगेश गुप्त ने 'उनका फैसला' (1977) में एक मध्यवर्गीय ईमानदार युवक को गलत समझे जाने पर उसकी मानसिकता का चित्रण किया हैं। राजेन्द्र मोहन भटनागर ने 'अनंत आकाश'(1979) में भावात्मक प्रेम विवाह की परिणिति का चित्रण हैं। हरिकृष्ण दास गुप्त हरि ने 'हिसाबी आदमी (1980) उपन्यास में भावनात्मक सम्बन्धों से उत्पन्न मानसिक उलझनों का चित्रण किया हैं। अभिमन्यु अनन्त ने अपने उपन्यास 'लाल पसीना' (1977) में मोरिसस में बसे भारतीय मजदूरों की त्रासदियों का चित्रण किया हैं। पानू खोलिया ने 'संतरापारके शिखर'(1978) एक पति की वेदना का चित्रण किया गया हैं। विश्वम्भर मानव ने 'उजडे लोग'(1961) में मध्यबर्गीय परिवारों के बसने और उजड़ने की कथा कही

हैं।दूसरे उपन्यास कांवेरी(1962)में नारी की भावुकता का दुरुपयोग करने वाली पुरुष की प्रवृति की भर्त्सना की हैं।

इस दशक में महिला लेखिकाओं ने भी अपने उपन्यास में नारी की सामाजिक नियति और मानसिकता में गहरे उतरने का प्रयास किया हैं। मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी'(1971) में तलाक शुदा पति–पत्नी की समस्या को बच्चे की समस्या के केन्द्र बिन्दू से उठाया हैं। उषा प्रियवंदा ने 'रुकोगी नहीं राधिका' (1967) तथा 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' उपन्यासों में अत्याधुनिक महिला के स्वतन्त्र निर्णय की शक्ति के बावजूद अजीब बेबसी और सामाजिक घिराव के द्वन्द्व को दर्शाया हैं। कृष्णा सोवती ने 'डार से बिछुडी' में अचानक घटी घटना के संघात से उत्पन्न नारी की पीड़ा का चित्रण किया है। सूरज मुखी अंधेरे के (1972) में नारी की उन्मुक्त भोग लालसा का चित्रण हैं।'मित्रों मरजानी' में मित्रों अपनी उद्दाम काम पिपासा को बिना अपराधबोध के पुरुषों से शान्त करती हैं। और 'यारों के यार' में उन्मुक्त रुप से यौन अवयवों का चित्रण हैं। ममता कालिया ने 'बेघर'(1971) में यौन समस्या से विकृत मानसिकता का चित्रण किया हैं। 'नरक दर नरक'(1975) में स्वतंन्त्रोत्तर भारत की राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डाला गया हैं। इसके अलावा तेजरानी पाठक ने 'हृदय का कांटा', शशि प्रभा शास्त्री ने 'कर्क रेखा' दीप्ति खडेलवाल ने 'प्रिया '(1976)मृदुला गर्ग ने वंशज'(1976) निरुपमा सोवती ने 'बटता हुआ आदमी' (1977),मंजुला भगत ने 'अनारों (1976),मालती जोशी ने 'पटाक्षेप',सूर्यवाला' का 'मेरे सन्धिपत्र'(1977),मालती परुलकर ने 'मुक्ता'(1978),सुनीता जैन ने 'बिन्दू'(1977), कुसुम बंसल ने 'उसकी पंचवटी' ज्योत्सना मिलन ने 'अपने साथ' इत्यादि उल्लेखनीय उपन्यास लिखें हैं।

इस दशक के उपन्यास कारों ने पाश्चात्य जीवन दर्शन को अपने उपन्यासों में उतारा । फ्रायड, एडलर, जुंग की मान्यताओं से प्रभावित इन उपन्यासकारों ने व्यक्ति के प्रेम,स्वच्छंदता,अर्न्तद्वन्द्व,टेंशन पीड़ा काम वासना तथा विविध मनोविकारों को अनेक नये शिल्प और शैली के माध्यम से अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया। अस्तित्ववादी दर्शन तथा मृत्यु दर्शन को भी कुछ उपन्यासों में प्रतिपादित किया गया । स्त्री पुरुषों के सम्बन्धों को उपन्यासों का विषय बनाया गया । उपन्यासकारों ने नारी को उसके प्राकृतिक गुणों और स्वाभाविकताओं में स्वीकार्य कर उसके स्वत्व, गरिमा, मर्यादा, अधिकार और अस्मिता को उपन्यासों का विषय बनाया। कुछ उपन्यासों के विषय राजनीति में बढ़ रही स्वार्थपरिता, कटुता,विषमता और तिक्तता भी रहें।शिल्प के क्षेत्र में इस दशक में नवीनता दिखाई देती हैं। अधिकांश उपन्यास कथात्मक, कुछ आत्मकथात्मक, चरित्र प्रधान, घटना प्रधान आंचलिक लिखें गये। अभिव्यक्ति में स्पष्टता तथा भाषा की अभिव्यजंना शक्ति में निखरापन इस दशक के उपन्यासों की विशिष्टता रही।

चौथा चरणः नवें दशक के कुछ प्रमुख उपन्यास और उपन्यासकार

राजनीति चेतना और नारी चेतना इस दशक के उपन्यासों के मुख्य विषय है-

नरेन्द्र कोहली के 'आंतक' उपन्यास में मानवीय मूल्यों मे हो रहे ह्मस पर शोक व्यक्त किया गया हैं। 'अभिमान' (1981) में सुदामा और कृष्ण की पौराणिक कथा को आधुनिक अर्थ देकर सामाजिक उपयोगिता में अर्थाया गया हैं,और जीवन की गुत्थियों को संकल्प और प्रत्यनों के माध्यम से हल करने का प्रयास किया गया हैं। ''पुनराभ'' 'साथ सहा गया दुख' 'दीक्षा','अवसर','संधर्ष की ओर' 'युद्ध मेरा संसार', 'जंगल की कहानी में' भी इन्होंने परिवेश की प्रासांगिकता में मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की हैं।

शिव प्रसाद सिंह ने 'गली आगे मुड़ती है'(1987) में बनारस के वर्तमान जनजीवन को रुपायित किया हैं। फिर इनकी इच्छा हुई कि मध्यकालीन और आदिकालीन काशी को भी औपन्यासिक संरचना प्रदान की जाए जिसके परिणामस्वरुप लेखक ने 'नीलाचांद'(1988) नामक 534 पृष्ठों के बृहत्काय उपन्यास की रचना की। इसमें इन्होंने मध्यकालीन बनारस के बहुआयामी रुप को उभारा हैं।

कमलेश्वर ने अपने उपन्यास 'सुबह दुपहर शाम'(1982) में उपन्यास की पात्रा शान्ता के माध्यम से नारी के उत्सर्गमय व्यक्तित्व को उभारा हैं। 'तीसरा आदमी'(1989)'रेगिस्तान','वही बात,' 'खोई हुई दिशाएं''काली आंधी' 'एक सड़क सत्तावन गलियां' उपन्यासों में लेखक ने व्यक्ति की पहचान को परिवेश की प्रासांगिकता में उभारा हैं।

भगवती शरण मिश्र ने अपने उपन्यास 'पहला सूरज''(1986)' में शिवाजी के चरित्र के माध्यम से उदात्त मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की हैं। अपने 'पवन पुत्र'(1994) उपन्यास में लेखक ने पौराणिक कथा को आधार मानकर हनुमान को भारतीय आस्था और विश्वास के रुप में अंकित किया हैं।

प्रभाकर माचवे ने 'अनदेखी'(1988) उपन्यास में हिमालय प्रदेश के जनजीवन के माध्यम से नारी की आर्थिक विपन्नता ,दुर्दशा, मनोव्यथा को चित्रित किया हैं।

जगदीश चन्द्र पाण्डेय ने अपने उपन्यास 'महाकालेश्वर की एक रात'(1982) में रानीखेत की पर्वतीय सौन्दर्य के साथ-साथ वहाॅ के जनजीवन का चित्रण किया हैं।अब्दुल बिस्मिल्लाह ने अपने उपन्यास 'झीनी झीनी बीनी चदरियां' (1986) में बनारस के बुनकरों के शोषण,भुखमरी,लाचारी और बेरोजगारी को उद्घाटित किया हैं। गिरिराज किशोर ने 'यथा प्रस्तावित (1982) में संस्थाओं की बस्तियों में उभरती जातिगत भेदभावना का चित्रण

किया हैं। 'उस्सलाह' (1987) उपन्यास में युवाओं में पनप रही हिंसात्मक प्रवृत्तियों को उपन्यास की विषय–वस्तु बनाया गया हैं। 'तीसरी सत्ता' (1989) उपन्यास में पति–पत्नी की बीच पनपते शक में तहस–नहस जीवन का चित्रण हैं। 'लोग' 'चिड़ियाघर''यात्रााएं, 'जुगलबन्दी','दो', 'इन्द्रसुनें','देवदार', 'परिशिष्ट' इनके अन्य उपन्यास हैं।
हंसराज रहबर के उपन्यास 'बोले सो निहाल'(1990) में सन्1739 में नादिरशाह के आक्रमण से लेकर सन् 1765 में लाहौर पर सिखों के अधिकार होने तक का इतिहास हैं। 'कंकर' में सन् 1940 के आस–पास की भारत की राजनीतिक स्थितियों को दर्शाया गया हैं। 'संकल्प' उपन्यास में पति पत्नी के प्रगाढ़ प्रेम,और सन्तान के प्रति उत्तरदायित्व निर्वाह करने वाली युवती का चित्रण हैं। 'अमिता'उपन्यास में भावात्मकता के आभाव में टूटी बिखरती युवती के जीवन को चित्रित किया गया हैं।

गोविन्द मिश्र ने 'हुजूर दरबार' (1981) स्वतन्त्रता प्राप्ति काल की पृष्ठभूमि में लिखे जाने वाले इस उपन्यास में राजतन्त्र का प्रजातन्त्र में विलीनीकरण ,सत्ताधीशों की मूल्यहीनता, सामान्य मनुष्य की यातना का चित्रमय प्रस्तुतीकरण हैं। कुल मिलाकर यह उपन्यास समसमायिक राजनीतिक गतिविधियों का ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत करता हैं। 'तुम्हारी रोशनी' (1985) उपन्यास में आधुनिक नारी की अस्मिता तथा उसके मन के अनेक अनछुए आयामों पर प्रकाश डाला गया हैं।

'धीरे समीरे' (1988) उपन्यास में ब्रजयात्रा के माध्यम से भारतीय जमीन से जुड़ी आध्यात्म और संस्कृति की महत्वपूर्ण परतों को उकेरा गया हैं, तथा ब्रजयात्रा में आए भिन्न–भिन्न प्रान्त और भाषा–भाषी यात्रियों के सुखों दुखो मनोभावों और उनके आपसी सम्बन्धों के माध्यम से मानवीय रिश्तों को मूर्तता प्रदान की गयी हैं।

इस दशक के अन्य उपन्यासकारों में रमेश चौधरी,'आरिगंपचूडि' ने 'सब स्वार्थी हैं', 'अभिशाप' 'छोटे–बड़े लोग','सरला',अन्तिम उपाय' उपन्यासों में सामाजिक कटुताओं को उभार कर मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की हैं। श्रीलाल शुक्ल ने 'पहला पड़ाव'(1987) में विलासपुर के शासकों के सन्दर्भ से श्रमिक संधों में व्याप्त स्वार्थपरिता,छल छदंम के यथार्थ चित्र उभारें हैं। राविन शा पुष्प ने 'देहयात्रा''(1983) में उत्तेजनापूर्ण शैली में यौन सुखों को उभारा हैं। जवाहर सिंह ने 'गूगे कंठ की पुकार ''(1983) उपन्यास में व्यक्ति अस्मिता को संघर्षमय परिस्थितियों में उभारा हैं। हरिशंकर परिसाई ने तट की खोज''(1985) उपन्यास में पुरुष की कायरता के कारण संकटापन्न नारी की विवशता को उभारा हैं। स्वदेश भारती के उपन्यास 'शहरयार ''(1985) में वासनापूर्ण जीवन की दुखान्त परिणति का चित्रण हैं। विवेकीराय के वृहत्तकाय उपन्यास 'समर शेष हैं'(1988) में स्वाधीनता के बाद गॉवों और नगरों में आये बदलाव का चित्रण किया गया हैं। रामदेव शुक्ल के 'विकल्प'(1988) उपन्यास में राजनीतिक धटनाओं के परिणामस्वरुप सामाजिक

जीवन में बढ़ती कटुताओं पर सुशिक्षित नयी पीढ़ी के क्षोम को व्यक्त किया गया हैं। प्रवणकुमार बंधोपाध्याय ने 'नोपीगंज संवाद'(1981) उपन्यास में भारतीय स्वाधीनता संग्राम में प्रयासरत साधारण किसानों,मजदूरों,अवकाश प्राप्त सैनिकों साधु–सन्यासियों और वैरागियों की भूमिका का चित्रण किया हैं। सुरेशकान्त ने 'छम्भंशरणम्' (1989) में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में सामाजिक समस्याओं को उकेरा हैं। रामदेव धुरंधर के उपन्यास 'बनते–बिगड़ते रिश्तें'(1990) में दर्शाया गया हैं। अभिमन्यु अनन्त के उपन्यास 'पर पगडंडी नहीं भरती'(1983) में मॉरीशस में बसे प्रवासी भारतीयों विशेषकर (भोजपूरी समाज) का प्रभावपूर्ण चित्रण किया गया हैं।

इस दशक की प्रमुख महिला उपन्यासकारों ने जिनमें शशिप्रभा शास्त्री ने अपने उपन्यास 'ये छोटे महायुद्ध' में पीढ़ियों के वैचारिक अन्तर को घरेलू दैनिक जीवन प्रसंगों के माध्यम से उभारा हैं। मृदुला गर्ग ने उपन्यास 'अनित्य' में नारी के प्रति पुरुष की आसक्ति को विभिन्न कोणों से उभारा हैं। सुशीला मीतल ने उपन्यास 'दो धाराओं के बीच' में नारी मन के द्वन्द्वों को अत्यन्त संयत और स्वाभाविक ढंग से उभारा हैं।

चित्राभुद्गल ने उपन्यास 'एक अपनी जमीन' में नारी मन की कोमलता,सहजता,सरलता को दर्शाते हुए उसकी कर्मशीलता,स्थिरता ,सहनशीलता और धैर्य को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं।

शिवानी ने 'विर्वत' उपन्यास में पुरुष द्वारा छली–ठगी गयी नारी के विषादपूर्ण हृदय की करुण व्यथा को अत्यन्त स्वाभाविकता में उभारा हैं। मृणाल पांडे ने उपन्यास'पटरंगपुराण'(1983) में एक जाति विशेष के विकास को सहज,सरल भाषा में उभारा हैं।चन्द्रकांता ने उपन्यास 'बाकी सब खैरियत हैं'(1983) में कनाडा में बसे पति–पत्नी की बैचेनी को मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति दी हैं। राजी सेठ ने उपन्यास 'तत्सम' में (1984) ने दुख की भंगिमाओं को गहराकर जिजीविषा को उभारा हैं। यह उपन्यास इस दशक की महत्वपूर्ण कृति हैं। नसिरा शर्मा ने 'सात नदियां : एक समन्दर'(1984)'शाल्मली'(1987),'ठीकरें की मंगनी'(1989), इत्यादि महत्वपूर्ण उपन्यास इस दशक में लिखें। दुर्गा हाकरे ने उपन्यास 'दरकते कगार'(1988) में नर–नारी के यौन सम्बन्धों के नये आयाम प्रस्तुत कियें।

इस दशक के उपन्यासकारों ने वैज्ञानिक उपलब्धियों के आलोक में सामाजिक गतिशीलता को उभार कर नारी–पुरुष के सम्बन्धों को सांस्कृतिक व्यामोह से मुक्त होकर अर्थाया और लिजलिजी भावुकता से मुक्त होकर यौन सम्बन्धों को जीवन के वास्तविक सन्निवेश में अभिव्यंजित किया। सामाजिक सन्तुलन का निर्वाह करते हुए दाम्पत्येतर यौन सम्बन्धों को बड़ी तकिर्कता के साथ उभारना इस दशक के उपन्यासों की महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। नारी लेखिकाओं ने नारी को उसकी अस्मिता,वास्तविकता और अर्थवत्ता

में उकेरकर उनके जीवन की यथार्थ परतों को उखेड़ा। राजनीतिक चेतना और नारी चेतना इसक दशक उपन्यासों के मुख्य प्रतिपाद्य रहें। इस दशक के उपन्यासकारों ने परिवेश को उसके विस्तार में नहीं, अपितु स्फीति में उभारा। प्रचलित भाषा को वरीयता प्रदान की। उसकी सम्प्रेषणीयता को गहराया। कलापक्ष की दृष्टि से इस दशक के उपन्यास काफी बजनी साबित हुए।

पॉचवां चरण:दसवें दशक के कुछ उपन्यास और उपन्यासकार➡

इस दशक के उपन्यासकारों ने सामाजिक सरोकारों को अपनी रचनाओं में संवारा। इस दशक के उपन्यास में समसामयिक सामाजिक तथा राजनीतिक स्थितियॉ प्रतिबिम्बित हुई हैं➡

विष्णु प्रभाकर ने'अर्द्धनारीश्वर' (1992) उपन्यास में नर नारी के यौन सम्बन्धों पर सामाजिक व्यापकता में विचार किया हैं, तथा नारी को अपनी सम्पूर्णता में उभारा हैं। 'संकल्प' (1993) उपन्यास में नारी को उसकी सम्पूर्ण सामाजिकता में ऑका गया हैं, तथा उसकी अस्मिता को अर्थाया हैं। भीष्म साहनी के 'कुंतों (1993) में नर–नारी के प्रसंगों के माध्यम नारी यांत्रणा, पीड़ा व्यथा और वेदनाको को अर्थाया गया हैं।

दिवेन ने 'नदीबीमार' उपन्यास में राजनीतिक विद्रूपताओं का खुलासा किया हैं। 'चिदम्बरा' लेखक का दूसरा महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।, रमाकान्त ने उपन्यास 'बम्बई की बिल्ली' (1993) में बम्बई के फिल्म उधोग में व्याप्त नर–नारियों के यौन सम्बन्ध ,कामतृप्ति भोगलिप्सा,कला के नाम पर नारी भोग छलकपट ,प्रपंच, षडयन्त्र, हत्या इत्यादि का यथार्थ चित्रण किया हैं। सुरेन्द्र वर्मा के उपन्यास 'मुझे चॉद चाहिए' (1993) में नर–नारी के शारीरिक सम्बन्ध,यौन–सुख को जीवन की गहमागहमी में बड़ी स्वच्छता से अंकित किया गया हैं।

रमेश उपाध्याय ने उपन्यास 'हरे फूल की खुश्बू'(1991) में पूँजीवादी सभ्यता पर व्यंग्य किया हैं। पुन्नी सिंह ने 'पाथर धाटी' का शोर(1994) में खदान् में काम करने वाले मजदूरों की व्यथा का चित्रण किया हैं। अशोक के0शाह प्रतीक ने 'सागर को खरीद लो'(1994) उपन्यास में राजनीतिक सामाजिक परिवेश में व्यक्ति के विविधांगी चरित उकेरे हैं। प्रबोध कुमार गोविल ने उपन्यास 'वश'में बदलते सामाजिक परिवेश में नारी अस्मिता को उसकी पूर्णता में उभारा हैं।

शरद देवड़ ने 'आकाश! एक आप बीती' उपन्यास में स्वतन्त्र लेखन में समर्पित पात्र के संधर्ष, मूल्य संरक्षण, आत्ममंथन का चित्रण किया हैं। शिवप्रसाद सिंह ने 'दिल्ली दूर हैं'(1993)उपन्यास में मध्यकालीन उत्तर भारत की राजनीतिक, सामाजिक,आर्थिक

स्थितियों का वर्णन किया हैं। हरिकृष्ण देवसरे ने 'खाली हाथ '(1993) उपन्यास में धन को मानवीय मूल्य मानने वाले युवक की मानसिकता का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता से किया हैं। बलवीर त्यागी ने उपन्यास 'आंचल पर आकाश' में विघटित समाज के टूटते मानवीय मूल्यों पर चिन्ता व्यक्त की हैं। श्रवण कुमार गोस्वामी ने उपन्यास राहु केतु (1994) में राजनीतिक प्रदूषण ,मूल्यहीनता,सिद्धान्त हीनता का चित्रण किया हैं। राकेश वत्स ने 'नरदेश (1994) उपन्यास में शोषितों में सामाजिक राजनीतिक चेतना जागकर उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत किया हैं। ज्ञान चतुर्वेदी ने 'नरक यात्रा(1994) उपन्यास में समसामायिक जीवन स्थितियों की विद्रूपताओं को व्यंग्यात्मक रुप में उभारा हैं।

कमल शुक्ल ने 'लाल किले' से रंगून तक' (1991) में भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि में मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर के कारुणिक जीवन का चित्रण किया हैं। नरेन्द्र कोहली के उपन्यास 'तोड़ो कारातोड़ो' (1992) में विवेकानन्द के व्यक्तित्व के विकास को विभिन्न आयामों में उभारा गया हैं। गोविन्द मिश्र 'पांच आंगनो वाला घर' (1995) उपन्यास में तीन पीढ़ियों के इतिहास को प्रस्तुत करते हुए संयुक्त परिवार, विभाजित एकल परिवार,आत्मकेन्द्रित व्यक्ति और उसका मानसिक विघटन दिखाया हैं और इस उपन्यास में पारिवारिक कथा के माध्यम से 1940 से लेकर 1990 तक के कालखण्ड में घटित सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और नैतिक परिवर्त्तन का प्रमाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किया हैं। 'फूल इमारतें और बन्दर'(2000) उपन्यास में मिश्र जी ने एक संवेदनशील प्रशासनिक अधिकारी के माध्यम से शासन तन्त्र में होने वाले राजनैतिक नेताओं और बड़े अफसरों के घपलों ,स्वार्थो, भ्रष्टाचार काले कारनामों का खुला चिट्ठा प्रस्तुत किया हैं। इस उपन्यास के बारे में अवनिजेश अवस्थी ने लिखा है कि स्वतन्त्रता के पश्चात की व्यवस्था को अगर कम से कम शब्दों में समझना हो तो वह है—नेताओं और नौकरशाहों का निर्लज्ज, नेक्सस, यही नैक्सस इतने सालों से देश को चला रहा हैं—नाम अलग—अलग होने के कारण उन्हें व्यक्तिवाचक संज्ञा के खाते में डाल दिया जाए,वरना सच्चाई यही हैं कि ये सभी जातिवाचक ही हैं। इसी 'नेक्सस' की एक एक परत उधेड़ता चलता हैं। यह उपन्यास गोविन्द मिश्र स्वयं एक अधिकरी रहे हैं, इसलिये इस उपन्यास में उनका यह अनुभव खूब काम आया हैं, इस अनुभव ने उनकी इस रचना को असरदार तो बनाया ही हैं,उसे एक वैधता भी प्रदान की हैं। [(10.)]

रमेश शाह ने 'आखिरी दिन'(1992) उपन्यास में आंतकवादियों के कश्मीर में छाए भय और विषाद का चित्रण किया हैं। देवन्द्र सत्यार्थी ने उपन्यास 'विदा' 'दीपदान'(1992) में पत्रकारिता के संसार को दर्शाया हैं। विभूति नारायण राय ने उपन्यास 'किस्सा लोक तन्त्र' (1993) में लोकतंत्र को प्रदूषित करने वाली प्रवृतियों पर करारा प्रहार किया हैं।

द्रोणवीर कोहली ने अपने छठें उपन्यास 'तकसीम'(1994) में विभाजन के पूर्व के पश्चिमोंत्तर भारत की सामाजिक स्थितियों को उभारा हैं। राजकिशोर ने उपन्यास 'तुम्हारा सुख' (1995) में नारी के यौन सुख को भिन्न रुपों में प्रस्तुत किया हैं। स्वदेश भारती ने अपने छठे उपन्यास 'घटना दुर्घटना' (1995) में युवक– युवतियों के साहचर्यजन्य प्रेम, पारस्परिक मधुर–कटु सम्बन्ध और उत्सर्ग का चित्रण किया हैं।

इस युग की महिला उपन्यासकारों में अमृता प्रीतम के उपन्यास 'जलते बुझते लोग' (1994) जिसमे तीन लधु उपन्यास 'जलावतान', 'जेबकतरे','कच्ची' का संकलन हैं। शशि प्रभा शास्त्री ने उपन्यास 'मीनारें'(1992) में महाविघालयों की राजनीति,उठकपटक,पारस्परिक ईर्ष्या तनाव और स्वार्थपरिता का चित्रण किया हैं। 'खमोश होते सवाल'(1993) 'दो लघु' उपन्यासों 'खामोश होते सवाल' 'कोडवर्ड' का संकलन है। मृदुला सिन्हा का उपन्यास 'घरवास',मैत्रेय पुष्पा का 'स्मृतिदेश' (1994) लघु उपन्यास और 'वेतवा बहती रही'(1994) आंचलिकता की विशिष्टता लिए हैं। 'इदनमम' उपन्यास में एक जुझारु युवती द्वारा नेताओं और माफिया ठेकेदारों द्वारा आदिवासियों और ग्रामीणों पर किए जा रहे शोषण के विरोध का चित्रण हैं।ऋषा शुक्ल ने 'समाधान''(1991) में नर–नारी के सम्बन्धों की टकराहट को उभारते हुए उनके समाधान खोजे हैं। सूर्यबाला के 'दीक्षान्त'(1992) उपन्यास में महाविघालयों की प्रबन्ध समितियों की धांधलेबाजियों ,प्रपंचों कुचकों छात्र आंदोलनों, प्राध्यापकों की राजनीति, गुटबंदी प्रिंसिपल की विवशता को उभारते हुए शिक्षा तंत्र के खोखलेपन का खुलासा किया हैं।

नासिरा शर्मा का उपन्यास 'जिन्दा मुहावरे'(1993) धर्म पर आधारित राष्ट्रीयता पर व्यंग्य करता हैं। प्रभा खेतान के 'आओ पेपे', 'घर चले' (1990) तथा 'छिन्नभस्ता'(1993) इस दशक के महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।

चन्द्रकान्ता के उपन्यास 'यहां वितस्ता बहती हैं' (1992) में पारिवारिक और सामाजिक जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत किया गया हैं। पदमा सचदेव के उपन्यास 'अब न बनेगी देहरी'(1993) में नारी के आत्मविश्वास को गहराया गया हैं। राजीं सेठ का 'निष्कवच' '(1995) दो वृतांतों में लिखा इस दशक का महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। इसके अलावा भी अनेक महत्वपूर्ण उपन्यास इस दशक में लिखे गयें।

दशवें दशक के उपन्यासों में गत दशकों की तुलना में मानवीय संवेदनाओं को अधिक निश्चयात्मकता से उभारा गया हैं। नारी को अपनी सीमाओं और शक्तियों से अपेक्षाकृत अधिक विचारशीलता के साथ निरुपित किया गया हैं। व्यक्ति जीवन की समस्याओं को सामाजिक सरोकारों के सन्दर्भ में उकेरा गया हैं।संभोग की स्थितियों को निर्विकार रुप में चित्रित किया गया हैं। उपन्यासों में प्रयोग के स्तर पर पत्र और डायरी

शैली का उपयोग किया गया हैं। इन उपन्यासों में रिपोर्ताज,रेखाचित्र और संस्मरण जैसे तत्व भी दिखाई देते हैं।

'पॉच ऑगनों वाला घर'→व्यास पुरस्कार से विभूषित(1998: पॉच ऑगनों वाला घर) उपन्यास में कथाकार ने मध्यवर्गीय परिवार के चित्रण के माध्यम से 1940 से 1990 तक मध्यवर्गीय समाज की बदलती मानसिकता तथा समाज की स्थिति और गति का सशक्त चित्रांकन किया हैं। उपन्यास में आए परिवार की तीन पीढ़ियॉ बदलते समाजिक परिवेश की परिणतियों को भोगती हुई नवीन–नवीन स्वरुप ग्रहण करती हैं।पारिवारिक सन्दर्भ में सयुंक्त परिवारों का टूटते जाना तथा सॉस्कृतिक धरोहर से पूर्णतः अन्जान पीढ़ी का आत्म केन्द्रित हो जाना ही उपन्यास का मुख्य कथ्य हैं।

उपाध्याय –2 कहानी साहित्य एक परिचय

हिन्दी कहानी का विकास– हिन्दी की प्रथम कहानी,पहला चरण:चौथे दशक तक→

सन् 1900 में जन्मी हिन्दी कहानी सन् 1918 तक पूर्ण रुप से प्रतिष्ठित हो गयी थी और हिन्दी गद्य की अन्य विद्याओं की तरह अपने पृथक रुप में पहचानी जानी लगी थी।रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में छः कहानियों को हिन्दी की मौलिक कहानियों के शीर्षासन पर प्रतिष्ठित किया हैं। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित प्रमुख कहानियॉ इस प्रकार हैं→

(1)'इन्दुमती'–	किशोरी लाल गोस्वामी	जनवरी–	1900
(2) 'गुलबहार' –	किशोरी लाल गोस्वामी	सन्–	1902
(3) 'प्लेग की चुड़ैल'–	मास्टर भगवान दास	सितम्बर–	1902
(4) 'ग्यारह वर्ष का समय'–	रामचन्द्र शुक्ल	सन् –	1903
(5) 'पंड़ित और पड़ितानी'–	गिरिजादत्त वाजपेयी	सन् –	1903
(6) 'दुलांई वाली'	– बंगमहिला	सन् –	1907

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'इन्दुमती' कहानी को मार्मिक और भावप्रधान मानते हुए हिन्दी की प्रथम कहानी घोषित किया हैं,और'इन्दुमती'की हिमायत करते हुए लिखा हैं कि ''यदि यह किसी बंगला कहानी की छाया नहीं हैं तो यही हिन्दी की पहली मौलिक कहानी हैं'', उनके विचार से 'ग्यारह वर्ष का समय' और 'दुलाई वाली' क्रमशः दूसरी और तीसरी कहानियॉ हैं। परन्तु ऐसा माना जाता हैं कि साहित्यिक निर्णय और मूल्यांकन न्यायबुद्धि से नहीं बल्कि षड़यन्त्र और ताकत के बल पर किये जाते हैं। अतः इसी तर्क के आधार पर देवी प्रसाद वर्मा ने माधव राव स्प्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को पहली कहानी के रुप में प्रस्तावित करते हुए लिखा है कि इस कहानी को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और रामचन्द्र शुक्ल के षड़यन्त्र के कारण पहली कहानी का पद नहीं मिला।''[11]

उन्होंने आगे लिखा हैं........ कि पूर्वाग्रह के कारण हम वास्तविकता से दूर हटते चले जा रहे हैं। यदि हम निष्पक्ष होकर तथ्यों पर शोध करे,तो सन् 1901 में 'छत्तीस गढ़ मित्र' मासिक पत्रिका में प्रकाशित 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी हैं(यह दूसरा विषय है कि प्रस्तुत कहानी प्रकाशित होने के पूर्व कब लिखी गयी।) स्व0 माधव प्रसाद स्प्रे द्वारा लिखित इस कहानी में कहानी के सभी तत्व विद्यमान हैं। सातवें दशक में कहानी का जो स्वरुप आज हमारे सम्मुख हैं, उसके सभी बीज इस कहानी में स्पष्ट हैं।[12]

इस बात को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने लिखा हैं कि 'वास्तव में स्व0 स्प्रे जी ने आगे आने वाली कहानी का संकेत उसी समय दे दिया था। तत्कालीन बोझिलता से अलग अपनी संक्षिप्ताके कारण यह कहानी बहुत महत्वपूर्ण हैं।

उन्होंने इस बात पर अपना तर्क दिया हैं कि इस कहानी में यदि हम दोष ढूढ़े तो,उसका एक मात्र दोष यह हैं कि,ये कहानी 'सरस्वती' में न छपकर 'छत्तीसगढ़ मित्र' में प्रकाशित हुई। क्योंकि स्व0 स्प्रे आचार्य शुक्ल या द्विवेद्वी जी के न तो कृपापात्र थे और न अन्य साहित्यकारों की तरह उनके इंगित पर शुकपाठ करते थें,बल्कि किसी सीमा तक उनके स्वस्थ विरोधी के रुप में थें। सम्भवतः यही कारण हैं कि 'एक टोकरी भर मिट्टी' उसी लामबद्री का शिकार हो गयी।(13)

हिन्दी की पहली कहानी किसे माना जाए सम्भवतः यह प्रश्न विवांदाग्रस्त हैं। जैसे–जैसे पत्र–पत्रिकाओं की फाइलें खोज कर उनकी प्रकाशित सामग्री का विवेचन विश्लेषण होगा,नवीन –नीवन तथ्य सामने आएंगें।

पहले चरण के अन्य कहानी कारों में प्रसाद ने भावात्मक कहानियॉ लिखी तथा प्रेमचन्द सामाजिक कहानियों के प्रेरणा स्त्रोत रहें। यद्यपि प्रसाद जी की पहली कहानी 'ग्राम' सन्(1911) में हिन्दू पत्रिका में छप चुकी थी तथापि उनकी महत्वपूर्ण कहानियॉ 1926 से लेकर 1936 तक प्रकाशित हुई। 'प्रतिध्वनि'(1926), 'आकाशदीप'(1929), 'ऑधी''(1931) 'इन्द्रजाल'(1936) ये उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

प्रेमचन्द सामाजिक यथार्थ को लेकर कहानी लेखन के क्षेत्र में प्रवृत्त हुए।लगभग 300 कहानियों में उन्होंने सामाजिक जीवन के सहस्त्राधिक रुप उभारे हैं। लेखक ने समाज के विविध स्तरों ,वर्गो और समुदायों से
अपने कथ्य चुने हैं। 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी वर्गीय विशेषताओं को बिम्बित करती हैं। 'नशा' में सामन्ती परिवेश झलकता हैं तथा 'होली का उपहार' राजनीतिक घटना प्रधान कहानी हैं। 'ईदगाह' व 'लाटरी' जैसी कहानियों में वर्णनात्मकता झलकती हैं तथा 'पूस की रात' और कफन जैसी कहानियों में कलात्मकता का प्रभाव झलकता हैं।

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने 'उसने कहा था' 'सुखमय जीवन' और 'बुद्ध का कांटा' कहानियॉ लिखी। 'उसने कहा था' उनकी प्रसिद्धि का कारण हैं, यह कहानी समस्त हिन्दी कहानी साहित्य की उत्कृष्ट रचना हैं। बहुत समय तक ऐसा माना जाता रहा हैं कि उन्होंने मात्र तीन ही कहानियॉ लिखी हैं मगर शोधकार्यो मुख्यतः,मनोहर लाल(स्वर्गीय) द्वारा संमादित 'गुलेरी' 'समग्र'के प्रकाशन के उपरान्त उनकी अनेक कहानियॉ प्रकाश में आयी।

विश्म्भरनाथ शर्मा कौशिक ने लगभग दो सौ कहानियॉ लिखी। 'गल्प मन्दिर','चित्राशाला','मणिमाला','कल्लोल' उनके कहानी संग्रह हैं। 'ताई' उनकी प्रसिद्ध

कहानी हैं। इन्होंने अपनी कहानियों में पारिवारिक समस्याओं को उकेरा।सुदर्शन ने 'सुदर्शन सुधा', सुदर्शन सुमन', 'तीर्थ यात्रा', 'पुष्पलता', 'गल्पमंजरी', 'सुप्रभात', 'परिवर्तन', 'पनघट' इनके कहानी संग्रह हैं। 'हार की जीत' और कवि की स्त्री इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं इन्होंने सामाजिक समस्याओं पर कहानियाँ लिखी।

चतुरसेन शास्त्री ने 'दुखवा मैं कासो कहों मोरी सजनी', 'अंबपालिका', प्रबुद्ध, 'भिक्षु राज', 'हल्दीघाटी' में, 'वाणवधू' 'कंकड़ी की कीमत', उल्ललेखनीय कहानियाँ लिखी, इनकी अधिकांश कहानियाँ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखी गयी हैं।

राधिका रमण प्रसादसिंह की 'कानों में कंगना', 'दरिद्र'नारायण' , 'पैसे की धुघनी' प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। राय कृष्ण दास ने 'अन्तपुर का आरम्भ', 'रमणी का रहस्य' जैसी कहानियाँ लिखी। इनकी कहानियों में भावात्मकता और काव्यात्मकता का पुट झलकता हैं। ज्वालादत्त शर्मा ने 'अनाथ बालिका', 'भाव परिवर्तन', विरक्त', 'विज्ञानानन्द', 'मेहनतनामा', 'विधवा', 'बूढ़े का ब्याह', 'तस्कर' तथा कहानी 'लेखक' जैसी उल्लेखनीय कहानियाँ लिखी। इन्होंने उत्तर भारतीय जीवन को अपनी कहानियों की विषय वस्तु बनाया ।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी ने 'झलझला', 'नन्दिनी', 'अंजलि' जैसी भावप्रधान' उल्लेखनीय कहानियाँ लिखी। गोविन्द बल्लभपन्त ने 'जूठा आम', 'मिलन मूहुर्त', 'प्रियदर्शी' कहानियाँ लिखी। इनकी कहानियों में प्रसाद की भावुकता और प्रेमचन्द्र के यथार्थ का अद्भूत समन्वय दिखाई देता हैं। चण्डी प्रसाद हृदयेश ने 'प्रेम परिणाम', 'प्रेम पुष्पाजंलि', 'प्रणय परिपाटी', 'योगिनी', 'मौन व्रत', 'प्रतिज्ञा', और 'शान्ति' जैसी भावात्मक कहानियाँ लिखी।

जी0पी0 श्रीवास्तव ने 'पिकनिक', 'मौलवी साहब', 'पंड़ित जी', 'मास्टर साहब', 'कॉलेज मैच', 'चचा–भतीजे', 'एक अंडर ग्रेजुएट की शादी', 'मीठी हँसी', 'जी हुजूर', 'अंटशंट', 'ओवर कोट' जैसी हास्य रसपूर्ण कहानियाँ लिखी। विश्वम्भरनाथ जिज्जा ने 'घूँघट वाली' कहानी संग्रह की रचना की। जिसमें अधिकांश कहानियों में भावात्मकता झलकती हैं। सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिाणी', 'पदमो और लिली', 'श्यामा', 'सुकुल की बीबी', 'चतुरी चमार'जैसी उल्लेखनीय कहानियों की रचना की। इनकी कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को उभारती हैं। पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'चिन्गारियाँ', 'शैतान मंडली', 'इन्द्रधनुष', 'बलात्कार', 'चाकलेट', 'दोजख की आग', 'निर्लज्जा' इत्यादि उल्लेखनीय कहानी संग्रह लिखें। इनकी कहानियों में सामाजिक जीवन में व्याप्त विद्रूपताओं, वीभत्सताओं का चित्रण हैं। विनोदशंकर व्यास ने 'प्रत्यावर्तन', 'हृदय की कसक', 'पतित', 'पूर्णिमा', 'सुख' 'प्रेम की चिता', 'करुणा', 'रधिया', 'चिड़िया वाला', 'शीर्षक

रहित','स्वराज्य कब मिलेगा','अब', 'विद्रोही' जैसी प्रसिद्ध कहानियॉ लिखी। इन्होंने सामाजिक,ऐतिहासिक तथा भावात्मक कहानियॉ लिखी हैं।

शिवरानी देवी ने प्रेमचन्द्र की शैली के अनुकरण पर कुछ कहानियॉ लिखीं।

वाचस्पति पाठक ने 'द्वादशी' और 'प्रदीप' कहानी संग्रह लिखें। 'सूरदास','कागज की टापी' इनकी प्रसिद्ध भावात्मक कहानियॉ हैं।

भगवती प्रसाद वाजपेयी ने लगभग 300 कहानियॉ लिखीं हैं। 'मिठाई वाला','मधुपर्क','दीपमालिका', 'हिलोर','हृदयगति','तारा''स्वप्नमयी',शबनम इनकी उल्लेखनीय कहानियॉ हैं।इन्होंने अधिकांशतः सामाजिक जीवन की समस्याओं को अपनी कहानियों में उभारा हैं।

कृष्णकांत मालवीय ने 'रजिया की समस्या' कहानी में सेक्स की समस्या को उभारा हैं।

चौथे दशक के अन्त तक हिन्दी कहानी साहित्य में पर्याप्त विविधता आ गयी थी। कहानीकारों ने समसामाजिक जीवन स्थितियों को तत्कालीन परिवेश में उभार कर सामाजिक जीवन के प्रत्येक पक्षपर कहानियों की रचना की। कहानीकारों ने प्रायः बोलचाल की भाषा का प्रयोग अपनी कहानियों में किया। कथ्य और कथन की दृष्टि से इन कहानियों की भिन्न कोटियॉ दिखाई देती हैं। इस युग की कहानियॉ सामाजिक जागृति को दर्शाती हैं तथा उनमें आदर्शवाद का आग्रह दिखायी देता हैं। कहानियों में कथात्मक शैली का प्रयोग हुआ। कलात्मक सौष्ठव के लिये कहानीकारों ने सांकेतिकता,लाक्षणिकता,वक्रता,और व्यंग्यत्मकता का प्रयोग किया।

दूसरा चरणःपॉचवें–छठे दशक के कहानीकार और उनकी प्रमुख कहानियॉ

पॉचवें छठे दशक के कहानीकारों में वृंदावनलाल वर्मा ने 'दस के सौ''हर सिंगार','दबे पॉव','कलाकार का दण्ड', 'शरणागत' जैसी उल्लेखनीय कहानियों की रचना की। वर्मा जी ने आंचलिकता में सामाजिक जीवन को उभारकर मानवीय मूल्यों की स्थापना का प्रयास किया। उपेन्द्रनाथ अश्क ने 'उबाल'कैप्टन रसीद','बच्चे','मेमने','डाची'कहानी 'लेखिका', 'जेहलम' के सात पुल' जैसी प्रसिद्ध कृतियॉ हिन्दी कहानी साहित्य को दी। इन्होंने सामाजिक जीवन की अनेक समस्याओं को अपनी कहानियों में उभारा।जैनेन्द्र ने 'एक रात','स्पर्धा','जयसंधि','ध्रुवयात्रा','नीलम देश की राजकन्या','दो चिड़ियॉ','वातायन','फॉसी','कथामाला', 'पाजेब' इत्यादि प्रसिद्ध कहानी संग्रहों की रचना की। इन्होंने कहानियों के पात्रों को मनोवैज्ञानिक रुप में चित्रित कर उनकी मनोग्रन्थियों को बड़ी सूक्ष्मतःके साथ उभारा। साथ–साथ कहानियों में दार्शनिकता की प्रतिष्ठा कर उसे साहित्य एक गंभीर विद्या बनाया।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयायन 'अज्ञेय' ने 'हेलीजोन की बतखें','सेब और 'देव','रोज','इन्दु की बेटी''पहाड़ी जीवन','पुरुष के भाग्य','कड़िया' जैसी प्रसिद्ध कहानियॉ हिन्दी साहित्य को दी तथा 'परम्परा''कोठरी की बात विपयगा',जयदोल,शरणार्थी कहानी संग्रह की रचना की। अज्ञेय जी ने अपनी कहानियों में फ्रायड के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग किया। इलाचन्द्र जोशी जी ने 'रोमांटिक छाया', 'दिवाली' 'होली','आहुति', 'कंटीले फूल लजीलेकांटे' कहानी संग्रह की रचना की। जोशी जी ने फ्रायड,एडलर,युग की मान्यताओं को अपनी कहानियों स्थान दिया तथा मनोवैज्ञानिक सूत्रों से अपनी कहानियों के ताने बानों को बुना। भगवती चरण वर्मा ने 'दो बांके','इन्सटालमेन्ट', 'मुगलों'ने सल्तनत बख्श दी' ,'प्रायश्चित','प्रेमकी तस्वीर','विवशता','कायरता','काश' कि मैं कह सकता','निरुपम','रेल में',कुंवर साहब का कुत्ता', तिजारत का नया तरीका ,'नाजिर मुंशी', 'अर्थ पिशाच',बाहर–भीतर','उत्तर दायित्व','अनशन','लाल तिकड़मी लाल',विक्टोरिया जैसी प्रसिद्ध कहानियों का प्रयणन किया। इनकी कहानियों में गॉधीवादी और मार्क्सवादी के विचारों का प्रभाव झलकता हैं।हास्यरस प्रधान कहानियों में इन्होंने व्यंग्यात्मकता के द्वारा समाज की विद्रूपताओं उभार कर पात्रों को सद्वृत्तियों की ओर प्रेरित किया हैं। यशपाल जी ने 'पिंजरे की उड़ान','ज्ञानदान','वो दुनियां', 'चक्कर क्लब','तर्क का तूफान' 'अभिशाप','भस्मावृत' 'चिन्गारी' 'फूलों का कुर्ता,'धर्म युद्ध जैसे कहानी संग्रहों की रचना की। इनकी कहानियों में बौद्धिकता तथा भावुकता का अद्भुत समन्वय दिखायी देता हैं। ये साम्यवादी विचार धारा के कहानीकार माने जाते हैं।

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने 'बचपन' 'पगली','कामकाज','भूल','सन्देह','हूक', 'ऑसू', क,ख,ग,'ताड़ का पत्ता','मचाकोस का शिकारी','गोरा' जैसी चर्चित कहानियॉ हिन्दी कहानी साहित्य को प्रदान की। इन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक मान्यताओं को सांस्कृतिक परिदृश्य में उभारा हैं। रांगेय राघव जी ने 'समुद्र के केन','अंधेरे के जुगनू','अंगारे न बुझे', 'इन्सान पैदा हुआ','ऐयाश मुर्दे', 'अधूरी मूरत', 'जीवन के दाने','साम्राज्य का वैभव','देवदासी',चीवर जैसे प्रसिद्ध कहानी संग्रह लिखें।विषय वस्तु की दृष्टि से यदि इनकी कहानियों का अंकन किया जाए तो इन्हें सामाजिक ही कहा जा सकता हैं,परन्तु इनमें राजनीतिक चिन्तन और मनोवैज्ञानिक तत्वों का निरुपण भी दिखाई देता हैं। राहुल सांकृत्यायन ने 'वोल्गा से गंगा','सतमी के बच्चे','बहुरंगी','मधुपुरी' जैसे कहानी संग्रहों की रचना की। वर्ण्य विषय की दृष्टि से राहुल ज्जी के तीनों संग्रहों की कहानियॉ सामाजिक कोटि की हैं।

सियाराम शरण गुप्त ने 'मानसी और बोल','अंतिम आकांक्षा','उन्मादिनी' जैसे कहानी संग्रह की रचना की।इनकी कहानियों में वेदना,करुणा,ममता,स्नेह इत्यादि भावों की प्रधानता हैं।

अमृत लाल नागर ने समसमायिक जीवन स्थितियों को अपनी कहानियों की विषय–वस्तु बनाया।

सुमित्रानन्दन पन्त ने 'पानवाला','दम्पत्ति', 'बन्नू उस पार' 'अवगुंठन','अन्तिम कहानी' इत्यादि कहानियॉ लिखीं। इन कहानियों में व्यक्ति और समाज की द्वन्द्वात्मक स्थितियों को भावात्मक पुट देकर उभारा गया हैं।

महादेवी वर्मा की 'स्मृति की रेखाएं' और अतीत के चलचित्र भी कहानियों के सन्दर्भ में चर्चित रही। पर इन्हें संस्मरण या रेखा चित्र की श्रेणी में रखा जाना ज्यादा समीचीन जान पड़ता हैं।

शिवपूजन सहाय ने 'मुंडमाल' और 'कहानी का प्लाट', 'मान–मोचन' जैसी भावपूर्ण कहानियॉ लिखीं।

कृष्ण नन्द गुप्त ने 'पुरस्कार','अंकुर','जलकण' कहानी संग्रह की रचना की।

जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' ने 'किसलय','मालिका','मृदुरत्न',मधुमयी कहानी संग्रह लिखें। इन्होंने कहानियों में मानवीय संवेदनाओं को उभारा हैं।

मोहन लाल महतो वियोगी ने 'कवि','बच्चे','खोपड़ी', 'पॉच मिनट' जैसी चर्चित कहानियॉ लिखी।

अन्नपूर्णानन्द ने 'मेरी हजामत','मगन रहु चोला',महाकवि चच्चा,'मंगलमोद','कल की बात', जैसे हास्यरस प्रधान कहानी संग्रह लिखें ।जयनाथ नलिन ने 'नब्राबी सनक','झुरमुट', 'जीवन का सत्य',शतरंज के मोहरे''जवानी का नशा','टोलों की चमक' कहानी संग्रह लिखें।

इस युग के अन्य कहानीकारों में प्रफुल्ल चन्द ओझा,'मुक्त'कमलाकान्त वर्मा, देवीदयाल चतुर्वेदी मस्त जानकी वल्लभ शास्त्री राजेश्वर प्रसाद सिंह,शांति स्वरुप गौड़ व्यथित हृदय, आरसी प्रसाद सिंह द्विजेन्द्रनाथ मिश्र,घिल्डियाल पहाड़ी ,धनीराम प्रेम, नरेश मधुसूदन, ब्रजेन्द्रनाथ गौड़, नरसिंह राम शुक्ल, राधाकृष्ण,हरिशंकर शर्मा, शिक्षार्थी, बद्रीनारायण शुक्ल कांता नाथपांडेय', कृष्ण देव प्रसाद गौड़, प्रभाकर माचवे, श्रीनाथसिंह, श्रीराम शर्मा, रधुवीर सिंह,नरसिंह जोशी, भगवतशरण उपाध्याय,भुवनेश्वर प्रसाद,शौकत उस्मानी,रामवृक्ष बेनीपुरी राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह, यमुनादत्त वैष्णव,रामेश्वर शुक्ल 'अंचल',माखनलाल चतुर्वेदी, धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी ,तेजरानी पाठक,सतगुरु शरण अवस्थी, सत्यजीवन वर्मा,नरेन्द्र उल्लेखनीय हैं।

महिला कथाकारों में उषा देवी मित्रा ने नारीजीवन के विविध आयामों को अपनी कहानियों में उभारा। कमला देवी चौधरी ने 'उन्माद','पिकनिक''यात्राा',बेलपत्र कहानी संग्रहों में गृहस्थ जीवन की विभिन्न स्थितियॉ का चित्रण किया हैं। हेमवती देवी ने 'स्वप्नभंग','धरोहर',कहानी संग्रह में नारी जीवन को विषय वस्तु बनाया ।

सत्यवती देवी मल्लिक ने 'दो फूल' कहानी संग्रह में नारी मन के भावों कोकुशलता के साथ उभारा। कुँवररानी तारादेवी ने 'देवदासी','कर्तव्य की बेदी',कहानी संग्रह की रचना की।

चन्द्रकिरण सौन खिन्सा ने अपनी कहानियों में नारियों की विवशताओं को उभारा हैं। कौशल्या अश्क ने भी नारी की विवशताओं को मनोंवैज्ञानिक रुप में उभारा। शिवरानी विश्नोई ने सामाजिक जीवन के कुछ चित्र कहानियों में उकेरे हैं।

इन दशकों में कहानीकारों ने व्यक्ति जीवन को उसकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों में उभारकर मानवीय मूल्यों को रुपायित किया हैं। नर–नारी के यौन–सम्बन्धों ,काम भावनाओं को तार्किकता और मनोवैज्ञानिकता में देखा और परखा हैं। कहानीकारों ने कथात्मक आत्मकथात्मक,डायरी,पत्र शैलियॉ अपनाई,परन्तु प्रधानता कथात्मक शैली की ही रही। इन दशकों की कहानियों में संश्लिष्टता दिखाई देती हैं और कहानी के रुप विधान तथा सौष्ठव में आर्कषण झलकता हैं।

तीसरा चरणःसॉतवें –आठवें दशक के कहानीकार और उनकी कहानियॉ→

इन दशकों के कहानीकारों में धर्मवीर भारती के कई कहानी संग्रह प्रकाश में आए ।इन्होंने 'गुल की बन्नों',सावित्री न02, 'बन्द गली का आखिरी मकान' जैसी चर्चित कहानियॉ हिन्दी साहित्य को दी। इनकी कहानियॉ काव्यात्मक भावुकता के साथ–साथ मानवीय संवेदनाओं को उभारती हैं। राजेन्द्र यादव ने 'जहॉ लक्ष्मी कैद हैं','कुतिया','अंगारों का खेल','रहस्यमयी','खानदानी घर','एक कमजोर लड़की','नास्तिक','मेरा प्रश्न सरल हो रहा हैं', 'ओवर हियरिंग', 'टूटना' जैसी प्रसिद्ध कृतियॉ कहानी साहित्य को प्रदान की। इन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक राजनीतिक चेतना के साथ–साथ नारीमन की उलझनों, विसंगतियों को पारिवारिक और सामाजिक परिदृश्य में उभारा हैं। मोहन राकेश ने 'जानवर और जानवर ''एकठहरा हुआ चाकू','बसस्टैड की एक रात','मलबे का मालिक', 'परमात्मा का कुत्ता','मवाली','आर्द्रा', 'एक और जिन्दगी','सुहागिनें' इत्यादि कहानियों में परिवेश को सूक्ष्मता में उभारकर सामाजिक यथार्थ का प्रभावशाली अंकन किया हैं और मानवीय अनुभूतियों को प्रभावशाली अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। गजानन माधव मुक्तिबोध ने 'काठ का सपना', 'कलाद ईथर ली','ब्रह्मराक्षस का शिष्य', 'प्रश्न'इत्यादि कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक संगठनों में व्याप्त भ्रष्टाचार के प्रभावपूर्ण चित्र उकेरे।
भैरव प्रसाद गुप्त ने 'कदम के नीचें','गत्ती भगत','कुत्ते की टांग','नयाखाता','डाकुओं का सरदार','मॉ','स्मारक','मास्टर जी','नौकरानी' इत्यादि कहानियॉ लिखीं। इन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक समस्याओं को विभिन्न रुपों में उभारा।

अमृतराय ने 'सती का शाप','एक 'कामयाब आदमी की तस्वीर','आह्मन','समय','एक सांवली सभा','डाकमुंशी की एक शाम', 'हारे थके' इत्यादि कहानियों में उन्होंने सामंती वादी और पूँजीवादी व्यवस्था में हो रहे शोषण के साथ–साथ नारी जीवन के विभिन्न चित्र उकेरे हैं। फणीश्वरनाथ रेणु ने 'तीसरी कसम','उच्चाटन','काकचरित','पुरानी कहानी','नया पाठ','सिरपंचमी का शकुन','जला आत्मसाक्षी', तीर्थोदिक','रसप्रिया' जैसी उल्लेखनीय रचनाऐं लिखी इनकी कहानियाँ जन जीवन को उनकी क्षेत्रीय विशेषताओं में उभारकर मानवता में आस्था व्यक्त करती हैं। साथ ही आंचलिकता का प्रभाव अपने में समेटे हुए दिखायी देती हैं।

शिवप्रसाद सिंह ने 'पाप जीवी','उपहार', 'कर्मनाशा की हार', 'धारा',' इन्हें भी इंतजार हैं,'सुबह के बादल', 'किसकी पांखें', 'धूल और हंसी',' शहीद दिवस', 'मुरदा सराय',जैसी मानवीय शक्ति का उद्घाटन करने वाली कहानियां लिखीं। मार्कण्डेय ने 'हंसा जाई अकेला','चॉद का टुकड़ा', 'कल्याण मन','महुआ का पेड़ 'घुन','धूल का घर','संगीत', 'ऑसू और इन्सान', 'दूध और दवा' जैसी कहानियों में जीवन की रागात्मकता को आंचलिकता के विविध रंगों में अभिव्यक्त किया हैं। कमलेश्वर ने 'राजा निरबंसिया', 'कस्बे का आदमी','खोयी हुई दिशाए', कहानी संग्रहों में परिवेश की पृष्ठभूमि में जीवन की सार्थकता की खोज की हैं।

निर्मल वर्मा ने 'डायरी का खेल','परिन्दें','लबर्स', 'माया दर्पण','जलती झाड़ी','तीसरा गवाह','सितम्बर की एक शाम' ,'पिक्चर पोस्टकार्ड','दहलीज','पहाड़','अंतर','धागे','अंधेरे में','पिता और प्रेमी' इत्यादि कहानियों में भारत और यूरोप के सामाजिक परिवेश में व्यक्ति को उभारा। इनकी कहानियों में परिवेश अधिक गहराया हैं। भीष्म साहनी ने 'चीफ की दावत','पहला पाठ','समाधि',भाई रामसिंह', 'अपने–अपने बच्चें','खून का रिस्ता','पासफेल','यादें' इत्यादि कहानियों में मध्यवर्गीय व्यक्ति की कुठा, घुटन,संत्रास,मिथ्याभियान को उभारा हैं।विष्णु प्रभाकर ने अपने कहानी संग्रह''आदि और अन्त','रहमान का बेटा','जीवन पराग','संधर्ष के बाद','जिन्दगी के झमेंले','धरती अब भी धूम रही हैं','खंड़ित पूजा',में सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं को उनकी स्वाभाविकता में उभारा हैं। शैलेश मटियानी ने 'प्रेममूक्ति','छोटी', 'मछलीबड़ी मछली', 'पोस्टमैन' 'लीक' 'बाली सुग्रीव','हरकू हौलदार','जिबूका','वह तू–ही था, इत्यादि कहानियों में 'महानगरीय जीवन ,पर्वतीय जन–जीवन ,नारियों के शारीरिक शोषण, श्रमिक वर्ग के श्रम शोषण के सहस्त्र चित्रउभारे हैं। ओंकारनाथ श्रीवास्तव ने 'कालसुन्दरी','बाली और बुन्दें बिन्दियां',नागपूजा', 'सर्वहारा' इत्यादि कहानियों में ग्राम्य जीवन के यथार्थ को कलात्मक रुप में उभारा हैं।

रामप्रसाद विद्यार्थी 'रावी' ने 'पाप का पुण्य','पहला कहानीकार','प्यार के बन्धन', कहानी संग्रहों में सामाजिक यथार्थ को उसकी सघनता में प्रस्तुत किया हैं। कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर ने 'आकाश के तारे', 'धरती के फूल', 'माटी हो गयी सोना ',कहानी संग्रहों मे सामाजिक यथार्थ के चित्र प्रस्तुत किये हैं।

डॉ0 महीपसिह ने 'धुंधले कोहरे','और भी कुछ ,'सुबह के फूल' कहानियों में जीवन की नग्नता,कुरुपता,वीभत्सता के कई चित्र उकेरे हैं। महेन्द्र भल्ला ने 'एकपति के नोटि्स' कहानी में नर–नारी के यौन सम्बन्धों को आधुनिक बोध में गहराया हैं। दूधनाथ सिंह ने 'रीछ',आइसबर्ग,'बिस्तर', जैसी उल्लेखनीय कहानियों में सामाजिक और राजनीतिक विद्रूपताओं नग्नताओं और वीभत्सताओं को उभारा हैं।'प्रक्षेपण और विवरण प्रियता दूधनाथ की कहानियों का एक बुनियादी द्वन्द्व हैं। आन्तरिक जगत् के विघटन और खोखलेपन या आत्मसंघर्ष की ओर संकेत करने के लिये लेखक प्रक्षेपित वस्तु को चमकदार शिल्प के माध्यम से उठाता हैं और फिर बयान बाजी का सहारा लेता हैं।[14] कृष्ण बलदेव वैद ने 'मेरा दुश्मन' जैसी चर्चित कहानी में व्यक्ति के अकेलेपन को गहराया हैं। रमेश बक्षी ने 'शबरी',कमल का फूल', 'तितली के पंख','एक अकथा','एक पौधे की जीवनी', जैसी उल्लेखनीय कहानियों में दैनिक जीवन प्रसंगों में जीवन दर्शन को उभारा हैं। शेखर जोशी ने 'कोसी का घटवार''बदबू कहानियों में आंचलिकता को उभार कर व्यक्ति की प्रेम वेदना को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं।

इसके अलावा मनहर चौहान,हसंराज रहबर ,नागार्जुन, आनन्द प्रकाश जैन,अयोध्या प्रसाद गोयलीय,केशव चन्द्र वर्मा,प्रयाग शुक्ल रघुवीर सहाय रामकुमार,गुलशेरखान शानी,मनोहर श्याम जोशी,हरिशंकर परिसाई राजेन्द्र प्रसाद अवस्थी,डॉ0 लक्ष्मीनारायण लाल श्रीकांत वर्मा ,श्री अनंत,श्याम सुन्दर घोष,काशीनाथ सिंह ज्ञानरंजन,रवीन्द्र कालिया कमल जोशी इस युग के उल्लेखनीय कहानीकार हैं।

गोविन्द मिश्र ने 'रगड़खाती आत्महत्याएँ', 'नये पुराने मॉ–बांप', 'अन्तःपुर', 'धॉसू', 'खुद के खिलाफ' इत्यादि कहानी संग्रहों में सामाजिक यथार्थ के परिवर्तनों के विभिन्न पहलुओं तथा राजनीतिक विडम्बनाओं को उदघाटित करने का प्रयास किया हैं। ''गोविन्द की ऑख अपने अन्दर और चारों तरफ तेजी से बदलते दृश्यों में से उन स्थितियों को पकड़ने की कोशिश करती हैं जो व्यक्ति के आन्तरिक व सामाजिक यथार्थ के स्थायित्व परिवर्तन दोनों को बॉध सके और मानना पड़ेगा कि उसके पास ऑख भी हैं और पकड़ भी।''[15]

इसके अलावा इस युग में कुछ महिला कहानी लेखिकाओं ने चर्चित कहानियॉ लिखी हैं इनमें उषाप्रियंवदा ने 'वापसी','खुले हुए दरवाजें','झूठा दर्पण','मोहबन्ध''एक कोई दूसरा','सागर पार का',कोई नहीं',जिन्दगी और गुलाब के फूल','स्वीकृति','जाले' 'दो

अन्धेरे' ,कच्चे धागे','दृष्टि बोध','पूर्ति सम्बन्ध','एक और विदाई','कितना बड़ा झूठ'इत्यादि कहानियों में आधुनिक जीवन की विंसगंतियों, विद्रूपताओं, कुरुपताओं को सहज स्वाभाविक रुप में उतारकर भावुकता के स्थान पर कहानियों को वैचारिक ऊष्मा प्रदान की हैं। 'वापसी' इनकी अति चर्चित कहानी हैं।

शान्ति जोशी ने 'अभिशाप','अनुभव का बोध','वह किसी की नहीं',मौसी','प्रकृति का पुत्र','पितृ' 'कालचक्र रामी' इत्यादि कहानियों में पारिवारिक जीवन को उभारकर सामाजिक जीवन के चित्र उकेरे हैं। नर–नारी की कामजन्य चेष्टाओं को मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति प्रदान की हैं।

मन्नू भण्डारी ने 'गति का चुम्बन','एक कमजोर लड़की','श्मशान','कील और कसक','चश्में', 'आकाश','तीसरा आदमी','सजा','क्षय','अकेली','यही सच हैं',इत्यादि कहानियों में नारी जीवन की अनेक समस्याओं को उकेरा हैं तथा उनकी कामनाओं, सबलताओं, दुर्बलताओं, तृप्तियों, अतृप्तियों,आकांक्षाओं के अत्यन्त प्रभावशाली चित्र उकेरे हैं। कृष्णा सोबती ने 'बादलों के घेरें','कुछ नही कोई नहीं',तिन पहाड़ एक दिन' 'मित्रों मरजानी' इत्यादि कहानियाँ इन्होंने प्रेम को रोमांटिक बोध से परे उसे शारीरिक आवश्यकता के रुप में उभारा हैं। ममता कालिया ने बड़े दिन की पूर्व सांझ,'साथ','निवेदन'' दो जरुरी चेहरे','जितना तुम्हारा हूँ ,'लगभग प्रेमिका',प्यार के बाद ,पीली लड़की,'एक अदद औरत' इत्यादि कहानियों में नर–नारी के यौन सम्बन्धों को सामाजिक पारिवारिक परिवेश में जीवन की एक आवश्यकता के रुप में उभारा हैं।
निरुपमा सेवती ने 'भीड़ में गुम', 'संक्रामण','तमफलाहट' 'सुनहरे देवदार', 'शायद हो शायद नहीं','झूठ का सच','सब में से एक बद्धमुष्टि,'इत्यादि कहानियों में प्रेम के भावनात्मक और शारीरिक दोनों रुपों को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। दीप्ति खण्डेलवाल ने'क्षितिज', 'शेष'–अशेष', 'एक पारा पुरवैया', 'देह की सीता', 'आधार', 'तनाव', 'आवर्त', 'आत्मघात', 'सन्धि'–पत्र', 'अभिशप्ता', 'प्रेत',इत्यादि कहानयिों में पति–पत्नी के सम्बन्धों में आ रही दरारों तथा नर–नारी के काम सम्बन्धों को परिस्थिति के प्रकाश में चित्रित कर बदलते सामाजिक बोध को उजागर किया हैं। मृदुला गर्गने 'कितनीकैदें', 'हरीबन्दी', 'एकऔरविवाह', 'दुनियाका कायदा', 'झुटपुटा', 'अवकाश', 'रुकावट', 'तुक', 'डेफोडिल जल रहे हैं','बेमेल', इत्यादि कहानियों में सैक्स की तीव्र अनुभूतियों को उभारकर नर–नारी के यौन सम्बन्धों को निःसंकोच व्यक्त किया हैं। मृणाल पांडे ने 'आहटें','शरण्य की ओर','कोहरा और मछलियाँ','तुम और वह और वे','कगार पर', इत्यादि कहानियों में 'प्रेम के भावात्मक रुप तथा कोमल अनुभूतियों को उभारा हैं।

मणिका मोहिनी ने 'एक ही बिस्तर पर','तलाश','दुश्मन','खत्म होने के बाद','विषयान्तर', 'बोरियत','कैरम की गोट में','देखा–देखा','असम्बद्ध','उसका होना न

होना', 'अभी तलाश जारी हैं','इन्नोसेंट लवर','स्वप्न–देश' इत्यादि कहानियों में बदलते सामाजिक परिवेश में पति–पत्नी के बीच उभर रहे तनावों को तथा नवयुवकों और नवयुवतियों में बढ़ती काम तुष्टि की चाह को उभारा हैं।

रजनी पनिकर ने 'मोमबती' ,'तुम और साहित्य','नारी नहीं नारी का विज्ञापन ,'गुलाब के फूल जिन्दगी के कांटें,'दायरे और दायरें' इत्यादि कहानियों में प्रेम के मानवीय रुपसे वंचित नारियों को कुंठा के साथ साथ प्रेम ,काम और यौन भावनाओं के चित्रित किया है ।

इंदुबाला ने 'मेरी तीन मौतें','दूसरा सुहाग','मैं दूर से देखा करती हूँ','दो शरीर मात्रा','निरावरण' इत्यादि कहानियों में नारियों के भटकाव और दुविधाओं तथा उलझनों का चित्रण किया हैं।

शशि प्रभा शास्त्री ने 'एक तिकोन की तीन मछलियॉ', 'तट के बन्धन',प्यार की दीवार', 'खाली झोली भरे हाथ' इत्यादि कहानियों में पारिवारिक परिवेश में भारतीय नारी को विमिन्न आयामों में प्रस्तुत किया हैं। शिवानी ने 'लाल हवेली ' कहानी में युवती के द्वन्द को प्रभावपूर्ण रुप में उभारा हैं।

प्रतिमा वर्मा ने 'राख','दूरस्थ','एकडिनरताज में' इत्यादि कहानियों में भटकाव,संत्रास,मोहभंग की स्थितियों का चित्रण किया हैं।

विजया चौहान ने कहानी 'एक सर्द खामोशी',कहानी में 'पति–पत्नी', के रिश्तों में आए ठंडेपन को दर्शाया हैं।

स्वरुप कुमारी बख्शी ने 'डाली की डिनर पार्टी',सेंट की शीशी',कहानियों में पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरुप बढती फैशन परस्ती,आड्म्बरों,दिखावे पर करारे व्यंग्य किये हैं।

सोमावीरा ने 'काला जादू' कहानी में भारतीय मध्यवर्गीय जीवन का चित्र उकेरा हैं।

शान्ति मेहरोत्रा ने 'बेटे की वापसी' कहानी में दो भिन्न पीढ़ियों के वैचारिक अन्तर को उभारा हैं।

लीला अवस्थी ने कहानी'पहला ताजमहल' में ताजमहल बनाने वाले शिल्पियों के हाथ शाहजहॉ द्वारा कटवाने की घटना का कारुणिक चित्रण किया हैं ।

विमला रैन ने 'कहानी ,'बुझे दीप' में नारी को उसके गौरव ,सम्मान ,और अधिकार से जीने की प्रेरणा प्रदान की हैं।

अनीता औलक ने 'चारागाहों के बाद ,'लाल परांदा,'एक बार फिर'इत्यादि कहानियों में प्रेम–भावना को नारियों की कुंठा के रुप में चित्रित किया हैं।

मेहरुन्निसा परवेज ने 'शिनाख्त','सिर्फ एक आदमी','अपने–अपने दायरें','तीसरा पंच','बंजर दुपहर','बीच का दरवाजा','खाली ऑखों की पीड़ा','फाल्गुनी','बूँद का हक' इत्यादि कहानियों में नर–नारी के यौन सम्बन्धों के विविध चित्र उकेरे हैं। सुधा अरोड़ा ने 'आग','खलनायक','एक सेन्टीमेन्टल डायरी की मौंत','इस्पात','बगैर तराशे हुए','पति परमेश्वर','मरी हुई चीज'इत्यादि कहानियों में भावात्मक प्रेम और मोहभंग के चित्र उकेरे हैं। सिम्मी हर्षिता ने 'चक्रभोग','अपने–अपने दायरे',कमरे में बन्द आभास','उसका मन'इत्यादि कहानियों में अविवाहित युवतियों की समस्याओं को कई कोणों से उभारा हैं। मायाप्रधान ने 'दंडित दर्प''प्यासारे मन'कहानियों में प्रेम में कुंठित नारियों का चित्रण किया हैं।

सातवें –आठवें दशक में हिन्दी कहानियॉ सचेतन,सहज, समांतर,जनवादी जैसे आन्दोलनों के घेरों से गुजरती हुई साहित्य की प्रखरतर विधा बनती चली गयी। इस युग के कहानीकारों ने समसामयिक राजनीतिक स्थितियों का गम्भीरता से चित्रण किया तथा व्यक्ति के सामाजिक जीवन को दर्शाते हुए भारतीय नारी के प्रभावशाली व्यक्तित्व का निरुपण किया और व्यक्ति की आर्थिक स्थितियों को वादमुक्त होकर उभारा तथा भारतीय समाज में स्थापित हो रहे जीवन मूल्यों को नये –नये सन्दर्भो और प्रसंगों में परिभाषित किया।

चौथा चरणः– नवें दशवें दशक के कुछ कहानीकार तथा उनकी कहानियॉः–

इस युग के कहानीकारों ने टूटती राजनीतिक व्यवस्था तथा राजनीतिक स्थितियों को अपनी कहानियों की विषय वस्तु बनाया हैं– इसी सन्दर्भ में

राकेश वत्स ने अपने कहानी संग्रह'एक बुद्ध और' की कहानियॉ 'कर्फ्यू' तथा 'एक बुद्ध और' में क्रमशः आतंकवाद से प्रभावित जन–जीवन तथा राजनीतिक विद्रूपता और अव्यवस्था से क्षुब्ध पात्र का व्यवस्था लाने का प्रयत्न तथा उसके संघर्ष को दर्शाया हैं।

रमेश उपाध्याय के कहानी संग्रह'किसी देश के किसी शहर में' की कुछ कहानियॉ जैसे 'बोझ','रोशनी','हवा','आग','मिट्टी' में क्रमशः अमीर के शोषण ,राजनीतिक विद्रूपता से प्रभावित प्रशासनिक व्यवस्था का लुंजपुंज होना ,दूसरी जगह आग लगने पर दमकल कर्मचारियों की लापरवाही तथा अपनी कॉलोनी में इस प्रकार की घटना घटने पर उनकी तेजी ,तथा मजदूरों की दयनीय स्थितियों को दर्शाया गया हैं। स्वदेश दीपक के संग्रह 'किसी अप्रिय घटना का समाचार नही' की कहानियों 'रफूजी','देश बॅट रहा हैं' में क्रमशः प्रशासनिक तंत्र की आपाधापी ,हिन्दू–सिख के दंगों की भयावहता का चित्रण किया गया हैं।

धीरेन्द्र अस्थाना के संग्रह 'जो मारे जायेंगे' शीर्षक कहानी में प्रशासनिक क्षेत्र बढ़ते भ्रष्टाचार को दर्शाया गया हैं। संजीव के संग्रह 'आप यहॉ हैं' की कहानियॉ 'धनुष टंकार','लोड रोडिंग','आप यहॉ हैं','ट्रैफिक जाम','धावक' 'धुंआता आदमी' में क्रमशःश्रमिक आन्दोलन के पीछे छिपी राजनीतिको की चालें, अव्यवस्था से क्षुब्ध आतंकवादी कार्यो में संलग्न युवकों की स्थिति राजनीतिक को द्वारा आदिवासियों के शोषण राजनीतिक कुचको में फॅसकर व्यवस्था के नियमों के उल्लंघन करने वाले पात्रों की स्थिति ,मूल्यहीनता,तथा दोषपूर्ण अर्थव्यवस्था से प्रभावित जीवन मूल्यों के हनन इत्यादि स्थितियों को दर्शाया गया हैं।नवें दशक के कहानीकारों ने नर–नारी सम्बन्धों को भी अपनी कहानियों का आलोच्य विषय बनाया ,तथा उन्हें विभिन्न सन्दर्भो में रुपायित किया।

राकेश वत्स के संग्रह की 'एक बुद्ध और की उफान','अकालग्रस्त','छुट्टी का एक दिन','दूसरी औरत','पुरुष पक्ष','स्थापित' इत्यादि कहानियों में पुरुष–नारी के सम्बन्धों को विभिन्न आयामों में व्यक्त किया गया हैं।

मधुसूदन आनन्द के संग्रह की कहानी 'साधारण जीवन में' पति की मृत्यु के बाद नायिका की दयनीय स्थिति और कारुणिक मृत्यु का चित्रण किया गया हैं।

धीरेन्द्र अस्थाना के संग्रह की 'सूखा','और आदमी रोया','मानसी गुफाएं' इत्यादि कहानियों में क्रमशः पुरुष की नारी लोलुपता,नारियों का नारियों के प्रति ईर्ष्या भाव, अकेलेपन, त्रिकोणात्मक प्रेम,प्रेम में वासनाओं के बहाव इत्यादि स्थितियों को चित्रित किया गया हैं। संजीव के संग्रह 'आप यहॉ हैं','कठपुतली','पुन्नी माटी','प्रेम मुक्ति',इत्यादि कहानियों में क्रमशः परित्यक्त नारी की स्थिति आर्थिक विवेचना से घिरे परिवार का वाहन करने वाली युवती की स्थिति तथा उसके कारुणिक निधन ,युवतियों के रुप ,यौवन मुस्कान को व्यापार का माध्यम बनाये जाने तथा जमींदारी आतंक से प्रभावित नायक की दयनीय स्थिति को चित्रित किया गया हैं।

श्रीकान्त वर्मा के संग्रह 'दूसरे के पैर','चबूतरा','परिणय','साथ','दूसरे के पैर', की इन कहानियों में पुरुष नारी की काम वासनाओं को विषय वस्तु बनाया गया हैं।

रमेश सत्यार्थी के संग्रह 'सुबह के अमलतास' की कहानियॉ तीन त्रिकोणों का त्रिभुज,'ईकाई धाई सैकड़ा','अस्वीकृतियों के बीच','असंबध','ठहरा हुआ सफर','सात जवान लड़कियों की गली','एक और न्यूड','ताड़ी घाट के संथाल' में त्रिकोणात्मक प्रेम, वेश्या के प्रति पुरुष के आर्कषण पति–पत्नी के सम्बन्धों बढ़ती दूरियों ,पुरुष द्वारा वैवाहिक जीवन का विरोध, युवक–युवती के आर्कषण,भावात्मक प्रेम को दर्शाया गया हैं।

इस दशक के कहानीकारों ने विभिन्न पारिवारिक सामाजिक सम्बन्धों के माध्यम से जीवन मूल्यों को निरुपित किया हैं। राकेश वत्स संग्रह 'एक बुद्ध और ' की कहानियों 'छुटकारा','समूह गान', 'नाई','काली घोड़ी','तरबूज','दो बूढ़ी होती औरतें','बैल,सॉप और

किसान की कथा','बचपन', 'सूरज हमें गर्मी देता हैं', 'मरना जीना',दादी, स्वदेश दीपक के संग्रह 'किसी अप्रिय घटना का समाचार नहीं' कीकहानियों 'कोर्ट मार्शल','हथौड़ा','मालिक का कुत्ता','अंधेरे की सुरंग','साकल'धीरेन्द्र अस्थाना के संग्रह 'जो मारे जायेंगे',की कहानियों 'चीख','औरांग उटांग',श्रीकान्त वर्मा के संग्रह 'दूसरे के पैर' की कहानियॉ 'घुटन','चाकलेट','उसका क्रास',तथा रमेश सत्यार्थी के संग्रह 'सुबहके अमलतास की कहानियॉ 'बैसाखी','नीला संगमरमर',संत्राास इत्यादि में पारिवारिक सामाजिक सम्बन्धों और स्थितियों की लहरों में डूबते तिरतें मानवों का संस्कार किया गया हैं।

इस युग के कहानीकरों ने परिवेश को उभारकर जीवन के विशिष्ट प्रसंगों, घटना सन्दर्भों को केन्द्र में रखकर अपनी कहानियों का ताना बाना बुना हैं तथा कथ्य और शिल्प के माध्यम से अपनी रचनाओं को सोद्‌देश्य बनाया हैं।

दशवें दशक के कुछ कहानीकारों ने अपने कहानी संग्रहों में राजनीतिक चेतना को गहराई से उभारा हैं। हंसराज रहबर के संग्रह 'पथ कुपथ' की कुछ कहानियों 'हो भी और नहीं भी''आवाज के हाथ',नयी कहानी में क्रमशः'राष्ट्र के बौने विचार', का राष्ट्र पर प्रभाव आतंकवादी ठगों पर कहानीकार का प्रभाव, नवयुवकों तथा युवतियों के देशानुरागी प्रेरणा को दर्शाया हैं।

हृदय नारायण मेहरोत्रा 'हृदयेश' ने 'नागरिक' की 'अफवाहों में राष्ट्रीयता को खंडित करने के लिये चलाये जा रहे कुचक्रों की ओर संकेत किया हैं। जवाहर सिंह के 'जाल' संग्रह की कहानी भी भ्रष्ट राजनीति पर प्रहार करती हैं। इनकी अन्य कहानियॉ 'काम का पहिया',उत्तरार्द्ध ',राजनीतिक चेतना को उजागर करती हैं।

मिथिलेश्वर के 'तिरिया जनम' संग्रह की कहानी 'माधव की विहोशी','एक गॉव सूखाग्रस्त' में क्रमशः पात्र की देश भक्ति तथा राष्ट्रीय भावना को दर्शाया गया हैं। राकेश वत्स के 'इन हालात में' संग्रह की 'इन हालात में' 'लुटेरे',यात्रा इत्यादि कहानियों में क्रमशः पंजाब में आतंकवादियों की दहशत,निरपराधी को आतंकवादी समझ पुलिस द्वारा आतंकवादी माहौल को बढ़ाना ,तथा राजनीतिक विद्रूपताओं को दर्शाया गया हैं। दूघनाथ सिंह के संग्रह 'माई का शोकगीत' संग्रह की कहानी 'गुप्तदान' में पूँजीवादी व्यवस्था में बिचौलियों की महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर किया गया हैं। वीरेन्द्र सक्सेना के संग्रह 'दिखाने के दॉत की कहानी','चॉद और सूरज' में सुरक्षा व्यवस्था को शासन का महत्वपूर्ण दायित्व माना गया हैं। विजय के संग्रह 'अभिमन्यु की तलाश'की कहानियों 'अभिमन्यु अनुपूरक''जलकुंभी के फूल' 'बूढ़ी शारदा''एक ओर तथागत''रियासत''गरुड़' इत्यादि में राजनीतिक विद्रूपताओं, वीभत्साओं,मानवीय मूल्यों के हनन तथा साम्प्रदायिकता को दर्शाया गया हैं। रमाकान्त के संग्रह'एक विपरीत कथा'की कहानियों'सफल सूत्र','कुछ होणवाला ए''केमलिन टाइम','जनमत' में राजनीतिक विद्रूपताओं को दर्शाया गया हैं।

अब्दुल बिस्मिल्लाह के संग्रह 'रैन बसेरा' की कहानियों 'पगला राजा' 'खिलाड़ी', 'दूसरे मोर्चे पर ,दंगाई', 'अधर्म युद्ध' 'खुशी', में क्रमशः रघुनाथ शर्मा और हरवंश सिंह की कुटिलताओं सें क्षुब्ध पात्र की मनोदशा कॉलेज में अपनों की नियुक्ति के उपाय,छात्र आन्दोलन,शिक्षा में राजनीति के प्रवेश पर क्षोम,इत्यादि स्थितियों को दर्शाया गया हैं।

कमलेश्वर के संग्रह 'कोहरा' की कहानियॉ 'अपने देश में', 'सोलह छतों का घर', 'वीपिंग विलों', 'अजीत', 'कोहरा', 'मानसरोवर का हंस', 'तुम कौन हो', 'सफेद सड़क', 'आधी दुनिया' में क्रमशः साम्राज्यवादी व्यवस्था के शोषण,रंगभेद की अमानवीयता, साम्प्रदायिकता,देश की व्यवस्था से युवकों का असन्तुष्ट होना अवसरवादिता पर व्यंग्य,इंसानी रिश्तों की अहमीयत,नाजियों के अत्याचार,यूगोस्लाविया जाने वाली युवती' स्थिति इत्यादि को दर्शाया गया हैं।

गोविन्द मिश्र के संग्रह 'आसमान कितना नीला' की कांलखण्ड' कहानी में स्वतन्त्रता को जीवन मूल्य बताया गया हैं।योगेश प्रवीन के कंचन मृग संग्रह की'जोगन'में विभाजन की विभीषिका में पति और बेटों को खोने वाली पात्रा की मनोदशा को दर्शाया गया हैं। जमुना प्रसाद कसार के संग्रह 'सन्नाटे के शोर की कहानी में अयोध्या में बाबरी मस्जिद गिराये जाने पर देश में अन्य जगह की तरह हरदा कस्बे में भड़की हिंसा का चित्रण किया गया हैं।
राकेश वत्स के संग्रह 'एक बुद्ध और' की 'कम्बॅू' में साम्प्रदायिकता के कारणों पर प्रकाश डाला हैं।

दशवें दशक की कुछ कहानियों में व्यवस्था को दोषों को उभारने के साथ साथ राजनीतिक प्रपंचों,षड़यन्त्रों और वीभत्सताओं की ओर संकेत किया हैं।

इन कहानियों में कामतानाथ के संग्रह 'शिकस्त' की कहानी'कुदरत' राकेश के संग्रह 'इन हालात में' की 'नौकरी' कहानी, बटरोही के संग्रह 'अनाथ मुहल्ले के बठुल दा' की कहानी 'भागता हुआ ठहरा आदमी' हृदेश्य के संग्रह कहानियॉ 'नगर गाथा'घिराव', 'बांध'गिरिराजकिशोर के 'गाना बड़े गुलाम अली खॉ कहानी 'वह हॅसा क्यों नहीं इत्यादि में व्यवस्था के दोषों को उभारकर मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था व्यक्त की गयी हैं।

दशवें दशक के कुछ कहानीकारों ने अपनी कहानियों में समाज में बदलती नारी की स्थिति तथा नारी के बढ़ते कदमों को विभिन्न कोणों से व्यक्त किया हैं।

जवाहर सिंह के संग्रह 'जाल' की कहानियॉ 'स्मृतियों के खंडहर', ''झील और झरना''एक और समझौता', 'मातमपुर्सी', 'कामतानाथ' के संग्रह 'शिकस्त'की कहानियॉ 'सारी रात' 'खलनायक', 'हंसराज' रहबर के संग्रह पथ कुपथ की कहानियॉ अंधा भिखारी', 'घर'

और 'रोमान', 'पड़ाव','मिथिलेश्वर के संग्रह',त्रिरिया -जनम' की कहानियॉ तिरिया जनम''सावित्री दीदी' राकेश वत्स के संग्रह 'इन हालातो' मे' की कहानियॉ 'सावित्री', 'बिरजू तो मारा ही जाएगा''अवशेष' बटरोही के संग्रह 'अनाथ मुहल्ले के ढुल दा'की कहानी 'न्यौलि' 'मेहरुन्निसा परवेंज' के संग्रह 'ढहता कुतुबमीनार'की कहानियॉ 'ढहता कुतुबमीनार','ओस में 'डूबा गुलाब''सिर्फ एक आदमी','कयामत आ गयी हैं','नंगी ऑखों वाला रेगिस्तान', 'हत्या' 'एक दोपहर की' 'दोहरी की खातिर',फाल्गुनी आकाशनील' 'भाग्य में, 'दूधनाथ सिंह के संग्रह' 'माई का शोकगीत'की कहानी हुडार, वीरेन्द्र सक्सेना के संग्रह 'दिखाने के दॉत' की कहानियॉ पुनरागमन','दिखावे के दॉत',टकराहट उत्तरार्द्ध'धूपछॉव','अभिनय और निर्देशन' में 'विजय के संग्रह' 'अभिमन्यु की तलाश' की कहानियों 'धर'' 'कसाई' में मालती जोशी के संग्रह 'एक सार्थक दिन ' की कहानियों 'बोझ' 'अपराजिता''विदा' में रामकान्त के संग्रह 'एक विपरीत कथा',की कहानियों वह लड़की 'एक विपरीत कथा' में मंजुल भगत के संग्रह 'दूत'कहानियॉ 'दूत', तीसरी औरत,'कील पे अटकी कागज की चिट्ठी''गुलदुपरिया','सैलानियों का कश्मीर' 'अंतिम चोट' 'वह जो एक चाहत हुआ करती थी',में,अब्दुल विस्मिल्लाह के संग्रह 'रैन बसेरा' की कहानियॉ 'पुरानी हवेली' 'रैन बसेरा' में कमलेश्वर के संग्रह 'कोहरा' 'मरियम' में गुरुवचन सिंह के संग्रह 'हे अरण्य कुछ कहो' की कहानियॉ 'एक मौत',भूखा सूरज',टूटी हुई डार',तेंतुल में गिरिराज किशोर के संग्रह 'गाना बड़े गुलाम खॉका',की कहानियों 'ईश्वर को यही मंजूर था' चंरनी का असंमजस में गोविन्द मिश्र के संग्रह 'आसमान कितना नीला' इसी शीर्षक की कहानी में योगेश प्रवीन के संग्रह कंचन मृग' की कहानियॉ 'फैसला' सात कमल के फूल,अनब्याही ,'सिन्दूर की जीत, में जमुना प्रसाद कसार के संग्रह 'सन्नाटे का शोर' की कहानी पंड़ित काका की 'बिटिया हिमानी मे' ,रजनीकान्त के संग्रह 'बीते लम्हों का दर्द की कहानियॉ 'ताऊजी' 'इन्क्वारी',प्रश्नों के घेरे में, शीताशुं भरद्वाज के संग्रह 'मर्द का दर्द' की कहानियॉ 'शिलालेख''एक और बलि''एक और परीक्षा','कोटे से दूर' इत्यादि में 'नारियों को उनकी सम्पूर्णता में उभारा हैं'' ।

दशवें दशक के कुछ कहानीकारों ने भारतीय अर्थ व्यवस्था को विश्व के अन्य राष्ट्रो की अर्थव्यवस्था के प्रकाश में उभारकर जीवन की मार्मिक व्यजंना की हैं। जवाहर सिंह 'जाल' संग्रह की कहानी 'सुहागरात' में कामता नाथ के संग्रह 'शिकस्त' की कहानी 'वह' में मिथिलेश्वर के संग्रह 'तिरिया –जनम' की कहानी 'पुल' में हृदयेश के संग्रह'नागरिक' की कहानी 'मशीन' में मेहरुन्निसा परवेज के संग्रह 'ढहता कुतुबमीनार' की कहानी टूटने से पहले में',वीरेन्द्र सक्सेना के संग्रह 'दिखाने के दॉत' की कहानी 'जमीन के संग्रह' 'एक सार्थक खोज' की कहानी 'साजिश' तथा 'सार्थक' 'एक खोज' में रमाकान्त के संग्रह 'एक विपरीत कथा' की कहानियॉ 'बालूपोल' 'पेड़ के साथ' में अब्दुल

बिसिमल्लाह के संग्रह 'रैन बसेरा' की कहानी 'बैरंग चिट्ठी' में गुरुवचनसिंह के संग्रह 'हे अरण्य कुछ कहो की कहानियॉ 'सेतु भेड़िये में गिरिराज किशोर के संग्रह 'गाना बड़े गुलाम' 'अली खॉ' का कहानियों 'गुनहनार', 'पांचवां परांठा' में जमुना प्रसाद कसार के संग्रह 'सन्नाटे का शोर' 'इसी शीर्षक की कहानी में' इन सभी कहानियों में कहानीकारों ने अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ को लेकर जीवन की विवेचना की हैं

इस दशक के कहानीकारों ने कुछ कहानियों में मानवीय मूल्यों की संक्रमणता को भी विभिन्न सन्दर्भो में उठाया हैं क्योंकि बदलती सामाजिककार्थिक,राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थितियों में मानवीय मूल्यों के सन्दर्भ भी बदल रहें हैं। कामतानाथ के संग्रह की कहानी 'पिछली होली पर' में हंसराज रहबर के संग्रह'पथ–कुपथ की कहानियों 'हो भी और नहीं भी','व्यक्ति और बह्माण्ड 'लीलाराम की आचार संहिता''मेरा नाम बह्मदत्त हैं',में मिथिलेश्वर के संग्रह 'तिरिया जनम' की कहानियॉ रघुलाल टोला', 'अपने लोग'में,राकेश वत्स के संग्रह 'इन हालात में',की कहानी रिहाई में, दूधनाथ सिंह के संग्रह 'माई का शोकगीत' की कहानी 'जार्ज मेकवान' में बटरोही के संग्रह 'अनाथ मुहल्ले के ढुलदा' की 'इसी शीर्षक कहानी में' मेहरुन्निसा परवेज के संग्रह 'ढहता कुतुबमीनार' की कहानी 'अपनी जमीन में' वीरेन्द्र सक्सेना के संग्रह 'दिखाने के दॉत', की कहानियॉ आवरण और 'संभावनाऍ और संयोग' में मालती जोशी के संग्रह 'एक सार्थक दिन' की कहानियॉ 'मेहमान','पूजा के फूल','तौलिए''रिश्ते' में रमाकान्त के संग्रह 'एक विपरीत कथा'की कहानियों 'अंधे','मिस्टर सिंहा का इस्तीफा''माफिया''भाषण और गेहूँ की बोरियॉ''मृतजन्मा''बालहठ''चिनार अपने–अपने' 'बेनूर चेहरों की दावत''बिस्मिल्लाह के संग्रह 'रैन बसेरा' की कहानियॉ 'भूत''कागज के कारतूस''ज्ञानमार्गी'में कमलेश्वर के संग्रह 'कोहरा' की कहानियॉ' 'हवा है', 'हवा की आवाज नहीं है', 'तुम कौन हो','सफेद सड़क में, गुरुवचनसिंह के संग्रह 'हे अरण्य कुछ कहो' की कहानी'बरसात' में गिरिराज किशोर के संग्रह 'गाना बड़े गुलाम अली खॉ की कहानियॉ 'तमोली सब पर हावी हैं,'खरबूजें,'गाना बड़ें गुलाम अली खॉ का में, गोविन्द मिश्र के संग्रह 'आसमान कितना नीला की

कहानियों 'निष्कासित' 'रामसजीवन की मॉ' में शीतांशु भारद्वाज के संग्रह 'मर्द का दर्द'संग्रह की कहानी 'एक और द्रोणाचार्य में रजनीकान्त के संग्रह 'बीते लम्हों का दर्द की कहानियॉ 'विवर्त' 'वापसी''थकते कदम''एक और बहादुर इत्यादि कहानियों में मानवीय जीवन मूल्यों को समसमायिक परिस्थितियों के प्रकाश में रुपायित किया गया हैं।

तृतीय उपअध्यायः— कथाकार की समकालीन परिस्थितियाँ

साहित्य को समाज का दर्पण या युग का प्रतिबिम्ब कहा जाता है,क्योकि साहित्यकार अपने युग की तत्कालीन परिस्थितियों का दृष्टा और भोक्ता होता है। वह जिस मानव जीवन का और स्थितियों,परिस्थितियों का चित्रण अपने लेखन में करता है, वह उसके द्वारा देखी गयी और भोगी गयी परिस्थतियाँ होती है। ''साहित्य कर्म भी एक सृष्टि है और प्रत्येक सृष्टि के पीछे द्वन्द्वात्मक गति निहित होती है। साहित्यकार अपनी रचना दृष्टि से मनुष्य और प्रकृति तथा मनुष्य और समाज के संधर्षो को देखता है,और उस संधर्ष की गति को विश्लेषित करता हुआ उसे साहित्य में अभिव्यक्त करता है।''[16] कथाकार स्वातत्रयोत्तर भारतीय परिवेश के भीषण यथार्थ में पला बढ़ा।अतः स्वातंत्र्योत्तर काल की राजनीतिक धटनाओं, समाजिकार्थिक सन्दर्भो ने लेखक को बहुत गहरे प्रभावित किया। क्योंकि वह अपने चारों ओर बदलती परिस्थितियों और मानव चेतना से अपने को अंसम्पृक्त नही कर पाया और उसने जिए हुए जीवन सत्य तथा बदलती हुई परिस्थितियों के दबावों को अपने लेखन में उतारने का प्रयास किया। उन्होने स्वयं स्वीकार किया कि 'मेरे सामने गॉधी के नाम पर जो फिजा बनी थी उसमें आदर्शवाद था। गॉधी का ही नया विचार—विस्तार डॉ0 लोहिया और जय प्रकाश में हुआ। इन तीनों की धमक मेरी सृजन मानसिकता में गहरे बैठी है।मेरे अवचेतन में स्वाधीनता आन्दोलन के भारतीय मूल्य अब भी सकिय है। मैं भारत का पश्चिमीकरण भूमंडलीकरण न तब चाहता था न अब। आजाद भारत में स्वाभाविक ढंग से विकास नही हुआ। कत्रिम ढंग में पश्चिमी विकास और प्रगति मॉडल लाया गया। उसने संहार किया।''[17] धर्म,जाति,राजनीति के नाम पर वामपंथी इस देश के अवसरवादी रहे— वे स्वाधीनता आन्दोलन दिनों में भी अवसरवादी रहें, आज भी वे धर्म,भाषा,जाति ,दलित के के नाम पर अवसरवादी राजनीति करे रहे है। फिर सभी राजनितिक पार्टियॉ देश की चिन्ता में मग्न नहीं हुई। वोट के भिखारी बन गए—इस भिखारीबाद में 'सत्ता' का अर्थ बदल गया देश की संस्कृति,परम्परा,दर्शन,भाषा डकार गए । हम सब हर क्षेत्र में गुलाम हो गए—मेरे उपन्यास इसी बात को कहते है।''[17]

अतः स्वातंत्र्योत्तर काल की बदलती हुई परिस्थितियों के दबाव ने लेखक की चेतना के तार को बहुत गहरे स्पर्श किया और उसकी ग्रहण शक्ति ने परिस्थितियों के दबाबों को समग्रता के साथ अपनी रचनाओं में उजागर करने के लिए उसे लालयित किया । कथाकार ने समय की चुनोतियों को निर्भीकता से स्वीकार किया, और जीवन तथा परिस्थितियों के यथार्थ को अपनी कहानियों और उपन्यासों में उदधाटित करने का प्रयास किया। स्वतन्त्रता भारतीय जनमानस के लिये एक बहुत बडी उपलब्धि थी, क्योंकि

किसी भी देश के लिये स्वतन्त्रता प्राप्ति एक मात्र धटना न होकर जनसाधारण की मुक्ति कामना, संधर्ष और सामूहिक चेतना का प्रतिफलन होती है।"[3] परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही भारत–पाक विभाजन के बाद जो अमानवीय कृत्यों का न खत्म होने वाला सिलसिला शुरु हुआ वह वास्तव में विश्व के फलक पर एक त्रासद घटना थी। विभाजन के बाद एक ओर देश को साम्प्रदायिक दंगों से उत्पन्न स्थितियों से जूझना पड़ा तो दूसरी ओर स्थानातरण और विस्थापितों के पुनर्वास के लिये साधन जुटाने की समस्या का सामना करना पड़ा। इससे इतिहास और भौगोलिक सीमाएं ही नही बदली अपितु साहित्यकारों का चिन्तन बोध भी प्रभावित हुआ। "दूसरे विश्वयुद्ध तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के सन्दर्भ में लेखकों की नयी पीढ़ी समाज के धटकों के रुप में चेतना
सम्पन्न हो रही थी———— वह ऑख खोलकर अपने चारो ओर फैली विभीषिका को देख रही थी।" [18]

कथाकार राजनीतिक प्रश्नों और विसंगतियों के रुबरु खड़ा था और अपनी सूक्ष्म अंकना दृष्टि से बदलती परिस्थितियों को देख रहा था। देश में जनतन्त्र स्थापित हुआ, राजतन्त्र के स्थान पर जनतन्त्र की स्थापना कोई मामूली बात नही थी। स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि में नयी शुरुआत की आशा भारतीय जनमानस कर रहा था,परन्तु शीध्र ही उन्हें महसूस होने लगा,कि जिन मूल्यों को लेकर हमने स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी थी बड़े पैमाने पर उसी की अवहेलना होने लगी । इसका चित्रण कथाकार ने अपने वृहत् उपन्यास 'हुजूर दरबार' में किया है आजादी के बाद शासक वर्ग की कथनी और करनी में अन्तर से प्रजातन्त्रीय व्यवस्था के प्रति लोगो में सन्देह का वातावरण उत्पन्न हुआ जन आक्रोश के कारण विरोध की राजनीति ने जन्म लिया। तथा स्वातंत्र्योत्तर भारत के प्रागंण में नवीन राजनैतिक,सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियॉ उपजी। राजनीतिक स्थितियों में द्रुतगामी परिवर्तन हुए और राजनीतिक घटनाचक्रों ने सामाजिक आर्थिक स्थितियों को प्रभावित किया ।

आर्थिक विषमताएं बढी औघोगिक उत्पादन और कृषि क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर और समृद्ध बनाने के लिये जो योजनाएं बनायी गयी वे आंशिक रुप से फलीभूत तो हुई, परन्तु देश की आर्थिक नीति पर नौकरशाही, पूँजीपति और भ्रष्ट नेताओं का प्रभुत्व हावी होने के कारण गरीबों की स्थिति बद से बदत्तर होती गयी अमीर और अमीर होते गये। समाजिक जीवन में भी परिवर्तन की स्थितियॉ आयी। संयुक्त परिवारों का विधटन,जातिवर्ग की मर्यादाओं का टूटना,नारी को पुरुषों के स्तर पर लाने का प्रयास,प्राचीन नैतिक मूल्यों को आधुनिकता की चुनौती,युवा पीढ़ी का आक्रोश इत्यादि बदलती समाजिक स्थितियॉ थी। कथाकार ने जिन समकालीन प्रश्नों,बदलते जीवन मूल्यों

राजनीतिक सामाजिक और आर्थिक विसंगतियों को अपने लेखन में सजगता और जागरुकता के साथ उद्घाटित किया वे स्थितियां इस प्रकार है–

राजनीतिक परिस्थितियॉः–

मिश्र जी ने सातवेंदशक से अपना लेखन प्रारम्भ किया वह समय राजनीतिक धटना चक्रों के उथल पुथल का समय था और भारतीय राजनीति में होने वाली घटनाओं से समाजिकार्थिक स्थितियॉ भी प्रभावित हो रही थीं। राजनीतिक परिवेश में देखा जाए तो 1962,1964,1971 में होने वाले युद्धों का प्रभाव राजनीति पर पड़ा। साथ ही सन् 1967 में होने वाले आम चुनाव में विरोध की नीति राजनीति सामने आई। कॉग्रेस को कई राज्यों में पराजय का मुँह देखना पड़ा सत्तारुढ़ दल की सरकार की असफलता ने स्पष्ट कर दिया, कि ये स्थितियॉ जनसाधारण के मोहभंग का परिचायक है। परन्तु सन् 1971 में होने वाले मध्यावधि चुनावों में कॉग्रेस को जो समर्थन मिला वह इस बात को प्रमाणित करता है, कि इन्दिरा गांधी के कुछ प्रगतिशील कदमों–बैकों का राष्टीकरण,प्रिवीपर्स की समाप्ति आदि ने जनता को विशेष रुप से आकर्षित किया। लेकिन चौबीस जून 1975 में इलाहावाद हाईकोर्ट द्वारा इन्दिरा गांधी का चुनाव अवैध ठहराये जाने पर एक अजीब सी स्थिति पैदा हुई और जैसे उस स्थिति पर काबू पाने के लिए 26 जून1975 को देश में आपात स्थिति लागू कर दी गयी। ''आपात स्थिति के बीस महीनों मे जो कुछ हआ वह विश्व के सबसे बडे गणतन्त्र के इतिहास का काला अध्याय है।'' [19] आपात कालीन स्थितियों ने राष्ट्र नेताओं को नयी सोच दी।नयी योजनाएं,नयी व्यवस्थाएं, नयी पद्धतियों प्रकाश में आयी। सन् 1977 में कॉग्रेस को मिली असफलता से अनुमान लगाया जा सकता है कि यह एक दूसरे ऐतिहासिक मोहभंग का जन्म था। केन्द्र में कई राजनीतिक दलों की मिल–जुली सरकार बनी और मोरार जी देसाई के प्रधान नेतृत्व में सरकार ने कामकाज शुरु किया । परन्तु इस सरकार में मतभिन्नता की स्थितियॉ पैदा हुई और सरकार गिरी।चरणसिंह प्रधानमंत्री बने, पर चन्द महीनों में ही व्यवस्था को बदलना पड़ा। और इन्दिरा गांधी के राजनीतिक दल ने सत्ता संभाली। इन्दिरा गांधी ने राष्ट्र की बिखरी शक्ति को संगठित करने का प्रयास किया, तथा आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिये कई विकास योजनाओं को लागू किया। परन्तु आन्तरिक संकट की स्थितियॉ उत्पन्न होती रही पंजाब, कश्मीर और असम की समस्यायें उग्रत्तर हो रही थी। कुछ नेताओं ने साम्प्रदायिकता क्षेत्रीयता, स्थानीयता और जातीयता का बीजबपन किया, जिससे राजनीति में स्वार्थ परता,विषमता, कटुता घुलती चली गयी।स्वतन्त्रता के पश्चात हम जिस स्वच्छ प्रशासन की आशा कर रहे थे वह स्वप्नमात्र रह गया। राजनीतिक दलों के मतभेदों ने व्यवस्था को राजनीतिक रंग दिया। सन् 1984 में इन्दिरा गांधी की हत्या से सम्पूर्ण देश गहरे शोक सागर में डूब गया। इसका प्रभाव भारतीय

राजनीति पर भी पड़ा। राजनीतिक वातावरण की अस्थिरता के मारक प्रभाव से सामान्यजन में संकट की स्थितियॉ पैदा हुई।

राजीव गांधी की हत्या से पुनः देश प्रभावित हुआ। इस समय विश्वनाथ प्रताप सिंह और चन्द्रशेखर ने थोड़े–थोड़े समय के लिये प्रधानमंत्रित्व संभाला। सन् 1991 में होने वाले आम चुनाव में कॉग्रेस पार्टी की सरकार केन्द्र में बनी और नरसिंह राव प्रधानमंत्री बनें। विदेशी कम्पनियों का प्रभाव बढ़ा जिसे राजनीतिक नेताओं और दलों ने ही नहीं उधोगपतियों,व्यवसायिकों,व्यापारियों,पूंजी निवेशकों,अर्थशास्त्रियों,समाजशास्त्रियों और समुदाय प्रतिनिधियों में भी विदेशी कम्पनियों के बढतें प्रभाव का स्वदेशीयता पर आक्रमण माना। राजनीतिक और आर्थिक विचारों की टकराहट में सत्ता के प्रति मोह उत्पन्न हुआ जिसके फलस्वरुप राजनीति में अपराधीकरण का प्रवेश हुआ। ''राजनीतिक नेताओं में अवसरवादिता बढ़ी। लोकतन्त्र के नाम पर उच्छृखंलता को प्रश्रय दिया गया। सत्ता,शासन,व्यवस्था और लोकतन्त्र में लोगों की आस्था डगमगाने लगी।''[20] सन् 1996 के आम चुनाव होते–होते तक शासन व्यवस्था बुरी तरह चरमरा गयी। किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने कारण प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली भारतीय जनता पार्टी की सरकार केवल 13 दिन तक चल सकी। फिर कॉग्रेस के समर्थन से सयुंक्त मोर्चे की सरकार बनी और जनता दल के नेता देवी गौंड़ा को प्रधानमंत्री बनाया गया कुछ समय बाद ही कॉग्रेस द्वारा समर्थन वापस ले लिया गया। नरसिंह राव के स्थान पर सीताराम केसरी को कॉग्रेस दल का अध्यक्ष बनाया गया, तथा पुनः कॉग्रेस के समर्थन से गठित संयुक्त मोर्चे की सरकार ने इन्द्रकुमार गुजराल को प्रधानमन्त्रित्व का भार सौंपा। कुछ महीने बीतने पर पुनः कॉग्रेस ने समर्थन वापस ले लिया और लोकसभा भंग हुई आम चुनावो की घोषणा हुई। मई –जून 1996 से नवम्बर दिसम्बर 1997 तक लगभग डेढ वर्षों की अवधि में ही तीन सरकारों का गिरना और तीन व्यक्तियों का प्रधान मंत्री बनना भारतीय लोकतंत्रीय व्यवस्था में पनपी राजनीतिक और सामाजिक सोच की विकृत परिणति कही जा सकती है।1998 में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में भा0जा0पा0 की सरकार बनी।परन्तु 13 महीने बाद ही सरकार गिर गयी। अटल बिहारी वाजपेयी के ही नेतृत्व में काम चलाऊ सरकार शासन व्यवस्था चलाती रही । सन् 1999 में आम चुनाव के बाद भारतीय जनता पार्टी पुनः नेतृत्व में आयी और अटल बिहारी वाजपेयी ने प्रधानमन्त्रित्व का कार्य भार संभाला। ये समय राजनीतिक उथल--पुथल का समय रहा । भारत –पाक मित्रता के सम्बन्ध में लाहौर बस सेवा शुरु की गयी परन्तु किन्ही कारणों से बिगड़ें सम्बन्धों में सुधार न हो सका। कारगिल में घुस पैठियों की घुसपैठ,संसंद पर हमला, गोधरा कांड,गुजरात का दंगा,जम्मू–कश्मीर में रधुनाथ जी के मन्दिर की घटित घटना जैसी अनेक आंतकवादी घटनाऍ घटी और अनेक धार्मिक स्थलों

पर हमला करके हिन्दु भावनाओं को ठेस पँहुचायी गयी। परन्तु आतंकवादियों के शमन के भी प्रयास हुए। इस कालावधि में भारत वर्ष उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर हुआ और आर्थिक स्थिति मजबूत हुई वैज्ञानिक दृष्टि कोण से भारत प्रगति करते हुए परमाणु अनुसंधान विषय इत्यादि पर विश्व के छः प्रमुख देशों में छठवें स्थान पर पहुँच गया और सूचना प्राऔधौगिकीकरण में भारत के लोग अमेरिका जैसे देशों में छा गयें। रुस,चीन,अमेरिका,ईराक जैसे बड़े देशों के साथ भारत के मधुर सम्बन्धों में उत्तरोत्तर विकास हुआ।

सामाजिक परिस्थितियाँः—

आर्थिक संधर्ष और जीविका की जटिलतर समस्याओ के कारण संयुक्त परिवार टूटने लगे। परिवार टूटने के साथ ही नयी परिस्थितियाँ निर्मित हुई। परिवार के सदस्यों के मन में कई प्रकार के अर्न्तद्वन्द्व उठे तथा उन्हें कई तरह के मानसिक तनावों से गुजरना पड़ा। परिवार संकुचित हुये एक दूसरे के लिये कुछ करने की प्रवृत्ति की जगह स्वार्थपरिता आ गयी। परिवार में नारी की स्थिति मे भी बदलाव आया वह एक ओर अपनी प्रतिष्ठा की ओर अधिक संकिय हुई तो दूसरी ओर आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर सचेत हुई। नारी के इस बदलाव से पुरुष वर्ग चकित हुआ और वह नये—पुराने विचारों के मानसिक संधर्ष से पीड़ित रहा। उसे नारी के इस नये रुप को स्वीकार करने के लिये बाध्य होना पड़ा। आर्थिक दबाव के कारण नारी को जीविका कमाने के लिए धर से बाहर निकलना पड़ा। अविवाहित रहकर भी उसे जीवन अस्तित्व के लिये संधर्ष करना पड़ा।उसे धर— बाहर की जिम्मेदारियों के साथ—साथ नये—पुराने संस्कारों के संघात को भी सहन करना पड़ा। प्रेम,विवाह तथा यौन सम्बन्धों के सन्दर्भ में उसका दृष्टिकोण बदला तथा यौन सम्बन्धों जैसी मूल्य उसे निरर्थक लगने लगे। इन परिस्थितियों के कारण पति—पत्नियों के सम्बन्धों के बदलाव आया। प्रेम —विवाह,अर्न्तजाति विवाह,विधवा विवाह आदि को पारिवारिक स्तर पर स्वीकृति मिलने लगी।पति पत्नि के साथ —साथ पिता—पुत्र,माता—पुत्री आदि सम्बन्धों में बदलाव आये। भारतीय समाज की जाति व्यवस्था में भी बदलाव की स्थितियाँ आयी। जाति—बन्धन ढीलें हुए और जाति के आधार पर कर्म क्षेत्र चुनने की परम्परा टूटी। आज समाज में एक नये तरह के परिवर्तन की स्थितियाँ उभर कर सामने आ रही है। कुछ काम काजी बड़े ओहदों पर प्रतिष्ठित स्त्री पुरुष एकल जीवनयापन कर रहे हैं। महिलाओं में आत्मविश्वास गहराया है और वह समाज में स्वयं अपनी स्थिति सुदृढ़ करती हुई सामाजिक धटनाओं में परिवर्तन चाहती हैं इन स्थितियों पर समाजशास्त्रियों का मानना है 'कि' आजकी आपधापी भरी तेज रफ्तार प्रतिस्पर्धा से लबरेज जिन्दगी में शारीरिक व भावनात्मक तनाव बढ़ रहे है। शायद इनसे ही निजात पाने के लिए कभी—कभी व्यक्ति को व्यक्तिगत दायरे की जरुरत महसूस होती है यही

वजह है कि एकल महिलाओं व पुरुषों की संख्या में दिनोदिन इजाफा होता जा रहा है। धीरे–धीरे इन एकल व्यक्तियों मे एक अलग समुदाय (कम्युनिटी) का भाव विकसित होता जा रहा है"।[21] इन स्थितियों को देखकर विवाह संस्था पर सवाल उठाते हुए लालचंदानी और डॉ पांडेय का कहना है 'कि' निकट भविष्य में विवाह संस्था के परम्परागत रुप स्वरुप में कई तब्दीलियां आएँगी पर विवाह संस्था का खात्मा नही होगा।"[22] इस प्रकार की स्थितियॉ आज के स्त्री पुरुषों की बदलती सोच का उदाहरण हैं।

सांस्कृतिक परिस्थितियॉः–

आधुनिक शिक्षा तथा पश्चिमी सभ्यता के जबर्दस्त प्रभाव के कारण भारतीय चिन्तन बौद्धिकता प्रधान,पुरोगामी प्रगतिशील और अत्य आधुनिक हो गया हैं। जिसके फलस्वरुप परम्परागत धार्मिक तथा सामाजिक रुढ़ियां खत्म होने लगी। अध्यात्मक रहस्य तथा अमूर्त विषयों को सन्देह की दृष्टि से देखा जाने लगा । मानव की बाह्य स्वतन्त्रताओं से वेष्ठित इस भौतिक दृष्टिकोण ने आर्थिक विपन्नता के भार से दबे भारतीयों को आकृष्ट किया। परिणामस्वरुप धर्म तथा ईश्वर जैसी वस्तुओं की आस्था में उनका विशवास नहीं रहा। उन्हें लगने लगा कि उनकी भौतिक समस्याओं का निदान धर्म तथा ईश्वर के पास नही है।

भारतीय चिन्तन पर मार्क्स ,फ्रायड,सार्त्र, कामू,कीर्केगार्द जैसे विचाराकों का प्रभाव पड़ा। तथा परम्परागत भारतीय संस्कृति की प्रासंगिकता निरर्थक –सी प्रमाणित होने लगी । उसकी जगह पर शहरीकरण और महा नगरीयकरण की तीव्र प्रकिया गहराने लगी। महानगरों की व्यस्त जिन्दगी से यहां के सांस्कृतिक जीवन में कुंठा,जुगुप्सा,विराग, हताशा,निराशा,भय,अकेलापनजैसे भाव व्याप्त हो गये। धर्म और नैतिकता के बन्धन भी समाज से ढीले हुए।आध्यात्म लोगों को ढ़कोसला लगने लगा। आज मानवीय मूल्यों की उपासना की जगह सुविधा भोगी संस्कृति की उपासना होने लगी है समस्त मानव मूल्य धन केन्द्रित हो गये है।

आर्थिक परिस्थितियॉः–

राजनीतिक स्वतन्त्रता के बाद राजनीतिक स्थितियों के परिवर्तन के साथ–साथ सामाजिक और आर्थिक स्थितियॉ भी परिवर्तित होने लगी। "आर्थिक दृष्टि से भी परिवर्तन हुए । कृषि उद्योगों में हास के चिन्ह दृष्टिगोचर हुए और अन्य उद्योगों की ओर ध्यान गया । कारखानों ने मजदूर वर्ग का निर्माण किया। औघोगिक भावनाएँ और प्रतिकियाएँ सर्वत्र हावी होती दिखायी दी। आर्थिक स्थिति ने राजनैतिक और समाजिक,पारिवारिक परिस्थतियों में विद्रोह को प्रबल किया ।"[23] औघोगिक विकास से यद्यपि आर्थिक स्थितियों में सुधार तो हुआ तथापि व्यवस्था में स्वार्थपरिता भ्रष्टाचार और पूँजीवाद का वर्चस्व और आधिपत्य बना रहा ,जिसके कारण निम्नवर्ग और मध्यवर्ग को आर्थिक विवंचना का

शिकार बनना पड़ा। प्रशासन वर्ग तथा कथित उच्च वर्ग नें निम्नवर्ग, मध्यवर्ग के शोषण के नये तरीके अख्तियार कियें।अतः निम्न वर्ग की स्थिति बद से बदत्तर होती गयी और मध्य वर्ग परम्परागत मूल्यों के निर्वाह और उच्चवर्ग के अंधानुकरण के कारण आर्थिक विवंचना से धिर गया। योजनाएं बनती रही परन्तु देश संकटपूर्ण स्थितियों में घिर गया। आर्थिक व्यवस्था ने निम्न वर्ग में क्षोम उत्पन्न किया तथा मध्यवर्ग में सांस्कृतिक समस्याओं के दबावों ने मूल्य संक्रमणता की स्थितियॉ पैदा की ।नगरों में गॉवों की अपेक्षा आर्थिक विकास की स्थितियॉ ज्यादा दिखायी दी, परन्तु प्रयासों के बावजूद आर्थिक खुशहाली के नाम पर बेरोजगारी, गरीबी, महंगाई सुरक्षा के लिये आर्थिक संधर्ष इतना जटिल,तीव्र और गहरा हो गया कि उसे दूसरे विकल्पों के बारे में सोचने का अवकाश कम मिला। आज के तीव्र आर्थिक संधर्ष,तनावों और जिन्दगी के दबावों के फलस्वरुप परिवार विखर रहे है। क्योंकि अर्थोपार्जन के लिये परिवार के मुखिया या प्रधान को अपने मूल निवास से बाहर नए परिवेश में बसना पड़ता है और वहां के परिवेश को अपना लेने और समायोजन की कठिन प्रक्रिया से गुजराना पड़ता है।आज अर्थोपार्जन का उत्तरदायित्व जहॉ महिलाओं ने भी अपने कन्धों पर वरण किया। वहॉ उन्हें परिवार से दूर अनेक कठिनाओं का सामना करना पड़ता है। दोहरी भूमिका को निभाती हुई आज की नारी कई सामाजिक संधातों को झेल रही है।

कथासाहित्य में परिवर्तन की स्थितियॉः–

स्वतन्त्रता के बाद मानव जीवन और उसके परिवेश जगत में हो रहे द्रुतगामी परिवर्तनों के साथ ही हिन्दी कथा–साहित्य जगत में भी परिवर्तन की स्थितियॉ दृष्टि गोचर होने लगी–

उपन्यास साहित्य में परिवर्तन की स्थितियॉः–

स्वतंत्रता के बाद नये हिन्दी उपन्यासों में अनेक बदलती दिशाएं दृष्टिगोचर होने लगी उपन्यासकारों के लिये कथानक, चरित्र–चित्रण,कथोपकथन जैसे उपन्यास के परम्परागत तत्वों की बातें महत्वपूर्ण नही रह गयी थी। छठें दशक के उपन्यासों में व्यक्तित्व की खोज महत्वपूर्ण तथ्य बन गयी और व्यक्ति की पहचान उसके परिवेश में अंकित की गयी। व्यक्ति जीवन को राजनीतिक,सामाजिक और आर्थिक सन्निवेश से जोड़कर परखा गया । इस दशक के उपन्यासकारों पर गांधीवाद,मार्क्सवाद,फ्रयड,एडलर,जुंग,आइस्टीन के चिन्तन का प्रभाव पड़ा। जिसका परिणाम यह हुआ कि मनोविज्ञान के विकास के कारण उपन्यासों में बहिर्गत यथार्थ की जगह अति यथार्थ को रुपायित किया जाने लगा। परम्परागत यौन वर्जनाओं तथा नैतिक विधानों की आसरता साबित होने लगी और व्यक्ति के अवचेतन में दबी कुंठा का खुलकर चित्रण होने लगा तथा नर–नारी के यौन सम्बन्धों को सामाजिक जीवन की व्यापकता

और विविधताओं में उभारा जाने लगा।उपन्यासों में- कुथ्य और उद्‌देश्य–शिल्प तथा बिम्ब–विधान एवं भाषा सम्बन्धी नये प्रयोग होने लगे। कथा प्रधान चरित्र प्रधान जैसे स्थूल भेद प्रायःलुप्त होने लगे । चरित्र को गहराने के लिये विविध प्रसंग जुटाए गये और उन प्रसंगों से कथामानव का निर्माण लोने लगा। कथा को धारा प्रवाही न बनाकर सुगुम्फित बनाने पर बल दिया जाने लगा। "हिन्दी उपन्यास के इतिहास में पहली बार मैने 'मै' शैली अपनाई गई इस पीढी के उपन्यासकारों ने उपन्यास के कथ्य और शिल्प में अनेक नये प्रयोग प्रस्तुत किये और समाज के विभिन्न वर्गो की अनेकाविध समस्याओं के साथ ही भ्रष्ट एवं आलसी नौकरशाही, दिन–प्रतिदिन टूटती, न्याय –व्यवस्था फिल्म जगत की विभीषिकांए,आपातकाल का उत्पीड़न पुलिस की अंधाधुंधता आदि समाज एवं देश को धेरे विभिन्न प्रश्नों को अपने नये उपन्यासों की विषय वस्तु के रूप में उजागर किया।"[24]

सातवें आठवें दशक के उपन्यास अपने समय के दस्तावेज है क्योंकि अर्न्तराष्ट्रीय जगत में होने वाली घटनाओं से साहित्यकार अछूता नहीं हर सका। इन दशको के उपन्यासकारों ने सामाजिक जीवन की जटिलताओं को परिवेश की सघानता में उभारकर जीवन सत्य को अपनी गम्भीरता, व्यापकताओं में चित्रित किया। शिल्प की दृष्टि से भी नवप्रयोग हुए। शैली की दृष्टि से कुछ उपन्यासकारों ने बहुप्रचलित कथात्मक शैली तो कुछ ने आत्मकथात्मक शैली अपनाई। भाषा प्रयोग में इस युग के उपन्यासकारों ने सर्तकता बरती तथा कथ्य को सुग्राहय बनाने की चेष्टा की। जो आंचलिक उपन्यास लिखे गये उनकी मूल कथा में सामान्य भाषा का प्रयोग किया गया। अभिव्यक्ति की स्पष्टता के कारण उनकी भाषा की अभिव्यजंना शक्ति में निखार आया।

नवें दशक के उपन्यासकारों ने विशेष रुप से जागरुक और सतर्क होकर व्यक्ति जीवन को उसके वर्तमान में रचा। परन्तु वर्तमान को अतीत की सम्पृक्ति में उसकी वास्तविकता में उभारा। कथ्य को सम्प्रेषणीयता प्रदान की तथा परिवेश को उसके विस्तार में नही अपितु स्फीति में चित्रित किया। चरित्र को अपनी सम्पूर्णता में उभारा तथा प्रचलित भाषा को वरीयता प्रदान की। कलापक्ष की दृष्टि से इस काल के उपन्यास प्रौढ़ता का परिचय देते है।

दशवें दशक के उपन्यासों में समसामायिक राजनीतिक स्थितियॉ प्रतिबिम्बित है। क्योंकि विश्व फलक पर धटने वाली घटनाओं और किया व्यापारों से लेखक भी प्रभावित हुए इस दशक के उपन्यासकार सामाजिकता के प्रति प्रतिबद्ध रहे और उन्होंने सामाजिक सरोकारों से अपनी रचनाओं को संवारा। व्यक्ति का स्वत्व बोध, अस्मिता की प्रतिष्ठा तथा व्यक्तित्व का आंकलन परिवेश की प्रासंगिकता में किया। परिवेश की पहचान कराते हुए व्यक्ति का स्वत्वबोध ही उपन्यासकारों का लक्ष्य रहा । अधिकांश उपन्यासकारों ने कथात्मक शैली तथा कुछ ने आत्म कथात्मक शैली ही अपनाई । पत्रशैली तथा डायरी

शैली के भी प्रयोग किये गये।- इन उपन्यासों में रिपोर्ताज,संस्मरण और रेखाचित्र जैसे तत्वों को खोजा जा सकता है। गम्भीर से गम्भीर जीवन स्थितियों को उपन्यासकारों ने रोचकता के साथ चित्रित किया ।

कहानी के स्वरुप में परिवर्तन की स्थितियाँ:–

यद्यपि स्वतन्त्रता के बाद कहानी एक साथ कई दिशाओं में विकसित होने लगी थी तथापि सातवें आठवे दशकों में कहानी मे क्षेत्र में कई प्रभावशाली परिवर्तन हुये और कहानी साहित्य की प्रखरतर विघा बनती चली गयी।नयी कहानी को चर्चा छठें दशक में ही शुरु हो गयी थी, परन्तु सातवें दशक में इसे एक आन्दोलन का रुप दिया गया। राजेन्द्रयादव,मोहन राकेश ,मार्कण्डेय धर्मवीर भारती ,अमरकांत आदि की कहानियों में व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों को नयी मान्यताओं के सन्दर्भ में देखा और परखा गया नयी कहानी ने जीवन की गतिशीलता को परिवर्तित राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिप्रेक्ष्यों में दर्शाया तथा जीवन को उसकी सम्रगता,सम्पूर्णता विविधता तथा जटिलता में उभारा। नयी कहानी नें नयें भाव–बोधों को प्रश्रय दिया गया।

सन् 1960 के बाद अकहानी की चर्चा आरम्भ हुयी। कहानी के प्रमुख लेखकों में योगेश गुप्त, गगाप्रसाद विमल,जगदीश चतुर्वेदी, रवीन्द्र कालिया,दूधनाथ सिंह, प्रयागशुक्ल,सुधा अरोड़ा ज्ञानरंजन,रमेश बख्शी,श्रीकान्त वर्मा,विजय मोहन सिंह आदि के नाम उल्लखेनीय हैं।इन कहानीकारों ने कहानी में कथानक या कथातत्व को नकारा तथा पात्र और धटनाओं को महत्वपूर्ण न मानकर क्षण और क्षण–विशेष में मन की प्रतिक्रियाओं पर बल दिया । संज्ञाहीन पात्रों की सृष्टि की नाम की जगह क,ख,ग इत्यादि का प्रयोग किय कुछ कहानीकारों ने परम्पराओ और सांस्कृतिक मूल्यों का खुलकर विरोध किया तथा यौनजन्य चेष्टाओं और सम्भोंग के चित्र उकेरे। अक़हानी आन्दोलन बहस का मुददा बना रहा।पत्र– पत्रिकाओं में बहसें प्रकाशित होती रही । अकहानी आन्दोलन भी नयी कहानी की भांति धीर–धीरे ठंडा पड़ गया।

नयी कहानी और अकहानी के विरोध में सचेतन कहानी आन्दोलन चलाया गया । इस आन्दोलन से डॉ महीपालसिंह का नाम विशेष रुप से जुड़ा हुआ है उनके साथ–साथ राजीव सक्सेना, श्याम परमार, आनन्द प्रकाश, जैन कमल, जोशी कुलभूषण,धर्मेन्द्र गुप्त, मधुकर सिंह, मनहर चौहान,योगेश गुप्त वेदराही ,सुखवीर,हिमांशु जोशी सचेतन कहानी के प्रमुख लेखक माने जाते हैं। फलस्वरुप व्यक्ति के बदलते दृष्टिकोण को समाजिक यथार्थ में प्रस्तुत किया गया तथा नारी के प्रति सम्मान जनक दृष्टिकोण अपनाकर उसे उसकी सामाजिक वास्तविकता में उभारा गया।

इसी तरह 1968 में अमृतराय ने सहज कहानी की भूमिका बांधी तथा कहानी को सामाजिकता से जोड़ने का आग्रह किया। उन्होंने सहज कहानी के समर्थन में सम्पादकीय

भी लिखें। किन्तु नयी कहानी, अकहानी,सचेतन कहानी और सहज कहानियों ने किसी नये जीवन दर्शन को प्रस्तुत नही किया।

सन्1972 के आस पास सारिका का सम्पादन करतें हुए कमलेश्वर ने अपने सम्पदाकीयों में समांतर कहानी को स्थापित किया। कामतानाथ,जितेन्द्र भाटिया, मृदुला गर्ग,निरुपमा सेवती, विमलकुमार ,सतीश जमाली, मधुकर सिंह, सुदीप,रमेश उपाध्याय आदि इस आन्दोलन से जुड़े कहानीकार है। इन कहानीकारों ने अपनी रचनाओं में कलात्मकता का प्रयास नही किया तीव्रगति से यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए सामान्य भाषा का प्रयोग किया । शिल्प के नव प्रयोगों में शिल्पगत सपाटता में भी प्रच्छन्न प्रतीकों और बिम्बों के सार्थक संश्लिष्ट प्रयोग किये। संमातर कहानी से अभिप्राय किन्ही विशिष्ट नामों से जुड़ी कहानियों से नही बल्कि उन कहानियों से है, जो अपना रचनात्मक दायित्व निभाने के साथ–साथ समय की कसौटी पर भी खरी उतरती हैं। ये आम आदमी के प्रश्न को उठाकर जागरुक सामाजिक सामाजवादी चेनता को पुनरुजीवित करती है। समांतर कहानी का कथ्य समाज की अर्थमूलक समस्यांए है। इन कथाकारों ने संकेत और व्यंग्य के पैने अस्त्रों द्वारा कटु–तिक्त यथार्थताओं का निर्मम उद्धाटन किया समाज की आर्थिक विडम्बनाओं और विरोधाभास के प्रति इन कथाकारों में तीव्र आक्रोश है। इसलिये इन कहानियों में परिवेश रोमांटिक न होकर संघर्षरत जीवन के आसपास का खुरदरा परिवेश है चरित्र धूमिल और रहस्यमय नही है,गहन होकर भी अपनी प्रकृति में स्पष्ट हैं। 'सरिका' के माध्यम से समांतर कहानी का सुनियोजित विस्तार हुआ।

सन्1977 में दिल्ली विश्व विघालय में जंनवादी विचार मंच की स्थापना हुई तभी से जनवादी कहानी की चर्चा होने लगी।इन कहानियों में मार्क्सवादी चिन्तन को स्वीकारा गया तथा मजदूरों और कृषकों के हितों को प्रश्रय दिया गया। पूँजीवाद साम्राज्यवाद और समांतवाद की भर्त्सना की गयी और आर्थिक शोषण का विरोध किया गया। जनवादी कहानीकार व्यक्तिकतावादी प्रवृतियों को छोड़कर सामाजिकता धर्मी हुये । उन्होंने निराशा,कुंठा,अवसाद की जगह मानवीय शक्ति को उभारा। ऐसा माना गया कि सक्रिय कहानी समांतर कहानी का एक रुप है आठवें दशक की कहानियॉ यद्यपि आन्दोलनों से हटकर लिखी गयी तथापि उन पर समान्तर कहानी का प्रभाव अधिक झलकता हैं इन कहानियों मे विभीषिकाओं को झेलने वाले आम आदमी की जिजीविषा का चित्रण किया गया और इनके चित्रण में कहानीकारों को सफलता भी मिली।

नवें दशक के अन्त तक कहानी के स्वरुप में महत्व पूर्णपरिवर्तन आए,हिन्दी कहानी ने विभिन्न आन्दोलनों के दौर से गुजर अपने स्वरुप को सॅवारा। कहानीकारों ने जीवन को स्वाभाविकता रुप में प्रस्तुत कर संवेदनाओं को गहराना अपना लक्ष्य समझा, तथा परिवेश की पृष्ठभूमि में जीवन के विशिष्ट प्रसंग,घटना और सन्दर्भो को केन्द्र मे

रखकर अपनी कहानियों का ताना बुना। पिछले तीन दशको से लधु कथा की भी चर्चा हुयी हैं, और ये विधा निरन्तर सम्पन्नतर होती जा रही है इसके प्रस्त्रोताओं में विशेषतः कृष्णदेव कमलेश्वर,रमेश बतरा, भगीरथ ,बलराम, बलराम, अगवाल सतीश दुबे, विक्रम सोनी, जगदीश कश्चयप आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। लधुकथा पर आलोचना लिखने वालों के नामों में विशेषतःडॉ0 कमल गोयनका,डॉ0ब्रजकिशोर पाठक,राधिका रमण अभिलाषी,भगीरथ,बलराम अग्रवाल ,कमल चोपड़ा,डॉ0सुरेश,डॉ0रत्नलाल शर्मा व डॉ0 अशोक प्रमुख है। देश के अनेक विश्वविधालयों ने इस विधा को शोध के रुप में स्वीकार किया। आज भी हिन्दी कहानी निरन्तर विकासमान व सम्पन्नतर होती जा रही है।

कथाकार का व्यक्तित्व और कृतित्व

मिश्र जी का व्यक्तित्व उस अखण्ड प्रवाहमान महानद के समान है,जो सम–विषम परिस्थितियो में अनेकानेक सोपानों, स्थत्यंतरों से गुजरता हुआ स्वच्छन्द गति से अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। अपने लेखन यात्रा के असीम अथक प्रवाह में उन्होंने जीवन और जगत के अनेकानेक अनछुए क्षितिजों को पार किया। कौन जानता था, कि उत्तर प्रदेश में बांदा जिले के छोटे से कस्बे अर्तरा में साधारण परिवार की कोख में जन्में मिश्र जी एक दिन साहित्य के क्षेत्र में बड़ी उपलब्धि प्राप्त कर देश विदेश में अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हो विख्यात होगें।

मिश्र जी का जन्म 1 अगस्त 1939 को उत्तर प्रदेश में बांदा जिले के छोटे से कस्बे अर्तरा में हुआ था। यह पिछड़ा इलाका आज भी उज्जडपन,लम्पटता,कर्कशता के लिये कुविख्यात है। इनकी माता सुश्री सुमित्रा देवी का विवाह तेरह वर्ष की अवस्था में हो गया था । विवहोपरान्त उन्होने अध्ययन जारी रख लोअर मिडिल तक शिक्षा प्राप्त की। पिता श्री माधव प्रसाद मिश्र अयोध्या में संस्कृत के विघार्थी थें,और वही मन्दिर में पूजा करते थें। गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने पर वह अर्तरा चले आए और वहां जीविका चलाने हेतु धर के बाहर मगौड़ो की दुकान खोल ली। मिश्र जी अपने माता–पिता की दूसरी सन्तान थें। उस समय उनके परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी।

इनके पूर्वज ब्रह्ममण थें। दादा स्वर्गीय श्री नंदराम पहले पहाड़ी और फिर सिसोलर ग्राम (जिला हमीरपुर उ0प्र0) में खेती करते थें।दादी का स्वर्गवास बहुत पहले हो चुका था मिश्रजी के ननिहाल की आर्थिक स्थिति भी अत्यन्त दयनीय थी। नाना बांदा में बपाई का काम करते थें और नानी दूसरों के घरों में खाना बनाने वाली महाराजिन का काम करती थी। मिश्र जी का बचपन चरखारी में बीता। क्योंकि उनकी मॉ सुश्री सुमित्रा देवी चरखारी रियासत के स्कूल में पढ़ाती थी। लेखक ने आठवें दर्जे तक की शिक्षा गंगासिंह हाईस्कूल चरखारी में प्राप्त की। उस समय नौकरी करने वाली महिला को नेक नजर से नही देखा जाता था; इस कारण उनकी मॉ को अनेकानेक समाजिक अभिशापों से अभिशप्त होना पड़ा। उस समय चरखारी रियासत अपनी स्वर्णिम अवस्था पर था। परन्तु स्वतन्त्रता के बाद उसका विलीनीकरण हमीरपुर जिला में हो गया। जो अब महोबा जिला में आती हैं। रियासतों की समाप्ति पर उनकी मॉ का स्थानान्तरण छिरका गॉव में हो गया। परन्तु बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था न होने के कारण वे नौकरी का परित्याग कर बांदा चली आयी। और पहले उन्होने प्राइवेट स्कूल में अध्यापन किया उसके बाद म्यूनिसिपल स्कूल में आजीवन पढ़ाती रही । मॉ का ममत्व,पिता की सफलता

असफलता,नानी का संघर्ष, कहानियों का प्रभाव, श्रेष्ठ गुरुओं का संसर्ग हमेशा मिश्र जी के प्रेरणाश्रोत रहे।

बालक गोविन्द जब किशोरावस्था में बांदा आया तब उसके मानसपटल पर रियासत की राजसी ठाटबाट की सुखद स्मृतियों के साथ–साथ चरखारी के खंदिया मोहल्ले(जहां वे रहते थे) की कर्कशता और हिंसात्मक गति विधियों की दहशत भी थी। परन्तु बांदा में श्री श्याम मानोहर त्रिवेदी, श्री देवेन्द्रनाथ रखे, रायराममास्टर जैसे श्रेष्ठ गुरुजनों के संसर्ग ने उनके किशोर मन को सन्तुलित किया।

उनके गुरुश्री देवेन्द्र नाथ खरे ने लिखा है ''कि 'जेहि रज रिसि पत्नी तरी सोई ढूँढ़त गजराज'के ब्रत में लगा मै प्रतिभाशाली छात्रों की खोज बांदा के तत्कालीन विधालयों से करने में निरन्तर जुटा रहता था। इनमें अधिक छात्र जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अग्रणी होकर आज भारत माता की श्रीवृद्धि में संलग्न है। खोज की प्रकिया में लगभग 6 माह तक ऊहापोह की स्थिति में रहकर सतत् निरीक्षण के बाद मैने निश्चय किया और गोविन्द को अपने प्रियतम छात्र के रुप में अपने अंक में समेट लिया। इसके बाद में उसका मार्गदर्शन करने लगा। 'होनहार विरवान के होत चीकने पात' के अनुसार गोविन्द का विकास दिन दूना रात चौगुना होने लगा क्योंकि पूत पॉव पालने में ही पहचान लिये गये थे।''[25]

मिश्र जी ने 9 से 12 तक की पढ़ाई डी0ए0बी स्कूल गर्वन्मेंट इन्टर कालेज बांदा से की । जब नवीं कक्षा की वार्षिक परीक्षा में गोविन्द जी को पॉचवॉ स्थान प्राप्त हुआ तभी उनके गुरु श्री देवेन्द्र नाथ खरे ने उनकी अदम्य प्रतिभा को पहचान लिया था और भविष्य वाणी कर दी थी,कि गोविन्द बोर्ड की परीक्षा में अवश्य ही प्रथम श्रेणी प्राप्त करेगा और उनकी ये भविष्यवाणी पूर्णतः सत्य साबित हुई। बांदा में मिश्र जी के अन्तरंग मित्रों में उनकी सहपाठिका सत्या उर्फ मन्नो और सहपाठी रमेशचन्द्र गुप्त उर्फ धनश्याम थे। दोनों मित्रों के स्नेह की मधुरता के मन्द–मन्द झोकों में मिश्र जी ने आनत्व की शीतलता पायी बांदा में ही उन्होने 14 वर्ष की अवस्था में जीवन की पहली कहानी लिखी।

चन्द्रकान्त वांदिवडेकर जी को उन्होंने साक्षात्कार के दौरान अपनी पहली कहानी के विषय मे बताया कि ''दरअसल उस वक्त चौदह पन्द्रह की उम्र में मैं जानता भी नही था कि छपना होता क्या है,मन में उठने वाली एक पवित्रता थी उसकी कल्पना थी और जिसे मैं एक विशेष व्यक्ति के आसपास सजाकर देखता था, उसी तरह उस कल्पना को शब्द दे पाता था। वे कहानियॉ इस पवित्रता की कल्पना से ही निकली।

हाईस्कूल की परीक्षा की स्थिति पर गोविन्द जी ने स्वयं लिखा है ''कि हाईस्कूल की परीक्षा के समय मैं कुलिया के छोटे मन्दिर मे पढ़ता था,वही मूर्तियों के बगल में जमीन पर अकेले सोता भी था। जिस दिन पढ़ने के लिये एक बड़ा लैंप (मिटटी के

तेलवाला) मिला तो वह खुशी हुई थी जो बाद की किसी तरक्की से नही मिली। इम्तहान से कुछ दिनों पहले एक मोटी सी कॉपी ,जिसमें सब विषयों के फाइनल नोट्स थें चोरी हो गयी । मेरी सारी हवा निकल गयी । कोई एक हफ्ते बाद तुम मेरे सामने खड़ी थी। खुले बाल बड़ी–बड़ी आंखें खुश –खुश मेरी तरफ ताकती,हाथ में कॉपी। पहले केन ,अब सरस्वती की चलती फिरती मूर्ति……'लो'……… याद नही तुम्हें बताया था या तुमने अपने आप ही भांप लिया था। कितने हाथों पार कर वह कॉपी तुम्हारे ही भाई के पास तुम्हारे ही घर पहुँची और फिर तुमने उसे मेरे ही लिए चुरा लिया था।''[26]

हाईस्कूल पास करने के बाद उन्होंने राजकीय इन्टर कॉलेज में दाखला लिया क्योंकि उस समय डी0ए0वी इन्टर कॉलेज में इन्टर की कक्षाएं शुरु नहीं हुई थी और वही से उन्होंने इन्टर मीडिएट किया बांदा में मित्रों द्धारा मिलने वाले अपनत्व के आलोक ने तथा गुरुओं के संरक्षण कौशल से मिली आत्मनिर्भरता ने मिश्र जी को बहुत से बल प्रदान किया। बांदा से इन्टरमीडिएट करने के बाद वे उच्च शिक्षा हेतु इलाहाबाद गये और वहां सर सुन्दर लाल होस्टल में रहकर 1955 से 1959 के दौरान बी0ए0 और एम0ए0 किया।बी0ए0 में उनके विषय अंग्रेजी साहित्य, मध्यकालीन इतिहास और संस्कृत थें। एम0ए0 उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में किया। उन्होंने अपने उपन्यास ''उतरती हुई धूप''व अन्य कहानियों जैसे ''बर्फीले पहाड़ पर ....'' एक संडक दो तस्वीरें '',वह दरियाई शहर में (थोड़ा बहुत) इलाहाबाद के 'प्रेम प्रसंगों ,रोमान्स और स्थितियों का चित्रण किया हैं साहित्य के प्रति अनुराग का जो स्फुरणबांदा में हो गया था वह यहां आकर विस्तार पा गया। क्योंकि मिश्र जी उन सौभाग्य शाली युवाओं में से थें जिन्हें फिराक गोरखपूरी को मित्रों के साथ देखने और सुनने का मौका मिला। चौदह वर्ष की उम्र में उनकी तीन चार कहानियॉ जिनमें 'पूर्णमासी का भोग' और 'चंदनियां अरज करे' थी। कॉलेज की पत्रिकाओं में छपी । ''जनभाषा बुन्देली तो उनका जबर्दस्त भाषाई आधार रहा ,संस्कृत और अंग्रेजी के छात्र होने के कारण और उन दिनों के उच्च स्तरीय मुशयरों और कवि सम्मेलनों से मिले संस्कारों से उनकी भाषा में वह आधुनिकता ओज और प्रवाह आये जिसके लिये वे जाने जाते है।[27]''

1959 में मिश्र जी ने एम0ए0 की परीक्षा पास की। यूनिवर्सिटी की मेरटि लिस्ट में उनको चौथास्थान प्राप्त हुआ उसी वर्ष जून में जबकि गोविन्द जी बेरोजगार थें उनकी मॉ ने उनका विवाह टीकमगढ में श्री प्रेमनारायण दुबे की दूसरी कन्या शकुन्तला से कर दिया परन्तु जुलाई में वे गोरखपुर के सेन्ट एंड्रूज कॉलेज में प्राध्यापक हो गये और लगभग 8,9 महीने वहां रहे उसके बाद अर्तरा डिग्री कॉलेज में हेड पद पर आ गए। वैवाहिक जीवन में उन्हें दो पुत्रियां और दो पुत्र रत्नों की प्राप्ति हुई। जिनमें से एक पुत्री छःमाह और एक पुत्र मनीष आठ वर्ष की अल्पायु में ही भगवान को प्यारे हो गयें। इन

दोनो की मृत्यु से मिश्र का अन्तःकरण विषाद के दंशों से विध गया। अग्निशलाकाओं से दग्ध ह्रदय की वेदना, पीड़ा द्रवीभूत होकर "लाला पीली जमीन' "उपन्यास "साजिश" और "वरणाजंलि" जैसी कहानियों में बह निकली।

वे गोरखपुर में नौकरी के अलावा आई0ए0एस के कम्पटीशन की तैयारी में जुटे रहे और जब 1960 में कम्पटीशन में बैठे तो उसी वर्ष चुन लिये गये। गोरखपुर में रहकर गोविन्द जी ने बैडमिंटन जैसे खेल का शोक पाल लिया था। जो आज भी बरकरार है। हर सुबह आज भी वे बैड मिंटन खेलने जाते है। जिसके कारण इस उम्र में भी उनमें युवाओं जैसा जोश, उत्साह,उमंग,फुर्ती दिखाई देती हैं ।'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन' वाली उक्ति उन्हें देखकर चरितार्थ होती है। भारतीय प्रशासनिक सेवा में चुन लिये जाने के बाद उनकी प्रथम नियुक्ति धनवाद में हुई वहां भी उन्होंने कुछ गोष्ठियों का सिलसिला शुरु किया। वहां उन्होंने नये अधिकारी के रुप में जो देखा और जो दबाव महसूस किये उसे "वह अपना/चेहरा"उपन्यास तथा 'जिहाद' कहानी में व्यक्त किया। बिहार में उन्हे श्री हंस कुमार तिवारी और फणीश्वर नाथ रेणू से सम्पर्क का सौभाग्य मिला ।जब 1966 में उनका स्थानान्तरण दिल्ली में हुआ तब वे अज्ञेय जी, जैनेन्द्र जी व दिल्ली में रहने वाले अन्य श्रेष्ठ साहित्यकारों के सम्पर्क में आये और उनसे अत्यन्त प्रभावित हुए उनकी जैनेन्द्र जी के साथ आत्मीयता क्रमशः बढ़ती गई। "यह आत्मीयता दो पीढ़ियों के समकालीन लेखकों बड़े छोटे भाइयों संपर्क समीप्य की आत्मीयता मात्र नही थी देखते देखते एक बड़ा खूबसूरत संबंध बन गया, जहां जैनेन्द्र जी के पास होना चलते फिरते साहित्य के पास होना था।"[(28)]

मिश्र जी रुसी साहित्य कारों में दोस्तो व्हस्की,सोल्जेनित्सन से भी अत्यन्त प्रभावित हुए।

भारतीय राजस्व सेवा में कार्यरत रहते हुये इन्होंने अपने कार्यकौशल का परिचय दिया जिसके कारण वे राजस्व सेवा के अध्ययन के सर्वोच्च पद तथा केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड तक पहुँचे तथा केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के निर्देशक भी रहे। और 1997 में सेवा निवृत हो तत्काल भोपाल में अपना स्थायी निवास बना निरन्तर लेखन से साहित्य की श्री वृद्धिकर रहे है भ्रमण और बैडन्मिटन खेलना खेलने में हारना मिश्र जी की प्रमुख अभिरुचियां है।

साहित्य सृजन की प्रेरणा से अनुप्राणित तथा सुयश की प्रेरणा से विरक्त गोविन्द मिश्र जी अपने साहित्य निकेतन के कुशल शिल्पी आई0 ए0 एस अफीसर तथा परिश्रमी सभी कुछ है।उन्होंने अपनी बहुविध अनुभव प्रसुत रचनाओं में जीवन जगत की वास्तविकताओं को उभारने के लिये धैर्य पूर्वक एक–एक ईटों को नगीने की तरह जड़ा है। जो उनकी रचना कौशल का परिचायक है। उनकी प्रतिभा का क्षेत्र अत्यन्त विशाल

और बहुरंगी है। किसी वाद या आन्दोलन से परे वे स्वतन्त्र लेखन में विश्वास करते रहे क्योंकि उनका मानना है "कि विविधता लेखन में तभी आती है जब कोई यह नही कहे इस तरह लिखों ।कहानी को लेकर चले आन्दोलन यही कहते है कि लेखन में फर्क धीरे–धीरे आता है।"[29]

सम्मान एवं पुरस्कारः–

गोविन्द मिश्र जी को साहित्यिक उपलब्धियों के लिये अनेक स्तरीय पुरस्कारों और सम्मानों से विभूषित किया गया।(अ) जिनमें से 'लाल–पीली जमीन' श्रेष्ठ लेखन के लिये *आथर्स गिल्फ आफ इंडिया* द्वारा सम्मानित।

(आ) 'हुजूर दरबार' उत्तर प्रदेश हिन्दी प्रतिष्ठान द्वारा *प्रेमचन्द पुरस्कार* से सम्मानित।

(इ) 'धीरे समीर' *भारतीय भाषा परिषद कोलकत्ता* द्वारा सम्मानित।

(ई) दिल्ली अकादेमी द्वारा *साहित्य में योगदान* के लिये सम्मानित।

(ए) 'पांच आंगनों वाला घर' 1998 के *व्यास पुरस्कार* द्वारा सम्मानित।

(ऐ) हाल मे ही *सब्रमण्यम भारती* सम्मान से सम्मानित।

व्यास सम्मान पर अपनी प्रतिकिया व्यक्त करते हुए मिश्र जी ने साक्षात्कार के दौरान डॉ0 अनामिका श्रीवास्तव को बताया 'कि सम्मान कोई मेरा निजी सुख नही है। मैं इसे दूसरों के प्रेम के रुप में लेता हूँ और उस प्रेम से अभिभूत होता हूँ। सम्मान मिले या न मिले "लिखना मेरी आत्मप्रेरणा है।" लिखने के लिये मुझे सम्मान और पुरस्कारों की आवश्यकता नही है,क्योकि लिखना मेरे लिये सॉस लेने जैसा है। उतना ही स्वाभाविक और उतना ही जरुरी भी....।"[30]

वर्तमान कथा साहित्य मे मिश्र जी का व्यक्तित्व बेजोड़ हैं हिन्दी साहित्य उन पर गौरान्वित हो सकता है।

मिश्र जी की साहित्यिक कृतियॉः–

मिश्र जी अत्यन्त परिश्रमी और कर्मठ व्यक्ति है अजस्त्र गत से चलने वाली उनकी लेखनी शताब्दी के चर्तुथ्यांश से अधिक वर्षो से साहित्य सृजन कर रही हैं जिसके फलस्वरुप हिन्दी साहित्य जगत में अनेक श्रेष्ठ रचनाएं सामनें आयी जिनमें उनकी प्रकाशित रचनाओं की सूची इस प्रकार हैः–

उपन्यासः–

उनके अभी तक प्रकाशित आठ उपन्यास है जिनमें:–

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	'वह अपना चेहरा'	1971	अक्षर प्रकाशन नई दिल्ली–02
(2)	'उतरती हुई धूप' राजपालएंडसंसमदरसारोड	1973	कशमीरी गेट, दिल्ली
(3)	'लाल पीली जमीन'	1976	राजकमल प्रकाशन दिल्ली
(4)	'हुजूर दरबार'	1981	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नयी दिल्ली
(5)	'तुम्हारी रोशनी मे'	1985	राज कमल प्रकाशन नई,दिल्ली
(6)	'धीर समीरे'	1988	राधाकृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली
(7)	'पॉच आंगनों वाला घर'	1995	राधाकृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली
(8)	'फूल..... इमारतें और बन्दर'	2000	राधाकृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली

कहानी संग्रहः–

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	रगड़ खाती आत्महत्याऍ	1978	संभावना प्रकाशन रेवती कुंज,हापुड़ (मेरठ)
(2)	नये पुराने मॉ–बाप (नया संस्क)	1987	नेशनल पब्लिकशिंग हाऊस,नयी दिल्ली0–2

(3)	अन्तःपुर	1976	नेशनल पब्लिकशिंग हाऊस,नयी दिल्ली0–2
(4)	धाँसू	1978	राजकमल प्रकाशन
(5)	खुद के खिलाफ	1980	संभावना प्रकाशन
(6)	खाक–इतिहास	1985	राजपाल एण्ड संस
(7)	पगला–बाबा	1988	नेशनल पब्लिकशिंग हाऊस,नयी दिल्ली
(8)	आसमान कितना नीला	1992	राधाकृष्ण प्रकाशन
(9)	हवाबाज	1998	राधाकृष्ण प्रकाशन

अन्यः–

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(10)	मेरी प्रिय कहानियॉ	1976	राजपालएण्ड संस पब्लिकेशन,दिल्ली
(11)	आपाहिज(लम्बी कहानियॉ)	1980	विधा प्रकाशन मन्दिर
(12)	स्थितियॉ रेखांकित (साठ के बाद की कहानियों का संकलन)	1977	नेशनलपब्लिशिंग हाऊस,दिल्ली
(13)	प्रतिनिधि कहानिया (पैपर बैक संस्करण	1989	राजकमल प्रकाशनं दिल्ली
(14)	गोविन्द मिश्र की प्रतिनिधि कहानियां (संपादक शैलेश मटियानी)	1989	साहित्य भण्डार
(15)	निर्झरिणी(दो खण्डों में सम्पूर्ण कहानियॉ)	1996	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली

यात्रा साहित्यः—

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	धुँध भरी सुर्खी	1979	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नईदिल्ली—2
(2)	दरख्तों के पार....शाम	1983	विधाप्रकाशन मन्दिर
(3)	झूलती जडें	1989	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
(4)	परतों के बीच	1996	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

निबन्धः—

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	साहित्य का सन्दर्भ	1985	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
(2)	कथा भूमि	1987	राजपालएंडसंस
(3)	मुझ में बहते जैनेन्द्र कुमार	1995	पूर्वोदय प्रकाशन
(4)	समय और सर्जना	2000	राधाकृष्ण प्रकाशन

सर्वविधाः—

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	मुझे घर ले चलो	1985	परागप्रकाशन दिल्ली

बाल साहित्यः—

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	कवि के घर में चोर	1994	राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली
(2)	आदमी का जानवर	1997	आर्य बुक डिपो दिल्ली
(3)	मास्टर मन्सुखराम	1997	आर्य बुक डिपो दिल्ली

अन्यः—

कम	पुस्तक	लेखनकाल	प्रकाशन
(1)	संवाद अनायास	1993	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
(2)	मेरे साक्षात्कार	2000	किताब घर प्रकाशन,दिल्ली

1 रामदरश मिश्र 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष' पृ0सं0 21
2. राम दरश मिश्र ,हिन्दी उपन्यास एक अर्न्तयात्रा (राज कमल प्रकाशन हाउस संस्क 2001) पृ0 262
3. ब्रह्मस्वरुप शर्मा हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा,(मनु प्रकाशन,दिल्ली, प्रथम सं0 2000) पृ0सं0 14
4. ज्योतिष जोशी, जीवन की सार्थकता और व्यर्थता की खोज का क्लैसिक वर्तमान साहित्य (संपा) अजगर वजाहत,(निर्मल प्रकाशन दिल्ली) पृ0 सं0 306
5. (डॉ0) प्रेमकुमार 'समकालीन हिन्दी उपन्यासः कथ्य–विश्लेषण प्र0 संस्क,(इन्दु प्रकाशन अलीगढ़ 1983) पृ0 77–78
6. इन्द्रनाथ मदान 'आधुनिकता और हिन्दी' उपन्यास (राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1980) पृ0 54
7. रामदरश मिश्र हिन्दी उपन्यास एक 'अर्न्तयात्रा' पृ0सं 217
8 इन्द्र नाथ मदान, 'आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास' (राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1980) पृ0 83
9. पद्माजा धोरपड़े , 'वह/अपना चेहरा': 'टूटन की समस्या',गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम'(संपा) चन्द्रकांत बादिवेडकर पृ0सं0 67
10. अवनिजेश अवस्थी इंडिया टुडे 10 अप्रैल 2000 पृ0 62
11. सरिका, फरवरी (1968)
12. सरिका, फरवरी (1968) पृ0 18
13 सारिका 1968 पृ0 19
14. डॉ0 नरेन्द्र मोहन,बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्धः हिन्दी कहानी, (कादम्बरी प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 1996) पृ0118
15. सुधीर चन्द्र 'नये पुराने मॉ–बाप' अंतरंगता की ललक और नियति गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम(संपा) चन्द्रकान्त वादिवडेकर वाणी प्रकाशन 1990 पृ0 सं 243
16. हेतु भारद्धाज; स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में मानव प्रतिमा पृ0 28
17. गोविन्द मिश्रः 'मेरे साक्षात्कार' दिल्ली प्रं0 संस्क (किताब घर प्रकाशन नयी दिल्ली –2000) पृ0 सं0 20
18. डा0 मंगलमेहता,स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानीःवस्तु एव शिल्प–विधान प्र0 संस्क (प्रगति प्रकाशन,आगरा 1984) पृ077
19. (डा0) प्रेम कुमार 'समकालीन हिन्दी उपन्यासःकथ्य विश्लेषण' प्र0 संस्क (इन्दु प्रकाशन अलीगढ 1983) पृ0138

20. ब्रह्मस्वरुप शर्मा, 'हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा' प्र0सस्क (मनु प्रकाशन दिल्ली 2000) पृ0 147

21. दैनिक जागरण 21 जून 2003

22. वही

23. (डा0) मंगल मेहता स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानीः वस्तुविकास एवं 'शल्प विधान' प्र0 संस्क (प्रगति प्रकाशन; आगरा 1984) पृ0 48

24 डॉ0 दंगल झाल्टे,'नये उपन्यासों में नये प्रयोग'(प्रभात प्रकाशन दिल्ली 1994) पृ021

25.देवेन्द्र नाथ खरे, बालक गोविन्द : गुरु की नजर में,गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (संमा) चन्द्रकान्त बादिवडेकर (वाणी प्रकाशन; नयी दिल्ली 1990) पृ0 9,10

26. गोविन्द मिश्र की अपनी कलम से कथाभूमि बांदा ,सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र (संमां) (डॉ0) उर्मिला शिरीष(मध्य प्रदेश राष्टभाषा प्रचार समिति भोपाल) पृ0 18

27. डॉ उर्मिला शिीरष (संमां) सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र (मध्य प्रदेश प्रचार समिति भोपाल) प्र0 संस्क 2000 भूमिका से

28. गोविन्द मिश्र समय और सृर्जना (राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली,2000) पृ010

29. गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार (डॉ0) अनामिका श्रीवास्तव से बातचीत (किताब घर प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 16

30 वही पृ0 13

द्वितीय अध्याय

मिश्र जी के कथा साहित्य का वस्तु विधान

कथा साहित्य में वस्तु का अभिप्राय उन उपादानों(raw materials) से हैं, जिस पर कथा का ढांचा खड़ा किया जाता हैं किसी कथा को तर्कसंगत रीति से सयोजित करना ही वस्तु विधान कहलाता हैं। कथा को तर्क संगत रीति से संयोजित करना ही वस्तु विधान हैं। यह संयोजन मूल भाव के अनुकूल होना चाहिए।

गोविन्द मिश्र जी ने स्वतंत्रता के बाद नई परिस्थितियों तथा नवीन परिवेश के अनुरुप अपने कथा साहित्य में जीवन के जीवंत विचारों को महत्ता प्रदान की तथा जीवन के सूक्ष्म विशेषताओं का अंकन और विश्लेषण किया। बदलती राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, नैतिक स्थितियों के संजीव चित्रण से उन्होंनें अपने कृतियों के वस्तु विधान को संश्लिष्ट, गहन बनाया तथा कृतियों को महत्ता प्रदान की।

वस्तु विधान

साहित्य के मर्मज्ञ,समीक्षक,अध्येता,साहित्य के मर्म को,उसके बोध को तथा संवेदना को दो दृष्टियों परखते हैं। कभी भाव और कला की दृष्टि से ,और कभी अनुभूति और अभिव्यक्ति की दृष्टि से। परन्तु आज समीक्षा में वस्तु और रुप या कथ्य और शिल्प की दृष्टि से मूल्यांकन का प्रचलन हैं ''साहित्य की वस्तु की सीमा बहुत व्यापक हैं साहित्य की वस्तु के अन्तर्गत रस,भाव,विभाव,चरित्र,विचार,इतिवृत,प्रकृति आदि वह सब समाविष्ट हो सकता हैं या होता हैं जो कलात्मक रुप ग्रहण करने के लिये साहित्य की सूक्ष्य या स्थूल सामग्री बन सकता हैं।''(1) वस्तु के उद्गम स्त्रोत और उसकी विषय –सीमा के बारे मे राजेश्वर और भामह की धारणाएँ उल्लेखनीय हैं। राजेश्वर ने 'काव्य मीमांसा' के आठवें अध्याय में काव्य के विषय या अर्थ प्राप्ति के बारह पूर्व आचार्यो द्वारा उल्लिखित और स्वयं के जोड़े गये स्त्रोत्रों की चर्चा की हैं''(2) तथा आचार्य भामह ने साहित्य की वस्तु की व्यापकता को रेखांकित करते हुए लिखा हैं ''कि ऐसा न कोई शब्द है न अर्थ,न न्याय,न कला जो काव्य का अंग बन सकें।''(3) राजेश्वर और भामह ने सिर्फ वस्तु के विषय स्त्रोत्रों की ओर संकेत किया हैं परन्तु विषय और वस्तु में पर्याप्त अन्तर हैं।
रामेश्वर खंडेलवाल ने 'वस्तु 'शब्द का प्रयोग करते हुए वर्ण्य,तथ्य और चेतना को उसके समानार्थी स्वीकार किया हैं। (4)
मुक्ति बोध अपनी एक आलोचना–कृति के निबन्धों में ''कथ्य'' या 'वस्तु' के लिये'तत्व' शब्द का प्रयोग करते हैं। (5)

परन्तु वास्तव में अंग्रजी में 'कन्टेन्ट' जिस अर्थ में प्रयुक्त होता हैं हिन्दी में उस अर्थ का द्योतन कराने के लिये 'वस्तु' का प्रयोग ही समीचीन हैं। वस्तु और रुप के विषय में भगवान सिंह ने लिखा हैं ''कि एक बने बनाये मकान की वस्तु (ईट, चूना,सीमेन्ट आदि) को उसकी आकृति के साथ जोड़कर या अलग करके देखने–समझने की गुजाइश हैं।लेकिन साहित्य में कब वस्तु रुप में ढल जाती हैं यह रचना प्रकिया के बहुत गहरे में उतरे बिना जानना बहुत कठिन हैं। एक सिद्ध कृति में वस्तु और कला पुनः अविभाज्य हो जाते हैं और इनके कार्य और गुण पुनः वस्तु और रुप भिन्न हो जाते हैं।''(6) अतः साहित्य में'वस्तु' और रुप का ये सम्बन्ध अत्यन्त जटिल हैं।

काव्य चेतना और सांस्कृतिक मूल्यों के सन्दर्भ में विवस ने कालकम की दृष्टि से काव्य वस्तु की तीन निश्चित अवस्थाओं की ओर संकेत किया हैं–''आधानावस्था;(stage of subsistence) जो भाषा बद्ध होने के पूर्व की वह अवस्था हैं जहाँ काव्य वस्तु अपने

होने की मॉग करती पायी जाती हैं आधारणावस्था (stage of insistence) जहॉ सृजनात्मक रुप निर्धारण की प्रकिया में काव्यवस्तु भाषा में जन्म लेकर मूल्यों का निरुपण करती हैं।अवग्रहणावस्था (stage of Existence) जहॉ सामाजिक स्वीकृति मिल जाने के कारण काव्य वस्तु स्वयं में एक शक्ति बन जाती हैं और अपनी इस स्वतन्त्र शक्ति के रुप में वह अपने पूर्ण अस्तित्व का बोध कराने लगती हैं।"[7]

अतः एक अच्छी कृति में 'वस्तु' इन गुणों की अपेक्षा रखती हैं—मौलिकता , प्रामाणिकता, विश्वासनीयता, सम—सामयिकता तथा कौतूहल वृति।

इन गुणों के आधार पर किसी कृति की श्रेष्ठता आंकी जा सकती हैं।

किसी भी कृति की वस्तु में जीवन के जीवन्त विचारों का अधिक महत्व होता हैं। मनुष्य के समस्त किया—कलाप व्यवहार आचरण इसके अर्न्तगत आते हैं, तथा राजनीतिक,आर्थिक धार्मिक और नैतिक सामाजिक विचार कलाकृति की वस्तु को सार्थक संश्लिष्ट और गहन बनाते हैं।

अतः किसी भी कृति की वस्तु की अनिवार्यता उसकी मानवीय वस्तु होती हैं। "क्योंकि साहित्य जीवन का साक्षात्कार हैं,अनुभव का शोध हैं,व्यापक अनुभूतियों की सच्ची अभिव्यक्ति हैं। साहित्य का लक्ष्य हैं मानवीय संवेदना का विस्तार।[8]

अतः मिश्र जी ने अपने कथा साहित्य में 'वस्तु' की सामग्री उन्हीं घटनाओं और अनुभवों से चुनी हैं। जो उसके ज्ञानात्मक के संवेदन दायरे में आए हैं।वे अनुभव की सच्चाई के आधार पर अपनी रचनाओं को अधिक प्रामाणिक बनाते हैं।

वस्तु विधान एवं मिश्र जी के विचार→

वस्तु विधान पर टिप्पणी करते हुए मिश्र जी ने लिखा हैं "कि मैं स्वयं को खुला रखता हूॅ जो भी विषय या प्रसंग मन में उतरआया वही रचना में फैलता हैं। फैलते वक्त वह अपना शिल्प स्वयं गढ़ता हैं। सयास चेष्टा कम होती हैं, इतनी जरुर कि जो लिख चुका हूॅ उसके दोहराव से बचा जाए या किसी बड़े साहित्यकार जो मुझे अच्छा लगता हैं उसके प्रभाव से बचा जाए।इसलिये मेरा हर उपन्यास —नया विषय,नया परिवेश और नये शिल्प को लेकर आया हैं। अंतिम उपन्यास 'फूल...... इमारतें और बन्दर' में तो भाषा ही नदारत हो गयी हैं एक तरह से ,क्योंकि वह परिवेश ही ऐसा था। जिस बिन्दू से रचना की शुरुआत होती हैं वह किसी व्यक्ति के भीतर बैठी पीड़ा हैं जो फिर मेरी पीड़ा बन जाती हैं। मुझे विषय विशेष पर लिखना हैं ऐसा अलग से सोचकर मैं नहीं चल पाता। अपने जीवन और आसपास के जीवन में डूबते उतराते हुए जहां कहीं कोई पीड़ा या देश

ने पकड़ लिया उसे उतारना और उसका सन्दर्भ लेकर जीवन को व्याख्यायित करना यही अगर आप लक्ष्य कहना चाहे तो रहता हैं।''[9]

साहित्य जीवन की वास्तविकताओं में उद्भूत होता हैं। ये वास्तविकताएँ कथाकार के मन में छटपटाहट पैदा करती हैं और अभिव्यक्ति का माध्यम खोजती हैं। मिश्र जी लिखते हैं कि कोई खटखटाता हैं।

''एक आवाज.... खामोश या बोलती हुई पर खामोशी में रिसती हुई ...बूंद–बूंद। कोई चेहरा है तो भी आवाज हैं,आवाज है तो उसके पीछे चेहरा भी हैं बनता मिटता हुआ ......।''

मेरी रोजमर्रा की जिन्दगी को काटता हुआ उस दायरे में प्रवेश कर रहा है।जो नितान्त मेरा हैं।मेरे जीव में खलबलाहट रह–रहकर बज उठती हैं।मैं उसे दबा देना चाहता हूँ। वह फिर उठ बजने लगती हैं।''[10]

मिश्र जी अपने जीवन सम्बन्धी अनुभव भीतर के सामान्य सत्य और अपनी संवेदना को खोजते हैं।वे आगे लिखते हैं कि उस आवाज और चेहरे के पार एक वेदना हैं.....आसमान न एकदम साफ न एकदम भरा हुआ, आसमान पर बिछती हुई शाम की कालिख... ऐसे में चिलककर बुझ जाती हुई बिजली की फांक ....बाहर चिलक रही हैं या मेरे भीतर। मेरे भीतर चिलक –कर वह कोई अपनी पहचान पाना चाहती हैं या मेरे आसमान की पहचान मुझे देना चाहती हैं।''[11]

साहित्यकार अपनी छटपटाहट की अभिव्यक्ति पात्र विशेष द्वारा या कौशल पूर्ण संकेतों के द्वारा प्रदान करता हैं।

उपन्यासों की कथा वस्तु उपाध्याय 2

वह। अपना चेहरा

"वह। अपना चेहरा" उपन्यास में लेखक ने दफ्तरी माहौल में काम करने वाले कर्मचारियों की दूषित मानसिकता के पहलुओं के चित्रांकन के साथ–साथ,अफसरों की अंहकारी वृत्ति से क्षत–विक्षत अधीनस्थ कर्मचारी का अहम् का ज्वालप्रतिशोध –बेवसी तथा उसके मानसिक प्रवाह के आरोह–अवरोह को मनौवैज्ञानिक सूक्ष्मता तथा गहनता के साथ अभिव्यक्त किया है। उपन्यास का नायक शुक्ला अपने उच्च अधिकारी केशवदास के प्रयास से दिल्ली आता है तथा यहॉ आकर व्यक्तिगत रुप से केशवदास तथा उसके परिवा रकी सहनुभूति अर्जित करता हैं। एक दिन जब वह शाम रचना के दफ्तर (जो उसके टेनिंग कॉलेज के समय की मित्र हैं)जाता है। तब वहां केशवदास मौजूद होता है और वह व्यंग्यात्मक रुप से रचना के सामने उसे अपमानित करता है। जिससे उसके अहम् को चोट लगती हैं। वह केशवदास और रचना के अनैतिक सम्बन्धों को हेय समझता है। और अपने अपमानित अहम्की तुष्टीकरण के लिये वह केशवदास लडकी रेशमा के साथ फलर्ट भी करता है। परन्तु अपनी कोशिश में नाकाम उसकी नसों मे एक वहियात–सी लिजलिजाहट का चिपकती है। वह मजसूस करता है। कि वह अनजाने की केशवदास की गुलामी करने लगा है। अपने तनाव का समाधान पाने की छटपटाहट उसमें उभरती है। केशवदास के प्रति उसका आक्रोश कुछ कम होता है और वह अपने मित्र के माध्यम से अपनी प्रमोशन की कोशिश करता है। परन्तु केशवदास उसके मित्र से उसकी प्रामोशन के लिये पैसे ऐठ लेता है। तब वह आश्चर्य मे पड़ जाता है। कि ऐसा होता है...... यह मैने सुन रखा था, लेकिन मैं विषय होऊॅगा, मेरे लिये रुपये चलेगें....यह अनुभव मेरे लिये विचित्र था ।मेरे जबड़े चिपक गये थें मुह का स्वाद अजीब हो गया था। ऑखें फटी पड़ रही थी जैसे मेरे सामने एक क्षण में ही किसी ने पहले का इतना कुछ मिटा दिया था– केशवदास से मेरी मुलाकात, उसकी मुझे देखकर वह ताजी ताजी प्रतिक्रिया .... 'आप जैसे को तो दिल्ली में होना चाहिए' उसके घर में मेरा आना–जाना,मिसेज केशवदास से कितनी तरह की बातें... रेशमा...। अब स्लेट काली थी... पूरी काल भी नही,मिटी खड़िया की सफेदी छूटी हुई थी वहॉ... स्लेट का रंग न इधर का न उधर का,अजीब सी किसकिसाहट...."[12] प्रामोशन पाकर वह खुश होता है। अन्त में जब एक शाम उसकी मुलाकात रचना से होती है। तब वह उसे अमरु के कमरे में लाता है। और उससे आधा बलात्कार कर बैठता है। वह कुछ टूटा–सा महसूस करता है। और हल्का पश्चाताप भी । उसे लगता है कि अगर वह हवस की एक आकस्मिक झोंक थी

तो मुझे उसे पूरी तरह पाने के लिये झपटना चाहिए था।........." अगर यह सिर्फ मेरे चोट खाये अहम् के लिये ही थी तो एक तरह का बलात्कार था...... "वह भी कमबख्त अपने पूरे रुप या रुह के लिये नही। मुझे नीच में कहीं जाकर उस पर प्यार सा– फिर आने लगा था..... "[13] उसे लगता है कि अगर रचना के प्रति फैनेला के लिए बनी आकांक्षा और केशवदास में एक कद्रदान और उदार मद्दगार व्यक्ति के दर्शन.... ये दोनों कुछ ठहराव पा पाते। मेरा भी कुछ अच्छा बाहर आता । लेकिन हमारी नकली दुनिया स्वार्थ से ओत प्रोत इस परिवेश ने सब कुछ स्याही बिखेर दी। क्या कुछ असली नहीं पनप सकता यहॉ ? जी नही यह सब अपनी बरबादी के लिये दूसरों को दोषी ठहराने के आलवा कुछ नही हैं ।" मुझीं में कुछ नहीं था... तभी तो मेरा परिवेश मुझे उस तरह रंगता चला गया ...."[14] जब वह मुँह की लिपस्टिक साफ करने वास बेसन मे जाता है तो शीशे मे उसे अपना सॉचा केशवदास में ढलता नजर आता है।

प्रस्तुत उपन्यास में दफ्तरी माहौल में प्रवेश करने वाले नौ जवान अफसर, के अंतर्विरोधों का खीज और छटपटाहट ,तनाव और आक्रोश का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

उपन्यास 'उतरती हुई धूप'

'उतरती हुई धूप' एक लधु उपन्यास है। इसमें लेखक ने विश्वविद्यालयी युगल के प्रेम और रोमान्स को अपनी विषय वस्तु बनाया है। उपन्यास के पूर्वार्द्ध में परीक्षा के समय इलाहाबादी विश्वविधालय के माहौल का और अरविन्द द्वारा अपनी प्रमिका (जो उसके कस्बें की लड़की है।) के साथ बिताये गये क्षणों का चित्रण हैं परीक्षा के समय अरविन्द अपनी नियोजित परीक्षा की तैयारी में जुट जाता है। और परीक्षा के बाद जब वह अपनी प्रेमिका से मिलने वीमेन्स होस्टल जाता है। तो उसे पता चलता है कि वह परीक्षा के समय ही चली गयी थी। इसके मन में शंका होती है कि उसने ड्राप किया होगा। अरविन्द की मौखिक परीक्षा के बाद यह आती है, और होटल में एक रात अरविन्द के साथ बिताती है। भावुकता वश पहली बार स्वत्व समर्पित कर देती है, तथा समर्पण के समय 'त्वमीय वस्तु गोविन्दम्' बड़बड़ाती रहती हैं , परन्तु किसी और से उसकी शादी हो जाती है।

उपन्यास के उत्तरार्द्ध में दस वर्षबाद अरविन्द जो अब एक अफसर बन चुका होता है। वह अपनी अतीत की प्रेमिल स्मृतियों की तस्वीर लिये उससे मिलने लखनऊ आता है। जब उसे पता चलता है कि वह पति से अलग रहकर पी0एच0डी0 कर रही है। अपने पुत्र अनिल के साथ रहते हुई वह पी0एच0डी0 में गाइड करने वाले भाई साहब पर काफी भरोसा करती है। इससे मिलने पर भी वह भाई साहब की चर्चा करती है। और जब ये उसे होटल में खाने पर बुलाता है तब वह भाई साहब के साथ आती है, ये

उस समय शराब पी रहा होता है। भाई साहब के चले जाने के कुछ देर बाद ही यह जाने को कहती है। यह उसे भेजने जाता है, और इसकी बदली हुई मानसिकता को देखकर सोचता है।

'कि अगर आज उसे ब्हिस्की न ली होती, तो शायद उसके साथ थोड़ी देर अकेले रह सकता था...पर क्या उसके लिये पचास और चीजे थीं.... अनिल...... किरायेदार.. .....पढाई.......रात ज्यादा.... बगैरह–वगैरह और उसे जाना था, तो जाना ही था। .....उसकी दुनिया चारों तरफ से भरी थी, यह भी किसी एक छोर पर था.... फड़फड़ाता हुआ एक छोटा सा भुनगा हैं जो कहीं से आकर वहां बैठ गया था और कल उड जाने वाला था..... जब कि वे और जो चीजे थी, वे रहने वाली थी..... ।''(15)

भाई साहब के प्रति अत्याधिक लगाव इसके मन में शंका पैदा करता है वह चाहता है कि वह पी0एच0डी0 छोडकर अपने पति के पास चली जाए। वह उसके घर जाने पर उससे पूछता है, कि शादी के दस साल बाद उसे पढ़ने की क्यों सूझी । वह बात टाल देती है, व्यस्तता के कारण इसकी ओर ज्यादा ध्यान नहीं दे पाती परन्तु इसे रात मे खाने पर बुलाती है। एकान्त में मिलने की उत्सुकता लिये जब वह जाता है तब उसके धर में ताला पड़ा होता है। काफी इन्तजार के बाद वह होटल लौट आता है, और खाना खाने के बाद पुनः उसके घर का चक्कर लगाने जाता है तब कमरे की बत्ती जली हुई मिलती है। यह उसके पति का नाम लेकर आवाज देता हैं अनिल के खॉसने की आवाज आती है। आखिरी आवाज देकर वह रिक्शे पर वापस चढ़ लौट जाता है और फिर पलेटफार्म पहुँचता है। डिब्बे में बैठकर रोता है कोई पूछता है।साब, क्या कोई गमी हो गयी है।

इस उपन्यास मे लेखक ने प्रेम के मांसल गुदगुदी पूर्ण अनुभूतियों को शब्द मित्र के माध्यम से उकेरा है। तथा दस साल बाद नायिका की मानसिकता मे आये बदलाव और नायक की निराशा, हताशा और कुठा, पीड़ा के जीवन्त चित्र खीचें है।

'लाल–पीली जमीन'

'लाल–पीली जमीन 'का नायक केशव एक संवेदनशील व्यक्ति है। उसकी संवेदनाएँ अपने उस वृद्ध पिता से जुड़ी है जो जीवन्त पर्यन्त निर्वासित होने का दुख उठाते रहे । इसलिये वह उन्हें अपने घर महानगर में लाता है उन्हें ठहराव का सुख देने के लिये वह अपनी पत्नी से भी जुड़ना चाहता है,परन्तु चाहकर भी नहीं जुड़ पाता । शादी के कुछ दिन बाद उसकी पत्नी उसकी प्रमिका उमा के पत्रों को जला देती है, और फिर उसके बूढ़े पिता को चले जाने के लिये विवश करती है। इन घटनाओं से दोनों के बीच एक दीवार खड़ी हो जाती है। जो पाटने से भी नहीं पटती।

इस उपन्यास में चरखारी की एक खंदिया बस्ती के एक अंचल के परिवेश के माध्यम से वहां होने वाली हिंसक गतविधियों के द्वारा सम्पर्ण देश में फैली उन सामन्तवादी राजनैतिक शक्तियों का खाका खींचा गया है,जो गॉव में बड़ी–बड़ी जमींदारियों के स्वामी होने के बावजूद अपनी जड़े शहर में जमाने के लिये ,अपनी स्वार्थ परिता के लिये निम्न मध्यवर्ग के किशोरों को हिंसा की अग्नि कुण्ड में झोंक देते है, और अपनी धाक और प्रतिष्ठा राजनीति में स्थापित करने के लिये प्रयासरत होते है। लेखक ने उपन्यास में जिस जमीन का जिक किया है, वह कस्बे की किसी बस्ती खंदिया की है। जिसकी भौगोलिक पहचान भी लेखक कराता है।केशव बचपन से यहॉ की समस्त विंसगतियों का दृश्य और भोक्ता हैं, उसके पिता बच्चों की शिक्षा और सुरक्षा हेतु गॉव छोड़कर इस बस्ती में आते है और पत्नी और बच्चों को छोड़ गॉव में नौकरी करते है किराएँ के मकान के आसपास के दृश्य केशव के बाल सुलभ मन भय उत्पन्न करते है उस भय से मुक्ति उसे मामा के संरक्षण में मिलती है,जो इस अपरिचित संसार में उससे स्नेह भाव रख उसे पढाते है । इस जमीन की मिटटी में जन्म लेने वाला बालक जब किशोर से युवा होता है तो उनके सामने होता है, अर्थहीन,साधनहीन और संस्कार हीन जीवन, खेलने के लिये चियॉ, गुल्ली डण्डा,लुका–छिपी ,दण्ड बैठक,कुश्ती इत्यादि खेल, मनोरंजन के साधन तीतर लड़ाना और पशुओं का लड़ना शौर्य प्रदर्शन करना अपने छोटे लड़को को फॅसाना और उन्हें चूम लेना।

जखीरा में शिवराम और कल्लन के तीतरों की ऐलनिया भिड़न्त होती हैं जिसमे कल्लन का तीतर हार जाता है कल्लन अपने बेटे घुटई को शिवराम के बेटे सोहन से भिड़ा देता है। धुटई सोहन को पराजित कर देता है, इस अपमान का बदला लेने के लिये शिवराम अपने मकान को केशव के पिता को बेच देता है, और सोहन को दूसरे के यहां मकान में नौकर रख, एक वकील की सलाह पर कल्लन पर मुकदमा ठोंक देता हैं अपने साथियों के साथ खेलते वक्त केशव देता है कि शिवमंगल अपने ड्रिल मास्टर कौशल से झगडता है। बीच बचाव में कूल्लू मास्टर का पक्ष ले इस झगड़े को रोकने मे सफल होता है ।बस्ती के वकील का बेटा कैलाश जो मास्टर कोशल का पड़ोसी है उसे मास्टर कौशल का उसे इस तरह से अपमान उचित नहीं लगता है, इस लिये जब वह शैलजा को छोड़ते हुए शिवमंगल को देखता है,तो भड़क उठता है,और शिवमंगल से झगड़ पड़ता है इसी बस्ती के मन्दिर का लंगोटे धारी पंडित अपनी बीबी को बुरी मार मारता है;परन्तु उसे कोई बचाने नही आता जेलर साहब जो शिवमंगल के पिता है, उनकी देख रेख में उनके गॉव के दोस्त के तीन बच्चे बडे मझले और छोटे पढते है। शिवमंगल की बहन की सहेली शान्ति झूले मे पेगें लगाते वक्त बडे की ओर आर्कषित होती है, वह नौकरी करने वाली बड़े से कहती है , कि "एक बार दिन के उजाले में

तुम्हारे हाथ मे हाथडाले हर गली से गुजरना चाहती हूँ इस मोहल्ल की । मर जाएँगे कमबखत सब के सब .....बूढ़े –बड़े लुच्चे लपाडी।" [16] परन्तु वो लंगोट धारी पंडित की हवस का शिकार बनती है और आत्महत्या कर लेती है ।वचपन में कैशवदास खेल–खेल में बिट्टी के सामने अपना प्रथम प्रणय–निवेदन चिट्टी में लिख देता है। परन्तु उसे बाद बिट्टी खेलने न आना भीड़ में चलना उसे आभास कराता है, कि वे गल्ती पर था।

केशव का नया धर लछमन के धर से सटा हुआ होता है, यहां वह लछमन की बड़ी बहन जो उससे भी उम्र मे बड़ी है कभी–कभी उसके साथ खेलता है और उसके समीप्य और स्पर्श से खिला महसूस करता है पंडित का चेला नारायण जादव की बेटी छवि की ओर आकर्षित होता है । सुरेश को ये वाकयॉ पता होता है वह मन्दिर में छवि के गालों पर छुरी से रेख बना देता है, सबके सामने जादव की आबरु की धज्जियॉ उड़ा देता है। शिवमंगल अपना बदला लेने के लिये कामता और छुटई से कैलाश को पिटवा देता है।

बस्ती में चौबे और जादवो के दो बड़े धराने है, बस्ती मे इनके इलाके बटे हुए है, जातीयता का दंम भरने वाले अपने यहॉ गॉव के लठैत पाले हुए है । परन्तु पंचायतों में दोनो बराबरी से शामिल होते हैं। कलक्टर की कोठी शहर के एकदम बाहर है नया कलक्टर यहॉ आने वाले पुराने कलक्टर और उसी के यहॉ एक गुण्डे द्धारा चोरी करने और कलक्टर की लड़की को ऐलनिया भगाने की घटना को सुनकर अपनी जान माल की हिफालत में ही लगा रहता है। बस्ती के बोस साहब पेशे से वकील परन्तु राजनीति और सरकारी तन्त्र से चिपककर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये राजनीतिक दॉव पेच खेंलते रहते है। शिवमंगल और चौबें जादवों का उपयोग भी करते हैं।

सुरेश ड्राइंग मास्टर के मार्फत तंमाचा प्राप्त करता है,परन्तु उसके मनमाने उपयोग से उसे मनाही है। सुरेश चाहता है, कि उसके कारनामों से सभी खौफ खांए। केशव के जब मां और जिन्हें वह मामा कहता के गलत सम्बन्धों को देखता है तब उसके किशोर मन में अजीब कडुवाहट भर जाती हैं। वह बाहर लोगों सें कतराता है क्योंकि उसे लगता हैकि बाहर भी लोग इस प्रकार की छीटाकशीं करते हैं। केशव छीटाकशीं से बचना चाहता हैं परन्तु जब रामकिशोर उसकी बहन और पंडित को लेकर उल्टापुल्टा कहता हैं तब केशव उसे पीट देता है। काफी हंगामें के बाद मामला जब पंचायत तक जाता है,तो चौबे और जादव के साथ पुलिस कांस्टैबल शिवहरे भी वहॉ पहुँचता है। और केशव के पिता को पीट देता है चौबे और जादव केशव के माता–पिता के धर जाकर उन्हें समझाते है,कि आगे ऐसा नहीं हो सकेगा लछमन की बहन मालती अपने से बड़े एक प्रौढ़ सर्वेश से ब्याह दी जाती है जिसकी तीन बीवियॉ मर चुकी है केशव जब

मालती के घर जाता है, तो मालती उस पर स्नेह भाव दर्शाती है परन्तु उसकी निकटता में उसे पसीने की बदबू महसूस होती है, और केशव उससे कतराता है।

स्कूल प्रिसिंपल के रिटायर होने पर बोस साहब (जो सकूल प्रेसीडेन्ट है) इस पद पर बाह्मरीय आदमी लाना चाहते है। छात्र इस बात से भड़क उठते है वे बाहर से प्रिसिंपल न आने के पक्ष में जुलूस निकालते हैं।पहले बोस साहब के बॅगलें के सामने नारे बाजी करते है,और फिर कलक्टर के बॅगले को चारों तरफ से धेरकर नारे लगाते है। पुलिस लाठी चार्ज करती है । सुरेश पुलिस की जीपों मे आग लगा देता है। कुछ छात्र धायल हो जाते है। गोली चलाई जाती है। इस धटना की खबर शहर मे सनसनी फैला देती है, कर्फ्यू लगा दिया जाता है। शहर में बड़े नेताओं के घरों में अलग–अलग मीटिगें होती हैं। सभी नेता जनता और छात्रों के सामने प्रशासन को ठीक से चलाने का वादा करते हुए जोर दार भाषण देते है । मीटिंग के दो धन्टे बाद कर्फ्यू हटा लिया जाता है। इस धटना से सुरेश का दबदबा चारों ओर फैल जाता है कल्लू शिवहरे से मिलकर मास्टर की लड़की शैलजा को भगा ले जाता है। पुलिस अपनी तहकीकात में कैलाश और शिवमंगल को पकड़ती है और कैलाश को बहुत पीटती है। इस धटना से मास्टर कौशल दुखी होते है कैलाश की बुआ शोकाकुल परिवार को ढ़ाढस बधाती है। धटना के बाद कैलाश भाग जाता है। लोग अटकलें लगते है,कि उसने कल्लू की अच्छी खबर ली कोई कहता है कि उसने शिवहरे के दोनो हाथों को छलनी कर दिया । धटना के कुछ दिन बाद ही शैलजा वापस आती है। और रोते–रोते पिता को बताती है, कि उसने उसे शादी के लिये मजबूर किया ,परन्तु वो उसके साथ नहीं रहना चाहती।

स्कूल में इम्तहान के समय शिवमंगल पर्चा रखकर नकल करता है। इनविजिलेटर्स की बात न माननेपर उन्हें मास्टर कंठी आकर उसे नयी कॉपी लेने को कहते है। वह उन्हें कुर्सी से हटाने की धमकी देता है और उनके पेट मे चाकू भोंक देता है इसी समय कुछ बाह्मरीय तत्व आकर तोड़–फोड़ करते है,और फर्नीचर जला देते है। शिवमंगल को भागने का मौका मिल जाता है। मास्टर कंठी की मृत्यु से जनसमूह उदास हो जाता है पुलिस आती है। मास्टर कंठी का दाहसंस्कार किया जाता है। बोस साहब मीटिंग बुलाते है। जिसमें इम्तहान के दौरान हुई हिंसा और अध्यापकों की सुरक्षा की चर्चा होती है। वे मास्टर कंठी के शोक संतप्त परिवार के लिये एक हजार की ग्रांट कालेज फंड से मंजूर कराते हैं। शोक प्रस्ताव के तीन दिन बाद ही केशव को अनिल द्वारा पता चलता है कि बोस साहब के यहाँ शिवमंगल छिपा हुआ है, ये सूचना जब केशव कोतवाल को देता है, तो वो उसे टाल जाता है। केशव के पिता शहर छोडकर पुनः गॉव जाने के लिये समान बॉधने को तत्पर होते है। उस दिन केशव अपनी पिता की उदासी को पूरी तरह से पहचान पाता है।सामान बॉधकर और भी थके हुए ,चारपाई पर

उघारे बदन बेहद उदास, करीब –करीब पस्त। घनी खिचरहा भँवों के नीचे उनकी छोटी–छोटी ऑखे करुणा का आथाह समुद्र थामे हुए उनकी वे ऑखे उस शाम के बाद लगातार मेरे साथ ही है, तब वैसे बैठे हुए जैसे उनका सारा जीवन ऑखों में सिमट आया था। उनके अन्दर का कोमल तत्व।'' केशव उनके रिटायर होने के बाद उन्हें अपने घर ले आता है । परन्तु केशव के पत्नी के व्यवहार के कारण उन्हें पुनः निर्वासित होना पड़ता है। केशव महसूसता है वे दर्द वे उपेक्षाऐ जो उसकी मॉ के कारण उन्हें उस शहर में मिली थीं। वे केशव को बस मे चढ़ा आने के लिये कहते है, तब उनके पैर छूते समय केशव देखता है, कि उनके पैर निरन्तर पत्थरों के रास्ते पर चलते रहने कारण खुरदरें और बेड़ौल हो गये थे।

उपन्यास में यद्यपि पात्रों की भरमार है परन्तु उपन्यासकार ने परिवेश मे जीने वाले सभी पात्रों की कुठा,अमानवीयता, हिंसक प्रवृतियों , मूल्यहीनता,राजनीतिक दॉव पेच पार्टीबाजी जातीयता गुण्डागर्दी आदि प्रवत्तियों को अपने लेखन में उतार कर बुन्देलखण्डी कस्बाई मानसिकता का जीते– जागता उदाहरण प्रस्तुत किया है। आंचलिक भाषा की बुनावट से उपन्यास को स्थानीयता का रंग देने का प्रयास किया है, परन्तु स्थानीयता के साथ–साथ उपन्यास अपनी अन्य विशेषताओं के कारण भी अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति बन सका है।

'' हुजूर दरबार''

'हुजूर दरबार' सन् 1981 में लिखा गया उपन्यास हैं,जिसे लेखक ने वृहत् फलक पर उतारा है, इसमें मध्यम शैली की रियासत मे धटित होने वाली धटनाओं स्वतंन्त्रता प्राप्ति की पृष्ठभूमि में स्थित राजतन्त्र का लोकतन्त्र मे विलीनीकरण ,सत्ता स्थानातंरण की जटिलताओं , स्वतंन्त्रता के बाद बदलते सांस्कृतिक मूल्य, सत्ताधारियों के बदलते मुखौटों, राजनीतिक भ्रष्टाचार दोनो तन्त्रों से गुजरते शोषित नायक की खण्ड़ खण्ड़ होती मानसिक पीड़ा को चित्रित किया गया हैं।

उपन्यास का आरम्भ अवचेतन के स्तर पर अभिव्यक्त अर्न्तमुखी प्रलापों से हुआ है, जिनमें शोषण कारियों की नियति की तथा दहशत खाती शोषित वृत्ति की झलक मिलती है।

उपन्यास का मुख पात्र जिसे राजदरबार का संरक्षणइसलिये प्राप्त है, कि उसे दादा द्वारा किए गये अनुष्ठान से रियासत के निपुत्रिाक राजा को पुत्र की प्राप्ति होती है और उन्हें राजगुरु का पद प्राप्त होता और वही पद परम्परा से हरीश के पिता को प्राप्त होता है। उनके रहस्यमय सम्बन्ध मॉ साहिबा से स्थापित होते है, जब हरीश के संकट मोचन मन्दिर में गिरने की धटना का भय हरीश के मन से हटाने केलिये मंसूरी के

स्कूल मे भर्ती कराने की बात कहते हैं तब मॉ साहिबा उसे स्टेट स्कूल मे भर्ती कराने, उसकी पढाई का खर्च खजाने द्वारा दिये जाने का फैसला सुना देती है। सुबह शाम हरिमन्दिर में आते जाते रहने की बात कहती है। तेरह तोपो की इस रियासत की बाग डोर जो राजसी वैभव और शानो शौकत से भरपूर थी।महाराज रुद्रप्रताप सिंह के पढ़ने, खेलकूद ,तैराकी, फोटोग्राफी, शिकार इत्यादि के शौकीन थे साथ ही साथ लोक कल्याण का आदर्श लेकर सत्ता चलाने मे विश्वास रखते थे। इसके अतिरिक्त उनके कुछ परम्रागत शौक जिनमें आलीशान इमारत,विस्तीर्ण जलाशय; भव्य बगीचें कीड़ा स्थल इत्यादि बनाना शामिल थे,जिससे इनकी रईसी रुआब और बडप्पन की प्रवृत्ति प्रदर्शित होती थी। इसी के साथ परम्परा से चली आ प्रथा अथितियो का भव्य स्वागत, जनता से पैसा इक्ट्ठा करना दशहरे पर हाथी और सट्टेमारों का खतरनाक खेल देखना भी उनके शौक में शामिल थे। इस खतरनाक खेल में यदि कोई सट्टेमार अपनी जान गॅवा बैठता तो उसके परिवार की इतना तगडा मुआजवा मिलता कि तीन पीढ़ियो की चिन्ता मिट जाती, ऐसे ही खेल हाथी के बिगड़ जाने पर एक सट्टेमार की जान चली जाती है, तो उस करुणिक मृत्यु के समय महाराज का ध्यान तेरह वर्षीय कोमलांगा राधाबाई की ओर खिच जाता है, और राधाबाई उनके महल में लाई जाती है। महाराज की दो रानियों राजगढ़ सरकार और चरखारी सरकार के बाद तीसरी रानी नेपाल सरकार को रानी आगमन महल में होता है और महाराज की व्यस्तता के कारण उनका विवाह तलवार से सम्पन्न होता है। नेपाल सरकार का व्यक्तित्व इन रानियों से एकदम निराला था सजीव पेटिंग पढ़ना धुड़सवारी टेनिस ,बेडमिटन बिलियर्डस ये सभी उनके शौक थे। लक्ष्मण बाग पैलेस में उन्होने पढ़ी लिखी मुक्त महिला जैसा जीवन शुरु किया।

हरीश की मॉ को हरीश का मन्दिर जाना पसन्द नहीं करती है, क्योंकि उनके मन में राजमहल के प्रति एक अजीब कडवाहट भरी रहती है। सुधा अनुराधा जो नेपाल सरकार की परिचायिकाएँ है हरीश को बताती है, कि नेपाल सरकार ने दक्षिणा की रस्म के लिये उसे चुना है। उस समय हरीश को नेपाल सरकार के सौन्दर्य को नजदीक से देखने को मिलता है जिसमें हरीश खिंचाव महसूस करता है।

रियासत का दीवान छोटेलाल एक ओर महाराज का हितचिंतक दूसरी ओर अग्रेजों का दलाल एक ऐसा षड़यन्तकारी था, जिसने अपने दॉवपेचों से राधाबाई को महाराज से अलग कर अपनी रखैल बनाने का मजबूर किया । राधाबाई जो अपने निश्छल स्नेह से महाराज के मन अपना विशिष्ट स्थान बना लेती है, दीवान के द्वारा छली जाती है ,और बाद में उसी के द्वारा उसकी हत्याकर दी जाती है। इसी प्रकार भूतपूर्व दीवान का पुत्र बख्तावर सिंह है, जो धूर्त व्यापारी होने के साथ—साथ अत्यन्त चतुर और चालाक भी है।

स्वतंन्त्रता प्राप्ति तथा अंग्रेजों को भारत से खदड़ने के लिये खरे प्रजामण्डल की सन् 1935 में स्थापना करते है परन्तु अपने ही सहयोगियों स्वार्थपरिता जो कुर्सी हथियाकर सत्ता में आने के लालायित है ,खरे को चोट पहुँचाती है। वे यह प्रस्ताव रखते है, कि प्रजामण्डल के बड़े बड़े नेता सत्ता से बाहर आकर जनता की सेवा करें वे ये भी जानते है, रुद्रप्रताप ऐसे राज्यकर्ता है, जो जनता के हित चिन्तन कुद हद तक ख्याल रखते हैं। खरे प्रजामण्डल से इस्तीफा दे देते है, और गॉवों मे घूमघूम कर सत्ताधारियों के खिलाफ नई पीढ़ी तैयार करते है।

हरीश की मॉ राजधराने के प्रति धृणा उपेक्षा का दर्द हृदय में दबाये ही चल बसती है। हरीश का अकेलापन दूर करने लिये उसके पिता अपने दूर के रिश्तेदार दादा जिन्हें उन्होंने मठ में लगवाया था उनकी बेटी उमा ओर उसकी मॉ को घर में आते है। उमा के प्रति हरीश के अन्दर बचपन से आत्मीयता थी, अभी उसे उमा में मॉ की सी आत्मीयता का आभास होता परन्तु राजमहल के प्रति उमा की ऑखों में उसे मॉ जैसी ही नफरत दिखाई देती है। नेपाल सरकार हरीश को हिन्दी पढने को बुलाती है और हर शनिवार उसे ड्यूटी देनी पड़ती है। एक दिन महाराज जब रियासत से बाहर जाते है, तब महारानी महाराज के अल्पायु के लिये चिन्ता व्यक्त करती हैं, और एक अजीब किस्म की मनोदशा मे हरीश से देह सम्पर्क स्थापित कर बैठती है, परन्तु बाद मे उसे स्मरण नही रखती जब हरीश में उनकी देह का खिचाव बना रहता है।

सिर्री राजा रियासत का कुछ माल हड़प रियासत छोड़ देते है खरे की भैयाबाई जो उसे बेटे की तरह देखती है उनकी मृत्यु हो जाती है। प्रजामण्ड़ल से इस्तीफा देने के कुछ दिनों पश्चात खरे की रहस्मय मौत का समाचार सुनाई देता है। नेपाल सरकार की अपेक्षा, मॉ और उमा के दुख का अहसास, राजधराने से सम्बन्धित रहने से अपने व्यक्तित्व के अवरुद्ध होने का ज्ञान, इन सभी कारणों से हरीश रियासत छोड़ने का निर्णय लेता है, और एम0ए0 करने के लिये पटना जाता है वहां प्रोफेसर भट्टाचार्य के सहयोग से एम0ए में रिकार्ड अंक प्राप्त करता है। फैलोशिप प्राप्त कर अमेरिका जाने की तैयारी करता है,तभी दिल्ली के बड़े अधिकारी तनेजा साहब उसे समाजिक तनावों पर काम करने के लिये कहते है, और उसे प्रो0 स्मिथ से मिलवाते है जो सोशल टेंसन के बड़े दायरे में काम कर रहे थे उन्ही से प्रोत्साहन प्राप्त कर हरीश अपनी योजना बदल देता है, और कलकत्ता पहुँच जाता है। वही के मन्दिर में डेरा डाल काम शुरु करता है। ट्यूशन द्वारा खर्चा निकलाता है, तथा एक साथी की सहायता से 'बुद्ध विचार' पत्रिका भी निकलता है।

रियासतें खत्म होती है। महाराज रुद्रप्रताप मेनन के पेन से ही अपनी रियासत–विसर्जन के कागजो पर दस्तख्त करते है। बख्तावर सिंह और दीवान छोटेलाल

अपने बुद्धि कौशल से सत्ताधारी पक्ष में मिल जाते है। काकू कवि भी सत्ताधारियों का गुणगान करने लगते है।

नेपाल सरकार कलकत्ता पहुँच जाती है, और हरीश को रियासत में आने के लिये तरह तरह से षड़यत्र रचे जाते है। उसके द्वारा एकत्रित किये ऑकड़ों को तितर–बितर कर दिया जाता है। उसकी कमाई के सारे रास्ते बन्द कर दिया जाते हैं। हरीश ये सोचकर सम्पूर्ण सामग्री लेकर दिल्ली चला जाता है। उन्हें पेश कर वो बधीं तनख्वाह का सिलसिला जारी कर सकेगा। राजधराने के बिखरते ही महाराज रुद्रप्रताप अपनी जीवन शैली बदल देते है। निष्काम जीवन व्यतीत करने लगते है। नेपाल सरकार उनकी निष्क्रियता को देखकर निरन्तर छटपटाती रहती है, उनकी छटपटाहट को देखकर महाराज उनके लिये एक मिल खुलवा देते हैं। परन्तु महाराज का देहान्त कुछ समय पश्चात हो जाता हैं। और नेपाल सरकार राजनीति में उतारना चाहती है । वे इसी प्रयास हेतु दिल्ली चली जाती है, और हरीश वहॉ अपनी रिपोर्ट पेश करने के लिये यहॉ वहॉ चक्कर लगाता है। उसे महसूस होता है, कि अब राजनैतिक दुनिया में सामाजिक तनावों वाली बात कहीं नहीं थी, उसकी सारी मेहनत ,तनेजा साहब के सारे वो एक क्यूरी में फंस होते है उसे लगता हैं, कि उसके साथ बडा धोखा हुआ है। वह पटना जाने की सोचता है परन्तु गॉव चला आता है।

गॉव में मठ का वैभव समाप्त हो जाता है, और वह विधार्थियों के छात्रागृह की शक्ल अखितयार कर लेता है उमा के पिताजी मेस का काम सम्हालते है, परन्तु उन्हें नये जमाने के लड़को से बार–बार अपमानित होना पड़ता है एक दिन जब लड़को की उच्छखलता बढ़ जाती है तब उमा अपने पिताजी से गॉव वापस चलने के लिये कहती है। हरीश अनेक प्रयासों के बावजूद भी उन्हें गॉव जाने से नहीं रोक पाता है। हरीश नौकरी के लिये कोना –कोना छान मारता है और अर्जियॉ देता है। एक कालेज में उसकी अर्जी ले ली जाती है, और उसे कमेंटी में रखा जाना होता है परन्तु उस कमेटी की प्रेसीडेन्ट नेपाल सरकार थी ये जानकर उसका सारा उत्साह जैसे भॉप बनकर उड़ जाता है। वह अपनी आत्मा पर राजमहल और नेपाल सरकार का कोई पुराना दबाव महसूस नहीं करना चाहता है।

एक दिन म्युनिसिपल बोर्ड का मेम्बर जुझार सिंह हरीश का मौरुसी मकान गिरवा देता है वह पुलिस की शरण में जाता है डी0एस0पी0 से फरियाद करता है। अपर कोर्ट में मुकादमा चलाता है, परन्तु उसके सारे प्रयास निष्फल होते है। हरीश के मन मे जुझार सिंह का भय बैठ जाता है, वह पिता से यह कहकर दिल्ली चला जाता है, कि अगली बार आऊॅगा तो आपको साथ ले चलूँगा उसे यह आशा थी, कि बड़े शहर में शायद कोई नयी शुरुआत मिल सके और अपनी स्टडी का फल प्राप्त हो सके । उसके पिता का

निधन हो जाता है, वह रियासत वापस लौटता है वहॉ उसे अवचेतन में वही आवाजें सुनाई देती है–

"....तुम किस चिन्ता में पड़ें हो .... हमारी कुर्सी में आ जाओ। यह जमाना कलम कुर्सी का ही है हम राजा रानी है, शक्तिशाली है। हमारा खास दिमाग होता है, हमारे बहुत साधन है। हमारा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। हमारी कुर्सी ले ली गई, तो हमने अब ऐसी कुर्सी बनाई है, जो दिखायी ही न दे और जो पकड़ में न आ सके । हम तो गुलकंद खाते थे वही खाऐगे।"[(17)]

इस प्रकार ये उपन्यास समसामयिक राजनीतिक गतिविधियों का ऐतिहासिक दस्तावेज व राजनीतिक हथकड़ो के शिकार नायक हताशा, पीड़ा को चित्रित करता है।

'तुम्हारी रोशनी मे'

" तुम्हारी रोशनी में" उपन्यास की नायिका सुवर्णा के चरित्र का अंकन उपन्यासकार ने परिवेश की प्रासांगिकता मे किया हैं।लेखक ने सामाजिक जीवन की विविधता, जटिलता ,और व्यापकता देखते हुए सुर्वणा के व्यक्तित्व को सम्पूर्णता में उभारा है। जिसके अपने सपने ,अपना मन ,अपनी आंकाक्षाएं और अपेक्षाएं हैं, और जिसे पुरुषों की तरह जीवन की स्थितियों पर टिप्पणी करने का पूरा अधिकार है ।सुपर्णा पढ़ी लिखी कामकाजी, जिन्दगी को अपने तर्को के आधार पर जीने वाली , विवाहित महिला है ।उच्च पद पर अधिकत होने के कारण उसके पुरुष मित्रों का अपना अलग दायरा है, जिनसे वह अपने पति की उदार सोच के कारण स्वतन्त्र रुप से मिलती है, परन्तु वह अपनी सीमाओं के प्रति पूरी तरह से सजग है ,तथा अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से चूकना नहीं चाहती है, एक स्थल पर वह कहती है, "कि गृहस्थिन होना ।गर्व की बात है मेरे लिये ....। यहॉ भी अपना काम मुझे उतना ही अच्छा लगता है कि जितना दफ्तर का काम । जैसे मै दफ्तर में सफल होना चाहती हूँ, वैसे ही घर में भी वहॉ मैं किसी आदमी से पिछड़ी नही रहना चाहती यहॉ किसी औरत से नही। पूरी कोशिश करती हूँ, बच्चों की देखभाल घर का इन्तजाम रमेश का ख्याल......"[(18)]

सुवर्णा के आर्कषित व्यक्तित्व में सुवर्णा की ऑखों की रोशनी मे अनन्त प्रकाश पाता है –'वे ऑखे कितना कुछ कहती थीं...... और उसे भी ज्यादा समेटे हुए थी अगर कोई उन्हें पढ़ पाता तो दुनिया के श्रेष्ठ साहित्य को एक जगह उॅगलियों से सीधे–सीधे छू सकता था।'[(19)]

मुलाकातों का सिलसिला ,भावात्मक आदान प्रदान एक दूसरे को जानने की जिज्ञासाएँ बढ़ती है जिसके प्राकान्तर मे लेखक व्यक्ति ओर समाज के अन्धेरे पक्षों को उदधाटित करता है सुवर्णा अनन्त को अपने मित्रों अरविन्द सोम, दीपक के बारे मे बताती

है कि किस तरह वे जुनूनी हुए और सीमाओं को लाघने के प्रयास में इससे अलग हुए क्योकि सीमाओं के आगे सुवर्णा ने उन्हें जाने नहीं दिया। वे सभी अभी भी सुवर्णा को चाहते है। सुवर्णा जहॉ रिश्तों का बौद्धिकता के स्तर पर निबाहते हुए चलती है वही अनन्त उसे भावनात्मक स्तर पर ले जाकर सुपर्णा के अनछुए पहलुओं को खोलता है।

श्याम मोहन जो सुवर्णा का अफसर है, उसके जन्म दिन एक धटना धट जाती है रमशे का सस्कार ग्रस्त पुरुष जाग उठाता है । जब सुवर्णा पार्क में श्याम मोहन के मुँह में बर्फी का टुकडा डाल रही होती है उसी समय रमेश वहॉ आकर सुवर्णा का हाथ खींचकर उसे कार में बिठाता है और धर आकर उसे थप्पड भी मारता है ये धटना सुवर्णा के मन में रमेश के प्रति नफरत पैदा करती है। रमेश के भी अपनी सहकर्मी उर्वर्शी से शारीरिक सम्बन्ध हैं। दोनो की सोच आधुनिक है । उर्वशी सोचती है कि जब तक शादी नहीं हुई चलेगा। बाद मे जरुरत नही बात खत्म।

सुवर्णा तबादला लेना चाहती है। तबादला नहीं मिलने पर वह अपनी मॉ के पास चली जाती है। अपने अन्दर जीने की ताकत करना चाहती है ,वह मॉ से कहती है कि "ममा" हिन्दुस्तान की औरतो में कितनी ताकत होती है। वे किसी भी तरह के पति के साथ निबाह सकती है। उनके लिए प्रेम महसूस किए बगैर,उसके साथ सारा जीवन बिता सकती है।,खराब पति को सुधार सकती है,पति को छोडकर अपने प्रेमीं के साथ जा सकती है ,और प्रेमी से दूर भी रह सकती है ....."मन में प्रेम का दीप जलाए हुए ।घर की चदारदीवारी में बन्द रहने वाली एकाएक बाहर आ जाती है ,काम करने लगती है और अकेले दम पर बच्चों को बड़ा करती है ....ममा ,मैं अकेले भी तो रह सकती हूँ..... ,,(20)

अनन्त उससे मिलने आता है और उससे कहता है कि उसे रमेश के पास लौट जाना चाहिए।परन्तु सुवर्णा उसे बताती है कि रमेश उसकी कमजोरी जानता है इसलिए बच्चो को अपने साथ रखकर उसे ब्लैकमेल कर रहा है। अनन्त भी उससे कहता हैकि पता नही तुम्हारा निर्णय क्या होगा नही कहा सकता परन्तु तुम्हारे साथ जीवन बिताने मे मेरा एक सपना पूरा होगा। और इन्तजार अगर मै करुँ तो तुम मुझे रोकोगी तो नही। परन्तु वह अनन्त से कहती है, कि तुम मुझे मत मिलो जबतक मैं आर या पार नही निकल जाती मुझे मत मिलना । उपन्यास के अन्त में सुवर्णा कोई निर्णय नही ले पाती। इस उपंन्यास मे लेखक आधुनिक नारी की सोच के अनेक पहलूओ को खोलता है तथा उसके मन के अनेक अनछुए आयामो पर प्रकाश डालता है ।उपन्यास की भाषा में कहीं कहीं काव्यात्मकता की झलक देखाई देती है । सुपर्णा आधुनिक दौर की प्रतिनिधित्व पात्रा है जिसके माध्यम से इस दौर की संवेदना और यथार्थ को रचनात्मक रुप में उजागर करने का प्रयास लेखक द्धारा किया गया है।

"धीरे समीरे"

कथ्य की दृष्टि से 'धीरे समीरे' उपन्यास में एक अलग किस्म के फलक को उठाया गया है । ब्रजयात्रा उपन्यास की प्रमुख पात्रा हैं क्योकि एक महीने दस दिन की ब्रजयात्रा में आए भिन्न–भिन्न पड़ावों ,स्थलो का अनेकानेक किवदन्तियाे, आख्यानों और मिथकों के माध्यम से उसके माहात्म्य को आधिक प्रमाणिक बनाया गया है। इसके साथ–साथ चलती है एक अन्य कथा, जिसमे यात्रा मे आए भिन्न–भिन्न प्रान्त और भाषा–भाषी यात्रियों के सुखों–दुखों मानोभावों उनके आपसी सम्बन्धों को मूर्तता प्रदान की गयी है।

उपन्यास कथा की केन्द्र बिन्दु सुनन्दा हैं, जो इस यात्रा में अपने खेए बेटे किशोर की खोज हेतु यात्रा में सम्मलित है, वह एक स्कूल अध्यापिका हैं अपनी पहली यात्रा में वह मॉ के साथ आयी थी, उसे नंदन मिला था तथा उसने उसके साथ सुखद अनुभूतियों के कुछ क्षण बिताये थे परन्तु वही सुखद अनुभूतियों के क्षण उसे विवाह परिणय सूत्र में बधनें के बाद बन्धन लगते है। एक के साल बाद ही नन्दन के लेखक बनने की धुन और उसका नकारा बनके घर मे पड़े रहना सुनन्दा के लिये ओर असहनीय हो जाता है सुनन्दा की दुत्कारो से आहत नन्दन एक दिन बिन बताये लखनऊ चला जाता हैं। वहॉ एक लेखक संघ में शामिल हो जाता है। इसी बीच उसकी कुछ कहानियॉ छपती है, परन्तु निष्पक्ष रचनाओं को छाने की स्वतंत्रता न होने के कारण नन्दन कुछ असंतुष्ट रहता है। फतेहपुर में होने वाले सम्मेलन में जब साहित्य के क्षेत्र प्रतिष्ठित व्यक्ति को सम्मेलन का अध्यक्ष नहीं बनाया जाता है, तो ये बात नन्दन को खटकती है और वह संघ की विचार धारा के विरुद्ध मंच पर बोल देता है। तब उसे अपमानित होना पड़ता है वह संघ की सदस्यता और सम्पादकत्व से इस्तीफा दे पिता के पास चला आता है और घर में पराजित योद्धा की तरह पड़ा रहता है। नन्दन के व्यापारी पिता को नन्दन की शादी की बात किसी के द्वारा पता चल जाती है वह नन्दन का ब्याह बड़े घर और दान दहेज लाने वाली लड़की से करना चाहते है। इसलिये वह किशारे को मार डालने हेतु गायब करवा देते है। परन्तु बच्चे की रंगों अपने वंश का खून देखकर उसे धर में एक महाराजिन की देख रेख में रख देते है, और पुत्र की खोज मे आयी सुनन्दा पर दो बार हमला करवाते है सुनन्दा की मॉ बच्चे के गम मे स्वर्ग सिधार जाती है यात्रा मे आया सत्येन्द्र सुनन्दा पर होने वाले हमले से उसे बचाता है इस यात्रा में आये भिन्न–भिन्न पात्रा भिन्न–भिन्न उद्देश्य लेकर यात्रा में सम्मलित होते है। सत्येन्द्र अपनी वकालत अपना परिवार अपनी प्रतिष्ठा झूठे व्यापार से उकताकर चेंज के लिये नरेन्द्र व्यापार से आये कुलुषित भावों से कुछ समय के लिये दूर रहने तथा शारीरिक स्वास्थ्य के लिये, रमा जीजी निर्मला जीजी परिवरों की उपेक्षाओं से ऊबकर ,रधु अपनी पत्नी की धार्मिक

प्रवृति के कारण मंजुला बेन परिवार द्वारा भेजे जाने पर गगाधर महाराज अपनी भक्ति भावना के कारण ,युवा पीढ़ी के कुछ पात्र नितिन, रोमा ,शैलजा नयी जिन्दगी का थ्रिल भोगने रोमा भारत के आध्यात्मिक पहलू को देखने के लिये रामप्रसाद पत्नी द्वारा ठगे जाने पर यात्राा में आते है, ये सभी पात्र यात्रा में अपनी अलग अलग जीवन शैली विचार दृष्टि प्रश्न और शंकाए लिये एक साथ चल रहे हैं। कथा प्रवाह की गतिमयता प्रदान करने वाले ये पात्र आपसी जवीन शैली अपनाने के कारण अपने में परिवर्तन महसूस करते हैं। इस यात्रा के दौरान कुछ रिश्ते बनते और बिगड़ते है। पैसों की ऐंठन में रहने वाली मंजुलाबैन के अन्दर बीमारी के दौरान निःस्वार्थ भाव से मदद करने वाली गंगाधर बाबू के लिये मानवीय स्पर्श के तन्तु स्फुटित होते है। सुनन्दा और सत्येन्द्र के बीच मधुर भाव उपजते है ।अपनी वकालत में वाक् चातुर्थ से मुकदमे जीतने वाला सत्येन्द्र सुनन्दा की मानवीय निश्छलात के आगे पराजित हो सम्पूर्ण स्थिति से अनभिज्ञ सुनन्दा को बता देता है, कि उसका बेटा किशोर जमनालाल के पास हैं। जमनालाल नन्दन के मन में सुनन्दा के लिये उठने वाली भाव तरंगो को नशे की लत डाल देता है। नन्दन की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो जाती हैं मौज मस्ती को जीवन का सत्य मानने वाली शैलजा यात्रा में भक्ति से विभोर अद्‌भुत क्षणों को भोगती है तथा भौतिकवादी साधनों के पीछे दौड़ने वाला नरेन्द्र यात्रा में मृत्यु का वरण करने वाली ब्रह्यणी का बेटा बन उसका दाह संस्कार करता है, और उसके फूल चुनता है। उसका ये विलक्षण परिवर्तन उसके चरित्र को प्रभावपूर्ण बनाता है। रोमा भाव विह्लता के कारण ब्रज के वृक्षो में कृष्ण की वंशी की तान सुनती है। और अन्ततः सत्येन्द्र जमनालाल अपनी फीस तय करने के बाद भी सुनन्दा की मदद करता है। उसके कहे अनुसार चलने पर सुनन्दा अपने खोये पुत्र किशोर को पा लेती है, वह जमनालाल की दौलत पर थूक कर तथा नन्दन की साथ चलने की जिद को ठुकरा कर चली आती है।

प्रस्तुत उपन्यास में कथाकार ने एक महीने दस दिन की ब्रज चौरासी कोस की परिक्रमा मे आए भिन्न–भिन्न प्रान्त और भाषा–भाषी यात्री के दुखों और सुखों, मनोवस्थाओं आपसी सम्बन्धों की विविधताओं के माध्यम से भारतीय –मानस में छिपी संस्कृति की मूल– भावना आस्तिक और आस्था को उभारा है।

पॉच ऑगनो वाला घर

व्यास पुरस्कार से विभूषित (1998: पॉच ऑगनो वाला घर) उपन्यास मे कथाकार ने मध्य वर्गीय परिवार के चित्रण के माध्यम से 1940 से 1990 तक मध्यवर्गीय समाज की बदलती मानसिकता तथा समाज की स्थिति और गति का सशक्त चित्रांकन किया है। उपन्यास मे आए परिवार की तीन पीढ़ियों बदलते सामाजिक स्वरुप ग्रहण करती है

पारिवारिक सन्दर्भ मे सयुक्त परिवारों का टूटते जाना तथा सॉस्कृतिक धरोहर से पूर्णतः अन्जान पीढ़ी का आत्म केन्द्रित हो जाना ही उपन्यास का मुख्य कथ्य है। पूरे उपन्यास की कथा राजन् की संवेदना के माध्यम से लिखीगयी है । तीन खण्डों में विक्त उपन्यास अपने पहला खण्ड जो 'क्षेत्र' नाम से उपकृत है में लेखक 1940 से लेकर 1950 के काल में बनारस के विशालकाय प्रतिष्ठत परिवार जो विशालकाय बरगद के वृक्ष की छाया तले परम्परागत विकास पाता है, की कथा कहता है । इस धर को जोगेश्वरी देवी अपने निष्क्रिय ओर गॅजेडी पति की मृत्यु पर विधवापन सहज रुप से स्वीकार करते हुए अपनी कर्मठता और सकियता से अपने बड़े बेटे राधेलाल उर्फ 'आमिल' के सहयोग से समपन्नता की स्थिति में ला देती है । 'पॉच ऑगनों' वाले इस विशालकाय घर में अनगिनत कमरे है । पूरे घर का सॉक्षा चूल्हा है, जिसमें कोई सौ लोगों का खाना प्रतिदिन बनता है । कामों के कम बढ़ से औरतों में तनाव न हो इसके लिये जोगेश्वरी देवी कुशल बैंक मैनेजर की भॉति औरतों की ड्यूटियॉ बदलती रहती है ।परिवार के सदस्य अपनी शक्ति और प्रवृत्ति के अनुरुप परिवार में अपनी अपनी भूमिकाएँ निभाते हैं, और परम्परा तथा अनुशासन के सुख से अभिभूत होते हैं। परिवार में निकम्मों और वृद्धों के लिय भी जगह है। यहॉ त्यौहार और उत्सव अहलाद से मनाए जाते है। संगीत,मुशायरे ,कवि सम्मेलन की महफिलें यहॉ जमती है। सम्बन्धों में आत्मीयता और प्रगाढ़ता है, तथा हिन्दू मुसलमानों के रस्मों रिवाजों में जाने का चलन है।यहॉ बच्चों की छोटी मोटी भीड़ एक ऑगन से दूसरे ऑगन तक दौड़ती रहती है । बच्चो को बड़े होने तक पता नही चलता कि उनके माता–पिता कौन है खोमचें वाला घर के बच्चों के साथ–साथ आस पास खेल रहे बच्चो को नाश्ता देता है। चार बेटों की मॉ जोगेश्वरी अपने बड़े बेटे राधेलाल जिसकी कमाई पर अधिकांश रुप से परिवार निर्भर करता है। परन्तु राधेलाल अपने समय की पुकार को अनदेखा नही कर पाते है, और सुराजी हो फरार हो जाते है। जोगेश्वरी देवी को दुख होता है, परन्तु उस समय उन्हें गहरा आघात लगता है जब उनका निकम्मा छोटा बेटा सन्नी बहुत दिन से लापता होता है।घर की आर्थिक स्थिति शोचनीय होने पर इस संकट मे जोगेश्वरी देवी घर का अनावश्यक सामान इक्का, बग्धी, घोड़े बेचकर घर की प्रतिष्ठा बनाए रखने का प्रयास करती है। राधेलाल की पत्नी शान्ति देवी बच्चों को समझाती है कि देश के लिये लोगो ने बड़ी–बड़ी कुर्बानियॉ दी है तुम्हारे बाबूजी भी तकलीफे उठा रहे है। तवायफ कमलाबाई जिसके मन में राधेलाल की क्रान्तिकारिता के प्रति आदर भाव और उनकी पत्नी के लिये स्नेह उमड़ता है वह आर्थिक तंगी के दिनों में शान्ति की सहायता करती है। राधेलाल रणभेरी अखबार छिपकर जगह–जगह पहुँचाते है जब वे दो साल बाद रात मे छिपकर घर आते है, तब जोगेशवरी देवी उन्हें दादी अम्मा के गुजर जाने और सन्नी के लापता

होनी की खबर सुनती है। शान्ति देवी उनकी दुर्बल अवस्था देख दुखी होती हैं। वे उसी रात घर से चले जाते है।

संगीत से खिन्न सन्नी अब कभी ही सांरगी को हाथ लगाते है वे बाबा विश्वनाथ की तरफ बह जाते हैं, पर यहॉ उन्हे साधु महात्माओ मे भी गृहस्थों की सी तंगदिली धोर संसारिकता टुच्चापन और अभियान दिखाई देता है, वे चित्रकूट के प्रमोदबन मे रहने लगते है, तथा यही पॉच रुपये महावार पर धर्मशाला में रजिस्टर रखने का कार्य करते है। मुंशी राधेलाल अपने उद्देश्य और कार्य मे इतने मग्न हो जाते है, कि उनका स्वास्थ्य गिरने लगता है, और वे पकडे जाते है। उनकी बिगड़ती हालत पर उन्हें जेल से रिहा कर दिया जाता है और उनका इलाज घर पर ही होता है । उनका भाई बॉके चाहता है कि इस समय घर का बटवारा हो जाना चाहिए वह राधेलाल से बटवारे की बात कहता है, मगर जोगेश्वरी देवी नाराज होती हैं। 7 अगस्त 1947 को लाल किले पर तिंरगा फहराया जाता है। लोगों में बनावटी उल्लास दिखायी देता है क्योंकि देश दो भागों में बॅट जाता है। राधेलाल की हालत ज्यादा बिगड़ जाती है। डॉ बनर्जी उनसे बच्चों को मिलवाते हुए कहते है कि नई पीढ़ी मुशी जी ! 'इन्हें तुमने' स्वतंत्र भारत गिफ्ट में दिया है इससे बढ़िया और क्या इनके लिये कर सकते थे तुम,''[21] राधेलाल के प्राण त्यागने पर घर में मातम छा जाता है परन्तु जोगेश्वरी देवी बेटे के जाने का गम पीकर विधिवत् रुप कियाकर्म और सभी कार्य सम्पन्न करती है परन्तु तेरहवीं समाप्त होने पर विलाप करती है।

वे आर्थिक तंगी के दिनो में राधेलाल के बडे बेटे मोहन को पिता की वकालत पर बिठा देती है। मगर वह सरकारी नौकरी में चुन लिया जाता है। मोहन अपनी मॉ से कहता हैकि वह नौकरी पर जमकर अपने भाई बहनो की पढ़ाई व तैयारी कराएगॉ। मोहन के जाने के बाद शान्ति सोचती है कि "क्या इसी तरह एक एक कर सब उड़ जाऍगे? क्या होगा तब उस घर का , जो अम्मा ने , मुंशी जी ने तिनका–तिनका बटोरकर बनाया?क्या यही नियति है? अम्मा सह पाऍगी क्या?''[22] मोहन के जाते ही सयुक्त परिवारके विधटन का बीज वपन हो जाता है। मोहन की पत्नी ओर मोहन राजन् और श्याम की पढाई का बोझ उठाते है और उन्हें पुत्रवत् स्नेह देते है।

उपन्यास का द्वितीय खण्ड जो "दीवारे"(1960–75) नाम से उपकृत है इस खण्ड में उपन्यासकार ने सम्पूर्ण परिवेशीय पृष्ठभूमि के साथ बड़े धर के पूरे विधटन को चित्रित किया है। घर के बटवारे के पहले राधेलाल के दूसरे बेटे राजन के ब्याहपर मनाया जाने वाला यह अन्तिम उत्सव है ,बटवारे में धर की दीवारों के साथ–साथ परिवार के सदस्यां के मन में उगी दीवारों को राजन् स्पष्ट देखता है, वह सोचाता हैकि पहले एक हिस्से से

दूसरे मे पहुँच जाने पर भीएक परिवार में ही होने का अहसास रहता था? 'ईटगार' से उठी दीवारें इतना बडा फर्क ला देती है ? राजन् का ब्याह बनारस की सफल

वकील मोहनलाल की तीसरे नम्बर की बेटी रम्मो से कर दिया जाता है। राजन् क्लासवन ऑफिसर बन जाता है । रम्मों के वयक्तित्व की जीवित प्रेरणा और स्वभाव की मूल में रही कुंठा राजन् को अपने आर्कषण में बॉध लेती है वह राजन् को भ्रष्टाचार के रास्ते आर्थिक सम्पन्नता की होड़ में शामिलकर घर के प्रति उसके स्नेह और कृतज्ञता को काट उसे नागर संस्कृति की रंगीनयित मे रंग देती है। ब्याह के कई साल बाद कानपुर में तैनात राजन् को जब साधु भेष में धर से लापता सन्नी चाचा मिलते है। तब वह भावुकता वश साग्रह उन्हें घर ले आता है उन दोनो के बीच राजनीतिक आर्थिक और पारिवारिक पहलुओं पर चर्चा होती है। रम्मो चाचा को घर में रखना स्वीकार नही कर पाती राजन् भी विरोध नही कर पाता जब पहले ही दिन सन्नी चाचा बिना बताए चले जाते है, तब राजन मुक्ति का अहसास करता है। उसके मन में सन्नी चाचा को ढूढ़ने की इच्छा जागृत होती है और तत्काल ही खत्म हो होती है ।वह सोचता है ,कि चाचा को बहने से नहीं रोकना चाहिए। कभी मिलना हो तो पास बैठ लिया जाए बस। राधेलाल की तरह शान्त, जिम्मेदार और सच्चाई पसन्द मोहन अपने छोटे भाई श्याम का ब्याह अपनी मर्जी से पुश्तैनी घर मे न कर शहर से करते है । विवाह सम्पन्न होने के बाद रम्मो और ओमी दोनों अपने –अपने पुराने मलाल निकालने के लिये झड़प पडती है, परन्तु यहॉ भी राजन् विवश मूक दर्शक मात्र बनकर रह जाता है, और रम्मों को लेकर चला जाता है।राजन् देखता है कि परिवार के लिये मुँहफट निर्मम रम्मों उसके सहायेगियो और मित्रों के साथ बेहद आत्मीयता से पेश आती है मॉ की बीमारी पर जब राजन् मॉ को अपने घर लाना चाहता है तब रम्मो इस बात को यह कहकर काट देती है कि वह अपने घर में मनहूसियत नहीं लाना चाहती है मोहन और श्याम बीमार मॉ को देखने जाते है और श्याम उन्हें अपने साथ ले आता है। राजन् के मन में मॉ को न देख पाने की बात कचोटती है,परन्तु जब उसे पता चलता है कि वे श्याम के साथ चली गयी तब वह राहत की सॉस लेता है। मॉ की बिगड़ती हालत पर श्याम वह दोनों भाइयों को तार दे देता है मगर बेटो के आने के पहले ही वे संसार छोड़ देती है, और उनके जाते ही मोहन श्याम राजन् को जोड़े रखने वाली अन्तिम गॉठ भी टट जाती है सन्नी राजनीति में सक्रिय होते है और देश की आपात् कालीन स्थिति मे भी विरोधी आवाज उठाते है पत्रकारिता के माध्यम से छदम् नाम और भेष बदलकर लेखन कार्य करते हैं।

उपन्यास का अन्तिम भाग 'अन्धी गली' नाम से उपकृत है जिसमे उपन्यासकार ने सॉस्कृतिक धरोहर से अनभिज्ञ आत्मकेन्द्रित पीढी कीदशा का बडा ही सटीक चित्रांकन किया है। यह आधुनिक पीढ़ी भौतिक सुखों को सर्वोपरि मान इन सुखों की अन्धी दौड़ में

धुरीहीन दिशाहीन बनकर भटक रहीहै। उपन्यास में राजन् के एकल परिवार के पूर्णतः बिखरने की कथा है। राजन् और रम्मो तथा ओमी मोहन बम्बई जाने पर भी राजन् को बिना बताये अपनी बहन के यहाँ पूना चली जाती और बच्चे पॉप म्यूजिक और टी0वी0 में व्यस्त रहते है। उनके लिये चाचा चाची अंकल आन्टी एक नाम मात्र है वह मम्मी पापा की प्राब्लम है राजन् और मोहन के बीच भी पारिवारिक बातें देश विदेश की बातें होती है लगता है, जैसे दोनों उन बातों में अपनी आन्तरिक दूरी को छिपाना चाहते है। भैया भाभी के चले जाने पर रम्मो आती है। तब राजन् रम्मो से अचानक जाने का कारण पूछता हैइससे वह भड़क जाती है।राजन् के तीनों बच्चे अपने अपने तरीके से अपने रास्ते चुनते है अपने तरीको मे उन्हें माता–पिता की दखलादांजी बर्दस्त नही होती राजन् का बड़ा बेटा बंटू इंजीरियरिंग पढ़ते वक्त रिसर्च के लिये अमेरिका से भारत आई एलिस के साथ अमेरिका चला जाता है। और वहाँ की नागरिकता के लिये एलिस से शादी कर लेता है, और ही भाई बहन की शादी पर नहीं आता है न ही पिता के हार्ट अटैक होने और खतरनाक सर्जरी पर। वह अमेरिकन संस्कृति में रच बस जाता है। उसके पत्र के माध्यम से रम्मों को पता चलता है कि एलिस उसके पुत्र को ले अलग दूसरे आदमी के साथ बस जाती है। दूसरे नम्बर की बेटी भी कैरियर , कम्पटीशन को परे रख माता–पिता के पसन्द के लड़के से शादी करती मगर जो सुख सुविधायें चीजे उसे ससुराल मे उपलब्ध नही होती है उसे वह पिता के धर से ले जाती है। भौतिक साधनों के आकर्षण में बध्य वह पिता के हार्ट अटैक पर माँ को पत्र मे संकेत देती है कि पापा को अपनी 'बिल' कर देनी चाहिए,लडकी और विवाहिता होने पर 'बिल' मे उसे उपेक्षितन किया जाए। बन्टू के जाने के बाद स्थितियों ओर परिस्थितयों को समझ राजन् और रम्मो छोटे बेटे छोटू(जो रेस्तरॉ बाजी, रॉक मयूजिक शराब कोही आधुनिकता और परिपक्वता की निशानी समझता है) को शादी के लिये तैयार करते है शादी के लिये मुश्किल से तैयार छोटू माता–पिता के सामने समय तक शादी रकने वाली लड़की को समझानी शर्त रखता हैकि पर माता–पिता के समझाने पर वह शादी के लियें राजी होता है मगर

शादी के चार पॉच रोज बाद से ही वह लडकी से कटा और शराब में धुत रहता है माता–पिता द्वारा दोनों के बीच दूरियाँ पाटने के सारे प्रयासो के बावजूद भी छोटू तलाक की जिद पकड़े रहता है। बेटे को अपने आपमें यातना देते देख और मरते देख राजन्लडकी के परिवार वालों और सामाजिक उपेक्षा सहन कर उसे तलाक दिलवा देता है, और सोचता है कि छोटू अब अपनी जिन्दगी नये सिरे से शुरु करेगा और उनके साथ रहेगा मगर वह अकेले मलार्ड वाले फ्लैट में रहता है माता–पिता को अपना दुश्मन समझने वाला छोटू अस्पताल में पिता को देखने तक नही आता है।

सन्नी कभी अखबार कार्यालय में मुख्य दरवाजे पर चार पॉच तख्तियॉ चिपकाये पत्रकारों में नैतिकता जागृत करने का अभियान चलाते तो कभी आयकर कार्यालय दूरदर्शन आकाशवाणी तो कभी संसद भवन के सामने सांसदो के आचरण मे नैतिकता के आग्रह का अवाहन करते अपना अभियान जारी रखते हैं परन्तु गिरते स्वास्थ्य और उम्र के ढलान पर सोचते है कि इस काम में उन्हे कोई सहयोग करने वाला मिले। जिसके पास मन में सन्नी के आग्रहो के लिये तीव्र भावना घर कर जाये जिसके पास उम्र और शक्ति हो । रिटायर मोहन किसी पत्रिका की जानकारीके माध्यम से सन्नी चचा से मिलते है और उनसे इतने प्रभावित होते है कि ईमानदारी की नौकरी मे कोई विशेष उपलब्धि न पाने की तथा ओमी और बच्चो को कुछ न कर पाने की विवशता , असमर्थता तथा अवकाश प्राप्ति कर धन संचय और घर बनाने के लालसा की द्विविधा सन्नी चाचा के संसर्ग से धुल जाती है। और वे चाचा के अभियान में सहयोग के लिये आगे बढ़ते है।

बच्चों के व्यवहार पर राजन् सोचता है, कि उसकी परिवरिश में कोई गल्ती रह गयी है कितना बडा संसार था वह जहॉ से राजन् का जीवन शुरु हुआ, क्या नही था वहॉ– देश प्रेम, संगीत, कविता प्रेम,उत्सर्ग, कर्म, वैराग्य जो –जो जीवन मे हो सकता है.. ....

चुन लो अपने लिये जो चाहे । वहॉ से चल कर राजन् कहॉ पहुचा? ''तब 'पॉच ऑगनों' का घर था..... आज कितने ऑगन और कितने घर हो गये .... सब कुछ इतने दूर तक बिखर गया कि अब सिर्फ धब्बे दिखते है ...... बहुत दूर विदेश में रेले छोड़ता–पकड़ता बन्टू नफरत और द्वेष मे डूबता उतराता छोटू और तृष्णा के जंगल मे कही उलझी एक पतली सी लड़की....... उनकी लड़की बिट्टो । इसके अलावा कुछ नही दिखता..... कहॉ है राजन् के भाई उनकी सन्ताने उनके सुख दुख ?उन्हे देखने की आदत बीच में ही कही जाती रही जैसे संगीत ,शायरी ओर नाटक बीच कही छूट गये थे।''[23] राजन् की बिगड़ती हालत पर ऑपरेशन के समय अकेली रम्मो को बिट्टो आकर ढ़ाढ़स बधाती है। इस प्रकार राजन् का एकल परिवार पूर्णतः बिखरने की कगार पर खडा होता है। उपन्यासकार ने राजन् के माध्यम से तीन पीढियों को बदलती स्थितियों , संस्कारों ,मूल्यों और आचरणों के साथ –साथ बदलते परिवेश मे उसके खुद के बदल जाने की विवशता , द्वन्द्व ओर दुःख को गहरे स्तर पर प्रकट किया है।

'फूल इमारते और बन्दर'

'फूल इमारतेऔर बन्दर ' मिश्र का आंठवॉ श्रेष्ठतम उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र गोपी कृष्ण मोहन्ती एक संवेदनशील उच्च अधिकारी है । सम्पूर्ण कथा– सूत्र उसकी के ईद गिर्द धूमते है इस ईमानदार अधिकारी के माध्यम से मिश्र जी ने देश के प्रशासन तन्त्र को भ्रष्ट करने वाले स्वार्थी नेता और बड़े अफसरों का बेबाकी से पर्दाफाश

किया है मोहन्ती ईमानदारीऔर वरिष्ठत कम में सबसे सीनियर सदस्य है इस कारण उन्हें बोर्ड का अध्यक्ष बन जाना चाहिए मोहन्ती के मन मे पद के लिये मोह जाग्रत होता है। फाइल आगे बढ़े इसके पहले ही मोहन्ती सत्ता के गलियारों में धूमते दलालों के बीच आ फॅसते है। इन दलालों में मोहित जैसे हीरो का व्यापारी प्रधान मन्त्री का पुत्र रतन कुमार, अपने को प्रधानमंत्री का निकटतम बताने वाला नेता पृथवीसिंह ,फिल्म स्टार अविनाश कपूर, पत्रकार दीनदयाल, उधोगपति नवीनचन्द ज्योतिष कैबिनेट सचिव समरसिंह और प्रधानमंत्री का पार्टनर रमन्ना इत्यादि हैं मोहन्ती को अध्यक्ष पद दिलाने में प्रयासरत ये दलाल अपने अपने तरीके से केडिट लेना चाहते है और मोहन्ती को अपने चंगुल में ले उनसे अपने जायज और नाजायज कामो को करवाने की उम्मीद रखते है। अपने इसी पद के प्रयास में मोहन्ती प्रधानमंत्री के पुत्र रतन कुमार तक पहुँचते है और प्रधान मंत्री से मिलने पर रतनकुमार के बताये जुमले को धीरे-धीरे बोल देते है कि "सर मैं आपका ही आदमी हूॅ शब्दों को सुनते ही प्रधानमंत्री सारे मामले का समझ जाते है और निर्णय ले लेते है कि उन्हें क्या करना है। हालांकि ये शब्द मोहन्ती के भीतर से नहीं उठ रहे थे वे सोचते थे कि वे किसी के आदमी कैसे हो सकते है वे देश के आदमी है "एक पद की खातिर क्या वे अपने स्वतंत्रता खो देगे,और गुलाम हो जाएँगे .... वह भी इन लोगो के गुलाम, जिनके कोई विश्वास और मूल्य है ही नही। वह कुछ कह देना भर था क्या.... उसमे निहित था नीचे गिरना, अपनी ही नजर में गिर जाना"(24) मोहन्ती अपना नैतिक पतन देख रहे थे।

मोहन्ती को अध्यक्ष पद मिल जाता है, परन्तु पद मिलते हीसभी दलाल अध्यक्ष पद केलिये किय गये अपने प्रयासों को भुनाना चाहते है, और मित्रता की एवज मे मोहन्ती से सभी काम (जायज और नजायज) करवाने का दबाव डलाते हैं, इतना ही नही मोहन्ती का मंत्री भी उनसे अपने सम्बन्धित व्यक्तियों का काम करवा उन्हें भ्रष्टाचार में धसीटना चाहता है, परन्तु मोहन्ती की पद के प्रतिवफादारी ,ईमानदारी मंत्री की क्षोम का कारण बनती है मोहन्ती के विभाग के अधिकारी जब घपले करके पैसा बटोरने वाले एक भ्रष्टमंत्री के यहॉ छापा डालते है तब मोहन्ती के मंत्री उन्हें बताते है कि जिस मंत्री के यहॉ उन्होने छापा डाला है। उनके और मेरे राजनीतिक कैरियर की शुरुआत एक साथ हुई थी। इसलिये लोगों द्वारा सोचा जा सकता है कि छापा मैंने ही डलवाया है वे मोहन्ती से कहते है, कि सेंसटिव केसस के लिये नया प्रोसीजर शुरु किया जाना चाहिए परन्तु मोहन्ती मंत्री के कहे अनुसार कानूनों में तब्दीली करने को तैयार नही होते रहे इसलिये अन्दर ही अन्दर मोहन्ती दूसरे विभाग एस0सी0 कमीशन का अध्यक्ष बनाकर भेजने की बात होती है। मोहन्ती उस पर पर नहीं जाना चाहता है क्योंकि वहां उनके कुछ सीनियर हैऔर उनके ऊपर काम करना उन्हें अच्छा नही लगेगा। मोहन्ती के काफी

हाथ पैर मारने के बाद मामाला कुछ दिनों तक ठंडा रहता है, परन्तु एक दिन अर्द्धरात्रि को कैबिनेट मंत्री समरसिंह उन्हें सूचना देते है कि सरकार ने तय किया है "कि आपको डायरेक्टर जनरल इकोनॉमिक इटेंलीजेंस रिसर्च एंड.... भारी भरकम नाम था.... के पद पर भेज दिया जाए।"(24) मोहन्ती के अन्दर उमड़ धुमड़ होती है परन्तु अपनी हलचल से जल्दी मुक्त हो शान्ति पूर्वक समरसिंह से कहते है कि मेरी नौकरी के छः महीने ही शेष है, इसलिये अगर मुझे मेरे मौजूदा पद विशेष सचिव से ऊपर भेजा जाएगा तो मैं नौकरी करुँगा नहीं तो इस्तीफा दे दूंगा । तमाम स्थितियों और अखबारों की छीटा कशी से बचने के लिये उनकी पदोन्नति कर उन्हें सचिव बना दिया जाता है, परन्तु जल्दी ही उन्हे सब कुछ निस्सार लगने लगता है, और वे सोचते है कि छः महीने वे निस्संगता में गुजार नौकरी से छुटटी पा लेगें।इसके बाद मोहन्ती अपने को इस तन्त्र से उबार देखते रहते है। "राजनीतिक नेताओ की उढक पटक, गठबन्धन सरकार का बार–बार बदलना मायाप्रसाद की मोहन्ती द्वारा छोड़े गये पद पर आने की नाकाम कोशिश, मोहन्ती के मंत्री और डी0वी0 के साम्राज्य का पतन तथा पृथ्वीसिंह के प्रभुत्व का खात्मा। रिटायरमेंट के बाद मोहन्ती सोचते है कि देश की तरक्की करने में जो मैं इतने वर्ष लगा रहा , उसे दरकिनार कर अगर सिर्फ अपनी तरक्की को टटोलता हूँ तो भी कही कुछ हाथ नही आता । अवकाशप्राप्ति के दिन सब यो पुछ गया जैसे कोई बच्चा स्लेट पर खड़िया से लिखी लाइन को एक उँगली से हलके सरकाव से पोछ देता है– वे सब पदनाम ,वे तथा कथित बडे प्रशासनिक काम जिन पर कभी कभी मैं डीगें मार लेता था लगता है न कुछ हुआ, न कुछ किया। सिर्फ वक्त गुजरा ,छत्तीस वर्षो का लम्बा वक्त। पीछे छूटे है तो किसी कमरे मे बोर्ड पर लटकी पदाधिकारियो की फेहरिस्त मे मेरा नाम जिसे मै कभी देखने ही जाऊँगा, आने वाली पीढ़ियों के लिये भी जिसके कोई अर्थ नही होगें या झाड़ –झंझाड़ में खोई कोई आधार शिला कही कोई नींव रखी हागी..... पर वह नींव थी क्या वाकई?"(25) रिटायरमेन्ट के बाद वे छोटे नगर में मकान ले अपने खालीपन को जीना चाहते है ताकि कुछ अच्छा निकल सके।

प्रस्तुत उपन्यास मे कथाकार ने शासन तन्त्र को भ्रष्ट करने वाले नेताओं तथा बड़े अफसरों की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत कर तत्कालीन राजनीतिक स्थितियो पर भी प्रकाश डाला है।

मिश्र जी की कहानियों की कथा वस्तु

भटकता तिनका ➡ इस कहानी में लेखक ने प्रतीकात्मक शीर्षक के माध्यम से आधुनिकता का वरण करने वाली नारी–की उच्चाकांक्षा से उत्पन्न मनोस्थिति को दर्शाया है। कहानी की नायिका शिक्षिता होने के साथ–साथ कॉलेज में लेक्चरार भी है। उसकी सोच है कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के कारण उसे स्वयं वर चुनने की स्वतन्त्रता हैं। अपनी इसी तलाश में उसकी सोच के दायरे में कभी उसका स्टुडेन्ट कपूर आता है, तो कभी नायक,कभी मेहरा तो कभी वर्मा ।वर्मा जिसकी वह बी0ए0 में छात्रा रह चुकी है। और उम्र को शोखी में उसकी मोहब्बत ठुकरा भी चुकी हैं। और आइने में ढलती उम्र की झुर्रियों से परेशान अपने को रीता –सा महसूसती हैं।

अव्यवस्थित कथानक के बावजूद भी कहानीकार बदलते परिवेश में नारी की बदलती सोच, भटकाव और उसके परिणामों को सटीक ढंग से दर्शा सका हैं।

उलझती टूटती चूडियां ➡ कहानी में कहानीकार ने जिन तारों से रिश्तों की चादर बुनी हैं। आधुनकिता के पर्याय में उसके रेशे–रेशे हिल्गे दिखाई देते हैं। जिसकी बुनियाद कमजोर कहीं जा सकती हैं और जो पारिवारिक बिखराव का कारण भी बन सकती हैं। कहानी पात्रों की मनः स्थिति का सूक्ष्मांकन करने में सफल हुई हैं।

संगीत और बर्तनों की खनक➡ कहानी में आर्थिक विंवचना से ग्रसित परिवार का उत्तरदायित्व उठाने वाली अविवाहित नौकरी –पेशा युवती का चित्रण किया गया है जिसके माता–पिता आर्थिक तंगी के कारण उसकी छाटी बहन की शादी एक अधेड़ से करने के लिये तत्पर हो जाते हैं। परन्तु वह भाई –बहनों की जिम्मेदारियों की खातिर वह अपने सपने और प्रेमी के पास नौकरी करने के सामीप्य को कुर्बान कर देती हैं।

माध्यम का सुख➡माध्यम का सुख एक मनोवैज्ञानिक कहानी हैं। मन उठने वाली भाव प्रकिया में ही कहानी गतिशीलता पाती हैं। प्रारम्भ में कुछ रहस्यत्मकता लिये अन्त में अपने लक्ष्य का संकेत देती हैं। कहानी की नायिका एक ऐसी ब्याहता हैं। जिसे अपने बचपन का प्यार न मिल सका, पति के अधिकतर टूर पर रहने के कारण वह अपने पड़ोस में आए यूनिर्वसिटी के स्टूडेन्ट में अपने प्रेमी का प्रतिरुप देखती हैं। स्टूडेन्ट भी उसकी सादगी और सौम्यता में बिधता चला जाता हैं। दोनों ही एक दूसरे के मौन आर्कषण में बंधते चले जाते हैं।

कंपकंपी के दायरे→ कहानी में पत्नी की लम्बी बीमारी से हताश कथानायक की मनोदशा का चित्रण किया गया है। जिसके मानस में दवाईयों,नर्स,डॉक्टरों ,इंजेक्शन के बिलों के साथ साथ पत्नी की दर्द भरी कराह से कंपकंपी के दायरे बढ़ते धटते रहते हैं। दर्द की पीड़ा की बेबसी वह पत्नी की ऑखों में देखकर हताश हो जाता हैं और हताशा के चरम क्षणों में सोच बैठता हैं। कि तुम मर क्यों नही जाती। प्रस्तुत कहानी पत्नी की लम्बी बीमारी से धिरे कथानायक ही हताशा और निराशा का मनोवैज्ञानिक चित्रण करती हैं।

दरियाई नाला और मुंह चाटती लहरें→ कहानी में बम्बई में वेश्यावृत्ति करने वाली युवती की मनोवृत्ति का चित्रण हैं। जिसकी जिन्दगी में एक शादी शुदा सीधा और सच्चा इन्सान आता हैं। जो उसे अपूर्व प्यार करता हैं तथा उसे नारकीय जिन्दगी से निकाल कर इलाहाबाद में हॉस्टल में भर्ती करवा देता हैं। पर वह प्रबोध को बिना बताए सब कुछ छोड़कर चली आती हैं। क्योंकि वह नहीं चाहती है। कि धुले आसमान जैसे साफ प्रबोध के व्यक्तित्व पर उसकी मैल की कालिख लगें। और वह पुनः वेश्यावृति अपना लेती हैं।

सतह का झाग→ कहानी में पति–पत्नी के सम्बन्धों में आए बदलाव का चित्रण किया गया हैं। पति पत्नी के बीच मानसिक लगाव का अभाव है। पत्नी दूसरे पुरुष के बारे सोचती हैं और पति अपनी तन्हाइयों मे अपनी प्रेमिका की याद करता हैं।

प्रस्तुत कहानी दाम्पत्य जीवन की बंधी–बॅधाई परम्पराओं में आए बदलाव का चित्रण करती है।

महकता अंधियारा→कहानी में कुरुप युवती के मन में उठने वाली एक तरफा प्यार की उमगों के साथ–साथ उसकी मनः स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया हैं, और उसकी मौन,संवेदनजन्य, सूक्ष्मतम भावानाओं को उभारा गया है, लेखक ने उसकी दीनता के कारण पनपने वाले स्वप्न, समर्पण की सूक्ष्म अभिव्यक्ति का बड़ा सटीक चित्रण किया है।

रोता और ख्याब देखता मुन्ना→ कहानी में आर्थिक और पारिवारिक समस्याओं मे उलझे नायक की मनः स्थिति का चित्रण किया गया है। जो ऊँचे ख्याब देखता है। और अपनी व्यर्थता बोध पर खीजता है। उसका जीवन विवंचनाओं, विवशताओं और संधर्षो से भरा है। वह जीवन में परिवर्तन चाहता है पर अपनी स्थितियों में जीने के लिये विवश है।

उड़ते पेज बहकी बातें → डायरी शैली में लिखी गयी इस कहानी में अनेक प्रतीकों ओर बिम्बों के माध्यम से नायक की प्रेमिका से अलग होने की स्थिति को दर्शाया गया

है।प्रस्तुत कहानी में नायक के अर्न्तमन का मनोवैज्ञानिक चित्रण है। प्रेम का भावात्मक रुप उभारा गया है। नायक विवाहित होकर भी अन्य युवती की ओर आर्कषित होता है। परन्तु उसका मोह भंग उस समय होता है, जब उसे पता चलता है कि युवती उसे सिर्फ अच्छा दोस्त समझती है।

ठहराव की ईट— 'ठहराव की ईट' कहानी में कहानीकार ने आधुनिक की जीवन व्यस्तता, एकरसता,ठहराव और उलझनों का निरुपण किया है। कहानी के नायक के जीवन में एक रसता व्याप्त होती हैं। इसी एकरसता को झेलते –झेलते वह अधेड़ हो जाता है। परन्तु जब वह मिस्टर वर्मा के साथ एम0ए0 में एडमीशन लेने वाले विद्यार्थियों का इन्टरव्यू लेता है, तब वह उन चेहरों में अपनी पूर्व प्रेमिका को देखता है और पूछता है कि इस उम्र में आप लिट्रेचर से एम0ए0 क्यों करना चाहती है। तब वह बताती है कि परिस्थितियों ,रुझान और सर्विस सिक्योरिटी के कारण वह ऐसा करना चाह रही है। "मैं विधवा हूँ अविनाश , दो बच्चों के जीवन का बोझ मेरे ऊपर है। कहानी में कहानीकार ने नायक की मनः स्थिति चित्रण किया है,जो एक रसता और ठहराव की जीवन जीने के लिये विवश है। परन्तु पूर्व प्रेमिका के अचानक मिल जाने पर उसे लगता है कि ठहराव की एक दो ईट खिसक जाने से उसके जीवन में बदलाव आ गया है।

एक कटी छटी अंगडाई— इस मनोवैज्ञानिक कहानी में कथाकार ने नायिका की अतृप्त प्यास को दर्शाया है जो ट्रेन मे सफर के दौरान रात्रि के वातावरण में एक युवक को देखकर जागृत हो जाती है। वह युवक का सान्निध्य पाना चाहती है। परन्तु जब उसे वास्तवकिता का भान होता है तब परम्परागत संस्कार उसे रोक लेते है। कहानी में नायिका की मनः स्थिति का सूंक्ष्मांकन किया गया है।

रगड़ खाती आत्महत्याएं— कहानी में पारिवारिक और सामाजिक घटना के माध्यम से आज के समाज की विद्रूपताओं को उभारा गया हैं। माइनिंग कालेज के एक छात्र का बिना कोई तीमारदारी पाये सिटी हस्पताल में मर जाना जुलूस,छात्रों की हड़ताल,डाक्टरों द्वारा छात्र की मृत्यु को आत्महत्या साबित करना विवाहित होने पर भी नलिनी को अपने प्रेमी के साथ सम्पर्क बनाये रखनी की ससुरालवालों के तरफ से छूट, बच्चा होने पर उसकी हत्या के पीछे छिपा रहस्य ,हत्या को आत्महत्या साबित करने की घटनाएँ आधुनिक जीवन की विषमताओं,विसंगतियों,विडम्बनाओं को उभारती हैं।

यक्षिणी का पत्रःयक्ष के नाम→ पत्र शैली में लिखी इस कहानी में एक खूबसूरत युवती का चित्रण किया गया है। वह फिल्मी कैरियर में काफी नाम और पैसा कमाती है। बिजनेस मांइडेड होती चली जाती है, और सम्पर्क मे आने वाले लोगों से अपने शरीर की तपिश मिटाती हैं इसी दौरान एक कम उम्र का नौजवान उससे शादी करना चाहता हैं। एक पल के लिये वह शादी करके गृहस्थी का सुख भोगने की बात सोचती हैं। परन्तु अपने बहकने के डर से वह प्रस्ताव ठुकरा देती है।

जवानी की उम्र के ढलान पर वह कालेज के दिनों मे जीवन साथी की कल्पना करने वाले युवक को अपने साथ धटित होने वाली धटनाओं का विवरण पत्र में लिखती हैं।

प्रस्तुत कहानी में नायिका के अर्न्तमन की परतों को अत्यन्त सूक्ष्मतः के साथ उभारा गया है। जो शरीरिक रुप तृप्त होकर भी मानसिक रुप से अतृप्त बनी रहती है। तथा अविवाहित रह जाती हैं।

चिलमन और धुआं→ कहानी में प्रेमिका से विलग नायक की स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। परन्तु उसी प्रेमिका को जब वह किसी शादी के दौरान नंग घड़ग बच्चे के साथ मैली कुचैली बेष भूषा में देखता है तो उसकी ऑखों की कोरो में आंसू उतर आते हैं।

बर्फीले पहाड़ पर → कहानी में लेखक ने इलाहाबाद युनीर्वसिटी के दिनों के माहौल को तथा उन दिनों के रोमांस के क्षणों की स्मृतियों को शब्द चित्र के माध्यम से उकेरा हैं।

इन शुरुआती दौर की कहानियों के विषय में लेखक ने लिखा है। कि इस अधकचरी बेबाकी कहानियों में पाठकों को शायद कही वह अपनापन मिल जाए जो संभाल–संभाल कर पेश की गयी दुनिया में भी फिसलकर कहीं वह जाता है........ हमेशा न सही पर कभी– कभी तो जरुरी हैं।[26]

एक सड़क,दो तस्वीरें→ कहानी में महत्वाकांक्षिणी, आधुनिका नारी की परणिति का चित्रण है। कथानायक कॉलेज के दिनों में अपनी प्रेमिका के माध्यम से उससे मिलता है और उसके विचारों से प्रभावित होता है। वह उसमे नयें विचारों की नयी नारी की झलक देखता हैं और उससे पूछता हैकि वह क्या बनना चाहती हैं। लोकसभा की सदस्या या मिनिस्टर वह उसे बताती है 'कि वह साधारण सी एक क्रान्तिकारी लेखिका बनना चाहती है।कुछ समय बाद बुक स्टॉल में उसकी पुस्तक 'भारतीय नारी' कल और आज देखकर वह खुश होता है। वहजब युनयिन की प्रेसीडेन्ट बन जाती हैं तब वह बताती है किउसका घर बस चुका है फेमिली वाले कई तरह की बाधा उत्पन्न करते है। तब वह यह कहकर चला जाता हैकि कुछ भी हो जाए लिखना न छोड़िएगा। वह बराबर

अखबारों,पत्रिकाओं, बुक स्टालों में उसकी रचनाएँ खोजता रहता हैं। परन्तु कुछ खबर नहीं मिलती हैं। इसी तरह बाइस साल गुजर जाने पर जब वह वीमेंस होस्टल के पी0एसी0बी0 रोड के पास छोटे से क्वार्टर का चबूतरा झाडती हुई एक अधेड़ा को देखता है तब वह उसे पहचान लेती है और अन्दर ले जाती है। उसकी निगाह अलमारी मे पड़ी किताब 'नारी कल और आज' पर पड़ती है। जिसमें काफी धूल जम जाती है।

प्रस्तुत कहानी में आधुनिक नारी की तस्वीर खीचीं गयी है। जो युवावस्था में आत्मविश्वास से भरी समाज में नारी की स्थिति को बदल डालने के लिये कान्तिकारी लेखिका बनना चाहती हैं। परन्तु स्वयं परिस्थति के आगे हार मान अपना सब कुछ बेच ड़ालती हैं।

हाजिरी➡ कहानी में कोयले की खदान में काम करने वाले युवक,युवती लोखा और कीली के जीवन की मजबूरियों को चित्रण किया हैं। लोखा बचपन में साथ खेलने वाली कीली को उसके पिता की मृत्यु के बाद सहायता देता हैं। दिन भर कड़ा परिश्रम करने वाला लोखा कीली से शादी के उददेश्य से उसके लिये झुमकें लेने शहर चला जाता हैं। उस दिन कीली की तबियत खराब होने पर मैंनेजर उसे शहर में डाक्टर दिखाने के बहाने ले आता है,और उसे अपनी हवस का शिकार बनाता हैं। शर्म से कीली उससे शादी कर लेती हैं परन्तु कीली के गर्भवती होने पर वह उसे एक अधेड़ से ब्याह देता हैं। ओर विदेश चला जाता हैं। इधर कीली फिर खदान में मजदूरी करने लगती है। जहां लोखा क्लर्क बन मजदूरों की हाजिरी लगाता हैं। कीली लोखा को पहचानने के डर से घूंघट डाल हाजिरी लगवाती हैं। परन्तु जब उसकी भावनाओं पर काबू नही रहती है। तब वह लोखा के कमरें में जाती हैं। और घूघट खोल देती हैं। कीली उसे अपने साथ गुजरे वाकये सुनाती है। दोनों के मन में एक दूसरे के लिये छिपा पुराना प्यार उमड़ पड़ता है। लोखा–कीली को अपना लेता हैं। और फिर मजबूरिया हंसने लगी । समझौते की ताल पर मुर्दा जिन्दगी नाच उठी। इंसान बेशर्मी झाड़ कर उठ खड़ा हुआ । फिर जिन्दा रहने को चोट खा–खाकर सांस लेते रहने को। खदानों के धुएं के बीच एक स्वच्छ वायु का गुच्छा पनप गया , कीचड़ पर जसे चांदनी फैल गयी।[27]

प्रस्तुत कहानी में कोयले की खदान में काम करने वाले मजदूरों की विडम्बना को उजागर किया गया हैं। जिनकी जिन्दगी शोषक वर्ग की हवस के शिकार के कारण कष्टकर बन जाती हैं। यह कहानी पूरे मजदूर वर्ग के सन्दर्भो को उजागर करती हैं।

चौखटे→ कहानी में होस्टल में रहने वाले युवा छात्रों की परीक्षा में होने वाली मनः स्थिति को अनेकबिम्बों, प्रतीकों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हैं।

मजबूरियों का बुत→'मजबूरियों का बुत' कहानी में सीमित आय,बढ़ती मंहगाई और बच्चों की बढ़ी मांगों के कारण नायक की बदलती मानसिकता का चित्रण किया गया हैं। कहानीकार ने व्यक्ति के आभावों को परिवेश की सधनता में उभारने का प्रयास किया हैं, एवं यह दर्शाया गया है कि आर्थिक विपन्नता मानवीय मूल्यों पर प्रश्न चिन्ह लगा देती है। कहानीकार ने मानवीय व्यवहार को परिस्थितिजन्य माना हैं।

वह दरियाई शहर.....→ कहानी में बम्बई शहर की खूबसूरती,जिन्दगी की आपाधापी तथा बम्बईयां परिवेश की रंगीनियत के पीछे छिपी वहॉ के जीवन की विद्रूपताओं को उभारा गया हैं।

खंडहर की प्यास→'खंडहर की प्यास'कहानी में वैवाहिक जीवन के खोखलेपन व नीरसता को केन्द्र बिन्दु बनाया गया हैं। पति पत्नी में माधुर्य भाव के शेष न रहने पर दोनो एक छत के नीचे एक ही डबलबेड पर अजनबी से पेश आते हैं। डबलबेड वह अपना स्टेटस बढ़ा–चढ़ाकर दिखाने के लिये खदीदता है। दोनों ही अपनी तन्हाई में अपने अपने कॉलेज, युनीवर्सिटी के दिनों के रोमान्स को याद करते हैं। दोनों करवट बदलते हैं। कहानी में पति पत्नी के मध्य कलह न होने पर भीएकदूसरे को न समझ पाने की स्थिति एवं रागात्मक तन्तु के टूटने की स्थिति को दर्शाया गया हैं। दोनों के अकेलेपन की विडम्बना सैक्स के क्षणों में देखी जा सकती हैं। दोनो सम्भोग करने पर सन्तुष्ट नहीं हैं। पति –पत्नी में मानसिक लगाव नही हैं। पति दूसरी नारीके बारे मे सोचता हैं और पत्नी दूसरे पुरुष के बारे में । कहानी आधुनिक जीवन की विषमताओं को दर्शाती हैं।

नये–पुराने मॉ–बाप→ 'नये पुराने मॉ–बाप' कहानी में लेखक ने बिन मॉ की बच्ची के अर्न्तद्वन्द्वों का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं। जो अपनी दीदी और पड़ोस में रहने वाले किशोर दा की प्रतिकियायें ,किशोर दा के पैसों से लायी गयी पंतगों का पिता द्वारा फाड़ देना, पिता द्वारा दीदी को डाटना, उसका रोना,किशोर दा के धर के तरफ खुलने वाली खिड़की को लाल ईटों से बन्द करवा देना, और घर में दीदी की उम्र की नयी मॉ का आना नहीं समझ पाती हैं। जब पिता द्वारा रात में नयी मॉ के लिये लायी गयी रबड़ी वह खा लेती हैं। तब पिता के मरने पर और नयी मॉ के न बचाने पर उसे दुख होता हैं परन्तु जब उसकी दीदी उसे बचाकर कमरे लाकर ये कहती हैं कि मैं तुम्हें मॉ की तरह

छोड़कर नहीं जाऊँगी मैं तेरे लिये जिन्दा रहूँगी तब उसे लगता हैं कि जैसी दीदी ही उसकी पुरानी मॉ हैं और किशोर दा उसका पुराना बाप।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने असफल प्रेम का चित्रण किया और घर में आने वाली सौतेली मॉ के दुख से दुखी बच्ची की मानसिकता को उभारा हैं।

साजिश➡ कहानी में छः माह की बच्ची के निधन पर पिता की मनःस्थिति का चित्रण किया गया हैं। नायक के शादी के पूर्व सम्बन्धों को लेकर पति–पत्नी के बीच के फासले बच्ची के जन्म के बाद पटने लगते हैं। परन्तु इसी बीच नायक बहन की शादी पर घर जाता हैं। और वहां से लौटने पर बच्ची को बीमार पाता हैं। बच्ची की बीमारी से परेशान पिता बच्ची के इलाज के काफी दौड़ धूप करता है। पर बच्ची को बचाने में असमर्थ हो जाता हैं। उसे लगता हैं कि एक बाप से जो अपेक्षित हैं वह उससे नहीं हुआ, बच्ची की जैसे तीमारदारी होनी चाहिए थी,उससे नही हुई,जितनी सरला दोषी हैं उससे कम वह भी नहीं हैं....[28]

प्रस्तुत कहानी में बच्ची की मृत्यु पर शोक संतप्त पिता की मनः स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण हैं।

सीधा...दूर तक सीधा➡ कहानी में महानगर की एक नौकरी पेशा फॉरवर्ड युवती का चित्रण हैं जो अपने और सरकारी अफसर के दोस्ताना सम्पर्को की एवज में अपने रिटायरमेन्ट के नजदीक पिता की जन्मतिथि (जो एक साल ज्यादा लिखी हैं) को कम कराने का प्रयास अफीसर से करती हैं।युवक अफीसर सोचता है कि युवती की खुबसूरत आंखों ने सिर्फ सीधी और दूर तक सीधा देखना सीखा है।

प्रस्तुत कहानी में मानवीय सम्बन्धों में आयी स्वार्थपरिता को दर्शाया गया हैं।

अवमूल्यन➡ कहानी में दो ऐसे दोस्तों का चित्रण है जो बहुत दिनों बाद मिलते हैं। कथानायक का दोस्त संतू एक टेन्डर के सिलसिले में पटना आता हैं और दोनो शाम तक साथ रहने का लम्बा प्रोग्राम बना अधिकारी से मिलने जाते हैं। दोनों का कुछ समय शराब,पुराने दोस्तों की बातें, मौज मस्ती में अच्छा कटता है परन्तु जल्दी ही कथानायक को महसूस होने लगता हैं। वह संतू का पिछलग्गू बना चल रहा हैं। दोनों के बीच की मिठास कुछ समय अन्तराल में चुक जाती हैं। और दोनों के बीच अजनबी पन, औपचारिकताएं रह जाती हैं। वह लौट जाता हैं।

प्रस्तुत कहानी आज के आदमी की बेवसी को दर्शाती हैं। जहां व्यक्ति से व्यक्ति के सम्बन्धों की चाह आज भी बनी हुई है। परन्तु उन सम्बन्धों को बनाये रखने आयोग्यता निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। बस वे औपचारिकताओं में हिल्गे दिखाई देते हैं।

अजीवीकरण➡ कहानी में कुत्ते को प्रतीक बनाकर सांकेतिक रुप में मानव के अन्दर छिपी उस भावना को चित्रित किया गया हैं जो मानसिक प्रतिबन्ध के बावजूद मानव में बनी रहती हैं। और परिस्थिति वश उभर कर सामने आती हैं।

घाव➡ कहानी में मानवीय सम्बन्धों को ढ़ोने की विवशता को दर्शाया गया हैं। यही कारण है कि एक बड़ा अफीसर अपने वर्गीकृत दायरे में बंधा जनसाधारण सम्पर्को को झेलने और नकारने में इसलिये नाकाम रहता है कि वह छोटी–मोटी सहायता उनसे ले सकता हैं।

उपेक्षित➡ कहानी मानवीय सम्बन्धों में आए बदलाव को चित्रित करती हैं। कथानायक दोस्त की पत्नी का झुकाव अपने तरफ महसूस करता हैं। वह दोस्त और उसकी पत्नी के साथ डॉक बंगलें में आता हैं और नशें में धुत् उसके पति को देखकर उसकी पत्नी से छेड़खानी करने की बात सोचता हैं।परन्तु जब वह उसकी उपेक्षा कर पति के साथ सोने चली जाती हैं,तब वह स्वयं को उपेक्षित महसूस करता हैं।

प्रस्तुत कहानी में कथाकार समाज में बदलती नारी की स्थिति का चित्रण किया गया है।जो आधुनिकता का वरण कर पर पुरुष के बारे में सोचती हैं परन्तु पर पुरुष की ओर बढ़कर ठिठक जाती हैं।

कुत्ते➡ इस प्रतीकात्मक कहानी में कुत्ते को प्रतीक बनाकर पति–पत्नी के सम्बन्धों में आए बनावटीपन, अजनीबपन व विवशता को चित्रित किया गया हैं। जहॉ पति को अपनी आरामतल्ब पत्नी की इच्छाओं का गुलाम बन बेमन से उसकी शरीरिक भूख मिटानी पड़ती हैं। इन तनावों के बोझिलछणों को वह बरसाती लड़की के साथ बिताये गये मधुर झणों की स्मृति से दूर करता हैं।

प्रस्तुत कहानी में दर्शाया गया है कि पति –पत्नी में माधुर्य भाव के शेष न होने पर नीरसता आ जाती हैं। नायक को अपना जीवन अभावमय लगता हैं और इस अभाव के कारण वह दूसरी युवती के बारे में सोचता हैं।

फर्क→ कहानी में दो बहनों की स्थितियो के फर्क को दर्शाया गया हैं। कहानी की नायिका 'मैं' जो अपनी मामा की बेटी पूपी के साथ बचपन बिताती है, की शादी में शामिल नहीं हो पाती हैं क्योंकि उसके पति को उसका वहॉ जाना स्वीकार्य नहीं हैं। वह शादी दूर से ही देखती हैं, और पूपी की गॉव से आई बारात और साधारण सज्जा को देखकर तथा शहर से आयी अपनी बारात और घर की शानो–शौकत पर स्वयं का भाग्यशाली समझती है, परन्तु जैसे ही बारात में दुल्हे की जीप उसके सामने से गुजरती हैं। वैसे ही उस बासी बासी महौल मे जवान उम्र की ताजगी के फव्वारे की बूँदे उसके मन में खरोचे उभारती हैं। उसे लगता हैं। कि उसकी शादी के रंगीन वातावरण में भी अंधेरे के खून का एक फव्वारा उछल आया था। वह महसूस करती है कि पूपी और मैं,मैं और पूपी एक जोड़े पर उगी दो टहनियां ! एकाएक वह फूलों से लद गयी हैं। और मैं सूखती चली जा रही हूँ। अपने पति की ऑच उसे गमका देगी– उसी अदाज से, जैसे इनके सामीप्य का शीत मुझ पर बुढापा बिछाता चला जा रहा हैं। उसे कुछ न मिलकर भी जैसे कितना कुछ मिल गया है और मैं इतना सब पाकर अकिंचन हूँ....[29]

कहानी में नायिका की मनः स्थिति का सूक्ष्म चित्रित किया गया हैं।

दिलचस्पी→ कहानी में पुरुष की काम भावनाओं को दर्शाया गया हैं। नायक अपनी प्रेमिका की शहर मे आने की खबर सुनता हैं वह उसे शादी में तलाशने पहुँचता हैं। चेहरों का मिलान करते हुए जब वह औरतों की भीड़ में जा पहुँचता हैं। उसी वक्त बिजली चली जाती हैं। औरतों की उस भीड़ में उसकी काम भावना जागृत हो जाती है और वह भीड़ में एक चेहरे को थथोलकर उसके गालों को चूम लेता हैं और उस दायरे से बाहर चला जाता है।

प्रस्तुत कहानी में बदलते सामाजिक परिवेश में पुरुष की सैक्स अनुभूति को निःसंकोच चित्रित किया गया हैं। परन्तु उसमें विकृति नहीं आ पायी हैं।

बदरंग→ कहानी में महानगर के जीवन में बढ़ते जा रहे होटली प्रभावों की विश्रृंखलता का चित्रित किया गया हैं। जहां अच्छें भले घर की लड़कियां कार्ल गर्ल जैसे असमाजिक धन्धों को स्वेच्छा से या मजबूरी से अपनाती हैं। कहानी में होटली जीवन का सतही और कल्पनामिश्रित वर्णन हैं।

शुरुआत→ 'शुरुआत' कहानी वच्चे को केन्द्र विन्दु वनाकर लिखी गयी है। कस्वे से शहर में लाया गया बच्चा शहरी वातावरण में स्वयं को ढ़ाल नहीं पाता हैं।उसका पिता लॉन में खेलते हुए शहरी बच्चों से उसका परिचय कराने का प्रयास करता हैं। परन्तु वह अपने

प्रयास में असफल होता है बच्चा इस वातावरण में अपने क़ो नहीं ढ़ाल पाता हैं। पिता को उससे हमदर्दी होने लगती है,परन्तु वह समस्या का हल नहीं निकाल पाता हैं। तभी एक दिन ऑफिस से लौटते हुए वह उसे फूल तोड़ते हुए देखता हैं,और कुछ फासले पर एक लड़की को भी फूल चुनते हुए देखता हैं। उसे ताज्जुब होता हैं। क्योंकि बच्चे को फूलों से विशेष लगाव नही था। उसे लगा 'लड़की 'के चेहरे पर कुछ नहीं था सिर्फ एक अकेलापन, उदासी..... उदासी भी नही, बाहरी दुनिया के लिये एक खास किस्म की निरीहता,सूखापन। सात साल के बच्चे के चेहरे पर वे बाते अजीब थी। मैं जान बूझकर उधर से निकला....लड़की ने दूर से ही मुझे कुछ इस तरह देखा, जैसे बस देखने के लिये देखे ले रही हो।[30] परन्तु बच्चा उसे उत्साह से बताता हैं कि डैडी कल शाम अपनी बर्थडे पर उसने मुझे बुलाया हैं। चाय पर! इस शहर में वह पहली चीज थी जो उसने सीखी थी, वह उसे जाने के लियें कह देता हैं।

कहानीकार ने कहानी में कस्बे से शहर में आए बच्चे के अकेलेपन के साथ–साथ पिता के मानसिक तनावों को दर्शाने का प्रयास किया हैं। शहरी वातावरण में उसकी स्वतन्त्रता ही अवरुद्ध नहीं होती उसकी बाल मानसिकता भी आहत होती हैं। वह परिस्थितियों का शिकार बनता हैं परन्तु अन्ततः मैंत्री स्थापित करने में सक्षम होता हैं।

अपाहिज→ कहानी में कथाकार ने मालिक साहब जैसे पात्र के माध्यम से नवधनाढ्य शक्तिशाली वर्ग की मानसिकता के तथा नेता जी जैसे पात्र की प्रतिकियाओं से, सत्ताकांक्षा की हवस,राजनीतिक दॉव पेचों को प्रस्तुत किया है। साथ ही कहानी में उन पहलुओं पर भी प्रकाश ड़ाला गया हैं जो निम्नमध्यवर्ग की कारुणिक परिस्थितियों के सूक्ष्म संकेत देते हैं।

कोशिश→ कहानी में महानगरीय परिवेश में ढली एक आधुनिकानारी की तस्वीर प्रस्तुत की गयी हैं। जो अपने पति और उसके मित्रों के साथ बेझिझक शराब पीती हैं। कथानायक जब उसके बारे में अफवाहें सुनता हैं तब उसके पति से सम्पर्क बनाता है। वे अच्छे दोस्त बन जाते हैं। उन लोगों के बीच औपचारिकताएँ खत्म हो जाती हैं। यह बेझिझक उसके धर बैडरुम में बैठ उससे और उसके पति से बातचीत करता हैं। वह उसकी पत्नी के आकर्षण के कारण बार–बार उसके घर जाता हैं। एक दिन जब यह उसके पति की अनुपस्थिति में उसके घर पहुॅचता हैं,और बैडरुम में उसके पति का इन्तजार करता हैं। तभी इधर–उधर की तस्वीरें देखने और उससे बातचीत करने के दौरान वह उसे पत्रिका पढ़ने के लिये देती हैं। जिसमें हल्की प्रेमकहानियां थी और उसके पृष्ठ पर प्यार के दृश्य

,अमूमन पतली ड्रेसज़ में लड़की के चित्र होते हैं। स्थिति के दौरान वह जैसा प्रेशस महसूस करता हैं।

दोस्त→ कहानी में दर्शाया गया हैं कि मानीवय सम्बन्धों की चाह लोगो में अब भी बनी हुई हैं। वह उन्हें बनाये रखने की कोशिश करता हैं। परन्तु उनके टूटने का भय उन्हें निरन्तर बना रहता हैं। लाइसेंस मिलने की चाह में अफीसर से दोस्ताना सम्बन्ध बनाने वाले वन्दें का काम अफीसर इसलिये हिल्गाना चाहता हैं। कि कहीं शहर के आम लोगों की तरह वह भी काम कराने के बाद उससे मिलना बन्द न कर दें। इस प्रतिकिया को ज्यादा हिल्गाना भी उसे बेतुका लगता हैं,इसलिये यह उसके आर्डर पर दस्तख्त कर देता है परन्तु उसके जानेके बाद वह फाइल में देखता हैं कि उसमें क्लीयरेंस सर्टिफिकेट नहीं है तब वह चपरासी को दौड़ाता हैं। और जब उससे यह पता चलता हैं। कि उसने सर्टिफिकेट लगाया हैं। तो वह उससे यह कहता हैं कि मैंने तुम्हें सिर्फ ये बताने बुलाया था कि मैं तुमसे परसों साढ़ें छः की जगह सात बजे मिल सकूँगा।

मानवीय अवमूल्यन के इस दौर में लिखी यह कहानी व्यक्ति से व्यक्ति के सम्बन्धों की चाह को दर्शाती हैं।

'जिहाद'→ 'जिहाद' कहानी में लेखक ने ट्रेनिंग कॉलेज से निकले नये अफसरों की मानसिकता का चित्रण किया हैं,जो कॉलेज के बाद फील्ड में उतरते हैं उनमें से एक आदर्शवाद को लेकर चलता और सोचता हैंकि वह संस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार,रिश्वत खोरी आदि बुराइयों से समझौता न करके उसका खात्मा करेगा। परन्तु वह व्यवस्था के व्यक्तियों से टकराने और 'चक्रव्यूह' तोड़ने का जोखिम उठाने से कतराने लगता हैं और अपनी पराजय के बावजूद भी अपने अन्दर 'जिहाद' का भ्रम पाले रहता हैं। अपने बदल जाने की यातना बर्दाशत न कर सक पाने पर बियर और विहस्की से अपनी बैचेनी दूर करता हैं और अन्ततः उसका सारा आक्रोश 'वमन' के रुप में निकलता हैं, और वह एक पौधे की खोह में एक धायल मगर बहादुर सिपाही तरह खड़ा हो जाता हैं।

प्रस्तुत कहानी में उन युवाओं का चित्रण किया गया है जो शुरु में एक आदर्शवाद लेकर चलते है और व्यवस्था के जाल को काटने में अपने को असमर्थ पाते है और अपनी इस असमर्थता को नशे में भुला देना चाहते है।इस कहानी में आज के यथार्थ की यथावत् तस्वीरें प्रस्तुत की गयी हैं, कहानी में, भाषा की तराश एवं संवेदनाशीलता दीख पड़ती हैं।

ढलान→ ढलान कहानी में एक ऐसे प्रौढ़ व्यक्ति की मनोस्थिति का सूक्ष्माकंन किया गया हैं, जिसकी तेज रफ्तार जिन्दगी में दिल को दौरा पड़ने से ठहराव आ जाता हैं। कहानी कथानायक द्वारा मुखरित होती हैं। घर और दफ्तर उसके सिर्फ दो दायरे थे। वह

अतिरिक्त व्यस्तता से अपने को सटाए रखता था। उसके चेहरे पर बीमारी की बेबसी झलकती है। प्रस्तुत कहानी में पात्र की बीमारी से उसके जीवन में आने वाले ठहराव व उस ठहराव से होने वाली उसकी मनोस्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया हैं।

गिरफ्त→ कहानी में वृद्ध होते क्वांरी लड़की के रिटायर पिता की मनः स्थिति को दर्शाया गया है, जो शहर में आने वाले नौकरी पेशा युवक को अपनी बातों की गिरफ्त में ले उससे अपनी बेटी की शादी करने की बात सोचता है।

अव्यवस्थित→ कहानी में आर्केस्टा की धुनों पर थिरकनें वाली कैबरे डॉन्सरों के अंग प्रर्दशनों को तथा वहां के उन्मुक्त वातावरण को अत्यन्त भड़कीलेपन से उभारा गया हैं।

चुगलखोर→ कहानी में दिल्ली के क्लर्की बस्ती में आने वाला नौकर अपनी समस्त कोशिशों के बावजूद अपने मालिक को खुश नहीं रख पाता हैं और न ही सरकारी और गैरसरकारी संस्था मे नौकर बनने का अपना सिलसिला बैठा पाता हैं।

हिल्गे हुए...... → कहानीं पारिवारिक सम्बन्धों में आयी औपचारिकताओं को दर्शाती हैं। दिल्ली जैसे महानगर में नौकरी की तलाश में आया भाई जब छोटी सी कम्पनी में नौकरी पा जाता हैं। तब बड़ा भाई औपचारिकता वश उसे निबाहने की कोशिश करता हैं,परन्तु जब पत्नी उसे अपने साथ की गयी उसकी छेडखानी की बात बताती है तब ये सोचता हैं वह उससे पत्नी के मुतल्लिक बातें करेगा। परन्तु जब यह घर आने के समय पर कम्पनी से नहीं आता हैं तो उसके मन में तरह–तरह के सवाल उठते हैं। जब नौ बजे करीब वह घर पहुॅचता हैं तब यह सोचता हैं कि वह अब उससे बात करेगा,परन्तु उसे महानगर भीड़ में साइकिल पर बिलबिलाता इसका चेहरा नजर आता हैं तब उसकी बात हिल्गी रह जाती हैं।

प्रस्तुत कहानी में महानगरीय परिवेश में जिन संधर्षो से गुजरना पड़ता हैं उसका प्रभावशाली चित्रण किया गया हैं।

दौड़→ कहानी में आर्थिक विवंचना से धिरे परिवार की स्थिति का चित्रण किया गया हैं। जहॉ परिवार की स्त्री को पैसों की खातिर रात होटलों में गुजारनी पड़ती है। ये स्थिति आज महानगरीय जीवन का सत्य बनती जा रही हैं। इस सत्य के प्रभाव में परिवार को, बच्चों को जिन स्थितियों से गुजरना पड़ता है उसका प्रभावशाली अंकन इस कहानी में किया गया हैं।

प्रस्तुत कहानी में घटना,प्रसंगो और पात्रों की प्रतिक्रियाओं के माध्यम से महानगरीय जीवन के सत्य को उघाड़ा गया है।

ऑकड़े→ कहानी में धूर्त ठेकेदार और सी0बी0आई अफीसर के चक्रव्यूह में फॅसे एक ईमानदार ओवरसियर की विवशता को चित्रित किया गया हैं।

कहानी सरकारी तथा अर्द्धसरकारी संस्थाओं में बढ़ती स्वार्थपरिता, जालसाजी, दावपेंचों को चित्रित करती हैं।

बांध→ कहानी में नौकरी पेशा अविवाहित युवती की समस्याओं को विभिन्न कोणों से दर्शाया हैं। पात्रों की मनःस्थिति के माध्यम से कहानी आज के यथार्थ का अंकन करती हैं।

झपट्टा→ कहानी में गॉव से शहरी जीवन में प्रवेश करने वाले पात्र के बचपन से युवा और प्रौढ़ जीवन में होने वाली घटनाओं का चित्रण करते हुए उसकी मनोदशा के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डाला गया हैं। जब बांकू काम की तलाश में बम्बई जाता हैं तब वह गोलार्ड में तरह–तरह के लोगों के सन्देश इस टेबिल से उस टेबिल तक पहॅुचाने लगता हैं। यही काम और उसकी स्मार्टनेस उसका कैरियर बन जाती हैं। मॉ–बाप की पसन्द की लड़की से शादी करने पर बांकू को ऐसा लगता हैं जैसे वह एक गोंद से चिपका हैं। वैवाहिक जीवन के तनाव उसके कैरियर पर असर डालने लगते है तभी बांकू पत्नी को गॉव की ओर हांक देता हैं। इसके बाद बांकू के जीवन में कई लड़कियॉ आती हैं। वह उन पर झप्ट्टा मारता रहता हैं। वह सोचता हैं कि लड़की लगातार साथ रहने की चीज नहीं हैं वह 'पेरी–मेसन की एक किताब हैं। पढ़ा,उठाया और फेंका। इससे वह शादी जैसे बन्धन से भी मुक्त रह लेता हैं। एक धनाढय क्लांइट जब उसे कम्पनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर बना देता हं। तब वह अपनी सीक्रेटरी आशा की तरफ आर्कषित होता हैं और अपने जीवन में बन्धनों की कमी उसे खटकने लगती हैं। वह आशा के बन्धनों की कैद में गिरफ्तार होना चाहता हैं। बांकू को ऐसा लग रहा था जैसे यही थी जो उसके लिये बनी थी,उसे पाकर उसके जीवन की सारी कमियां दूर हो जाएंगी। वह शादी करेगा और इस बार यह टिकेगा। आशा की कोमलता, फिर उसके बच्चों की केमलता उसे बांध लेगी। उसका लवारिस जीवन.... उस जीवन की निस्सीम स्वतन्त्रता और उस स्वतन्त्रता की उबास.... सब खत्म होंगे....[31] वह अपनी आदत के मुताबिक एक दिन आशा पर ऑफिस में झपट्टा मारता हैं और सम्ंलहने पर आशा से कहता हैं कि मैंने तुम्हारा अपमान नहीं किया। मैं तुम्हें प्यार करता हूॅ,और तुमसे शादी करुॅगा। जबाब मे आशा

कहती हैं। आपको तो हवस ने पागल कर रखा था आपको अपनी उम्र तो देख लेना चाहिए थी। बांकू को पता ही नहीं चला कि कब झपट्टेबाजी के नीचे से सरक गयी उसकी जिन्दगी । बांकू अपने दॉव में पिट गया था। वह सोचता हैं वह कभी नहीं जान सकेगा कि औरत किताब के अलावा और कुछ भी हैं।

कहानी में एक ऐसे पात्र की मनः स्थिति के उलझावों को प्रस्तुत किया गया हैं जो अपने जीवन में आने वाली लड़कियों से अपनी हवस तो मिटा सका मगर वैवाहिक जीवन के सुख और औरत के स्नेह से वंचित रहा। पारिवारिक जीवन के बन्धनों की सुख अनुभूति की प्यास जब उसके अन्दर जागती हैं। तब वह उस उम्र के पार पहुंच जाता हैं।

चीटियां→चीटियां कहानी में मिश्र जी ने निम्नमध्यवर्ग के बीमार पात्र की मनोदशा का चित्रण किया हैं,जो सरकारी अस्पताल के जनरल वार्ड में दर्द से कराहता बेड के लिये तरस जाता हैं। एनीस्थिसिया के असर के बाद उसके पंजें में चीटियों का रेंगना सा शुरु हो जाता हैं। जो दिमाग पर भी असर करती हैं वह सोचता हैं कि अगर उसे बेड मिला होता तो वह अपने दर्द को करवटों में दाब सकता था। मगर उसे जनरल वार्ड के बदबूदार ,घुटनदार वातावरण तथा डेलेवरी केसस के लिये आयी औरतों के जत्थों के बीच अपनी यातना से गुजराना पड़ता परन्तु जब अस्पताल में अर्धरात्रि में आने वाली दर्द से कराहती औरत को नींद में खलल पड़ने से नर्स इन्जेक्शन के माध्यम से नवगान्तुक को रोक देती हैं तथा यह पागल– सा सब कुछ देखता रहता हैं। ग्रहों घड़ी और भाग्य पर विश्वास करने वाला यह सोचता हैं कि 'एक जीव को उस घड़ी संसार में आने से रोक दिया गया – सिग्नल नहीं मिला और वह दूसरी धड़ी पैदा होकर दूसरा भाग्य लेकर आने का मजबूर हो गया था।[(32)] प्रस्तुत कहानी में लेखक ने निम्नमध्यवर्ग की विडम्बनाओं, स्थितियों और वास्तविकताओं को अपनी पूरी संवेदना के साथ प्रस्तुत किया हैं। साथ ही साथ आज के यथार्थ को चित्रित किया हैं। सुधीर चन्द्र ने इस कहानी को 'जनवादी' आन्दोलन जोड़ते हुए लिखा हैं कि 'तत्कालीन साहित्यिक नारों की गूॅज, भूले भटके ही सही, संवेदनशील से संवेदनशील लेखक की रचना में भी प्रतिध्वनित हो जाती हैं। परिणामस्वरुप,व्यक्ति और समाज की संश्लिष्ट और परोक्ष पारस्परिकता को अनेकानेक गहन स्तरों पर चित्रित करने वाला गोविन्द मिश्र भी प्रतिबद्धता और सार्थकता के दबाव में 'चीटियां' और 'अपाहिज' जैसी चलताऊ 'जनवादी' कहानियॉ लिख देता हैं।

कचकौंध➡'कचकौंध' मिश्र की श्रेष्ठ कहानियों में से एक हैं। बुन्देली आंचलिकता लिये ये कहानी बूढ़े ग्रामीण स्कूल मास्टर के माध्यम से आज के भारतीय जीवन के वैयाक्तिक,पारिवारिक,सामाजिक एवं राजनीतिक यथार्थ के उन तमाम पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं,जो आज के आदमी की त्रासदी के हिस्से हैं।

इस कहानी की श्रेष्ठता पर प्रकाश डालते हुए सुधीर चन्द्र ने लिखा है कि 'कचकौंध'। हमारी आज की जिन्दगी के तमाम पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं।.....व्यक्ति से जोड़कर उनके अंतर्सबंधों में पेश करने वाली यह कहानी शिल्प,शैली और कथ्य की दृष्टि से आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य की एक उपलब्धि हैं।

अ–परिचय➡ कहानी शहरी परिवेश में आए ऊबाऊपन, अजनबीपन, अकेलेपन को दर्शाती हैं। कथानायक का मित्र जब तबादले पर शहर में आता हैं। तब उसे हल्की प्रसन्नता होती हैं। पर वह सोचता हैं कि शहर का ऊबाऊपन कुछ दिनों में उसे भी घर लेगा। मित्र को शहर की जानकारी देने में उसका कुछ वक्त अच्छा कट जाता हैं। परन्तु जब वह शहर की बड़ी हस्ती का पिछलग्गू बन जाता है। तो दोनों के बीच दूरियां बढ़ जाती हैं। पुराने सम्बन्धों में जंग सी लगी दिखाई देती हैं। प्रस्तुत कहानी मानवीय सम्बन्धों में बढ़ती जा रही दूरियों को दर्शाती हैं। दूरियों को पाटने और अंतरगता स्थापित करने की इच्छा यद्यपि कथानायक में उठती है, परन्तु अन्तरंगता बनाये रखने की अयोग्यता से वह दुखी होता हैं।

गलत नम्बर➡प्रस्तुत कहानी मनोरंजन के साथ–साथ बढ़ती व्यवस्तता के कारण जीवन में सिमटते–सिकुड़तें सामाजिक सम्बन्धों पर व्यंग्य करती हैं। तथा अपनी सीमाओं में व्यक्ति की अपनी सन्तुष्टि को दर्शाती हैं। व्यस्तता में उलझा हुआ व्यक्ति अंतरंगता के लिये लालियत रहता हैं इस सत्य को भी उजागर करती हैं।

जनतन्त्र➡ कहानी एक ग्रामीण सकूल मास्टर द्वारा मुखरित होती हैं,इसमें कथाकार ने स्कूल मास्टर के माध्यम से सतांकाक्षी शोषणकामी आदमी की त्रासदी का चित्रण किया हैं। तथा जनतंत्रीय निरंकुशता की निन्दा की हैं। स्वधीनता के बाद ग्राम्य जीवन मे आयी मूल्य संक्रमणता की स्थिति को,लोगों के काइयापन को, कुत्सित राजनीति के कारण सामाजिक जीवन में आयी कटुता को चित्रण किया हैं।

अन्तःपुर→ कहानी में द्वो विरोधी पक्षों में सामाजिक, राजनैतिक लक्षणों को लेकर उत्पन्न हुए संधर्ष का चित्रण हैं गोर्डे नामक छद्‌म पात्र और राजनीति को रोजीरोटी का जरिया बनाता है और बिना क्रान्तिकारता के एशोअराम को भोगता है

पड़ाव→ 'पड़ाव' कहानी में लेखक ने बाल मनःस्थिति का सूक्ष्म अंकन किया हैं। पिता से भय खाने वाला आठ नौ साल का बच्चा जब पिता के साथ कथानायक के परिवार में कुछ घंटे के लिये जाता है। तब कथानायक को उसकी ऑखों में करुणा का अथाह सागर तथा वहां, जमा हुआ दर्द देखता हुआ सोचता हैं। दर्द की कसी हुई डूबती रेखाएं ...नीचे और नीचे। उन रेखाओं की समझ तो दूर उसे उनके बारे मे शायद कुछ पता भी नहीं था.... ऐसा कोई अहसास न होता उसकी आंखों के रंग को ओर गहराता था। आंखें का वह रंग भयभीत करता था उस बिन्दू पर और भी ज्यादा जब वह लौट रहा था, आठ साल के किसी बच्चे की आंखों का विस्तार इतना बड़ा हो सकता है मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।(33) कुछ घंटे रहने वाला यह बालक परिवार के मुखिया को अपने भावात्मक दायरे मे खींच ले जाता है उसके जाने पर वह उसे और उसके पिता को बाहर छोड़ने आते हैं परन्तु वे बैग भूल आते हैं बच्चा बैग लेने अन्दर जाता हैं वह बैग का बिखरा सामान तरतीब से लगाने का प्रयास करता हैं। परन्तु उन्हें देखते ही सामान जहां–तहां ठूसने लगता हैं। वह उन्हें विदा करते समय उसके गालों को थपथपा कर बालों से उस की ऑखें मूँद देते हैं क्योंकि उसकी ऑखों में झॉकने की वे हिम्मत नहीं जुटा पातें।

प्रस्तुत कहानी अभाव में पलने वाले बच्चे की मनः स्थिति को दर्शाती हैं। अर्थ के अभाव में पिता के प्यार की कमी उसकी ऑखों में तिरती दिखायी देती हैं जो कथानायक के मन में कई सवाल खड़े करती हैं।

घेरे→ 'घेरे' कहानी में लेखक ने अवकाश प्राप्त वृद्धों की मनः स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं। कहानी का वृद्ध नायक जब रिटायर मेन्ट के बाद अपने बेटे के यहॉ महानगर में रहने के लिये आता हैं तब सोतचा हैं कि रिटायरमेन्ट .....अवकाश प्राप्ति .... छुटटी.... बन्धन से मुक्ति की ओर या जीवन में ही मृत्यु का पूर्वाभ्यास.... दोनों में से क्या माना जाए इसे? वह अपने खालीपन को भरने के लिये घर का फालतू सामान अपने ईद गिर्द रख लेता हैं। ताकि उसें किसी से जुड़े रहने का आभास हो सके। तो उनकी मुलाकात कुछ वृद्धों से होती हैं।एक दिन सुबह घूमते समय उनकी मुलाकात कुछ वृद्धों से होती हैं। पार्क में वृद्धों के क्लब का एक दल बन जाता हैं। परन्तु कुछ दिनों के अन्तराल पर महाभारत के प्रसंग को लेकर इनमें झड़प हो जाती हैं। और दोनों विरोधी दल के बीच स्पर्धा, वैमनस्य, ईर्ष्या के भाव आ जाते हैं। और दोनों विरोधी दल

अपने–अपने समर्थकों का जमवाड़ा तैयार करते हैं इन्हें लगता हैं जैसे ये दल दसियों दलों में विभक्त हो गये हर व्यक्ति का एक दल एक घेरा। अचानक योगी की मृत्यु के समाचार से ये दुखी होते हैं उस वक्त उन्हें अहसास होता हैं। कि कितना निम्न कोटि का प्राणी है आदमी भी.... जिन्दगी की शाम में पहुंचकर भी अंहकार और द्वेष को दौड़–दौड़ कर पकड़ता हैं। अगरनहीं पकड़ पाता तो सोचता है बेकार फालतू और बूढ़ा हो गया।"(34) जो योगी उन्हें नयी दुनिया में लाया वे उसी के साथी नहीं बन पाये। और वे दो गुटों की प्रतियोगिता में उलझ गयें।

प्रस्तुत कहानी में कथाकार ने वृद्ध की मनःस्थिति के माध्यम से यह दर्शाया हैं,कि मनुष्यों से सम्बन्धों की चाह आज भी बनी हुई हैं पर मानवीय अवमूल्यन के इस दौर में व्यक्ति जीवन पर्यन्त अंहकार द्वेष और ईर्ष्या की कैद से मुक्त नहीं हो पाता है मिश्र जी आज के इस यथार्थ का सफलांकन कर सके हैं। वृद्धावस्था में व्यक्ति के किया–कलापों ,प्रतिकियाओं और सोच का सूक्ष्मांकन करनें में उनकी लेखनी कारगर साबित हुई हैं।

खंड़ित→ 'खड़ित' कहानी में पहाड़ी कस्बे के निकट बस्ती में आर्चर्ड बनाकर जीवनयापन करने वाली वृद्धा की मनोस्थिति का चित्रण किया गया है। आर्चर्ड की प्रसिद्धि अन्य यात्रियों की तरह कथानक को वहॉ खीच ले जाती है । वृद्धा पढ़ी लिखी होने के कारण खेतिहारों पर होने वाले अन्यायों का डटकर मुकाबला करने के कारण, बहादुरी तथा मेहमाननबाजी के कारण मशहूर थी। आर्चर्ड में आने वाले कथानाक से अन्तरंगता स्थापित कर वे खुलेपन से अपनी स्थितियो का बखान करती है,जो बेटी के प्रति उनके उपेक्षित भाव को दर्शाता हैं। मॉ बाप के खिलाफ महानगर के आदमी से बेटी के शादी करने पर इन्हें बेटी के साथ दिल्ली जाना पडता हैं। परन्तु वे पुनः वापस आ बेटी के साथ आर्चर्ड मे रहती है क्योंकि वे पति के साथ बनाये गए आर्चर्ड से जीवन पर्यन्त जुड़ी रहना चाहती हैं। वह आर्चर्ड के प्रति वृद्धा के लगाव को देखकर खुश होता है,परन्तु जब उसे पता है, कि आर्चर्ड बिक चुका है ,और आर्चर्ड के मालिक ने उन्हें आर्चर्ड की देखभाल के लिये रखा हैं, तब उसे दोनो खंड़ित लगते है।

कहानी में पहाड़ी परिवेश में आर्चर्ड के प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच रिश्तों की कडुवाहट ,तनाव के माध्यम से दो पीढ़ियों के अर्न्तद्वन्द्व को संकेतों के माध्यम से उभारा गया है ।वृद्धा की मानसिक स्थिति के चित्रांकन में लेखक को पूरी सफलता मिली हैं।

झूला→'झूला' कहानी में एक मॉ की मनः स्थिति का चित्रांकन किया गया है जिसके बेटों को उसके पति ने कैरियर बनाने के लिये विदेश भेज दिया हैं। बेटो के जाने के बाद उनके जीवन में एक खालीपन और ठहराव सा आ जाता है। उनका जीवन धिसटता सा दिखाई देता हैं। उनके मन में ये बात घरकर जाती है, कि बेटे उनके हाथ

से निकल गये है, परन्तु जब बड़े बेटे के ब्याह के बावत चिट्ठी पत्री शुरु हुई, और उसने कुछ दिन इंडिया आने का प्रस्ताव लिखा, तब उन्होंने स्वयं को बेहद जागा हुआ पाया। उन्होने बड़ी बेटी को बुला लिया और छोटी बेटी को भी दलीले दी किस प्रकार बेटे पर फंदा डाला जाए कि इन दो महीनों में बेटा शादी के लिये राजी हो जाए, उनकी धिसटती जिन्दगी दौड़ती नजर आ रही थी।वे जगह जगह फोन पर बेटे के विवाह की बात करती है। लड़के को कई लड़कियॉ दिखाई जाती है। जिस समाज के लिये वे कल तक कुछ नहीं थी, आज महत्वपूर्ण हो जाती है। विदेशी माहौल में रहने के कारण लड़के को लड़कियों में कोई न कोई कमी नजर आती हैं। मगर वे हार नही मानती है, और इस विश्वास के साथ लगी रहती है, कि कोई न कोई तो पसन्द आएगी ही जब लड़का अपनी बहन से एक लड़की के बारे मे कहता हैं,कि वह लड़की उसके लिये फेवरेबलीडिस्पोज्ड है। तब वे लड़की वाले को बुलाती है। लड़के को भी इस बारे में बताती है ।लड़के आधे धन्टे की कहकर बाजार चला जाता है और लड़की माता–पिता के जाने तक नही आता है। बाद में आने पर वह बताता हैं कि वह दोस्त के साथ सिनेमा देखने चला गया था। उसे दिन तो वे लड़के को सहज माफ कर देती है, परन्तु दूसरे दिन उन्होंने लड़के सामने फिर बात रखती है कि लड़की तुम्हें पसन्द है,और घर–द्वार हमें तब तुम्हारी जाने के पहले हम बात पक्की कर लेना चाहते है तब बेटे का जवाब कि देखकर पसन्द करना और है मैं कुछ दिन उसके साथ रहना चाहता हूॅ। वे उसे समझाती है, कि साथ रहने का क्या साथ ही तो रहना है, लड़की ऐसे ही पसन्द की जाती है देखकर ,हमने सब देख समझ लिया है पक्की रस्म परसों पूरी ली जाए। वह भड़क उठाता है '' तुम किस दुनियॉ रहती हो ,मां । ब्याह तो मेरा होना है। जब तक साथ न रहा जाए क्या पता चलता है, लोग पहले साथ रहते है। बाद में शादी की बात होती ।''[35] उन्हें लगा ''वे किस दुनिया में रहती है''? कौन सी है उनकी दुनिया? वह जिसमें वे पहले थी या यह जिसमें वे अब है कहते है मां कि दुनिया तो लड़को बच्चो की दुनिया होती हैं क्या उनके लड़के दुनिया उनकी दुनिया हो सकती है...[36] पिता ने डोर पकड़ने की कोशिश की कि तुम्हारी शादी तय तवा हो जाए तो हम तुम भाई बहनों का बटवारा कर सकें। वह तेज पड़कर बोला डोंट लुक डाउन अपॉन मी फादर। आप मुझे निकम्मा समझते है।

अजीब लोग है। यहॉ । दान देने मे ही उनका बडप्पन है जहां भिखारी न भी हो, तो ये इस फेर में रहते है कि भिखारी बना दिया जाए कोई अपने बलबूते पर खड़ा हो अपने फैसले आप करे, यह बर्दाश्त ही नही होता।[37] पिता शान्त हो जाते है। और उनका भी उत्साह मन्द पड़ जाता है, वे पुनः उसी दुनिया मे लौट जाना चाहती है, उन्हे नींद की सख्त जरुरत महसूस लगती है।

कहानी में दो भिन्न पीढ़ियों के वैचारिक द्वन्द्व, पाशाचात्य प्रभाव के कारण नवीन पीढ़ी की बदलती सोच,बदलते मानव– मूल्य तथा ममत्व पर हुए कुठाराघात को दर्शाया गया है।

स्वरलहरी→ 'स्वरलहरी' कहानी में ट्रेन मे बैठी बुढिया के आ आ की स्वरलहरी में हिल्गे लोगों की बेबसी का चित्रण है। बुढिया ट्रेन में बेठे पात्र भाऊ के कलेवा करने पर उनके आगे लड्डू के लिये हाथ फैलाती है ,तब वे उसे लडडू का टुकड़ा देते है।लडडू खाने के दौरान जब वह पानी के लिये हाथ बढाती है, तब वे उसे लोटा देने से मना कर देते है। बुढिया को हैरत होती है, उसकी बैचेनी से इधर–उधर दौड़ती नजरों से लगता है जसे वह लोटा हथियाने का तरीका सोच रही हो तभी वह हाथ धोते भाऊ के लौटे पर थूक देती है और लौटा नीचे गिर जाता है। गुस्सा से भडके भाऊ डंडा उठा लेते है ,परन्तु यात्री उन्हे समझाते है, कि पागल है छोड़ दीजिये। सभी अपने सामान की हिफाजत के लिय चौकन्ने हो जाते है और दहशत से उसे ताकते रहते है।

प्रस्तुत कहानी मे निम्न वर्ग की बुढ़िया के प्रतिशोध को बड़े ही नाटकीय ढंग से चित्रित किया गया है।

सिलसिला→ 'सिलसिला' कहानी आधुनिक सम्यता के परिप्रेक्ष्य में मानव की संवेदन शून्यता को दर्शाती है। वृन्दावन गार्डन देखने आयी भीड़ यात्रा में आने वाले उस अन्तिम स्थल के सौन्दर्य की छटा देखने को व्यग्र है, जिसे पृथ्वी का स्वर्ग कहा जाता है। झील के आस– पास की निराली छटा के बीच उन्हें एक लाश दिखाई देती है। कुत्ता जब उस लाश को चींथता है, तब वे पहचान पाते है, कि यह कोई पुलता नहीं व्यक्ति की लाश है, तब उनके मन में दहशत और बैचेनी की मिली –जुली प्रतिकियायें होती है, सब लोग दूसरी तरफ जाने के लिये बैचेन हो जाते है, कुछ लोग सोचते है कि वहां पहुॅचते ही वे इस बात की इत्तला दे देगें। परन्तु जब वे फुलवारी के दूसरे हिस्से मे पहुॅचते है तब वे वहॉ की सुन्दरता, रंगीनियत शोर– शराबे और हलचलों में इस कदर डूब जाते है कि किसी को इस बात का ख्याल भी नही रहता कि फुलवारी के दूसरे हिस्से में उसी वक्त कोई मरा पड़ा है।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने आज के इस यथार्थ पहलू पर प्रकाश डाला है कि संवदेनात्मक क्षेत्र में मनुष्य निरन्तर बौना होता चला जा रहा है, वे तत्व जो हृदय को द्रवीभूत करते है, वे उनके संवेदनवृत्त में आते तो है, पर क्षण में विलीन हो जाते है। अपने इस प्रयास को छोटी–सी घटना प्रसंग के माध्यम से व्यक्त करने में लेखक सफलता प्राप्त की है । संवाद कहानी को गतिमान रखने और स्थितियों को स्पषटतर करने में सक्षम है। भावहीनता पर प्रहार किया गया है।

बहुधंधीय➡ कहानी में राजनीति को धन्धे के रुप में अपनाने वाले पात्र आचार्य जी का चित्रण किया गया है। जो बड़े–बड़े मन्त्रियो,उच्चाधिकारियों,नेता,उधोगपतियों, पत्रकारों, रईसों से सम्बन्ध बना,उनके मोहरे इधर–उधर फिट कर लोगों में अपनी अनोखी साख स्थापित करना चाहते है कभी कभी उनके अन्दर अपनी व्यर्थताबोध पर खीज उत्पन्न भी होती है तो उन्हें लगता है, कि अकेले में उन्हें स्वयं से कुछ बातें करनी है।

राजनीति गतिविधियों को दर्शाने वाली कहानी में उन शख्सों की गतिविधियों पर भी प्रकाश डालती है, जो स्वार्थवश नेताओं की चापलूसी कर उलूल जुलूल हथकडे अपना लोगों के बीच अपना प्रभुत्व बनाए रखना चाहते है।

प्रत्यवरोध➡ कहानी में "कुंभ स्नान में जाने वाली श्रृद्धालुओं की भीड़ पर काबू करने के लिये अपनाये जाने वाले अमानवीय तरीकों का, अखाड़ों में बटे साधु महात्माओं की मिल्कियत तथा जुलूस जलसों माहाम्त्य का तथा साथ ही यात्रा में आये यात्रियों से गलत तरीकें से पैसे ऐंठने वाले बस चालकों की दुष्यनीति का यथार्थ चित्रण किया गया है।

गोबर गनेस➡ ' गोबर गनेस' कहानी मे राजनीतिक पार्टी के सकिय कार्यकर्ता रुप में कार्यरत व्यक्ति की विवशता का यथार्थ चित्रांकन किया गया है । जो अपने को बेकार के राजनीतिक कार्यो में इस लिये उलझाये रहता है कि उसके ईमानदारी के कार्यो को देखकर उसे कभी उपमंत्री बना दिया जाएगा। चुनाव पार्टी के प्रचार हेतु जब प्रचार प्रान्त में उसे औबजर्वर बनाकर भेजा जाता है तब वह पूरी ईमानदारी के साथ पैसों को चुनाव क्षेत्र में खर्च करता है। इस बीच उसकी पार्टी के कुछ लोग उस पर दबाव डालते है, कि वह विपक्ष में खड़ी महिला को जितवाने में उनकी मदद करें। वह अपने दल की गद्दारी की रिपोर्ट हाई कमांड को देता है।

जब चुनाव परिणाम उसकी पार्टी के पक्ष में रहता है तब वह अपनी कार्यकुशलता पर प्रसन्न हो , अध्यक्ष से मिलता है, और उनसे कहता है, कि लोकसभा के चुनाव में उसे भी टिकट दिया जाए। परन्तु अध्यक्ष उसे समझाता है कि वह अभी पार्टी में अपनी इमेज बनाए क्योंकि रजनीति मे एक दम अड़ियल बाजी नहीं चलती है, अपितु इसमें हवा के माफिक मुलायम और हर क्षण बदलने वाला होना चाहिए। अध्यक्ष की बातें उसकी समझ में न आने पर वे कहते है कि " अब यही तो ...... समझ भी पैनी करनी होती है..... .मतलब बहुत उसूलबाजी नही...... हिसाबी किताबी नही चलती यहॉ......कभी–कभी दिखता कुछ और है..... असल कुछ और होता है...... उदाहरण के लिये उस चुनाव क्षेत्र में हमारी पार्टी को हारना चाहिए था........"[38] क्योकि चुनाव क्षेत्र में हारने वाली महिला

हमारे लिये बहुत उपयोगी थी। यदि वे जीत जाती तो हमारी पार्टी में शामिल हो जाती। अध्यक्ष की हँसी ने उसे और उसके कामों दोनों को धो दिया था। वह सोच रहा था कि इससे अच्छा होता यदि वह अपने लिये कुछ रकम खीच लेता।

प्रस्तुत कहानी मे राजनीतिक क्षेत्र में ईमानदारी से कार्य करने वाले आदमी की बेबसी को चित्रित करने के साथ साथ राजनीतिक क्षेत्र में होने वाले दॉव पेचों को भी दर्शाया गया है।

पैतालिस अंश का कोण....➡ "पैतालिस अंश का कोण ...." कहानी में ग्लासगो में प्रतिदिन सडक के किनारे बेंच पर बैठने वालेएक अपाहिज की अर्न्तःव्यथा को चित्रित किया गया है। जो यू ही अकेला मा–बाप के मरने के बाद,बहन का प्रेमी के साथ भाग जाने पर बेंच पर बैठा सड़क पर आते जाते लोगों तथा विदेशी पर्यटकों को देखता रहता है, बाह्मारीय लोग(विदेशी) जो कभी भूले से उसकी नजदीक की बेंच पर बैठ जाते है तब संकेतो के माध्यम से उसके अपाहिज की व्यथा पूछ उसे अपनी बदसीबी की ओर ढ़केल देते है। एक समय था, जब सड़क पर मानये जाने वाले क्रिसमस त्यौहार की तरह उसके घर में भी क्रिसमस की धूमधाम रहती थी। परन्तु आज उसकी दयनीय स्थिति के कारण अपने देश के लोगों से उसकी बात चीत की माध्यम बहुत कम बन पाता है।उसे लगता है कि जैसे, वह अपने लोगों के बीच अजनबी और पराये देश का हो । उसके लिये जहां। कोई यह नही सोचता कि क्यों उसके सारे जीवन में... काम ...औरत....बाहर जाना..... कुछ भी नही है ....उन सभी ने उसे एक मामूली सी रहने की जगह और हर माह मुफ्त का कुछ पैसा देकर उसके हाथ झाड़ लिये है सोशल सिक्योरिटी देकर उसे देश निकाला ही नहीं आदमियों के समाज के बाहर निकल दिया गया है।[39]वह पास बैठे विदेशी को सिक्का निकाल के दिखाता है। लोगों और उसके बीच अब यही रिश्ता रह गया है। उस समय उसके चेहरे पर भीख मॉगने जैसी कोई गिलगिलाहट नही किसी दबे आक्रोश के भाव दिखाई देते है।

विदेशी परिवेश को चित्रित करने वाली इस कहानी में मानवीय सम्बन्धां में हो रहे उत्तरोत्तर अवमूल्यन को दर्शाया गया है।

धांसू➡ यह कहानी भारतीय जीवन के हर क्षेत्र में लगे उन बिचौलियों पर प्रकाश डालती है जो सत्ता के उतार–चढाव,नेता,मंत्रियों, उच्च अधिकारियों के बीच अपने दॉव पेचों का प्रयोग कर व्यस्था में अपना स्थायित्व बनाये रखने के लिये प्रयासरत रहते है। और सत्ता परिवर्तन के बदलते रुख के अनुसार पक्ष की चापलूसी कर अपने राजनीतिक कैरियर को बनाये रखना चाहते है।

विषय के अनुसार अपनी सशक्त शैली और चौकस दुस्तचुस्त शिल्प के अलावा यह कहानी आपात्काल में जन्में ऐतिहासिक मोहभंग और राजनीति में आए क्रान्तिकारी परिवर्तन की स्थितियों पर प्रकाश डालती है।

खुद के खिलाफ→'खुद के खिलाफ ' कहानी में प्रेम की असफलता से उत्पन्न हुई स्थितियों का चित्रण किया गया है। कहानी की नायिका विमला का नाकाम पति समाज में अमीरों की श्रेणी में आने के लिये, पैसा कमाने के लिये,दोस्तों का कर्जा चुकाने के लिये, उसे अपने दोस्तो का हम बिस्तर बना देता है बाद में जिसे वह सहजता से वरण करती चली जाती है अचानक वह अपने प्रेमी से टकराती है जो कभी किरायेदार की हैसियत उसकी मॉ के घर आता है। वह उसके प्रेम में बधी ही थी, कि अचानक धटित होने वाली धटना उन्हें अलग कर देती है। अचानक उससे मिलने पर विमला उसे घर ले आती है। और उससे उसके घर का पता ले लेती है। एक दिन विमला का पति उसे लेने आता है ।रास्ते में शराब के पैसे उससे ही लेकर शराब इत्यादि खरीदता है। तीनों शराब पीते है वह विमला के इस रुप को देखकर हैरान हो जाता है। उसका पति उससे दस रुपये लेकर यह कहकर बाजार चला जाता है कि आप लोग अकेले में कुछ प्यारव्यार कीजिए। विमला की स्थिति को समझ वह उससे पूछा है वह यह कबतक करती रहेगी क्या ऐसा करना उसे बुरा नहीं लगता, तब विमला कहती है–'' इसमें बुरा क्या लगना.....अगर औरत उस आदमी के साथ सो सकती है जिसे वह चाहती नहीं, सिर्फ इसलिये कि वह उसका पति कहलाता है..... तो वह किसी के साथ सो सकती है....या कभी–कभी थक जरुर जाती हूँ। इनकी आदत तो इतनी खराब हो गयी है कि शाम को यो ही बैठना वक्त बरबादी लगती है। वह सोचता है कि उस दिन के छोटे से हादसे ने विमला की जिन्दगी बदलकर रख दी। विमला उसे अन्दर वाले कमरे मे ले जाती है। उसे पति के आने तक सब कुछ कर लेने को कहती है वह उसे टालता है और बाहर के कमरे में आता है विमला से कहता है– ''वक्त ने तुम्हारी सारी औरत वाली कोमलता सीख ली विमला?''[40] विमला कहती है– तुम्हें औरत में कोमलता चाहिए.... यह चाहिए, वह चाहिए। कभी यह भी सोचा कि औरतों को भी तुममे कुछ चाहिए और वे यो हल्ला करती नही फिरती। लेकिन मै तुम्हें चाहती हूँ। तुम्हारे साथ भाग चलने को तैयार हूँ...... बच्चों को छोड़कर बोलो?[41] उसके यह कहने पर कि तुम्हें तो कोई आदर्शवादी समाज सुधारु ही प्यार करेगा, विमला भडक उठती है प्यार जो खुद एक आदर्श है वह स्वार्थी बंदों के बूते की चीज नहीं। उनके लिए तो यह ताजा चीज को हथियाने का हथकंडा है [42] दोनो के बीच स्तब्धता छा जाती है पति के वापस आने पर विमला उससे कहती है कि वे इसके पैसे वापस कर दे क्योंकि उसने कुछ नहीं किया तब पति उसे नंगा होने

को कहता है, विमला का अक्रोश भड़क उठता है—"चोप साले भंडुए.... नंगा हो जा तू..... यह कहां का राजा महाराजा है कि मैं इसके सामने नाचूगी। [43] वह दरवाजे पर गिलास दे मारती है।

प्रस्तुत कहानी में नायिका की विद्रोहात्मक स्थितियों को उभारा गया है जहां एक ओर वह उच्चवर्ग के अंधानुकरण के कारण, आर्थिक विवंचना से ग्रसित परिवार को मुक्त करने के कारण पति के मित्रों का हम विस्तार बनना स्वीकार कर लेती हैं वही दूसरी ओर प्रेमी के द्वारा की जाने वाली अपनी यथास्थिति पर टिप्पणियों पर विद्रोहात्मक हो पुरुषों की परम्परागत मानसिकता पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। और सामाजिक विसंगतियों का पर्दाफाश करती है।

डॉ0 पुष्प सिंह लिखा है कि खुद के खिलाफ इस संग्रह की अत्यन्त सशक्त कथा है, जिसमें विमला प्रेम की असफलता मे किस हद तक नीचे गिरती है यह विमला अपने वर्तमान नाबदान तक पहुँची है इससे वह पाठकीय सहानुभूति भी अर्जित कर पाती है और यहीलेखक "विवाह" और प्रेम के परंरागत प्रस्थापित नैतिक मानों को खुलकर चुनौती देता है। उन मानों को जो पुरुष ने अपनी ही दृष्टि मे बनाए है।[44]

शापग्रस्त→ "शापग्रस्त" कहानी में लन्दन में बसे एक भारतीय अप्रवासी की कारुणिक कथा का चित्रण है। जो अपनी पत्नी और बच्चों से अलग होने की मानसिक पीड़ा को भोग रहा है शादी के दस साल रहने के बाद उसकी पत्नी एक अंग्रेज से शादी कर लेती है ,और धीरे धीरे बच्चे भी उससे अलग हो जाते है।

प्रस्तुत कहानी में अप्रवासी भारतीय की मनोस्थिति के साथ साथ पाशाचात्य जगत के उन्मुक्त वातावरण के आर्कषण से आर्कषित भारतीय नारी की मुक्त आकांक्षा का वर्णन किया गया है। जो परिवार के विखराब का कारण बनता है। कहानी में नायक की मानवीय मूल्यों के टूटने की मानसिक पीड़ा, एकात्मक क्षणों में महसूस किया जाने वाले अकेलेपन, तथा परिवार के लौटने की आशा में किये जाने वाले इन्तजार की बेसब्री को भी चित्रित किया गया है।

गिद्ध →'गिद्ध' कहानी में नौकरी पेशा करने वाली,मॉ— बाप के उत्तरादायित्व का बोझ उठाने वाली अविवाहित युवती का चित्रण किया गया है जो मॉ—बाप की बढ़ती जरुरतों के कारण एक नेता की हवस का शिकार बनती है । उसके चार भाई और दो बहने होने पर भी वह उनकी जिम्मेदारियोंका बेटे की तरह निभाती है।

प्रस्तुत कहानी में कथाकार ने पारिवारिक जीवन में बढती स्वार्थपरिता, वैयाक्तिकता, सुविधा भोगी जीवनशैली से आए मानवीय संवेदनाओं के अन्तर को अत्यन्त सूक्ष्मतः से उभारा है तथा नौकरी पेशा अविवाहित युवती की समस्या को भिन्न कोणों से उद्घाटित किया हैं।

प्रभामंडल →" प्रभामंडल " कहानी में राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त योगियों के स्टेटस तथा उसके पीछे छिपी यश प्रसिद्धि और चमक–दमक की लालसा पर करारा व्यंग्य किया गया है।जिनके पास पहाड़ी पर बसी कोठी में ऐशों आराम की सभी चीजें सुलभ है, उनका स्टेटस राजा महाराजाओं से कम नही है।)

प्रस्तुत कहानी में योगियों के स्टेटस पर व्यंग्य किया गया हैं यह कहानी बाबाओं की यथास्थिति पर प्रकाश डालती है।

'निरस्त'→ 'निरस्त' कहानी में वृद्धों की स्थिति और मनोदशाओं का मनौवैज्ञानिक चित्रण किया गया है रिटायर होने पर वे चाहते है कि उनकी पत्नी उनके साथ गॉव में आकर रहे परन्तु गॉव आने पर वे लडाई झगड़ा और पत्नी को तंग करते हैं। इस कारण पत्नी उन्हें बेटे के पास भेज देती है। यहॉ उन्हें अलग कमरा दे दिया जाता हैं। घर में सभी अपने कामों में व्यस्त रहते है और उनसे बातचीत का माध्यम करीब करीब नही के बराबर होता है। अपने एकाकीपन को भरने के लिये वह घर का फालतू सामान अपनी कोठरी में भर लेते हैं। ओर दोपहर को उन्हीं पोटरियों को बाधते खोलते रहते है।बाहर घूमते वक्त वह अपनी उम्र के वृद्धों से बातचीत करना चाहते है परन्तु उसके चेहरे का रुखापन और उनकी उपेक्षाएं उन्हें खलती है। कमरे में झाडू पोछा लगाने वाली नौकरनी के आने पर उन्हें इन्सान की उपस्थिति का अहसास होता हैं।वे उससे हमदर्दी जताते है परन्तु वह भी उन्हें लताड़ देती है तबवह अपने आप को कोसते हैं कि यह जीवन तृष्णा कैसी तौहीन कराती है। तब उन्हें लगता हैं, कि किसी को उनकी जरुरत नही उनके संगे सम्बन्धी जाति–बिरादीर सब कुछ ये ही है –जंग लगा फावड़ा, लौटी हुई धार की कुल्हाड़ी, फटे बोरों का पुलन्दा, दीमक लगे लड़की के सन्दूक, खपच्चियॉ और रद्दी कागजों से भरा बक्सा...... आदमी नाम का जानवर उनका न हुआ, ये सब तो हुए?[(45)] वे ऐसे ही पुटरियों को खोलते– बांधते एक दिन चले जायेंगे।

प्रस्तुत कहानी में वृद्धावस्था की स्थितियों का मनोवैज्ञानिक चित्रांकन हैं, पड़ोसियों से उलझ जाना, अपना रौब डालना, फालतू चीजों को एकत्रित करना सभी वृद्धावास्था की स्वाभाविक स्थितियां है। कहानी महानगरीय संस्कृति में भावशून्य होते मानव सम्बन्धों पर भी प्रकाश डालती हैं। जहॉ वृद्धों को अपनों के बीच अजीब किस्म की उपेक्षा का

शिकार,फालतू वस्तुओं के बीच फालतू पड़ें रहने को विवश होना पड़ता हैं। कहानी में बुन्देली कहावतों से उस संस्कृति से जुड़ें पात्र की स्वभावगत विशेषताओं को दर्शाया गया हैं।

हमदर्दी→ हमदर्दी कहानी में आज के शिक्षित बेरोजगार नवयुवक की विवशता, का चित्रण किया गया हैं, जो अपनी कैजुअल नौकरी की मुस्तकली के लिये अपने प्रान्त की राजधानी में मंत्री से सिफारिश हेतु इधर–उधर भटकता रहता हैं। कई दिनों की भूख प्यास से वह रास्ते पर मूर्छित हो जाता हैं। हमदर्दी हेतु उस पर झुकी हुई उत्सुक भीड़ के सवाल,उसके कानों में पड़ते हैं वह उठने की लगातार कोशिश करता हैं। उसके कॉपते शरीर और हालत को देखकर भीड़ में से कोई उसे कपड़ा, कोई खाना देने की बात करता है तभी कोई पहले उसे उठाकर खड़ा करने की बात कहता हैं।वह कसमसाता हैं। मना करता हैं....कितने बैचेन हो कुछ करने को तुम लोग.... पर क्या कर सकते हो ...उठाकर सड़क पर खड़ा कर दोगे और अपने अपने घर चले जाओगे...बस न? मुझे ....खाना .... कपड़ा नही चाहिए....नौकरी चाहिए दे सकते हो क्या?[(46)]

वह सवालिया नजरें उन पर गड़ा देता है और नमस्ते कर धन्यवाद देता है उसकी मौन अस्वीकृति पर मद्दगारों के चेहरे लटक जाते है। वह हमदर्दी भरी नजरों से उनको देखता हैं।

प्रस्तुत कहानी में शिक्षित बेरोजगार युवक की विवशताओं को चित्रित किया है। जिसका शिकार आज का युवावर्ग हैं। भ्रष्ट व्यवस्था युवकों की आशाओं को खत्म करके उन्हें इन स्थितियों में ,बेरोजगारी में रहने को विवश करती हैं।

ज्वालामुखी→' ज्वालामुखी ' कहानी में पति के अमानवीय बर्ताव की शिकर स्त्री की विवशता का चित्रण किया गया हैं। साथ ही सामाजिक विसगंतियों को भी उभारा गया है। सावित्री पति द्वारा दी जाने वाली यातनाओं को भूलकर सभी सुहागिनों वाले तीज त्यौहार मनाती हैं । तेरह साल की उम्र में महाराज उसे अपनी पत्नी बनाते हैं। खेलते समय महाराज उन्हें घकियाकर घर ले आते है ओर कोठरी में बॉधकर बन्द कर देते हे शादी के होने वाले नयी दुल्हन के स्वागत की रस्मो रिवाज की जगह सावित्री को कुए वाली मोटी रस्सी से बॉधकर रखा जाता हैं महाराज के पास जमीन जायदाद की जगह पर कुछ भी नही सिर्फ कोध और लम्पटाता के सिवाय । इसलिये सावित्री पढ़ना लिखना शुरु कर देती है गॉव में दो भाइयों के कत्ल के बाद छोटे भाई की की पत्नी के होने की कहानी सुनाने वाले भांऊ की तरह ही भाव लोगों के मन में उमड़ रहे थें, परन्तु सावित्री परिक्रमा करने वाले नारियल फेकने वालों की श्रृद्धा देखकर सोचती है कि क्या किसी को

इतना चाहा जा सकता है कि सती होने का धर्म औरत के जिम्मे ही आया ; कभी कोई आदमी सता नही होता?[1] नहीं , वे सिर्फ जलाते हैं, जलते नहीं..... जलने वाले की कथा बनाते हैं .... फिर उसे सुनाते है।[2] उसे लगता क्या पता उसे सती होने के लिये मजबूर किया गया हो। सावित्री के कमाने जाने पर भी उसका पति कोई लिहाज नही बरतता सावित्री का बाहर जाना, मर्दो के साथ उठना बैठना उसे अच्छा नहीं लगता है वह घर की काम वाली छुड़वा देता है सावित्री नौकरी पर से आने के बाद धर के कामों में उलझी रहती। रामस्वरुप से बात करने पर वह सावित्री पर कोड़े बरसाता हैं। सावित्री ऑगन में आ जाती हैं। वह तब तक मारता रहता है जबतक थक नहीं जाता हैं। पास पडोस के लोग छतों और आटरियों से तमाशा देखते है,कोई बचाने भी नहीं आता छोटा मुन्नू भी मॉ की मार देखकर डर जाता हैं। सावित्री सब कुछ चुपचाप सहन करती रही उसके अन्दर आग धधकती हैं। उसे लगता है जैसे वह चिता पर बैठी हो। वह सती भैया से अपनी स्थितियों का मिलान करते हुए भड़क उठती है सती होना यों शरीर को जलाकर छुट्टी पा लेना नहीं हैं,री...... तिलतिल करते जलते हुए अपने शरीर को, पग–पग पर बुझते हुए अपने मन को देखना है।,चिता पर बैठकर कहानी खत्म कर दी तो क्या बहादुरी दिखा दी..... जानती हैं हर रोज चिता पर बैठना ,जलना.... फिर बैठना, फिर जलना....और इसी तरह कहानी चलाए रखना.... यह क्या होता है? मिट्टी के साथ जली सो क्या जली जिन्दा आदमी के साथ यह रोज–रोज रहना और जलना कर सकती थी तू? अरी तुझे तो सिर्फ पांच बार सती होना था..... पर उसका क्या जिसे अनगिनत बार होम होना हैं।.....एक ही जन्म मे कितनी बार .....अ.... ओ भैया की बच्ची ।[47] कुछ लोग ज्वाला की तरफ मुख करके बौंरे लड़के से सती भैया की जय बुलवा रहे थें उनका मानना था कि सती की ज्वाला बौरो को खोल देती है सावित्री आज तक सच भाग्य समझकर सहन करती रही परन्तु आज बौरी सावित्री खुल गयी थी।

प्रस्तुत कहानी दोहरे कथानक से बुनी गयी है, एक तरफ परम्परा वादी पुरुषों की मानसिकता,स्त्रियों पर किए जाने वाले अमानवीय बर्ताव को दर्शाया गया है, दूसरी ओर सती होने वाली स्त्री पर श्रद्धा को दर्शाया गया हैं। जो समाज की विसगंतियो पर करारा व्यंग्य हैं । सावित्री जो अपना भाग्य समझ सभी यातनाएँ सहन करती हैं। अन्ततः प्रतिरोध कर स्वयं ही समाज की विंसगतियों को उधारती हैं।

कहानी नहीं..... ➡ कहानी नहीं... कहानी मांडू से जीवन पर्यन्त भावनात्मक रुप से जुडे रहने बाली गाइड़ की मनोस्थिति को चित्रित करती हैं,जो अपना सम्पूर्ण जीवन इस ऐतिहासिक स्थल की बेहतरी के लिये समर्पित कर देता हैं वे पुरातत्व विभाग के साधारण कर्मचारी के रुप में मांडू से जुड़े थें और रिटायरमेन्ट के बाद पर्यटको को घूमाने हेतु

गाइड़ का काम स्वेच्छा से अपना लेते हैं। वे पत्नी के देहान्त के बाद अस्सी वर्ष की ढलती उम्र में बीमारियों के कारण मांडू छोडकर बेटों के पास जाने का विचार बना लेते है और पर्यटको के साथ जाना बन्द कर देते हैं। पर्यटकों के एक जत्थे के आने पर वह जाते जाते एक बार मांडू को देखने के मन से उन्हें मांडू धुमाने ले जाते हैं, और मांडू के इतिहास के बारे में बताते वक्त, सौन्दर्य स्थलों को धुमाते वक्त अतीत की स्मृतियों के डूबते उतराते है। कुदरत की खूबसूरती के लिये वक्त न निकालने वालों से उन्हें हमेशा शिकायत थी वे स्वयं यहां से बोरिया, बिस्तर बॉधने की सोच रहे हैं। मांडू को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति दिलाने हेतु वे देश के महत्वपूर्ण व्यक्तियों पत्र लिखते उन्हें आमन्त्रित करते रहें। प्रयास भी हुए सरकार के द्वारा बड़ी रकम भी सैग्सन होती है, टूरिस्ट बंगला –होटल और विश्राम गृहके लिये बनीं इमारतें उन्हें उस सौन्दर्य में कील की तरह ठुकी दिखाई देती हैं। मांडू के नजारों में उन्हें अहसास होता हैं कि मांडू छोड़ ने पर वे कहानी बन जाएँगे। उनकी ऑखों में वातावरण की नमी उतराने लगती हैं।

अचानक उन्हें अपने अन्दर लहलहाती नयी शक्ति का अहसास होता हैं उन्हें लगता हैं कि मांडू की बेहतरी के लिये उनका बहुत कुछ करना अभी बाकी हैं और वे पर्यटकों को नवीन स्फूर्ति से कुदरत के बेजोड़ नजारे दिखानें में जुट जाते हैं।

प्रस्तुत कहानी मांडू से जुड़े पात्र के भावनात्मक लगाव को दर्शाती हैं। वे ऐतिहासिक स्थल की गौरवगाथा में अपना एक नया इतिहास जोड़ते हैं। कहानी उन स्थितियो को भी दर्शाती हैं, जो आधुनिकता के कृत्रिम उपादानों में जकड़ें लोगों को प्रकृतिक सौन्दर्य से वंचित करती जा रही हैं। कथ्य और शिल्प की दृष्टि से कहानी पाठक पर अपना प्रभाव छोड़ती है।

जंग→'जंग' कहानी में एक वृद्धा के व्यवहारों का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया हैं जिनकी अविवाहित एकलौती बेटी जो ए ग्रेड नौकरी पर है, उन्हें वृद्ध होने के कारण अपने पास ले आती हैं। कहानी में स्थितियों का चित्रण बखूबी किया गया है तथा मॉ की मानसिकता का अंकन सूक्ष्मतः से किया गया है घटना और प्रसंगो के माध्यम से वृद्धा के स्वाभावगत आकांक्षाओं को उभारा गया हैं साथ ही कथाकार ने बेटी के मन की उस पीड़ा को उभारने का प्रयास किया हैं जो पिता को दी जाने वाली यातनाओं के दौरान उठी थी।

अन्ततः वृद्धा का बेटी के पास बिना किसी हुज्जत के चले जाना वृद्धावस्था की बेबसी का संकेत करती हैं।

किस कीमत पर → 'किस कीमत पर' कहानी में एक नौकरी पेशा अविवाहित युवती की मनःस्थिति का चित्रण किया गया है। जो कस्बें के माहौल में पली–बड़ी घर के संस्कारों की वजह से शहर की रंगीनियत में एडजस्ट नही हो पाती हैं उसकी मुलाकात उसकी ही तरह एक कस्बे से आए उसके दफ्तर के सहकर्मी से होती है। भावनाओं पर दोनों के विपरीत विचार होने पर भी वे अच्छे दोस्त बन जाते हैं। यह भावनाओं को आदमियत का सुबूत और शक्ति समझती और श्याम भावनाओं को आदमी की कमजोरी। मुलाकातों का सिलसिला आगे बढ़ने पर ये दोस्ती प्यार में बदल जाती हैं तीन साल तक श्याम के साथ धूमने पर लोग उससे सवाल करते है कि वह श्याम से शादी क्यों नहीं कर डालती हैं। ये बात जब वह श्याम से कहती हैं तो वह शादी की बात टालते हुए कहता है कि जब तक एक दूसरे के जीवन में हमारी हिस्सेदारी है तो ब्याह बिना क्या रुक जाती हैं, वह क्यों लोगों के कहने सुनने में आती हैं। वह उसे बताती है कि श्याम मेरे खुद के लिये ब्याह एक जज्बाती जरुरत हो गयी हैं .... मैं बस..... करना चाहती हूँ। मुझे लगता है कि मैं एक बिन्दू पर अटल गयी हूँ। जहां से मेरे बहाव को सिर्फ विवाह ही खोल सकता हैं।[48] श्याम उसे समझाता है फिर भी वह सोचती है कि पॉच छः साल रुके रहने पर यदि श्याम के फैसला उल्टा हुआ तब वह क्या करेगी । वह श्याम से कट कर रहने लगती हैं। पड़ोस में रोहित परिवार में आने जाने लगती है। उसके बच्चों और गृहस्थी को देखकर उसे सुकून मिलता है रोहित भी उसकी तरह किताबों का शौकीन उससे किताबे लेकर पढ़ना उसे अच्छा लगता है। दोनों के विचार में समानता होने के कारण उसे लगता है कि उसके जीवन में कुछ नया जुड़ रहा है। श्याम से उसे रोहित का दायरा बड़ा नजर आता है जहॉ श्याम से दूर होने पर उसे रीता रीता लगता था वही रोहित से अलग होना उसमें कुछ भरता था। रोहित जब उससे कहता है कि एक खूबसूरत लड़की जो किसी की प्रेरणा बन सकती थी। जिसे अपने धर का श्रृंगार बनाकर कोई भी धन्य होता.... वह सेंवल के फूल की तरह बेकार गयी।[49] वह भड़क उठती है।

बस करिए। ईश्वर के लिये मुझे न देखिए। मैं नही चाहती कोई मेरे बारे में सोचें, मुझमें दिलचस्पी लें। अगर में उदास हूँ, तो हूँ सूख रही हूँ तो सूख रही हूँ... यह मेरी निजी जिन्दगी है जो है , दूसरों को उससे क्या ? क्या यह मेरा कुसूर है कि मैं खूबसूरत हूँ नौकरी करती हूँ...याकि अविवाहित हूँ... मुझे शान्ति से जीने दीजिए....प्लीज़..

बहुत देर तक वह किकयाती रहती है सोचती है कि जिसे सोचना था वह तो सोचता ही नही है। दूसरे उसे बारे में उसके बारे में सोचने को बेताब है। उसका शरीर ही नही अन्दर का इन्सान भी सूख जाता है वह आदमी को देखकर एकदम भूकने लगती है।

प्रस्तुत कहानी में कस्बें के संस्कार में पली बढ़ी मध्यमवर्गीय परिवार की शिक्षित नौकरी पेशा अविवाहित युवती की मनोदशा का सच्चा चित्रण किया गया है। शादी की उम्र पार हो जाने पर, प्रेमी द्वारा शादी की बात टालने पर, पड़ोसी द्वारा उसके सौन्दर्य के सूख जाने की बात करने पर, उसका भड़क उठना सभी उसकी मनोदशा को दर्शाता है। भाषा शैली की दृष्टि से कहानी अत्यन्त मार्मिक हो उठी है।

अलग–अलग समय →'अलग–अलग समय' कहानी में लेखक ने एक युवा और युवती के प्रेम सम्बन्धों में आए तनावों को चित्रित किया है। स्वभाव की भिनन्ता ही उन दोनों में तनाव का कारण बनती है। युवक अतीत की मधुर स्मृतियों के सहारे वर्तमान में आई दरारों को पाटना चाहता है परन्तु दोनों का अहंकार आड़े आता है। उसने कभी अपने साथी के प्रेम स्पर्शो में देवत्व की सरहदों को पार किया था और उसमें कभी बच्चों की अल्हड़ता देखी थी। परन्तु नायका लिजलिजी भावुकता और बन्धनों से मुफ्त रहना चाहती थी। राहुल का साथ भी उसने इसलिये छोड़ा था क्योंकि वह जुनूनी था वह नहीं चाहती है कि कोई पर्सनल प्रोपर्टी समझ बन्धन में बांधें रखें। इसे लगता कि इन दिनों वह ज्याद व्यस्त और थकी और बीमार रहती है इसे सम्बन्धों की डोर कुछ ढीली सी जान पड़ती है। वह छटपटाहट को दबाये सोचता है कि प्रेम वहहै जो हमारे बीच था या यह जो अब है। डूबने का सुख या कि जलने की यातना। हम जिस व्यापारी पीढी के है वह सिर्फ सुख चाहती है।.... लाभ। यातना की छाया पड़ी नही कि कुछ भी तोडने को तैयार।''[50] उसे लगता है कि जरुर उन दोनो के बीच कोई तीसरा है। वह उस छाया का आकार मन मे बनाने लगता है। वह जब किसी से फोन पर हैं हूॅ जुमलों में बात करती हैं तो उसके लगता है कि उसका शक सही है। जब ये उस आदमी से टकराता है तब उससे सवालों की झड़ी लगा देता है। उससे पूछता है कि क्या वो रतन को चाहती है जब इसका जबाव होता है कि नही उसका व्यक्तित्व मुझे खीचता है। जीवन मे गतिशीलता का अहसास कराता है जब वह कपिल से उसके सम्बन्धों के बारे में पूछता है तो वह कहती है कि वह सबकी मदद करने वाला आदमी है इसलिये मुझें अच्छा लगता है यह पूछता हैकि तुम एक साथ कई लोगो से करीबी रिश्ते कैसे बना लेती हो और उन्हें एक साथ निवाह कैसे लेती है?

वह अपने बिखरेपन को स्वीकारती है। यह उसे जन्म दिन पर एक अगूंठी भेट देती हैं तब यहसोचाता हेकि अंगूठी माध्यम से शायद सम्बन्धों को सुधारा जा सकता है। वह फोन पर उसे से कहता है कि वह चाहे तो अंगूठी अपने नये साथी को देसकती है। उसके मिलन वह भड़क उठती है। जैसे हर बार मुझे एक इम्तहान में बैठना पड़ता है। मैने कभी ऐसा वायदा नहीं किया था कि मैं तुम्हारे अलावा किसी से सम्बन्ध नही

रखूँगी। अगर तुम विश्वास नहीकरतेतो बात खत्म मैं क्या कर सकती हूँ। उसके सम्बन्ध चिड़िया के धोसले की तरह ही शीध्र नष्ट हो जाते है। अलगाव को पाटा भी जा सकता था परन्तु समय अलग था और भाषा के माध्यम भी धूप के टुकड़े की तरह सरक चुके थे।

संध्यानाद– 'संध्यानाद' कहानी में गॉव के एक रिटायर स्कूल मास्टर की मनोदशा में मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है पत्नी कस्बे में मास्टरनी थी इस कारण उन्हें साथ –साथ रहने को कम मिला।वे चाहते हैकि कि इस अवस्था में उनकी पत्नी उनके साथ रहे और सहवास का सुख दे। पत्नीका लडके –बहुओं के आगे पीछे धूमना उन्हें अच्छा नही लगता है वे उसे हर तरीके प्यार ,गाली गलौच मारपीट से समझाना चाहते है जब वह नही मानती तो एक अकेले मे अपनी कोठरी में उन्हें दबोच लेते है। तब हंगामा खड़ा हो जाता है लड़का उन्हें फटकारता है। वे भड़क उठते हैं। वे दिन भर बाहर बैठे रहे रात में भी जब किसी ने उन्हें आने के लिये नही कहा तब उनके सामने अपने बाप की तस्वीर धूमने लगी। सोचने लगे कि अन्त कितना खराब होता है... कैसी लचारी एक आदमीका अन्त , वहीजो जीवन मे क्या क्या करता है,जोरु जमीन के लिये कितनी–कितनी लड़ाइयां झेलता है और आखिर में दोनो ही दगा दे जाती है।"

वे सोचते है कि पत्नी के आने पर वह उसे समझायेगें, अन्त समय उनका साथ छोड़ कर न जाये लडके बहू उन दोनों को स्वार्थी के झूलों में झूला रहे हैं उनके लिये हम आदमी हर चीज है। तू ऐसे समय में छोड़कर चली गयी हैं मैं। इन भेडियों से चिथने के लियें। उनके बच्चे उनके दुश्मन है जो उन्हें अलग अलग करने की कोशिश कर रहे है।

प्रस्तुत कहानी में वृद्धावस्था की बेवसी ,खीज, अकेलेपन को उभारा गया है साथ ही साथ परिवारिकि जीवन मे बढ़ती स्वार्थपरिता , वैयविक्यता ओर सुविधा भोगी जीवन शैली से सम्बन्धों में आए बदलाव को अत्यन्त सुक्ष्मतः से उभारा गया है। वृद्ध बेटों की चाल को समझ जाता है, परन्तु अपनी पत्नी को नहीं समझा पाता इसलिये वह मार पीट और गालीगलौच पर उतर आता है। परन्तु अपनी पत्नी को अपने अनुकूल नही बना पाता है। इसलिये उसके स्वभाव में इतनी उग्रता दिखाई देती है। काम भावना की प्रबलता से उत्पन्न स्थितियां का मनोवैज्ञानिक चित्रण कथाकार बडी सूक्ष्मतः से किया है।

संडाध– 'संडाध' कहानी एक युवती के अर्न्तद्वन्द्व को लेकर बुनी गयी है जिसके पति केसम्बन्ध पर स्त्री से है शादी के बाद पति की नौकरी न होने कारण वह पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ अपने ऊपर ले लेती है ताकि सास–ससुर का भार हल्का हो सके

और पति भी छोटा महसूस न करे बच्चे-रामलीला की जिद करते है और कहते है कि सबसे पापा तो शाम को घर आ जाते हमारे पापा क्यों देर से आते है । वह बच्चों को यह कहकर सुला देती है कि देर तक रामलीला देखोंगे तो सुबह स्कूल कैसे जाओंगे। पति की नौकरी मिलने पर वह सोचती है कि अब वह अपनी दबी इच्छाओं को पूरा कर सकेगी। परन्तु उसके जीवन में बदलाव आ जाता है पति के सम्बन्ध उसके दफ्तर की सहकर्मी से हो जाते है। वह देर से घर आता है, साससुसर बच्चों के सो जाने के बाद। खाना खाकर में बगल में आकर लेट जाते है 'शरीर से उठती बासी –बासी सी गंध... संड़ाध। क्या यही है वह देह जिससे कभी आंच फुटती थी।? जैसे अपनत्व का खून ही अलग होता है..... कितनी जीवित हो उठती हैदेह..... सुगन्ध ही सुगन्ध। वह नही तोसिर्फ 'एक चलता फिरता जिस्म,हाड़मांस भरा सांचा।[51] वह पति से पूछती है कि ऐसे कब तक चलेगा वह कहता है कि वह उसके नौकरी का राज जानतीहै इस लिय वह घर बचाने केलिय सबकुछ कर रहा है। वह अलग घर लेने की सोच रहा है क्योकि मॉ बाप के पास रहने से स्वतन्त्रता नही रहती वह कमायेगें और वो भी। ये अपनी नौकरी करने की बात कहती है जब यह कहता है कि तुम्हें कौन नौकरी देगा।यह सोचती हैकि धर में सबकी वजह से उसे जो आड़ है वह भी यह आदमी हटा देना चाहता है। डायन को यहां नही लासकता तो अलग घर चाहिए। क्या धकेलता हुआ उस बिन्दू पर ले जाना चाहता है जहां यह खुद ही चली जाए, उन दोनो का रास्ता साफ कर जाए।[52] वह सच का मुकाबला करने को तत्पर होती है।

सुबह मन्दिर से लौटने के बाद दृढ़निश्चय भाव से पति से कहती है कि आप अलग घर लेने की सोच रहे है एक दिन पहले बच्चों को उससे मिलवाने की बात कह रहे थे आप चाहे जो करे परन्तु मैं और बच्चे वहां नही जायेगे । उसके स्वर मे आत्मविश्वास था वह बच्चों को स्कूल जाने के लिये जगाती है।

प्रस्तुत कहानी मे दाम्पत्य जीवन मे पर स्त्री के प्रवेश से आयी दरारों को दर्शाया गया है। कहानी की पात्रा जीवन में समस्त संधर्षो को झेलने के लिये सहज तैयार रहती है,परन्तु पति के जीवन पर स्त्री के आने से टूट जाती है अन्ततः आत्मविश्वास से भरे सच का मुकाबला करने के लिये खुद को तैयार कर लेती है।

आने वाली सुबह – 'आने वाली सुबह' कहानी में जातिगत अर्न्तविरोधो के ताने बाने से बुनी गयी है जो अन्ततः मानवता का धरातल तैयार करतीहै। पंडित अमाशंकर में परम्परावादी और आधुनिक जीवन शैली का मिला जुला रुप दिखाई देता है। परिवार से मिले संस्कारों को उन्होंने अपने जीवन में स्थान दिया हुआ हैं छुआछूत और अन्धविश्वास को दैनिक जीवन में सफाई हेतु आवश्यक मानने वाले पंडित उमाशंकर को अपने बेटे के

मुसलमान मित्र के घर आने पर एतराज होता है, परन्तु जब वह धीर धीरे खाने की मेज तक पहुचने लगता है तो वे वयस्क होते बेटे को रामझाने के लिये दफ्तरी पैतरा अपनाते है और उसे समझाते है कि वह दोस्तो की तरफ से ध्यान हटाकर अपना मन पढ़ाई में लगाए। तब वह कहता है कि आलम हमारा क्लासफैलो हैओर हम दोनो साथ पढ़ते है डिसकस करते हैं जब आलम के घर आने जाने में कोई कमी न हुई तो वह इसी दिन के इन्तजार में होते हैकि किसी दिन दोनों के बीच खटपट हो जाएगी तो खुद व खुद आलम का आना जाना कम हो जाएगा छुटिटयों में पत्नी के मायके जाने के बाद उमाशंकर जी की तबयित अचानक बिगड़ जाने पर आलम बुखार कम करने के लिये उनके माथे पर भीगी पट्टियॉ रखता बदलता है। और उनकी देखभाल करता है,उमाशंकर जी की ऑखें भीग जाती है– आत्मीयता आखिर आत्मीयता है उनके अपने लड़के रमेश ने भी इतना ख्याल नही किया । इस वक्त कहां है...... यह भी पता नही। रमेश के आने पर आलम उसे दवाई लेने भेजता है ओर दोनों मिलकर रसोई में उनके लिये चाय बनाने चले जाते है । आलम को रसोई धर में जाने पर उन्हें कुछ खटकता है 'आलम आखिर उनके रसोई घर में भी.... ? रसोई घर जो पूजा की जगह के बाद दूसरा पवित्र स्थान था...?पर तभी रसोई घर में बर्तनो की खटर–पटर की आवाजे मीठी लगने लगी... जैसे भोर के पहर सामने के मन्दिर के घन्टे बजते थें..... जागियें कृपया निधान पंछी बन बोले..... कोई उन्हें जगा रहा था।[53]

प्रस्तुत कहानी परम्परागत संस्कार मानव के सामने नैतिक मानवीयता के पक्ष को स्पष्ट करती हुई मानव के भीतर छिपे प्रेम ,सहयोग,सहानुभूति ,सौहार्द की प्रवृत्ति को उजागर करती है। अन्ततः उमाशंकर का चरित्र परिवर्तित करतीहै। अपने आप मे समान्य दिखने वाली धटना पात्र के मन में पूरा प्रभाव डालती है।

'आवाज.... खुलती हुई' → 'आवाज......खुलती हुई ' कहानी में कथाकार ने बाल मनोविज्ञानका चित्राकंन अत्यन्त सूक्ष्मतः के साथ किया है।कस्बे के उत्मुक्त वातावरण में जीने वाले बालक को जब महानगरीय परिवेश में अच्छी शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा जाता है तब वहॉ वह उस परिवेश में स्वयं को बधा हुआ पाता हैं एक खालीपन जिसे भरने के लिये वह कथानायक जो उसके पिता के मित्र का ध्यान फोन पर अपनी ओर खींचता है ओर कथानायक के मन आत्मीयता पैंदा कर देता है। कथानायक उसकी विवशता का आभास पाता है। क्योकि उसकी भिनभिनाहट और बिखरी– बिखरी आवाज जिसमें उसकी खिन्नता स्पष्ट झलकती है। जो लगातार उनका पीछा करती है कि वे सोचतें है कि रामस्वरुप ने उसे इस उद्देश्य से शहर मे पढ़ने भेजा होगा कि अच्छे स्कूल में पढ़ने से सुविधा होगी कस्बे में रहते उसका कोई भविष्य नही। कथानायक के

सामने कई स्थितियों उभर कर आती है कि "नौकरी के लिये एक पागल दौड़ अभी से। वह भी ....कहां? मिली भीतो पेट भरने का जुगाड़ भर, उसके लिये इतनी बड़ी यातना .... रुहानी यातना जमीन के एक आत्मीय टुकड़े से काटकर बच्चे को एक अमानवीय चौखटे में चिपका देना कहां पूरी बस्ती उसका घर और कहां वह शहर जहां नौकरी मिलने पर भीएक कमरे के धर की तलाश में ही आधी जिन्दगी निकल जायगी। वहां वहअब भी बडा था शहर मे और छोटा होता चला जाए।"(541) कई दिनों तक बच्चे का फोन न आना उन्हें बैचेन कर देता है वह बच्चे के पिता को लिख देते है कि वह बच्चे से मिल जाए शायद उसका मन वहां नही लग रहा है।उसका फोन आने पर उन्हे पता चलता है कि उसके बडे भाई उसे लेने आए है। वह वापस जा रहा , अपने घर वही पढ़ेगा। फोन के पार उसकी खुशी का अन्दाजा उसे लग जाता है।

प्रस्तुत कहानी में कथाकार ने बाल मनोविज्ञान का चित्रण अत्यन्त गहराई से किया है। कस्बे के उन्मुक्त वातावरण में अपनी स्वतन्त्रता मे जीने वाला बालक, महानगरीय, परिवेश में ऊब जाने की स्थिति में होता है। मनोविनोद के साधनों के बावजूद एक विवशता में जीता–सा दिखाई देता है। उस पर थोपी गई अनचाही बातें उसके अन्दर रिक्तता पैदा कर देती है। यांत्रिकीकरण के युग में महानगरीय जीवन का असर व्यक्ति की नौकरी के लिये भागदौड, आपाधापी सभी स्थितियो की जकड़न से बाल मनः स्थिति भी प्रभावित होती है।

आल्हाखण्ड → कहानी में भावात्मक रुप अंडमान से जीवनपर्यन्त जुड़े रहने वाले स्वतन्त्रता सेनानी के बलिदान का,तथा कालापानी की सजा में झेलने वाली यातनाओं का चित्रण किया गया हैं। वे अंडमान में आए सैलानियों को रौस द्वीप दिखाते समय उनकी उत्सुकता पर उन्हें उन यातनाओं और किस्सों के बारे में बताते हैं जो उनसे और अन्य शहीदों से सम्बन्धित थें। इसी क्रम वे बताते है कि जब वे माता पिता की मृत्यु पर अपने वतन जाते हैं। जब उनके मित्र उन्हें ये सलाह देते हैं, कि वे स्वतन्त्रता सेनानी के कागज को भर दे ताकि पेशन मिल सकें उस समय उन्हें लगा कि 'मै' अपने स्वतन्त्र देश मे नही , एक बाजार में पहुँच गया था... जहां हर चीज के दाम थे, तकलीफों के भी जहां हर चीज रुपया तय करता था.... चुनाव और सरकार बनाना भी। हमारी हर लडाई का एक मुकम्मिल मुददा यह होता है कि हर एक आदमी को आदमी जैसी इज्जत मिले, अगर वही न हुआ तो जैसे तब तैस अब। उन्हें अभी तक इस बात अफसोसा है कि वह दुनिया में एक पुश्त पीछे आये और वो कुर्वानियों नही दे सकें जो उनकी आगे वाली पीढ़ी ने दी थी।

प्रस्तुत कहानी मे इतिहास की उन परतों को खोला गया है जो भले ही इतिहास के पृष्ठों में अंकित न हो ,परन्तु कुछ ऐसी भी कुर्बानियां है । जो स्थितियों, परिस्थितियों से शोषित और शापित होने के बावूजद भी मानवीयता की ज्योति प्रज्जवलित करती है।

उल्कापात→ कहानी में माता–पिता के अलग हो जाने से आहत बाल मानसिकता का चित्रण किया गया है। पिता के जीवन मे पर स्त्री के आ जाने और इज्जत की खातिर मॉ का घर छोड़कर नौकरी करने की बात का आभास बच्ची को उस समय होता है जब उसके पिता उसे धुमाने के बहाने अन्य स्त्री के धर ले जाते है। जब वह समझ जाती है रात्रि में होने वाली मॉ–बाप की बातों का अर्थ । पिता के पूछने पर कि क्या आंटी तुम्हे पसन्द हैं तुम लोग साथ रहोगी तब वह डरते–डरते कह पाती है,कि वह दादा–दादी के साथ ही रहेगी । मॉ के चले जाने केबाद पढाई के साथ –साथ उसकी घर की जिम्मेदारियो भी बढ जाती है। दादी के रसोई के काम इत्यादि की जिम्मेदारियों भी बढ़ जाती हैं। दादी के रसोई के काम इत्यादि में उसे हाथ बटाना पड़ता है। और जबतब उनकी झिड़कियॉ भी सुननी पडती है। दादा–दादी की हिदायते बढ़ जाती है कि अपना काम स्वयं करना सीखों। रिर्जल्ट निकलने पर छोटी बहन फेल हो जाती हैं। वह फेल होते–होते बचती हैं। रिपोर्ट देखकर दादी दिन भर बड़ बड़ाती है उसकी छोटी बहन खाना खाये बगैर सो जाती है। रात्रि में सोते समय उसे बगल में लेटी बहन की सिसकियॉ सुनाई देती हैं । वह कहती हैं ''गन्तो.... रो मत, दादा–दादी सास–ससुर के रुतबे के लिये परेशान हैं। पापा अपना नया घर बसाने से चच्कर में मारे मार फिरते है। इन्हीं की तरह मॉ भी इज्जत के लिये लड़नें लगी हैं। कम से कम उन्हें तो 'इज्जत से नही',हमसे मतलब होता। पर तू क्यों रोती हैं... मैं तो हूॅ। हम दो हैं अभी....''[(55)] ।वह गन्तो की करवट अपनी तरफ ले लेती हैं। और महसूस करती हैकि जैसे वह दोनों बन्द कमरे से खुले असमान में आ गयी हों।

प्रस्तुत कहानी में पारिवारिक जीवन मे सम्बन्धों में आए बदलाव और उसके कारण मानसिकता में आए सूक्ष्म अन्तर को कथाकार ने रेखाकित किया है साथ ही बाल मानस पर पहॅुची ठेंस को अत्यन्त सूक्ष्मतः से चित्रित किया गया हैं। बालिका यह समझ जाती हैं। कि आंटी के साथ रहने से अच्छा हैं कि दादा दादी के साथ रहना। वह स्थितियों को समझकर ,उससे समझौता करती है,और संघर्ष की शक्ति उसमें आ जाती है।

खाक इतिहास→ 'खाक इतिहास' कहानी में चैकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राहा में अर्न्तराष्ट्रीय कम्यूनिज़म की अमानवीय क्रूरता का शिकार मारिया का परिवार जिसमें उसका भाई ,भाई की मृत्यु पर शोक मे मर जाने वाले मॉ–बाप तथा पति भी शामिल

है,की अर्न्तव्यथा का चित्रण हैं। मरिया का पति लुडबिख ,जो प्राहा का प्रोफेसर दर्शन के क्षेत्र में कुछ बड़ा काम करने की चाह में पुस्तक लिखता हैं परन्तु उसे समाज विरोधी षडयन्त्रकारी समझ यातनाएँ दी जाती हैं।नौकरी से निकालने के साथ–साथ उसके द्वारा लिखे गये पृष्ठों को घर की तलाशी लेने वाली पुलिस द्वारा रौंद दिया जाता हैं दुखी लुडबिख ऑस्ट्रिया निकल जाने के उददेश्य से हंगरी जाता हैं। मरिया पर कडी नजर रखी जाती हैं। हंगरी से एक दिन मारिया को लुडबिख की मृत्यु का समाचार मिलता हैं। संघर्षो को झेलने के बावजूद मारिया मानवीयता से ओत प्रोत है। और अन्धी औरतों को पढ़ाती है। ''समय दरियाई लहरों की तरह और भी चमकती हुई मेरे सामने खड़ी थी। इतिहास ,जो उसे झार–झार करने आया था,जैसे स्वयं खाक हो गया था और हवा अब भी थी....प्रेम से ओत–प्रोत कोमल, मानवीय.....[56]

प्रस्तुत कहानी में यातना और संधर्षो से परे व्यक्ति की मानवीय संवेदना की ओर इशारा किया गया है। बल्लभ सिद्धार्थ जी ने कहानी पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि 'तुम्हारी कहानी 'खाक इतिहास' सचमुच तुम्हारे लेखन के नये फेज को रेखांकित करती है।''[57]

फांस→ कहानी में एक गॉव की महिला का चित्रण हैं, जिसके घर में दो युवक चोरी करने के उददेश्य से घुसते हैं। वे पता लगा लेते है कि उसका पति हॉट गया हुआ है। एक उसे बातों में उलझाने की कोशिश करता हैं तथा दूसरा हाथ साफ करने के लिये कोठरी में घूसता है। बातो की लपेट में अचानक युवक यह कह बैठता है कि वह वही का रहने वाला है,जहां उसका मायका है। सीधी साधी और भावुकता में बह जाती है अरे.. .. तब तौ तुम साचऊं के भैया लगत । पहले बता देते, अब देखो हम आयं तुमाई जिज्जी और तुम भुज्जी–भुज्जी लगांए। पल्टू देखौ बे को आंय बैठे तुमाये मम्मां.....[58] वह उनसे कहती है कि वह उन दोनों के लिये थाली परोस दे रही हैं वह उन्हें बगैर खाये पिये नहीं जाने देगी। ऐसे एमोशन के आगे दोनो बह जाते हैं। और बगैर चोरी किये उसके लडके के हाथ मे पॉच रुपये पकड़ा कर चले जाते हैं।

बुन्देली परिवेश मे चित्रित की गयी इस धटना प्रसंग के माध्यम से लेखक दर्शाया है कि आज भी ग्रामीण क्षेत्र में ऐसी सादगी और निश्छलता बरकरार है,जो हृदय को पिघलाकर रख देती हैं। चोर युवक सोचते है कि वे उसे रसोई में बन्द कर उसके चिल्लाने के पहले चोरी करके भाग जाएगें। परन्तु महिला की निश्छलता पूर्ण बातों के आगे पानी पानी हो जाते है। और बगैर चोरी किए चले जाते हैं इतना ही नहीं अपनी जेब से पॉच रुपये निकाल उसके बच्चे को पकड़ा देते है।

मुझे घर ले चलो— 'मुझे घर ले चलो' कहानी में निम्नवर्ग की समस्याओं को उकेरा गया है। कहानी का नायक जो जीविका की तलाश में गॉव से शहर आता हैं। और बम्बई में लिफ्ट मैन की कच्ची नौकरी पर रखा जाता हैं। उसकी पत्नी कोठियों में काम करती है। कम्पनी में मजदूर यूनियन हड़ताल कर देती हैं। गनेसी के न चाहने पर भी यूनियन का सीक्रेटरी अपने दो साथियों के साथ उसे बाहर ले आता है। बाहर यूनियन एकता जिन्दाबाद के नारे लगते हैं दूसरे दिन जिन लोगो की कच्ची नौकरी होती हैं उन्हें लिफाफे पकड़ा दिये जाते हैं। जिनमें हिसाब,पगार और सूचना होती है, कि कल से कम्पनी आपकी सेवाओं का उपयोग नही कर सकेगी । यह बात गनेसी अपनी पत्नी श्यामली से इसिलये छिपाये रहता है कि शायद अगले दिन मालिक मिल जाए या आन्दोलन का कुछ हो जाए। परन्तु कम्पनी से हटाये गये कर्मचारियों में गनेसी का नाम भी होता है। श्यामली उससे कहती है कि वह बहकावे में क्यों आ जाता है । वह दूसरी कम्पनियों में होने वाली हड़ताल में मजदूरों की हालत के बारे में श्यामली को बताता है, एक डर जैसा उसकी ऑखों में उतर आता है। वह गनेसी के लिये सुबह कोठियों मे दूघ की बोतल भेजन का कम ढूढ लेती है। एक दिन दूध की बोतलें पहुॅचाते वक्त वह गश्त खाकर गिर जाता है। श्यामली उसे अस्पताल पहुॅचाती है। गनेसी को अस्पताल में रहना पड़ता है ,उसे रुपये खर्च व बेटी की शादी इत्यादि की चिन्ता सताती है। वह अस्पताल में कम्पनी खुलने का स्वप्न देखता है। वह श्यामली से घर ले जाने की जिद करते हुए कहता है–"अगर तुम नहीं लायी तो मैं इन्हीं कपडों में जाऊॅगा...... यहां बहुत ठंड है। मुझे नौकरी पर जाना है। पहले तुम्हारा उधार चुकाऊंगा,फिर रत्ना की शादी के लिये जोडूगा ....तुम्हें बहुत मेहनत पड़ती है......क्यों न? नींद में गहराने पर वह देखता है कि कम्पनी खुल गई है लोगो के चेहरे उसके परिवार वालो के चेहरे ख़ुशी से चमक रहे हैं। सुबह मोहन श्यामली को उसके सीरियस होने की खबर देता है। अस्पताल पहुॅचते ही श्यामली देखती है कि गनेसी सफेद चादर ओढ़े पड़ा है उसे लगा जैसे वह कहा रहा हो कि मेरे कपड़े.....अगर तुम नहीलायी तो मै इन्ही कपड़ों में चला जाऊगा....

प्रस्तुत कहानी में आर्थिक विवंचना से ग्रसित तथा व्यवस्था से पीड़ित निम्नवर्ग की समस्याओं का चित्रण किया गया हैं। आज की भ्रष्ट व्यवस्था में रहने के लिये न चाहते हुए भी उसमें उलझने के लिये ,आज का व्यक्ति मजबूर है पात्र की इसी विवशता, हताशा, निराशा को कहानी मे चित्रित किया गया है, वह अर्थ के कारण मजबूर दिखाई देता हैं, और अन्ततः मृत्यु को प्राप्त होता हैं।

वरणाजंलि— संतति–विछोह की यह करुण कथा पिता के मनोदशा को चित्रित करती है। पिता पुत्र को बड़ा करने के लिये अपने बनाये साचों में फिट करता हुआ उसे महानगर में

लें आता हैं और जबरर्दस्ती वे गुण पिरोना चाहता है, जो आधुनिक युग में व्यक्तित्व की पूर्णता माने जाते हैं। पिता का यह आरोपण नये व्यक्तित्व की निर्मिति कर देता है। इसी प्रयास मे एक दिन तैराकी करते समय पुत्र की मृत्यु हो जाती है। स्वयंको पुत्र का बाधिक मनाने वाले पिता अपरोध बोध से घिरा दुख के गहरे समुद्र मे गोता लगाता है संवदेनाएँ गहराने लगती है।पुत्र की झलक उसे प्रकृति के फैले वितानों में दिखाई देने लगती है, दुख की चरमावस्था उसकी अन्तर आत्मा में नये ईश्वर के स्थापन का भाव जगाती है, और संवदेनाएँ प्रकृति और जीवन मे फैले दुखो मे प्रवाहित हो अपने जीवन का पूर्ण अर्थ पा लेने को मचलती है –" मुझे सम्पूर्ण प्रकृति में तुम्हारे अस्तित्व की अनुभूति हो, सब बच्चों में तुम्हारी मुस्कान की प्राप्ति। सब जीवो मे तुम्हारी आकृति देखकर मैं उन्हें करुणा दूं।जीवन शेष...अपूर्णता की वेदना से व्याकुल रहे, साथ ही तुम्हारी स्मृति में इतना स्थिर भी कि तुच्छता ऊपर से बह जाये, जैसे पहाड़ के ऊपर धुंध। जहां तुम नहीं हो ,वहां अब प्राप्ति कौन सी होगी... मै तो सविनय कालको समर्पित करता चलूँ। मेरी अपनी शरीर यात्रा अपरिहार्थ हैं किन्तु यदि प्रत्येक श्वास में तुम्हारे संपर्क का भास मिलें तो वह भी आर्थ पूर्ण हो जाये ।[59] और पिता ब्रहांण में चल रहे स्वयं भू के विराट यज्ञ में हविषों रुप में अपने जीवन के अंश प्रति अंश को स्वाहा करने के लिये तत्पर होता हैं ।

जीवन की आध्यात्मिक दर्शनावाली यह कहानी भाव और भाषा की दृष्टि से खरी उतरती है और हिन्दी साहित्य में पुत्र विछोह का एक अनूठा उदाहरण पेश करती है। कहानी की अर्थ वत्ता पर प्रकाश डालते हुए शैलेश मटियानी जी ने लिखा है कि 'वरणाजंलि' वज्रपात को सिर्फ झेलने नही , बल्कि उसे स्वयं के भीतर जगह देने की रचना है। सवदेना कीपरिधि के बड़े होने से वज्र कही भीतर ही समा गया है और अगर हम इस कहानी में कमशः सघन होते जाते है सन्नाटे को तोड़कर देखना चाहें, तो वहॉ वज्र की सी मर्मान्तक कठोर आवाज फूटेगी जरुर।[60]

एक बूँद उलझी→ 'एक बूँद उलझी' कहानी में आधुनिकता व पैसों की चमक धमक से आई परिस्थितियों से टूटे व्यक्ति की टूटन का चित्रण किया गया हैं। जो भोपाल में छः सौ रुपये महावारी पाने वाला इंस्पेक्टर हैं परन्तु ऊपरी कमाई से वैभव ऐश्वर्य की जिन्दगी जीता है। अपने कस्बे के घर में भी वह एक एयरकंडीशनर कमरा अपने लिये बनवाने के लिये पैसा भेजता हैं ताकि जब कभी भी उसकी पत्नी और बच्चे वहां जाए तो उन्हें कोई कमी महसूस न हो । वह चाहता है कि उसकी पत्नी मेनका फॉरवर्ड औरत बने,उसके मित्रों से बात करे शाम को मेकअप को तामझाम में रहें और कभी–कभी शराब के एक दो पैग भी लगाए। कस्बे में अपने पर वह अपने मित्र से अपनी रॉयल स्टाइल के

बारे में बात करता है कि जिन्दगी में फर्क पैसों से ही पड़ता है। वह पत्नी की हर फरमाइशें पूरी करता पत्नी और वो दोनों सामान पर सामान खरीदते जाते, परन्तु दोनों के बीच इंच दर इंच दूरी बढ़ती चली जाती है। अचानक एक धमाका होता है, जिससे उसकी जिन्दगी ही बदल जाती है। उसे मेनका की आंखों में शिवहरे तिरता नजर आता हैं। जब उसका शक सही साबित होता है तब वह बाहर जाने के बहाने से घर से निकलता है ,और शाम को लौटकर दोनो को घेर बन्दूक निकाल लेता हैं परन्तु गोली चलने से बच जाती है सुबह उसने देखता है कि पत्नी बच्चों सहित घर छोडकर चली गई । उसने खबर पर खबर भेजता है मांफी भी मॉगता है परन्तु वह नही आती हैं वह पत्नी को लेने जाने की बात सोचता है मगर बीमार पड जाता हैं पिताजी उसे कस्बे में ले आते है और उसकी पत्नी को उसकी बीमारी की खबर भेजते है; परन्तु वो फिर भी नही आती है ,उसे इस बात का पता चल जाता है कि मेनका उससे तलाक लेना चाह रही थी, मगर उसकी बीमारी की वजह से रुक गई वह अर्द्ध–विक्षिप्त सा हो जाता हैं। कीमती सामान मेनका अपने साथ ले जाती हैं। वह समानों में पड़ी बच्चों और मेनका की तस्वीर तथा बच्चे की हॉकी गेंद अपने पास रख लेता हैं वह हमेशा असुरक्षित महसूस करता ,मेनका शिवहरे ,दफ्तर ,नौकरी के समय जिन लोगों से वह पैसा ऐठता था, उन सभी की छायाओं से वह भयभीत रहता हैं।वह अपने मित्र से कहता कि तुम सीधे–साधे ही रहना ऊँची कूदों से कुछ नहीं मिलता एक मुकाम पर पहुँचकर कैसी निकल आती हैं।

खाट पकडने से पहले उसे नीद आनी बन्द हो जाती है। वह रात–रात भर प्रेत की तरह ऑगन मे कभी सब्जी काटता कभी मसाला टूटता छुछवाता घुमता है। भोपाल गया ताकि मरने तक उस घर से जुड़ा रहे सके इन्तजार करता रहा शायद किसी दिन पत्नी और बच्चे वापस आ जाए इसी इन्तजार में प्राण त्याग देता है, पश्चाताप का एक ऑसू की बूँद उसकी ऑखों की ओट में उलझी दिखाई देती है।

इस कहानी में एक मात्र पैसे को ही जीवन की सार्थकता मानने वाले व्यक्ति का चित्रण किया गया है,जिसका अन्त बड़ा ही कारुणिक होता हैं ।गलत तरीके से ऐठे गये पैसे से वह ऐशों आराम की जिन्दगी बिताना चाहता हैं। परन्तु पैसे का गलत इस्तेमाल ही वह कारण बनता हैं जिससे उसकी जिन्दगी फटेहाल हो जाती है। उसे बीवी –बच्चों से अलग होना पड़ता है जो उसे मर्मान्तक पीड़ा देता हैं और उसका अन्त में अत्यन्त कारुणिक हश्र होता है । कथाकार ने घटना प्रसंगो के माध्यम से नायक की प्रतिकियाओं और हृदयगत पीड़ा को चित्रित किया हैं।

'अर्द्धवृत'→ 'अर्द्धवृत' में पारिवारिक कहानी का चित्रण है। कहानी की नायिका पति के जीवन में पर स्त्री के आने पर अत्यन्त बैचेन उठाती है और अपनी क्रोधग्नि को बुझाने के लिये समय –समय पर उसे अपमानित करने के लिये तरह तरह के मानसूबे बॉधती है। उसके पति अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूर्णता से निभाते है, वे बेटियों की शादी अच्छे घरों में करते है तथा अपने बेटे भुवन को भी उचित व्यापार में लगवा देते है। अपनी प्रेंमिका रति का मकान भी उसी बस्ती में बनवा देते हैं। रति भी एक पुत्र को जन्म देती है। रति अत्यन्त बीमारी हालत में उन्हें बुलाती हैं। पति द्वारा सन्देश भेजने पर वे नहीं आती तो रति इस या उस के मार्फत उन्हें खबर भेजती रहती है, कि बस वो पॉच मिनट के लिये आ जाए। रति के बुलाने पर प्रतिस्पर्धा में उसे अपमानित करने के मनसूबे बॉधते हुए जब वे अस्पताल में पहुँचती हैं,तो उन्हें वहॉ के वातावरण में शान्ति और स्तब्ध नजर आती है। वह यह सोचते हुए कमरे में प्रवेश करती है कि रति उनसे अपने किए की मॉफी मागेंगी या सात्विक भाव से कहेगी कि बहुत दिनों से आपके दर्शनों की इच्छा थी अपने चरणों की धूल मुझे दे दीजिए। उन्हें देखकर रति की थकी ऑखों में चमक उभर आती हैं वह उन्हें कागजात थमाती हुई कहती है कि मकान और जमा रुपये भुवन के नाम लिख दिए है, ये उसी के थे। रोहित मामा के यहां रह लेगा जब वे अस्पताल से निकलती है जब उनकी सारी कड़ुवाहट न जाने कहॉ घुल जाती है ''यह कैसी स्निगधता है, जिसने उन्हें लपेट दिया है। छोटा बड़ा व्याहता –सौता मित्र –शत्रु ... ..वे सवाल पता नही कहां डूब गयें । भीतर केवल शांति का सागर है........ आलोकित। उन्हें लगता है कि रति की बच्ची पारी खेलकर उन्हें छोटा किए जा रही है। उनकी पारी में अभी रोहित है उनका हृदय रोशनी से भर जाता है।

पारिवारिक परिवेश में लिखी गयी कहानी का यह विरला चरित्र मानवीय स्निगधता का नया आयाम खेलता है। कथाकार ने सुखी और आनन्दित जीवन की कल्पना करने वाली स्त्री के दाम्पत्य जींवन में पर स्त्री के प्रवेश पर होने वाली ब्यहाता की मनोस्थितियों का अत्यन्त सूक्ष्मतः से अंकन किया है।

पगला बाबा'→ 'पगला बाबा ' मानवीयता का एक नवीन सूत्र प्रदान करने वाली कहानी है। कहानी का नायक एक ऐसा निस्संम योगी है, जो अनाथ होने के कारण गॉव के दादा भैया के साथ इस उददेश्य से काशी आता है कि मृत्यु के बाद उसे स्वर्ग की प्राप्ति होगी । परन्तु जल्दी ही उसे ये विश्वास निरर्थक प्रतीत होने लगता है। बाबा विश्वनाथ की नगरी काशी में एक लावारिस पड़ी बुढ़िया की लाश का दाह संस्कार करते समय उसके जीवन को एक अर्थ मिल जाता है। उस समय उस शव में उसे अपनी मॉ का असहस होता है, वह डोम कर्म सहजता से स्वीकार कर लेता है–'' उस शाम जैसे उन्हें

अपना धर्म मिल गया था जिसका कोई नहीं,उसका सब कोई। संसार यात्रा का छोटा सा भाग जहां व्यक्ति अशक्त हो जाता है.... मात्र निस्पंद देह.... वहां उसे आगे की तरफ ढेल देना ,पंचभूत पंचतत्वों को सौप देना। वे पगला बाबा हो गये । कहां के थे क्या नाम था, कौन जाति.... धर्म...सब 'पगला' में डूब गया।[61]

भिक्षा –वृत्ति से जो मिलता उस पैसों सेवह लावारिस लाशों के लिये कफनखरीदते। डोम कर्म अपनाने वाले पगला बाबा को सभी आदर की दृष्टि से देखते । ज्वर से पीड़ित होने पर जब वे छिददू से अपने मुँह गंगा जल डालने की बात कहते तब छिददू उनसे भीतर चलने की जिद करता है। वे कहते है– "अरे छिदुआ.... हम ढहरे बनारस के राजा। तोहरी ई कोठरी मे समइबे का रे? उ देख हमारा रथ खडा हो," बाबा ने अपना कमजोर हाथ बाहर ढिली ढिलियॉ की तरफ उठाया, "ए ही पर गंगा मैया के पास ले जा । हम निकल जाईतई रथ के रग्घू के टाल के नीचे जौन छुटका चबूतरा हौन.... उहैं छोड दिहे.... उन्हें हमारे महतारी ई हमरे हाथ मे थमौले रहली......"[62]

परन्तु मिनसारे जब ऑख खुंली तब वह फिर दूल्हे वाली मोर सिर पर रखकर अपनी ढिलिया उसी ओर ठिनगाते ले जाते है जिस ओर रात मे कुत्ते के रोने की आवाज आ रही थी।

पगला बाबा कहानी मानवीय सरसराहट से भरी मीठी चुमन हृदय में पैदा करती है।जहां आधुनिक युग में रिस्तों के अर्थ बेमानी हो गये है वहां नवीन रिश्तों की पृष्ठ भूमि तैयार करती सी प्रतीत होती ये कहानी। अनाथ होते हुए भी अजनबी शवों के साथ आत्मीयता का सम्बन्ध जोड़ने पगला बाबा निस्वार्थ लोकसेवा का भाव जागृत करते हैं। मूल्यों के प्रति मन्द पड़ती लोगों की आस्था को नया मोड़ देते है।

प्रतिमोह→ 'प्रतिमोह' कहानी बम्बई के झोपड़ पट्टी में रहने वालों के जीवन की यथास्थिति का चित्रण करती है। जीविका के लिये बाहर से आने वाले गरीब कबाड़ी यहॉ झोपड़ पट्टियों में निवास करते अपना जीवन यापन करते है। परन्तु उनका ये आश्रय भी धनिकों की स्वार्थ परिता के कारण छिन्न–भिन्न कर दिया जाता है। समन्दर के किनारे बने झोपड़पट्टे वहॉ पार्क बनने के वास्तें निर्ममता से तोड़ दिए जाते है। समान बहार फेक दिया जाता है या इसलिये रख लिया जाता है कि सामन पाते कही वे दोबारा न झोपड़ें बना ले। कहानी का नायक जो सुबह अपनी खोली को चाय की दुकान बना लेता था और शाम को सेठ के यहां नौकर का काम करता था। जब वह शाम को खोली में लौटता है तब उसे अपनी खोली टूटी पड़ी मिलती है और उसकी चाय की दुकान का सामान जोड़ें गये रुपये गायब हो जाते है। तब वह इस्पेक्टर के पास सामान वापस पा लेने के लिये बार बार चक्कर लगाता है, परन्तु सामान वापस न पाने पर धनिकों की

स्वार्थपरिता पर खींजता है। कैसे ये लोग बड़ी–बड़ी इमारतें बनाते समय टाइम पर काम होने के लिये उन्हें इमारत के पास झोपड़े बनाने देते है। परन्तु इमारत के तैयार होते ही झोपड़ों को निदर्यता से तुड़वा देते है। । वह सेठ से पगार बढाने केलिये कहता है कि तब सेठ उसे काम से निकाल देते है। वह सोचता है कि कैसी है। यह आदमी का जात।कौआ भी अपनी जात के लिये तड़फता मरता पर ये साला आदमी–आदमी को देखते ही गुर्राने लगेगा कुत्ता का का माफक और नही तो आंखों से ही । कोई ठीक से रहने लगा ,खाने पीने वाला हो गया यहीच नही देखेने सकता । रहने को एक झोपडी कही डाला कि जब उसका तबियत आया ताश के घर का माफक फू से उड़ा देने का । "(63)

एक दस बरस का छोकरा घर से भाग कर आया हुआ अपना वौक्स उसके झोपड़ें में रखने आता है, परन्तु खीज के कारण ये उसको डाटता है– बक्सा क्या तुम्हारा रुमाल भी नही रखने का । हमारा कुछ भीच कब्भी कोई रखा? आदमी की औलाद ने हमकू क्या दिया तोकोई मतलब नही हमकॅू भी आदमी नाम का चिड़िया से "।(64) बाद में वो दया करके उसका बक्सा रख लेता है परन्तु उसे बम्बई से घर लौट जाने के लिये कहता है आठ दिन तक भटकने के बाद जब वो छोकरा उदास हो अपना बक्सा लेने आता है तब उसका सूखा मुख और हालत देखकर इसमें मानवीयता जाग उठती है और वह उसे अपनी तंग झोपडी में आश्रय दे देता है भर पेट खाना खिलाते हुए कहता है कि अब यही रहने का इस झोपड़े में अपुन दो आ जाएगा।

इस कहानी मे झोपड़ पट्टी में रहने वालों पात्रों के जीवन तथा परिस्थितियों से उत्पन्न उनकी खीज, हताशा, निराशा, अमानवीयता के बीच ही जागृत मानव हृदय में उत्पन्न प्रेम, मोह का चित्रण किया गया हैं।

मायकल लोबो ➡ 'मायकल लोबो' एक ऐसे शराबी की कहानी है , जो पेशे से वकील है। नशे में धुत घर तक लाने वाले पति के मित्र की नजरों का सामना करते करते पति को रोज सीढियों से उठाते– उठाते उसकी पत्नी हताश हो उसके सुधरने की सभी आशाऍ छोड़ देती है। मायकल स्वयं भी अपने सुधारने की सभी आशएं छोड ऐसे ही जीता हैं कि अचानक एक रात नशे की हालत में सीढ़ियों से उठाते वक्त उसकी बेटी द्वारा कहे शब्द कि पापा, मैं कब तक आपको इस तरह उठाती रहूंगी? (65) उसकी आत्मा को झकरोते ही नहीं वरन उसके अन्तः करण को नवीन रोशनी से आलौकित कर देते है कि वे शब्द .... स्वर में कैसी वेदना .....जहां तकलीफ का बांध चटकने को आ जाता हैं रुथ बोल चुकी पर वे शब्द फिर भी बोलते रहे।उनके पीछे बड़ी ही रहस्यमय गूंज थी.... जैसे किसी गिरजे के घंटों की आवाज संगीत में छनती हुई चली आ रही हो। अनगूंज सिर्फ आवाज

की ही नही ,अर्थ की भी.....अर्थ जो रोशनी बन आस पास फैल रहा था, फैलकर बज रहा था। आवाज, अर्थ और रोशनी के फर्क खत्म हो गये थे।[66]

मायकल लोबो अन्धकार में बिताये गये सात सालों पर पश्चाताप करता है ,क्योंकि इन सालों में वह अपनी तंदुस्ती अक्ल,शिक्षा, बोलने की कला ,पिता की उम्दा विरसत सब कुछ गवॉ बैठता है। एक दिन उसके दफ्तर में आयी एक स्त्री उसे अपने शराबी पति व्यथा सुनाते हुए उसके द्वारा मारे गये पीठ पर चोटों के निशान दिखाती है। मायकल खीजकर उसे मुकदमा दायर करने को कहता है परन्तु उसकी पीठ पर उछले घाव सवाल पर सवाल करते हुए उसकी ऑखों के सामने तैरते रहते है अस्फुट घाव स्वरों में कुछ ऐसे बोलते जैसे उसकी बेटी के शब्द । लोबो चर्च के एक कमरे में हफ्ते में बार शराबियों की समस्याओं को सुनता और उन्हें सुलझाकर शराबियों को सही मार्ग पर लाने का प्रयास करता ।

मायकल लोबो मिश्र की उत्कृष्ट कहानियों में से एक है। हृदय परिवर्तन की इस कहानी में नायक के स्वभाव और आचरण के परिवर्तन के कई चरण देखने को मिलते है यह परिवर्तन उसे मानवीयता और उज्जवलता के शीर्ष पर पहुॅचा देता हैं।

सुनंदो की खोली →'सुनंदों की खोली' नामक कहानी में कथाकार ने बम्बई की खोलियो में जीवन यापन करने वाले लोगों की यथास्थिति का बरीकियत से चित्रण किया है। अपने इस प्रयास मे उन्होंने खोली मे बसे छः सदस्यों के परिवार की मनोदशा को सूक्ष्मतः से दर्शाया हैं । बिन ब्याहे चार भाई जो चालीसा पार कर चुके और तीस वर्षीय बहन अलावा एक वृद्धा मॉ भी इस परिवार की सम्पूर्ण जिम्मेदारियों बोझ बड़ा भाई अपने कन्धे पर वाहन करता है। बड़ी होती सुन्दर बहन के ब्याह की चिन्ता भी उसे सताती है। उसका ब्याह न होने पर अन्य भाई भी ब्याह की बात नही सोचते । यद्यपि छोटा भाई चित्रकार है। परन्तु अभाव के कारण अपने कला को प्रदर्शित नही कर पाता है। सुनंदो दार्शनिको की तरह सोचता है तीसरा भाई पूजा पाठ में ही व्यस्त रहता है।छोटी बहन घर में पाली गयी चिडियां से अपना मन बहलाती रहती है ।सभी की दिनचर्या यही होती हैं प्रतिदिन। शुरु शुरु में किरण भी ब्याह के सपने बुनती है, पर फिर सब कुछ सहज हो जाता है ।बड़े जीवन में कुछ बदलाव और भाइयों के निकम्मेपन को दूर करना चाहते है इस वह खोंली और पिता के दफ्तर वाली जमीन बेचना चाहते हैं और नये तरीके से जीवन व्यतीत करना चाहते है। जब वह यह बात सुनदों को सुनाते है तो वह दार्शिनिक लहजे मे कहता है कि अन्त तो हर जगह एक जैसा ही होता है क्या फर्क पड़ेगा खोली और दफ्तर वाली जमीन बेचने से । बड़े कहते है कि ''व्यक्ति के लिये जरुर सब खत्म हो जाता है लेकिन जो वह छोड़ जाता है , वह दूसरे के लिये रहता है। जैसे पिता के

बाद यह खोली रह गयी हमारे लिये । बंबई के बाहर हम लोग ज्यादा अच्छी तरह से सकेगे। हमारा अच्छा विकास हो सकेगा । शादी ब्याह,बाल बच्चे......"। बड़े के अन्दर हताशा और भाइयों के निकम्मेपन पर आक्रोश जागृत होता रहता है वह एक दिन ऐलान कर देते है कि वे ब्याह करने की सोच रहे है।

घर में स्तब्धता छा जाती है रसोई की चौखट पर आती हुई मॉ का कंकाल और दयनीय हालत देखकर बड़े को उनमें भविष्य में किरण का प्रतिबिम्ब नजर आता है। अपने पर आश्रित भाइयों स्थिति का खयाल आते ही उनका आक्रोश स्नेह में बदल जाता है, जो पिता के जाने के कई सालो बाद उन्होंने महसूस किया था।

कथाकार ने इस कहानी में अभावग्रस्त तंग जगह में जीने के लिये विवश लोगो के जीवन की हताशा,निराशा कुंठा को चित्रित किया है कितने ही युवक युवतियों की जवानियां कुंठा ग्रस्त जीवन से ग्रसित पराश्रित हो घुट घुटकर यो ही नष्ट हो जाती है लेखक अनेक प्रसंगो द्वारा पात्रों के स्वभाव की अभिव्यक्ति दी है।

'आदेश'→'आदेश ' कार्यलय में कार्यरत एक बाबू की कहानी है जिसे हल्दवानी से इलाहाबाद जाने के लिये तबादले का आदेश मिलता है अफसर के सख्त होने पर भी वह आदेश स्थागित कराने की कोशिश में उनके पास जाता है, और बडे ही रहस्यमय तरीके से अपनी लाग लपेट की बातो से तबादला स्थागित करा लेता है। उसके इरादे को भॉपते हुए अफीसर एक साल के लिये उसका तबादला स्थागित कर देता है।

इस कहानी में तबादले से उत्पन्न नायक बैचेनी, स्थागित कराने के लिये की गई कोशिश विविध तरीकों, तथा परीक्षा में परीक्षकों से अधिक अंक दिलवाने के लिये अपनाये जाने वाले विविध तरीकों का चित्रण किया गया है।

गुरुजी → 'गुरुजी' नौकरी की तलाश में बम्बई आए युवकके संघर्ष की कहानी है। अस्थायी नौकरी की बैचेनी उसे कथानायक तक ले आती है । अपरिचित होने के बावजूद भी वह उनसें अपनी यथास्थिति के बारे में बताते हुए कहता है कि उसकी पत्नी और दो बच्चे गॉव में छोटे भाई की छोटी खेती पर ही आश्रित होकर रह रहे है, वह काम की तलाश में यहां आया है। वह उसकी नौकरी पक्की कराने का कुछ प्रयास करें कथानायक ईश्वर के प्रति उसकी आस्था और आत्मविश्वास पर व्यंग्य करता है और अपनी तरह के एक दफ्तर में काम करने वाले कर्मचारी कार्तिकेय से मिलने को कहता है मात्र औपचारिकता वश टागे गये युवक के पत्नी बच्चों की तस्वीर उनके सामने धूमती रहती। कार्तिकेय उसकी अर्जी अपने दफ्तर में खाली हिन्दी टाइपिस्ट की जगह लगा देते है। कथानायक उसके आशावान परिवार के बारे में सोचकर उसकी नौकरी के लिये बैचेन होता है,और कार्तिकेय के साथ–साथ उसके पास अपना काम करवाने आने वाले मित्र से

उसकी नौकरी को सिफारिश करता है। जब एक दिन युवक उसके पास आकर कार्तिकेय जी प्रशंसा करते हुए कहता हैकि वे बहुत अच्छे आदमी है। प्रस्तुत कहानी में बेरोजगार शिक्षित नवयुवकों की स्थितियों को दर्शाया गया है आशा निराशाओं के बीच झूलता उनका आत्म विश्वास–ईश्वर के प्रति आस्था, उनका संघर्ष,इधर–उधर भड़कता, अनेकों से सम्बन्ध स्थापित करना ये सभी इस कहानी के पहलू है।

'सिर्फ इतनी रोशनी' → सिर्फ इतनी रोशनी कहानी सौतले पिता की स्नेह जन्य भावनाओं को प्रदर्शित करती है, जो जीवन की कडुवाहटों से आए ठहराव के बाद वासठ वर्ष की उम्र में अपने से उम्र में बाईस वर्ष छोटी दस बरस की बच्ची की तलाक शुदा मॉ से ब्याह करता है । विवाह से पूर्व वे पूरी कोशिश करते है,कि बिखरा परिवार जुड़ जाए। वह लड़की के पूर्व पिता को जाकर समझाते है परन्तु सारी कोशिशें नाकाम होती है मॉ के हिचक का भॉपते हुए लड़की स्वयं अपने सौतेले बाप के पास जाती है ओर अपनी मा। (ब्रहमणी) और सौतेले पिता (मुसलमान) का रिश्ता तय करती है, और कहती है कि तुम सिर्फ मां न ही एक औरत भी हो । तुम्हें भी एक साथी चाहिए। वे अच्छे आदमी भी हैं ......[67] मॉ बेटी के कुदरत के बढ़ें रिश्तों की मुस्कराहटों के देखकर वे खुश होते है। विवाह के बन्धनों में दो बार बधकर भी वे स्नेह से वंचित रहें । रिश्तों के पर्याय मे उन्हें मिला था, पत्नियों की पैसों की हवस और झिड़कियॉ। दोनों से तलाक हो गया था। बेटी के कैंसर से पीड़ित होने पर वह हस्तपाल में उसकी सेवा सुश्रुषा करते है तथा जन्म देने वाले पिता के पास जाते है ताकि बच्ची को सुकून मिल सके उसके न आने पर वह रात रात भर जागकर उसकी देखभाल इस तरह करते है जैसे उसके लिये कुछ करने में उन्हें अवर्णनीय सुख मिल रहा हो वे सोचते है कि बाप होना भी कुदरत की कितनी बड़ी नियामत है। [68] बेटी की मृत्यु के बाद वे उसकी वस्तुओं से जुड़े रहते है, और पत्नी को बच्ची का सा स्नेह देते है।

प्रस्तुत कहानी सौतेले बाप सम्बन्धी अवधारणाओं को गलत साबित करती हुई पाठक के लिये स्नेह और आतमीयता की नयी जमीन तैयार करती है। घटना–प्रसंगों के माध्यम से पात्रों की जो स्वभावगत विशेषताएँ सामने आती है, उसमें धर्म,जातिगत सीमा रेखाएँ धुधॅली दिखाई देती है।

अर्थ ओझल → 'अर्थ ओझल' एक छोटे से कस्बे के प्राध्यापक की कहानी है, जो अपनी सम्पूर्ण बौद्धिक क्षमता गरीब छात्र पर उड़ेल उनके लिये उन्नति के मार्ग खोलता है। अपने इस प्रयास में उसे समाज की निन्दा,उपेक्षा तथा अपनों का तिरस्कार भी सहन करना पड़ता है, परन्तु वह मौन और शान्त हो उपेक्षाओं को आत्मसात कर सहज हो

अपनी साधना में तल्लीन रहता हैं। मेधावी छात्रों से उनके अन्तरंग सम्बन्धों को लोग गलत नजर से देखते कुछ तो यहां तक कहते हैकि पंड़ित जी को औरतों में नही लड़कों में दिलचस्पी है लोगों के व्यंग्य ,मॉ की उनके प्रति उपेक्षा देखकर उनके बेटे के मन मे भी उनके प्रति नफरत हो जाती है परन्तु अपने पिता के व्यक्तित्व की ऊँचाई का पता उसे समय लगता है, जब पिता की मृत्यु के काफी अन्तराल बाद एक उनके द्वारा पढ़ाया गया अधेड़ प्रोफेसर उसे उसके पिता द्वारा किए गये छात्रों के सहयोग छात्रों से उनकी अन्तरंगता का कारण, छात्रों के उन्नति के रास्ते पर अग्रसर करने हेतु उनके अथक प्रयासों , और छात्रों की समस्या के समाधान हेतु उनकी तत्परता के बारे में बताता है तब पिता के प्रति उस की नफरत का रहस्य खुलता है, जो गॉठ उसके हृदय मे बचपन में बन जाती है वह आज खुलती है और सचमुच उस क्षण प्रोफेसर का चेहरा जो कुछ देर पहले तक पीड़ा में निस्तेज हो रहा था, वह आलोकमय हो आया।उस आलोक ने मेरे मन पर सालों से मैल की तरह चिपकी सारी घृणा एक पल में ही धो डाली।प्रोफेसर का चेरहा जैसे दर्पण था जिसमें मुझे दिखाई दे रहे थें पिताश्री। जो कितनों के लिये पतित, हेय ओर संदेहास्पद तो जरुर ही था... वह असल में यह था?[69]

उसे वह प्रोफेसर अपने बड़े भाई सदृश प्रतीत होता है वह उसे घर ले जाने के लिये रिक्शा लाने को दौड़ता है।

प्रस्तुत कहानी आधुनिक युग में एक मूल्यांत्मक आदर्श उपस्थित करती हुई उन शिक्षकों पर भी आक्षेप करती है जिन्होंने शिक्षा वृत्ति को व्यवसाय के रुप में अपनाया है।

आसमान कितना नीला ➡ 'आसमान कितना नीला' कहानी में आधुनिक युवती की उच्चाकांक्षाओं को चित्रित किया गया है। जिसके सामने गुणों से भरपूर गोलड मेडलिस्ट और अच्छी कम्पनी में अच्छे पद प्रतिष्ठित लड़के से विवाह (जिसे स्वयं वह चुनती है) करने की स्थिति और दूसरी तरफ ऑक्स फोर्ड विश्वविघालय से मिलने वाले बजीफे द्वारा रिसर्च का मौका है। उसका मन ऑक्सफोर्ड की तरफ खिंचता चला जाता है और पीछे छूटता चला जाता है घर और सुधीर से विवाह। उसे मॉ की गुनगुनाहट और पिता की खामोशी को देखकर लगता है कि सभी उसे पैरो में बेड़िया डालना चाहते है, सुधीर चाहता है, कि वह अपनी पढ़ाई आगे बढ़ाए पर उसके जाने की तारीख शादी के बाद आए। वह आत्मविश्वास से कह देती है कि शादी तो सभी की होती है,कैरियर सबको नही मिलता । कैरियर के आगे क्या हैं शादी? कितनी और चीजें छोड़ना पड़ सकती है कैरियर की खातिर। सुधीर इन दो सालों तक उसका इन्तजार करना चाहता है मगर वह समझाती है कि दो साल काफी लम्बा समय होता है इस बीच अगर तुम्हें कोई बेहतर मिले तो तुम उससे विवाह अवश्य कर सकते हो। सुधीर के मन उठने वाले

कोमल भाव झनझनाकर टूट जाते है । यह समय वह श्वेता के लौटने के समय तक उसकी यादों की मिठास में काटे या बेहतर ढूढ़ की छटपटाहट में । क्या इसका कोई अन्तिम बिन्दु होगा?

कहानी में लिजलिजी भावुकता से मुक्त युवती को अपने कैरियर के प्रति सचेत दिखाया गया है, व उसे अपनी सबलताओं ,क्षमताओं तथा निजता में उभारा गया है विवाह और कैरियर में वह कैरियर को पहले चुनती है।

राम सजीवन की मां→ 'राम सजीवन की मां' कहानी मे मिश्र जी ने कस्बे के क्षेत्र में दो पडोसियों के वैमनस्य को दर्शाकर यह चित्रित किया है, कि निरन्तर बढ़ती कटुता के मध्य मानव के सहज गुणों 'प्रगटीकरण हो जाता है और इन गुणों के प्रगटीकरण से कटुता की दीवारें ढ़ह जाती है। यही कारण है कि जब राम सजीवन की मां के जंटाशंकर के चबूतरे की तरफ बैठने के कारण चबूतरे पर एक दीवार खड़ी कर दी जाती है और यही से उन दोनों में वैमनस्य उत्पन्न हो जाता है वे दोनों एक दूसरे के लिये समस्यायें उत्पन्न करते है मगर जब राम सजीवन की बेटी का ब्याह होता है, तब वे भावनात्मक रौ में बहकर बरातियों को इत्र लगाते है और विदाई समय फूट–फूटकर रोते है। वे कुछ क्षण ....कैसी धुँध–सी कहीं से उठ बैठी और सबको लपेट में लिये चली गयी। कौन सा रहस्य... जिसने एकाएक उठकर सबको बांध लिया था।? जटाशंकर सोये थे या जाग रहे थें या बीच की अवस्था में थे....[70] बेटी की विदाई के बाद वे चबूतरे पर बैठे रहे उनकी नजरों में रामसजीवन की मां की तस्वीर धूमने लगती है जो चबूतरे पर उठने वाली दीवार के बाद ज्यादा दिनों तक नहीं जी सकी थी। उन्हें लगता है कि राम सजीवन की मां है– हमेशा थी हमेशा रहेगी।[2]

प्रस्तुत कहानी में दर्शाया गया है कि सामाजिक परिवर्तन के बावजूद भी प्रेम ,स्नेह, करुणा, बन्धुत्व भावना सोहार्द्र आदि मानवीय गुणों की अनुपतिस्थति ह्रदय में सम्भव नही है।

निष्कासित → कहानी में अपने ईमानदार ऑफीसर को घूस देने वाले अधीनस्थ कर्मचारी मोहन कुमार की परिणति का तथा ईमानदारी के दर्प में मोहन कुमार के परिवार को उजाड़ देने के पश्चाताप में धुलते अफसर रामेश्वर रॉय की मनः स्थिति का चित्रण है। रामेश्वर रॉय की ऑखों के सामने मोहन के वृद्ध पिता का अक्स घूमता रहता है जो बुढापें में अपने बेटे के परिवार का आर्थिक बोझ अपनी पेंशन से उठाने के लिये तत्पर होते है । साथ ही मोहन के बेटे और आठ साल की बेटी का मायूस चेहरा भी। उनकी पीड़ा गहराती है वे सोचते है कि सच्चाई ईमानदारी का कितना कम अंश है यहां जो

इधर उधर कोनां में पड़ा है वह भी पूरे परिवेश में मिलकर धूमिल हो जाता है इस गन्दे तन्त्र का अंग बने रहकर ही वे क्या इसके पनपने में योगदान नही करते रहे, उन्हें क्या हक है कि स्वयं को ईमानदार कहने का क्यो नही अब तक अलग हो गये वे ?

रामेश्वर रॉय की अन्दर पीड़ा की कई भाव लहरियां उठती है,उनका भार सहन करने मे वे अपने आपको असमर्थ पाते है। और अकेले में सोचते है कि मोहन कुमार को सजा न मिलती तो नयी पीढ़ी के साथ, तुम्हारे साथ धोखा होता । तुम यातना में से गुजरोगी हथेली पर दीया उगाये... जलोगी... बराबरी से जलेगे रामेश्वर रॉय , रामेश्वर रॉय जैसे.....[71]

प्रस्तुत कहानी में ईमानदारी की झोंक में एक परिवार की तबाही से पीड़ित अफीसर की मनः स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है।

कालखंड →कालखंड कहानी स्वतन्त्रता के पूर्वके परिवेश को लेकर बुनी गयी हैं। अपने चबूतरे पर औधडबदन पडे रहने वाले मुक्ति सिंह कस्बे में होंने वाली प्रभात फेरियों, मीटिंगों, जुलूसों व खबरों को तटस्थ भावसे देखते व सुनते रहते । क्योंकि सुराजियों के लिये उनके मन मे बहुत आदर भाव नहीं थे।या योकहिए कि उन्हें ये भाता नहीं था कि लोग पिटकर चले आए या लाठी खाते–खाते एक जगह ढ़ेर हो जाएं उपवास करे या मार खाते–खाते मर जाएं और एक हाथ भी न चलाएं। कट्टर राजपूत मुक्तिसिंह ने जब से पड़ोस में स्वतन्त्रता प्रर्दशन करने वाले नैजवानो पर होन वाले अत्याचार को देखते है, तब उनके मन में अर्न्तद्वन्द्व छिड़ जाता है। कोउ नृप होय! हमें कहानि सोच वाले मुक्ति सिंह देश और समाज जैसे प्रश्नों से घिर जाते है। उन्हें हर जगह धुन्ध के बादल छाए दिखाई देते है तभी उन्हें लगता है कि बादल एक मानव आकृति में सिमट आया– तिरछा हुआ शरीर पोर–पोर उठने ,सीधा खड़ें होने की कोशिश करता हुआ । तभी बादल में जुगुनू सी चमक गयी दो आंखें....और भक्क से उछल आया वह ....गोरा रंग पीलेपन की तरफ झुका हुआ छरहरा शरीर, लहूलुहान।चेहरा संकल्प में कसा ,मार की पीड़ा से और भी खिचता...बंदे मातरम्।....[72] न जाने किस रौ में बहते चले जा रहे थे। मुक्तिसिंह हाथ में डंडा लिये उघारे बदन कैसे खुलते हए जीवन को बूटो तले कुचलकर रख दिया जालिमों ने ![73] जब उन्हें होश आया तो खुद को उन्होने कचहरी के कंपाउंड में खड़ा पाया। जज वालें मंच पर डंडा भॉजते हुए बन्दे मातरम् के नारे लगाने लगे। वे चहक की उर्मियों मे उठ गिर रहे थे। दबोचे गये हर धक्के और ठोकर पर उनका शरीर पुलकित था बरसात में नहाये, थिरकते पत्ते की तरह। प्रस्तुत कहानी में कालखंड की रौ में बहते एक ऐसे पात्र का चित्रण है। जिनका जीवन नकारा था, अस्तित्व विहीन वही

नौजवान पर होने वाले जुल्म को देखकर अर्न्तद्वन्द्व में घिर जाते है और स्वतन्त्रता की ज्वाला में कूद पड़ते है।

धुंधलका→ कहानी की पात्रा रुक्मिणीं जो बेटे की मृत्यु केबाद संसारिक कार्यों से निर्लिप्त ईश्वर की पूजा पाठ में मग्न रहती , अपने बेटे का मोतिया बिन्दु दिखाने आने वाले अपने भाई भाभी को इसलिये मना कर देती है,ताकि उनकी पूजा–पाठ में कोई विघ्न न पड़ें । यू ही किसी मेहमान का घर आना उन्हें खटतकता था। क्योंकि इससे उनकी दिनचर्या में बाधा पड़ती थी। वैसे भी वह बाहर की दुनिया से दूर –दूर रहना चाहती थी। परन्तु भाई– भाभी और आलोक के आ टपकने पर वे उन्हें एक अलग कमरा दे देती है अलोक का इधर उधर धूमना, उचकना उन्हें अच्छा नही लगता हैं वे आलोक को डॉट देती हैं और सोचती है कि अब आलोक उनसे दूर ही रहेगा परन्तु आलोक पर उस डॉट का कोई असर नही होता है ।वह अपनी बुआ रुक्मिणी को कविता सुनाता और पहेलियॉ पूछता रहता है। वह चुपचाप सुनती रहती है, इधर आलोक के मॉ बाप डाक्टरों के चक्कर लगाते रहते है। ओरं जब डॉक्टर प्राईवेट अस्पताल में बच्चे का फौरन इलाज कराने की बात कहते है तब वे डॉक्टरो की लम्बी फीस एक महीने रुक्मिणी के धर ठहरने और रुक्मिणी से मदद लेने की बात सोचकर चिन्तित हो जाते है एक दिन जब रुक्मिणी नहाये धोये शान्ति से पूजा गृह में अपने पीछे बैठे आलोक को देखती है, तब उन्हें किसी अन्य की उपस्थिति का भान होता है प्रसाद के लिये अंजुरी बनाये आलोक की छोटी–छोटी खुली आंखे में पुतलियों के ईद गिर्दगाढ़ी सफेदी और उसका भोलापन देखकर उन्हें आभास होता है कि "आलोक में भी तो भी वही ईश्वर है, जो रुक्मिणी के भीतर बैठा है।आलोक में है तो संसार में है..... और रुकिमणी उसे पीठ दिए पूजा करती है खुंली जीवन चर्या जो सर्वत्र व्याप्त ईश्वर को अपने भावों में उतारे... उसकी जगह रुक्मिणी कैद है मात्र दिनचर्या में – मंगला से शयन, शयन से मंगला। उनका जीवन वीरान और सूखा तो सारे संसार को वैसा मानकर उन्होंने किवाड़ बन्द कर लिए..... ताला लटका लिया। कन्हैया के लिये स्नेह धारा थी उसे मोड़कर भीतर कड़ुवाहट के रेगिस्तान में ले गयी और सुखोदिया । अगर वह बाहर की ओर बहती तो कैसी खेती लहलहाती कैसा आलोक।[74] पूजा गृह के बाहर बादलों से भरी छत पर हवा के नाम झोकों में रुक्मिणी आलोक को खीचती हुई दौड़ पड़ती है।

प्रस्तुत कहानी में दर्शाया गया है कि अपने दुख से दुखी रुक्मिणी ईश्वर की पूजा पाठ के सीमित दायरों में कैद अपने को संसारिक क्षेत्रों से निर्लिप्त कर लेती है, परन्तु आलोक का भोलापन उनकी अन्तर आत्मा में उतर उनके उजास को दस्तक देता है।

और वे प्रत्येक जीव में ईश्वर की सत्ता का आभास पा लोक कल्याण की भावना से प्रेरित होती है।

यो ही खत्म? ➡ कहानी में कहानी की प्रमुख पात्रा पार्वती मौसी के वैवाहिक जीवन मे आने वाली अत्यन्त कारुणिक स्थितियों का चित्रण किया गया है। वे स्थितियॉ जिसने पार्वती मौसी को छुआछूत और सड़कों पर लोगों और अपने पति को गरियाने की लत तक पहुॅचा दिया। एकाएक छोटी बहू को जब गिलास में दूध देने पर वे गरियाने लगी तब उसने मौसी के झुतरे पकड़ कर उन्हें झटक दिया वे कुछ न कह सकी । सड़क पर चली जा रही पार्वती के अन्दर अपनी झेली पुरानी तरह तरह की तारणाएं प्रतारणाएं कथलने लगी, वह सोच रही थी, उन्हें अपनी बहू जैसा होना चाहिए था। उनके मन में बहू के लिये स्नेह उमड़ आया। वह यह कर सकेगी जो पार्वती नही कर सकी । वे सोचने लगी। शहर में पिता के घर जन्मी पार्वती सच्चे और ईमानदार पिता को मन में उतारे जब तेरह साल की हुई तो पिताकी स्थिति अच्छी न होने के कारण दोजू को ब्याह दी गयी पति से पच्चीस छोटी पार्वती को ससुराल आकर पता चला कि वह दो बच्चो की मॉ भी है। इन बच्चों के साथ–साथ विधुर जेठ और उनके दो लड़कों का खाना पीना कपड़े धोना सब कुछ पार्वती के कन्धों पर आ गया। उनके कपड़ों को धोते वक्त उनकी बांस पार्वती के नथुनों में भर जाती पार्वती की तबियत धिन आती थी तब से पार्वती को छुआछूत का रोग लग गया । विरोध में पार्वती पिता के घर चली आयी। वहां मैट्रिक किया। पार्वती को कोसाने वाला लाठियां बरसाने वाला उसका पति दुबे तरह
तरह–तरह से नाटक कर पार्वती को ले जाने का प्रयास करने लगा जब पार्वती नहीं गयी तो वो ही आकर बस गया। पार्वती के पिता पार्वती के नाम घर करके छोटी से जगह में रहने लगते है। पिता की मृत्यु के बाद जब पार्वती के पति की दॉव –पेची अत्याचार लाठियों की प्रतिताड़ना बढ़ने लगी,तब पार्वती विरोध में गालियॉ देती सड़कों पर उतर आयी। वह पति की मृत्यु पर पार्वती रोने चिल्लाने के अलावा तालाब में जा नहाकर अपनी चूडियॉ पत्थर से फोड़ देती है और वापस गॉव की ओर चली आती है। रास्ते में जब नीची जाति का रामधन मौसी से टकराते–टकराते बच जाता है, तो मौसी की गालियो के डर से सहम जाता है परन्तु मौसी का शान्त रुप देखकर सहारे की प्रतीति में बिलख मौसी को बताता है कि उसकी पत्नी बच्चे होने की पीर दोहरी तेहरी हो रही है। तब मौसी छुआछूत को छोड़ रामधन को दाई को बुलाने के लिये कह चम्हरोटी में घुस जाती है वे सोचती है कि पार्वती मौसी का दुख उससे बड़ा तो नही जो बाहर फैला दर–दर पर टुकड़ों–टुकड़ों में...... इस तरह । यह पहले दिख जाता तो

छुआछूत और गरियाने में व्यर्थ न जाती जिन्दगी। लेकिन शायद यह आज ही दिख सकता था।.....[75]

प्रस्तुत कहानी में पार्वती मौसी के जीवन में आयी कटुता से उनके स्वभाव में जो कडुवाहट आ जाती है वह क्रूर पति की मृत्यु के बाद मानवीयता की भावना में परिवर्तित हो जाती है। और वह जाति–पॉति छुआछूत की संकीर्ण भावना से परे नीची जांति के रामधन की प्रसव–पीड़ा में तडफती पत्नी की मदद के लिये दौड़ पड़ती है।

हज्जाम मन्सुखराम→ हज्जाम मन्सुखराम कहानी का प्रमुख पात्र अपने पिता और दादा की तरह पेटी लिये धूमते लोगों की हज्जाम बनाता परन्तु उन्हें अपने हुनर की इस तरह बेइज्जती खटकती रहती । एक बार जब उन्हें एक कांस्टेबल के बाल बनाने के साथ–साथ कप्तान साहब के बाल बनाने का मौका मिला। तब उन्होंने अपने लिये तीन मन्त्र सिद्ध कर लिये लकलक कपड़े पहनना, पेटी को चमाचम रखना और साहबों को ओढ़ाने के लिये धोबी का धुला ताजा कपड़ा रखना साथ ही साहबों के नोकरों से साहब और मेमसाहबों की तारीफ करना ।वह शहर के बड़े अफसरों जिनमें कलक्टर साहब, कप्तान साहब, सिविल सर्जन साहब, इन्जीनियर इत्यादि की हज्जाम बनाने जाने लगा। शहर में नये आए डी0आई0जी0 का चपरासी जब कप्तान साहब के चपरासी के बाद अपने अफसरों की हज्जाम बनाने की खबर ले मन्सुखराम के पास आये। तब मन्सुखराम कप्तान साहब के यहॉ पहलें हज्जाम बना डी0आई0जी0 के यहॉ गये। तब डी0आई0जी0 ने अपने नौकर से कहां कि इनको समझाओं सन्देश पहॅुचते ही इधर आए इनके सर चढ़े कप्तान साहब के भूत को दस जूते मारकर उतार दो डी0आई0जी0 मन्सुखराम को पिटते देखते रहे अफसरों के बाल बनाते बनाते वे अपने को स्टेटस का आदमी समझने लगे थे आज उनका मान जूतों की मार से धुल गया था। तब मन्सुखरात को जमीन का वो छोटा चौखटा याद आया जहां उनके बाप दादा बैठकर साधारण लोगो के बाल काट अपनी रोजी रोटी कमाते थे। उन्होंने सोचा वे भी वही बैठना शुरु करेगे।

प्रस्तुत कहानी अफसरी वर्ग की छोटों के प्रति निर्दयता को चित्रित करती है।

सूखी क्यारी→सूखी क्यारी कहानी में प्रथम स्वाधीनता आन्दोलन के समय की एक छोटी से धटना के माध्यम से सहानुभूति करुणा और मानवता के उन पक्षों को उद्घाटित किया है जो भारतीयता के मूल तत्व माने जा सकते है। 1857 की क्रान्ति के समय जब अग्रेजों और भारतीयों के बीच एक दूसरे के लिये नफरत और क्रूरता बढ़ती जा रही थी तब एक दिन दुर्भाग्य वश एक अंग्रेज अपने दुश्मन के घर बैगन के झाड़ों में आ छिपता है। जब गृहस्वामिनी की नजर उस पर पड़ती है तब वे उसे हाथ से झटका कर उसे भगाना

चाहती है ताकि आदमी की नजर उस पर न पड़े। जब सिपाही किसी तरह नही मानता तब वे पत्थर उठाकर उसे मारने का प्रयास करती है तभी वह चुल्लू दिखा कर ऑखें से पानी की भीख मांगता हैं जैसे ही वे पानी लेकर बाहर निकलने लगती हैं तब जेठानी उसे टोकती हैं,वह कहती है कि एक क्यारी सूख गयी है ,उसे गीला करके आती जब लोटा खाली हो गया तो तब वे उसे हाथ झटकर भाग जाने का इशारा करती है। सिपाही करुणा की उस मूर्ति को देखता रह जाता है। उस समय उसकी ऑखों में कृतज्ञता ,आदर और दूसरी कितनी बातों की लहरियॉ उछलती है वह झाड़ों के नीचे–नीचे भाग जाता है।

प्रस्तुत कहानी में भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों पर प्रकाश डाला गया है।

भगवान ने चाहा तो.... भगवान ने चाहा तो.... कहानी में छोटी–सी घटना के माध्यम से मानवीय मूल्यों और ईश्वर पर आस्था के प्रश्न को दोहराया गया हैं। कहानी के नायक रणवीर रॉय जो अपने विभाग के कुशल अधिकारी माने जाते हैं। दॉव–पेच और सफल अफसर के आत्मविश्वास से प्रोमोशन की सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ जाते है। नौकरी के पन्द्रह साल बाद जब उन्हें लन्दन में एक उम्दा नौकरी नजर आयी तो उसके प्रयास के लिये उन्होंने भाग दौड़ शुरु कर दी। संस्कारों में पली पूजा पाठ में ध्यान देने वाली उनकी पत्नी घर में कथा वार्ता के लिये नियमित आने वाले साधुबाबा से पूछती हैं कि क्या मेरे पति को विदेश में नौकरी मिल जायेगी। साधुबाबा कहते है,कि भगवान के चाहा तो अवश्य ही मिल जायेगी। तब नौकरी का आदेश मिल जाता है और परिवार के जाने के टिकट इत्यादि बनवा लिये जाते हैं,जब पत्नी के साथ रणवीर रॉय भी साधु से पूछते है कि बाबा क्या हम लाग विदेश जायेंगे। साधु फिर वही उत्तर दोहरा देते है। लन्दन के किसी सहकर्मी की सलाह पर परिवार को कुछ दिनों बाद जाने का प्रोग्राम बनता हैं ।और रॉय अकेले ही विदेश जाते है जब हवाई जहाज उडान भर रहा था तभी एक भटकती चिडियां सामने आ जाती है जिसे हवा खींचकर इंजन के अन्दर ले जाती है जहाज को नीचे उतारना पड़ता है। रणवीर रॉय को हस्पताल पहुचाया जाता है उन्हें हार्टटैक बताया जाता है। क्योंकि उन्हें पिछले दिनों तनाव के उतार चढाव से गुजरना पड़ता है।उन्हें अस्पताल में महसूस होता हैकि वे सदा अपनी उंगली से चीजों को चलाने के आदी हो गये थें पहली बार वे जिस अनुभव से गुजरे वह परवश–सा था वे पत्नी के बिना पूछे विदेश की नियुक्ति के लिये मनाही भिजवा देते है पत्नी जब साधु से पूछती है तब कहते है कि न तो वे ज्योतिषी है, और नही उन्हें कुछ पता था कि वे तो परिवार के अन्य सदस्यों के साथ हर खबर के साथ और और खुश होते थें। यह तो उनके अनुशासन ने सिखाया है, कि भगवान की इच्छा सर्वोपरि मानें। इससे आदमी व्यर्थ के

अभिमान से तो बचा रहता है कम से कम । किसी छोटी सी चीज को बेकार बढ़ाकर नही देखता इसलिये निराश ओर दुखी नही होता।[76]

प्रस्तुत कहानी मे महत्वाकांक्षा की अन्धी दौड़ में शामिल होने वाले अफीसर के जीवन को चित्रित किया गया है, जो अपने शंतरजी मोहरों की चालों से बुलन्दी के मुकाम पहुॅच जाता है और विदेश की एक अच्छी नौकरी के लिये आर्कषित होता है विदेश के लिये रवाना होने पर भी छोटी से धटना धटने के कारण वहां तक न पहुॅच पाने पर अन्ततः ईश्वर की सत्ता को स्वीकार कर लेता है।

'अवरुद्ध'→'अवरुद्ध' कहानी में अजादी के बाद नेताओं की बदलती स्थितियों पर प्रकाश डाला गया है। कहानी के प्रमुख पात्र रामेश्वर भाई सडक पर खादी का धोती कुरता टोपी पहने, मुख्य मंत्री के प्रचार में नारे लगाने वाली भीड़ को, मुख्य मंत्री के निवास स्थान की ओर जाते देखतें है।रामेश्वर भाई के मांनस –पटल पर अपने समय की स्मृतियां उभरती है कि अग्रेंजो के प्रति मन उठनेवाली धृणा ने उन्हे अंग्रेजों भारत छोड़ो आन्दोलन में उतार दिया था अंग्रेजों के भारत से जाने पर वे अपनी दुनिया में लौट आए थें। सड़क पर चलने वाले जुलूस को युवक–युवतियों का एक दल रोककर खद्दर की पोशाके और टोपी उतारने को कहता है उनका मानना है कि इस पोशाक की आड़ में झूठ और मक्कारी का व्यापार चलता है ,और देश का खून चूसा जाता है । ये लोग इस पोशाक को पहनने वाले पात्र नही हैं रामेश्वर भाई जुलूस वालों को समझाते है कि इन बच्चों में विश्वास जमाने क लिये हमें आत्मचिंतन की आवश्यकता हैं, क्या कारण हैं कि बच्चें खादी और टोपी से नफरत करते हैं। शायद हममें ही कोई कमी है। भीड़ का हर एक सदस्य अपनी अपनी टोपी रामेश्वर भाई के हाथ सौंप अपने–अपने घर चला जाता है।

प्रस्तुत कहानी में नेताओं के प्रति युवा वर्ग के उद्वेग, आक्रोश को उभारा गया है। नेता लोग जो आदर्शों को अपनी ढाल बना कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे है। उन्हें युवा वर्ग की चेंतना अस्वीकार कर देती है।

इन्द्रलोक→ कहानी में एक ऐसी युवती का चित्रण है जो ब्याहता होने के बावजूद अपने पति के अफीसर के बेटे पप्पू की ओर आर्कषित होती है । उसका पति वहां से तबादला ले लेता है। वह अपने पिताके घर चली जाती है डॉक्टर पिता बेटी को समझाते है कि पति–पत्नी के बीच थोड़ी बहुत खटपट तो लगी रहती हैं शरद नेक दिल लड़का है। वह पति के पास जाने की सोचती है पर हार्ट अटैक में पिता की मृत्यु हो जाती हैं वह साचेती है कि पिता की असमय मृत्यु का कारण वो है। वह पिता की चिता पर शपथ

लेती हैं कि वह शरद के साथ अच्छे से रहेगी वह उसके साथ बम्बई आ जाती हैऔर बम्बई में नया जीवन शुरु करती है। शरद और घर को पहचानना शुरु करतीहै। शरद भी उसका मन लगाने की पूरी की कोशिश करता है इसी बीच पार्टियों के दौरान वह शरद के मित्र देवराज के बंगले कारों और फार्म हाऊस की चकाचौंध में बध्य हो जाती है। और देवराज के साथ बड़े –बड़े होटलों में धूमती है। वह अपने मन को टटोलती है। परन्तु उसमें कही भी देवराज के लिये प्यार नहीं दिखाई देता है। वह शरद को बताती है कि वह देवराज को नही चाहती है फिर भी उसके पास चली जाती है। उसका साथ उसे अच्छा लगता है। वह फिर पिता के घर चली जाती है देवराज उससे मिलने आता है और होटल से फोन करता है परन्तु वह उससे नहीं मिलती है। शरद भी उसे लेने आता है। और कहता है, कि हम बम्बई छोड़ कर चले जायेगे–"पहले बडौदा छोड़ कर बम्बई अब बम्बई छोड़... कब तक मैं इस तरह भागती रहूँगी और तुम्हें भी भगाती रहूंगी। शरद मेरे भीतर एक डंक बहुत गहरे चुभता होता है, यह नही कि मैंने तुम्हारे साथ धोखा किया उनसे जो वादा किया था.... चीख फूट पडी थी। और दरार से गिरता चला आया रोना।[77] वह शरद से कहती है कि वह कुछ दिन बाद चली आएगी। वहपिताका दवा खाना खोलती है वहां उसे पिता–सा आभास होता है वह पश्चाताप में बुदबुदाती हैं– पापा, "मैं कही पूरी तरह नही उतर पाती। मैं किसी को प्यार नही कर सकती। मैने न तो पप्पू को चाहा था, न देवराज को ...उसके यहां जो था,वह खीच ले गया मुझे। मैं लालची हूँ। एक सेएक चीजों का ऐसा भंडार लगा है कि ...मुझे चमक–दम खीचती है या कि बहकना मेरा स्वभाव है। मैं स्थिर नही हो पाती....क्या हैं पापा? मेरे मन में आदमियों से ज्यादा चीजों के लिये मोह उठता है....फिर चीजें भी नहीं भर पाती मुझें । मैं क्या हूँ..... क्या चाहती हूँ?[78]

प्रस्तुत कहानी में एक आधुनिक युवती की मनोस्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। एक ओर वह पैसे की चकाचौध में बध्य हो आर्कषण में बह जाती है दूसरी ओर उसमें परम्परागत नारी की सोच उभरती है और वह पश्चाताप् में जलने लगती है।

'बोझ'– ' बोझ' कहानी में परिवार की स्थिति से प्रभावित चार साल की बालिका की मनःस्थिति का स्वाभाविक चित्रण किया गया है। जिसका पिता उसकी मॉ की मृत्यु के बाद दूसरी क्वॉरी लड़की को घर में रख लेता है जब उसका पिता पड़ोस में आये नये परिवार में बच्चों को ले जाता हैं तब दोनों बच्चे बेझिझक इधर उधर भागने लगते हैं। वह पड़ोसी को पहले मुलाकात में ही अपने बैडरुम मे ले जाकर अपनी मृत पत्नी की ढेरों तस्वीरें दिखाता है और बताता है कि वह गोल्ड मेडलिस्ट थी फावर्ड मिलन सार एवं

सोशल थी तथा घर बहुत क़रीने से रखती थी। तीन महीने पहले ही उसने मायके में जाकर खुदकुशी कर ली है, क्योंकि उसका एफेयर शहर के किसी रईस जादे से हो गया था इसलिये ग्लानि में उसने आत्महत्या कर ली थी पर कालोनी की औरतों का कहना था कि यह ही किसी लड़की से उलझ बैठा जो उसकी पत्नीकी आत्महत्या के बाद उसके धर मे रहने लगी। वह लड़की के बारे मे बताता है कि मैं शुक्रगुजार हूँ उसका, पत्नी की मृत्यु के बाद जब बच्चे और मैं असहाय था उस वक्त उसने बच्चों को और मुझे संभाला पर अब वह निकलती ही नहीं मैं उसे समझाता हॅू मैं अपनी पत्नी के अलावा किसी और को नहीं चाह सकता अगर में शादी कर भी लू तो उसे बच्चे नहीं दे सकता, पर वह कहती हैं कि वह इसी में खुश हैं उसे पत्नी का स्टेटस भी नही चाहिए,अगर उसे गवर्नेस मान लिया जाए तो यह काफी है।उसका कर्ज है मुझ पर बच्चे भी उसके बिना गुजारा नही सकते है... मैं जब सोचते सोचते दंग रहा जाता हू तो एक बियर चढाकर सो जाता हॅू.....।[79]

उस समय उसके पड़ोसी को वहएक अबोध बच्चा विक्षिप्त आदमी लाचार पिता सभी एक साथ दिखाई देता है वह सोचता है कि क्यो नहीं वह अपनी स्वर्गीय पत्नी के सब चिनह मिटा अपनी जिन्दगी नये सिरे से शुरु करता है। उसकी पत्नी बच्चों को खिलौनें निकालकर दे देती हैं लड़का खिलौने से खेलने लगता है, पर लड़की ड्रेसिंग टेबल पर रखे प्रसाधनों से अपना मेकअप कर लेती है तब वह उसे बातचीत मे उलझाने को कोशिश करता हुआ बच्ची से पूछता है "कि तुम पढ़ लिखकर क्या बनाना चाहती हो तब वह कहती है कि मै अपनी मां बनूगी ।"[80] तब वह सोचता है कि क्या यह उसकी मां थी। .....उसके भीतर जीवित बहर आ जाने को बैचेन? बच्ची तो आत्महत्या का मतलब भी शायद ही जानती हो ,उसने तो अपनी मृत मां को भी नही देखा था उसके पास जीवित मां की याद भी होगी तो कितनी.... अपनी मां को कौन सा रुप उस पर अक्स था, जो वह बनना चाहती थी।[81]

प्रस्तुत कहानी में चित्रित किया गया हैं कि बाल मानसिकता पर स्थितियों का प्रभाव अवश्य ही पड़ता हैं। कहानी में चार साल की बच्ची की मानसिकता में जो प्रौढ़ता दिखायी देती हैं। वह स्थितियों का ही प्रभाव हैं पाप बोध से धिरा लड़की का पिता पत्नी की, आत्महत्या के बाद असहाय बच्चों को संभालने वाली लड़की को अपना भी नहीं पाता और छोड़ भी नहीं पाता।

आक्रा माला ➡ 'आक्रा माला' कहानी में निम्नवर्ग की युवती का चित्रण है। जिसका परिवार लखानी के कहने पर गॉव से बम्बई आ जाता है। लखानी जो हर साल उनके बगीचे से आमों की पेटियॉ लादकर बम्बई लाता था। वह हंसा के पति को बम्बई के

सपने दिखाता है और एक दिन वे उन्हीं पेटियों के साथ में बम्बई आ जाते हैं। यहाँ आकर हंसा कोठियों में झाडू,पोछा, बर्तन ,कपडे,रसोई इत्यादि काम दिन भर करती है। इसलिये उन्हें बिल्डिग के पास खोली रहने को मिल जाती है। उसका पति दो धरों मे बर्तन और कपड़े धोने का काम करता है। वह बम्बइयां रंग में रगने लगता है, और हंसा के लिये एक दिन दस साडियां लाता है। ताकि उसे ये न लगे कि वे बम्बई आकर तरक्की नही कर रहे। पर जब वह उन साड़ियों को पहनकर कोठी पर जाती है, तब मालकिन उस पर शक जाहिर करती है। हंसा का पति सेठ के पास जाकर स्थिति को साफ करता है परन्तु हंसा का मन शहर में नहीं लगता। उसके पति पर रईसी का भूत सवार रहता है। वह कभी–कभी विदेशी छुट पुट चीजें घर में लाता है, पर पैसों की तंगी हमेशा हंसा को झेलनी पड़ती है। उसे अपने पति की बातें समझ में नहीं आती है। उसे लगता है कि जैसे वह कोई और ही जुबान बोलने लगा है। एक दिन हंसा का मंगल सूत्र खो जाता है, तब वह पति से पुलिस में रिपोर्ट लिखवाने की बात कहती है। वह उसे समझाता है कि अपने घर में विदेशी चीजे पड़ी रहती है जिससे पुलिस परेशान कर सकती है, पर जब हंसा जिद पकड़ लेती है । तब वह कहता है कि वो माला मैंने दोस्त की लड़की की शादी में उसे काम चलाने के लिये दी हैं। वह मैं ला दूँगा जब माला नहीं आती तब हंसा लखानी के पास जाती हैं। वहाँ उसे पता चलता है, कि इस समय उसके पति के पास बहुत पैसा रहता है वह किसी औरत के पास भी जाता है। वह सोचती है कि बम्बई में उसके पति की रईसी एक सीढ़ी और ऊपर चढ़ गयी है। शाम को पति के आने पर वह उस पर बरस पड़ती हैं,दूसरी औरत की पोल खुल जाने पर वह उसे बौखलाकर पीट देता है और मर्दानगी दिखाते हुए कहता है कि ‘अभी जाता हूँ। रात्रि के सुनसान वातावरण मे हंसा के भीतर हाहाकार उठता है। हंसा सोचती है कि जिस आदमी के साथ ब्याही गयी और गाय की तरह बंधी इतने बड़े शहर में चली आयी वही अजनबी बन गया है। यह तरक्की है या नीचाई।

प्रस्तुत कहानी में गॉव से पलायन कर शहरी परिवेश में संघर्षो को झेलने वाली युवती की मनोदशा का यथार्थ चित्रण किया गया है, जो हाड़तोड़ मेहनत और अर्थाभाव को तो झेल जाती है पर पति के ओर औरत से सम्बन्ध की सच्चाई का पता चलनेपर पूरी तरह से टूट जाती है।

उपचार→‘उपचार’ कहानी में उस डॉक्टर की मनोदशा का चित्रण किया गया हैजो आतंकवादियों की गोली के शिकार दो धायलों में से एक को ही जीवनदान दे पाता है। कस्बे के अस्पताल में अकेले सर्जन होने के कारण उन दो घायलों में से पहले किसका ऑपरेशन किया जाए यह प्रश्न डॉ राजपाल के सामने खड़ा होता है अधेड़ होने के

बावजूद बचने की उम्मीद वाले पुरुष के ऑपरेशन के लिये वे ले जाते है। उस वक़्त नौजवान उनसे पूछता है, और मैं डाक्टर साहेब, तो क्या मैं मर जाऊँ? 'तुम्हारा मरना जीना न तुम्हारे हाथ में है और न मेरे । तुम अभी इन्तजार करों ।मैं आता हूँ। यह कहकर वे चले जाते है, नौजवान की ऑखों में उदासी केरंग उतर आते है जिनके नीचे जीने की उद्दाम लालसा लहक रही थी, उसे डॉक्टर की बात का धक्का लगता है । जब एक आपरेशन करने बाद डॉक्टर आते है, तब तक नौजवान मर जाता है। मरने वाले की ऑखे हमेशा डॉक्टर का पीछा करती, उन्हें लगता हैं उनका चयन गलत था वे मुक्ति पाने के लिये उस गॉव जाते है जहां से युवक लाया गया था। वहां वह अधेड़ उन्हें पहचान जाता है, जिसे वे बचा सके थे। वह नौजवान के घर जाते है। उसकी स्त्री वेदना देखकर अपनी प्राप्तियों के बाद वे खुद को बौना महसूस करते है। जब वे उसका सामना नही कर पाते तो उठकर चले जाते है।

प्रस्तुत कहानी में आतंकवाद से पीड़ित पारिवारिक स्थिति के साथ–साथ डॉक्टर की मनोदशा को कथ्य बनाया गया है। जो दो धायलो मे से उस अधेड़ को बचा पाता है ,जिसमें जीने की लालसा कम और बचने की उम्मीद ज्यादा होती परन्तु वह नौजवान जो बचने की कम उम्मीद के बाद भी जीने की उद्दाम लालसा से डॉक्टर से जीवन की याचना करता है उसे वे नही बचा पाते। आतंकवाद से व्याप्त भयावह परिस्थितियों से कई परिवार उजड़ चुके है। इस धटना के माध्यम से कहानी कार ने देश में व्याप्त आतंकवाद की यथार्थ स्थिति के प्रस्तुती करण का लक्ष्य साधा है तथा डॉक्टर की विवशता से कहानी मे कई सवाल खडे किये है।

युद्ध→'युद्ध' कहानी में तीन पीढियों के अर्न्तद्वन्द्वों को पिता सोच में व्यक्त किया गया है। पुत्र पीढ़ी जो पश्चिम के प्रभाव से प्रभावित अत्यन्त बौद्धिक है और शादी जैसे मामलों मे रिस्क नही लेना चाहती है। पिता परम्पराओं में जकड़े उस जकड़न से मुक्त नही हो पाते है । पुत्र जब हर लड़की में कोई न कोई खराबी निकाल देता है ,तब वो यह कहते है कि अगर वो शादी नही करना चाहता तो घर छोड़कर चला जाये। पिता पुत्र के बीच संधर्ष जन्य स्थितियॉ उत्पन्न होती है। नौकरी लगने के बाद पुत्र का बदलाव व आधुनकिता की होड़ में पैसे को अधिक महत्व देना तथा परिवेश जन्य स्थितियों का प्रभाव पिता को पेरशान कर देता है। पुत्र का आसामान्य व्यवहार पिता को ये सोचने के लिये विवश कर देता है, कि जरुर पुत्र के लिये उनकी परवरिश में कोई कमी रह गयीहै। बच्ची के जन्म के समय इसे दादा–दादी के पास रख देना व बच्ची के छः महीने मरने बाद उसके खालीपन को भरने के उसे लिये पुनः वापस ले आना। उसे लगता है शायद उसके पिता के जीन्स इसमें प्रवेश कर गये है। पिता जो मॉ से जीवन भर सही व्यवहार

नही कर पाये क्योंकि जब पिता की शादी हुई तो मॉ सुन्दर कस्बे की पढ़ी लिखी महिला थी, व अच्छे परिवार की थी। इसलिये पिता के घर की परिस्थति अच्छी न होने के कारण वे मायके में ही रही और पिता को वहां जो उपेक्षाएं सहनी पडी उससे वे हीन भावना का शिकार हो जाते हैं। बाद में पिता उसे दादा–दादी के घर से वापस लाने के बाद इसे मामा की देख रेख में रख देते हैं। जिस मामा को वो अपनी पत्नी के आतंक से दूर रखने के लिय लाये थे। उनकी पत्नी दूसरे के साथ भाग गई थी, और वो इस भय से भयभीत थे कि कहीं उनकी पत्नी यार के साथ मिलकर उन्हें मार न दे । एक दिन इन्टरवल के समय में उन्होंनें स्कूल में अपने बच्चे को देखा कि "बच्चे खाना खत्म कर इधर उधर खेल रहे थे। यह अलग–थलग बैठा सिर्फ खालीपन, उदासीन छोटे से चेहरे पर वह भाव। उस दुनिया के लिये जिसम वह नया नया आया था... मैं सहम गया था। उसके पास जाकर उसका ध्यान आस–पास खींचता रहा, उसे दूसरे बच्चे के साथ खेलने घुलने मिलने के लिये उकसाता रहा था...[82]

उसे ही तेसई साल की उम्र मे आज जब मामा के मरने की खबर सुनाई तो उसके चेहरे पर वही भाव तेरे रहे है।

कभी उन्हें लगता है कि मेरा लड़का पिता की तरह धुप्पा अलग–थलग रहने वाला गुस्सैल हरेक चीज को नकारात्मक ढ़ंग से सोचने वाला निकला है। शायद पिता के रुप में आज मुझसे बदला ले रहा है ।मॉ का ज्यादा पक्ष लेने की खातिर मुझे अपना दुश्मन समझते थे।

अन्ततः वे यह सोचते हैं कि शायद परिवेश जन्य स्थितियॉ और पीढ़ीगत अन्तर ही इस प्रकार की जंग और युद्ध का कारण है कि वे असंमजस्य में यह नहीं समझ पाते कि मेरा मुकाबला मेरे लड़के से है या इसके भीतर बैठे मेरे पिता से है"यह भी साफ नही है कि कौन किस चीज का बदला किससे ले रहा है। मै लड़ने वालो में हूॅ या सिर्फ कुरुक्षेत्र हूॅ, जहां लोग भिड़े हुए है मेरा लड़का और मैं वह हैं जो सिर्फ दिखते है या जैसे उसमे मरा पिता बैठा हैं। मुझमें मेरे दादा घुसे बिराजे हो । मेरे और मेरे लड़के की जंग में ही कही मामा ओर स्त्री की, मेरी मॉ की मेरे पिता से जंग चल रही हैं। [83]

अन्ततः वे पुत्र के समक्ष हार स्वीकार कर लेते है और सोचते है कि जब हम अपने जीवन को उधर नही हॉक सकते जिधर हम चाहते है तो दूसरे के जीवन से क्या अपेक्षाएॅ रखें। वे पुत्र से कहते है कि हम घर बॉध तो नही ले जायेगें तुम जैसा चाहो जीवन की शुरुआत करो। इस कहानी में आधुनिक युग में बदलते पारिवारिक रिश्ते, मूल्यों के संक्रमण ,पीढियों के संघर्ष और पीढियो के अन्तर से उभारते मानसिक दबावों को तथा परिवेश गत स्थितियों से प्रभावित संवेदनाओं को चित्रित करने का प्रयास किया गया है।

केयर–टेकर➡ केयर टेकर कहानी एक ऐसे पात्र की कहानी है, जिसमें काबिलियत तो है पर उसका फायदा उसे नही मिल पाता है। युवावस्था में उसमें भावनाएँ आन्दोलित होती हैं वह सपने देखता है पर सपने टूट जाते है उसे अपनी भावनाओं को दबाये रखना पडता है। उसकी काबिलियत ,काहिलियत में बदल जाती है। जीवन की असफलता उसे क्रूर बना देती है। और उसकी क्रूरता का शिकार उसके बेटे को बनना पडता है। जो अपने चार भाई बहनों में बड़ा हैं ।पिता की बेरहमी की मार पीड़ा को दबाने के बावजूद उसकी चीख गेस्ट हाउस मे ठहरे साहब तक पहुँचती है। बच्चा पिता की क्रूरता पर पर्दा इसलिये डालना चाहता है कि अगर साहब उसके पिता से प्रभावित हो गये तो सारे परिवार की तकदीर बदल सकती है उसका पिता सुबह बड़े ही सुसभ्य तरीके से साहब को अपना परिचय देता है। जब वह बच्चे को उसे पीटते देखता हैं जब सोचता हैं कि कैसा था वह शख्स ... जो सवेरे अपनी सुसभ्यता ,नफासत दिखाने की कोशिश करता हैं और शाम को अपनी लंपटता दिखाने को विवश हैं.... जो एक कुत्ते को तो प्यार करता है लेकिन अपने लड़के के प्रति इतना क्रूर ...उससे नौकरों की तरह काम लेता है ऊपर से अपनी असफलताओ का गुस्सा उस पर उतारता है .....[84] साहब यह कहकर निदान तो पा लेते है कि यह क्या करते हो रामसिंह उसके भीतर ईश्वर है पर वह अपने कहे वाक्य पर उलझे सोचते है कि मैनें जिन्दगी का बोझ ढोते संधर्ष करते मनुष्य के बच्चे को ईश्वर बना दिया ..... क्या यह निदान है? निदान है लडके को किसी और वातावरण में डालना ,जहां वह अपनी अपने परिवार की जिन्दगी नये ढंग से शुरु कर सके... मैनें किस आसानी से छुटटी पा ली। [85] जब वह जाते वक्त उसे बीस रुपये देता है तब उन्हें महसूस होता है, मानों निर्मल की अजीब नजरें उनसे कह रहीं हों कि तुम बख्शीश देने के अलावा कुछ नही कर सकते।

प्रस्तुत कहानी में केयर टेकर के जीवन का चित्रण है और उसकी असफलता से उत्पन्न खीज का शिकार बच्चे का चित्रण है, जो उस बच्चे को असमय प्रौढ़ और समझदार बना देती है परिस्थितियाँ उसे सब कुछ सिखा देती है।किशोर बच्चे की मानसिकता कई सवाल खड़े करती है। उसकी सभी इच्छाएँ मन में दबी रहती है। नयी उम्र की चपलता, लोच उसके चहरे पर नहीं दिखाई देती है। कहानी में संवाद प्रभावशाली एवं संवेदनशीलता से युक्त है। सम्पूर्ण कहानी में अवसाद झलकता है।

इजाजत नही➡'इजाजत नही'कहानी के नायक कैलाश बाबू 68 की उम्र पार करने के बाद भी दूसरो के कामो में युवा जैसा उत्साह दिखाने वाले अपने नालायक बेटों के दर्द से पीड़ित है, वे बड़ी मेहनत से अपने बड़े बेटे को डॉक्टरी कराते है, और सोचते कि बड़े भाई के बन जाने से अन्य दो भाइयो की जिन्दगी सँवर जाएगी परन्तु शादी के बाद वह

अपनी जिम्मेदारियों से मुकर जाता हैं। उसकी पत्नी सीधे सीधे कह देती है कि उसका पति क्यों इस जिम्मेदारी को उठाए, जिसने पैदा किया वे ही जानें। कैलाश बाबू इस पीड़ा को झेल जाते है। और बिना बेटे की मदद के मकान गिरवी रखकर प्रोवीडेन्ट फंड का सारा पैसा लगाकर कुछ उधार लेकर बेटी की शादी करते हैं। पर दो बेटों के जीवन को सही आयाम देने का प्रश्न उनके सामने आता है। बस्ती का एक लड़का रवीन्द्र जो गरीब होने के बावजूद अपनी मेहनत और कैलाश बाबू के सहयोग से दिल्ली में अफसर बन गया था। वे उसके पास अपने एक बेटे को नौकरी लगवाने हेतु भेजते हैं, वह उसे नौकरी पर रखवा देता हैं व अपने आउट हाउस में रहने व खाने पीने का इंतजाम भी कर देता हैं। कैलाश बाबू सुकून की सांस लेते हैं। उन्हें लगता है, वे अब बहुत थक चुके हैं। उनकी दिनचर्या ढिलिया जाती हैं। परन्तु जब डेढ़ महीने बाद बेटा आता है तो उनके पूछने पर वह कहता है कि वह नौकरी छोड़ आया है तब उनके जबड़े भिच जाते हैं, उन पर पस्ती छा जाती है। वे सोचते है कि "एक दुख वह हैं कि सन्तान हो उससे बड़ा कि हो और मर जाए और सबसे बड़ा यह कि नालायक निकल जाए .....एक डाक्टर लड़के की तरह,तो दूसरा इस तरह। बेटों की नालायकी असफलता बाप के माथे पर आकर क्यो चिपक जाती हैं? वे अपनी पुरानी दिनचर्या शुरु करते है और साचते है कि जिन्दगी उन्हें बुढ़ा होने की इजाजत नही देती हैं।

प्रस्तुत कहानी में बेटो से पीड़ित पिता की मनोदशा का चित्रण किया गया है जो वृद्धावस्था में भी युवा नालायक बेटों का बोझ उठाने के लिये खुद का नये सिरे से तैयार करते है। वृद्ध की हताशा के बीच परिस्थितियों से फिर से जूझने की सही तस्वीर मिश्र जी ने प्रस्तुत की हैं।

द्वितीय अधयाय—मिश्र जी के कथा साहित्य का वस्तु विधान

उपअध्याय—3

कथानक में वस्तु विधान की संगति

एक जैनुइन साहित्यकार सदैव युग की बदलती परिस्थितियों में विघटनकारी और प्रतिकियावादी शक्तियो के विरुद्ध चल रहे संघर्षो के लेखा— जोखा का प्रस्तोता होता है इस अभिव्यक्ति में मूल्यों,विचारों और सम्बन्धों के बदलाव की चर्चा स्वाभाविक रुप से हो जाती हैं। [86]

इन बदलती हुई परिस्थितियों को वर्णित करने के लिये एक रचनाकार को रचनात्मक स्तर पर त्रिकोणीय संघर्षो से गुजरना पड़ता है स्वानुभूत अभिव्यक्ति के लिये संघर्ष, स्वचेता को अधिकाधिक मानवीय संवेदना से सम्पृक्त करने का संघर्ष तथा मानव जीवन की समस्याओं से प्राप्त अनुभूति से स्वजीवनानुभव को तीव्रतर और व्यापकतर बनाने के लिये संघर्ष। एक समर्थ रचनाकार इन संघर्षो के इन विभिन्न आयामों को झेलता हुआ मानव सम्बन्धों के बदलाव से अनुभूत,कलात्मक अभिव्यक्ति के साथ यथार्थ को उसकी सम्पूर्णता में उभरता है। रचनाकार के अनुभव कथानक में सम्प्रेषित हो मानव जीवन के सत्य का उद्घाटन करते हैं। उसके ये परिपक्व प्रौढ़ अनुभव रचना को सशक्त बनाते हैं।

स्वतन्त्रता के बाद बदलती सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक मान्यताओं स्थिति परिस्थितियों ने कथा साहित्य की वस्तु में विस्मयकारी परिवर्तन किए। नयी स्थितियों की नवसंवेदनशीलता एवं नव्य यथार्थ बोध को प्रस्तुत करने के लिये आधुनिक कहानीकारों ने कथानक की परम्परागत धारणा को तोड़कर बौद्धिक धरातल से कथानक का (जिसे कहानीकारों ने घटनाओं के बीच का एक आभ्यन्तर सम्बन्ध की संज्ञा दी) चुनाव किया। जिसके फलस्वरुप कथा सन्दर्भो में अधिक सूक्ष्म और गहन बौद्धिक प्रवृत्ति परिलक्षित हुई।''[(87)]

अतः स्वातंत्र्योत्तर कथाकारों ने वास्तविक जीवन के वृहत्तर सन्दर्भो के संवेदनात्मक ज्ञान को रचना प्रकिया का अंग बनाया ,वास्तविक जीवन सन्दर्भो को अधिक विश्वसनीय तथा प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया। उन्होंने किसी घटना को केन्द्र में रखकर रचनाऍ नहीं लिखी और न ही किसी पात्र को केन्द्र बिन्दु बना उसके चारों तरफ घटनाओं का जालबुना अपितु जीवन के वृहत्तर सन्दर्भो के साथ किसी घटना की संगति बैठायी। इन रचनाओं में कथानक कोई स्वतन्त्र असित्व न रख व्यापक जीवन का अपरिहार्य अंग बनकर उभरा। अतः इन रचनाओं में कथानक को आरम्भ,विकास,चरमसीमा और अन्त जैसे स्थूल सोपानों में विभाजित करके नही देखा परखा जा सकता हैं। इनके

कथानकों की श्रेष्ठता की प्रमुख कसौटी उसके प्रभाव की समग्रता होती हैं। इसलिये कथा विन्यास के इन विभिन्न सोपानों की संगति आधुनिक रचनाओं में नहीं खोजी जा सकती हैं। क्योंकि आज का कथाकार यथार्थ को विभाजित करके नहीं उसे उसकी सम्पूर्णता में चित्रित करता हैं। आज कथानकों के स्वरुप में स्थूलता के स्थान पर सूक्ष्मता परिलक्षित होती हैं।

मिश्र जी ने स्वतन्त्रता के बाद बदले हुए जीवन बोध को कलात्मक ढंग से पेश करने में विशेष सफलता प्राप्त की। नये जीवन बोध को प्रस्तुत करने के लिये कथासाहित्य सृजन में उन्होंने कथानक चयन में नवयुक्तियों का सहारा लिया तथा उसे अलग ढंग से प्रस्तुत किया। कथारुपी नींव के आधार पर अपनी अलग जीवन दृष्टि को खड़ा किया। उनकी स्पष्ट जीवन दृष्टि अनुभव तथा रोचक कथा के समावेश से उनकी रचनाओं की वस्तु की प्लेंसिग को अत्यन्त सामान्य और संश्लिष्ट बनाती है।

कहानीकार के रुप में उन्होंने कथा वस्तु विन्यास की आधुनिक अवधारणा को स्वीकार किया तथा उपन्यासकार के रुप में वस्तु की मौलिकता समसामयिकता, प्रमाणिकता, विश्वसनीयता, कौतूहल वृति जैसे गुणों पर विशेष बल दिया। यही कारण है कि उनके कथा साहित्य की वस्तुसमकालीन ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक सन्दर्भो को स्पष्ट करती हैं, जिसमें समकालीन स्थितियॉ, परिस्थितियॉ, विधियॉ, प्रतिकियाऍ, उलझाव, सुलाझाव अपने स्पष्ट रुप में उभरते हैं। उनका कथा साहित्य युवाओं के आक्रोश, विद्रोह, भटकाव, अनिश्चयता, संशय, आसांमजस्य ,दिशाहीनता, भावुकता, कस्बाई मानसिकता, सामन्ती और जनतान्त्रिक मानसिकताओ की खुराहट, आधुनिक नारी की अस्मिता की तलाश प्रेम,मनःस्थिति भारतीय आध्यात्मिक जिज्ञासाओं, आत्मिक, नैतिक आयामों, मध्यवर्गीय परिवारों के सांस्कृतिक, सामाजिक, और मानसिक बिखराव, निम्न वर्ग की समस्याओं जैसे विषय वस्तु को लेकर चलता हैं। इनमें विषय वस्तु की प्लेसिंग में वे कहीं कथानक की जगह सिर्फ कथ्य को आधार बनाकर विषय को स्पष्ट करने की कोशिश करते है तो कहीं काल और स्थान का अधिक ठोस बना जटिल वस्तु परक प्रत्यक्षीकरण करते हैं, तो कहीं वे उपन्यास संरचना में कथा–प्रवाह को चरित्रों और यात्रा के रास्ते आगे बढ़ाते हैं। उपन्यास (धीरे समीरे) में एक साथ अनेक पड़ाव,तीर्थ स्थल, झॉकियों,तथ्यों,तत्वों,विचारों तर्को, भावनाओं को एक सूत्र में बॉधकर कलांकृति को कलात्मक पूर्णता प्रदान गयी हैं। "कथा प्रवाह का एक–एक पड़ाव तीर्थ स्थलों और झॉकियों को एक सूत्र में पिरौता,पौराणिक आख्यानों को सुनता,गुनता एकदम जस के तस वर्णनों और विधि विस्तार से पूरे प्रामाणिक सही रुप में रखता चलता हैं। इतना कि प्रारभ्भ के कुछ पृष्ठों के बाद रोचकता के बावजूद मन थोड़ा उतकाया भी बुद्धि भी भभकी कि भद्दी यह उपन्यास है या यात्रावृत?इतनी ज्यादा प्रामाणिकता और

विश्वसनीयता तो कथा शिल्प की परिभाषा को भी खतरे में डाल सकती हैं। [87] पर जल्द ही कथाकार उसे उपन्यास की परिधि में ढ़ाल लेता हैं जो उसकी रचना सामर्थ्य की विशेष उपलब्धि कहीं जा सकती हैं।

1940 से लेकर 1990 तक के काल खण्ड में परिवर्तित सामाजिक, सॉस्कृतिक, राजनीतिक, और नैतिक स्थितियों का प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करने वाला उपन्यास 'पॉच ऑगनों बाला घर' वस्तु और शिल्प की नव्यता और मौलिकता को चित्रित करता हैं। मिश्र जी ने इस उपन्यास में अपने जीवनानुभवों को अत्यन्त गहनता, सघनता, तथा व्यापकता के साथ प्रस्तुत किया हैं। "संरचना की दृष्टि से 'पॉच ऑगनों वाला घर' अपनी बनावट और बुनावट में अत्यन्त सघन और संश्लिष्ट हैं। कथानक के विकास के लिये प्रसंगों का नियोजन इतने कौशल से किया गया हैं कि न तो कहीं स्फीति है और न ही विखराव। कथानक और चरित्रों को विकास का पूर्ण अवसर मिला है। ऐतिहासिक प्रामाणिकता और कला की सिद्धि का मणिकंचन योग इस कृति में विलक्षण परिपाक का उदाहरण प्रस्तुत करता हैं।"[89] वास्तव में उपन्यास का संरचनात्मक गठन, कलात्मक कौशल, घटनाओं,प्रसंगों का चित्रवत प्रस्तुतीकरण उपन्यास की उत्कृष्टता सिद्ध करते हैं और उपन्यास व्यास पुरस्कार का अधिकारी बनता हैं।

'हुजूर दरबार' उपन्यास के कथानक में इतिवृतात्मकता के दर्शन होते हैं इसके आसाधारण पात्रों का चरित्र विश्लेषण मनोविज्ञान के आधार पर प्रस्तुत किया जाता हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति काल की पृष्ठ भूमि को विषय वस्तु बनाकर लिखे गये उपन्यासों में सत्तास्थानान्तरण की ऐतिहासिक घटनाओं, स्थितियों, सत्ता व्यवस्था के बीच पिसते व्यक्तित्व की जीवन स्थितियों की संगति कथानक में इस तरह बैठायी गयी है कि कथानक इतना जीवन सदृश्य लगता है "कि उसको बताना हो तो उपन्यास के जीवन के दृश्यालेख के बारे में ही सतत बोलना पड़ेगा। "जीवन के एक सनातन सत्य के बहुआयामी रुप का यह चित्रमय प्रस्तुतीकरण है। यह सत्य है कि अनादि काल से समाज में चल रहे दो वर्गो का सघर्ष एक वर्ग सताकांक्षी लोगों का है और दूसरा उनकी जी हुजूरी करने के लिये मजबूर किए गये दुर्बलों का। अतः उपन्यास राजनीतिक गतिविधियों की ऐतिहासिक घटनाओं स्थितियों के माध्यम से आगे बढता हुआ आधुनिक युग के संत्रास को मूर्त रुप प्रदान करता हैं।

नारी मन की आधुनिक जिजीविषा, सूक्ष्म मनोविकारों और उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को विषय बनाकर लिखे गये उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में आधुनिक नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व का रुपायन नये परिप्रेक्ष्य में हुआ हैं।

उपन्यास की वस्तु की प्लेसिंग तथा उपन्यास मे वर्णित पात्रों के मानसिक यथार्थ धरातल का जो रुप लेखक ने प्रस्तुत किया हैं।"उससे कथानक और घटनात्मकता से

लगभग युक्त होते हुए भी उपन्यास एक निश्चित दिशा में प्रेम और प्रेम की दुनिया में व्याप्त सरलीकृत अन्तविरोधों से टकराता हैं और अनेक मनोवैज्ञानिक तथ्यों को सामाजिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में व्याख्यायित करता हैं। "[90] अतः उपन्यासकार ने भारतीय समाज में नारी मुक्ति के तलाश जैसे विषय की पड़ताल पर्याप्त गम्भीरता और विश्वसनीयता से करता हैं।

कहानियों में वस्तु विधान की संगति

आधुनिक कहानी ने वस्तु और कथानक को नये आयाम दिये। आज की कहानी की वस्तु में जीवन के जीवन्त विचारों को अधिक महत्व दिया जाता हैं। इसमें मानव के सभी प्रकार के आचरण और व्यवहार सम्मिलित होते हैं, जिन्हें वह जीवन विभिन्न क्षेत्र में करता हैं स्वतन्त्रता के बाद बदलती राजनैतिक,आर्थिक, सामाजिक,धार्मिक,नैतिक स्थितियों ने कहानियों की वस्तु सन्दर्भो को बदला कथाकारों ने इन नव्य स्थितियों का सटीक चित्रण कर कहानियों की वस्तु को समृद्ध, संश्लिष्ट और गहन बना कर प्रस्तुत किया।

कथाकार मिश्र जी ने अपने अनुभूति जन्यसंवेदना के द्वारा कहानियों की 'वस्तु' को महत्वपूर्ण बनाने का प्रयास किया, तथा अपने निजी अनुभव बोध को सामान्य अनुभव बोध के साथ जोड़कर रचना में प्रस्तुत किया। मौजूदा जीवन में व्याप्त संगतियों,असंगतियों अर्न्तविरोधों,धूर्तताओं,मक्कारियों को तन्त्र,अन्याय,अत्याचार,शोषण,नारी की अस्मिता के प्रश्न, को अपनी कहानियों को विषय वस्तु चुना तथा वस्तु को प्रस्तुत करने के लिये कथानक में संगति बैठायी। छोटे–छोटे कथानकों में अर्न्तसंघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व चित्रित किया तथा वस्तु विन्यास में घटनाओं और पात्रों की अपेक्षा

धारणाओं और जीवन संवेदनाओं को प्राथमिकता दी। इन संवेदनात्मक स्थितियों के समस्त कारणों का, इसे उत्तेजित करने वाले तत्वों का,संवेदन अनुभव करने वाले पात्रों का विश्लेषण पूरी तरह से हुआ हैं। सम्पूर्ण प्रकिया की अभिव्यक्ति विस्तार रुप में न होकर संकेतों के माध्यम से हुई हैं। अतः कथानक के स्वरुप में स्थूलता के स्थान पर सूक्ष्मता दृष्टिगोचर होती हैं।

इनकी शुरुआती दौर की कुछ कहानियों में कथानक के अभिनव प्रयोग हुए, कुछ कहानियों में कथानक ही नही पात्रों के नाम तक गायब दिखायी देते हैं कुछ में कथानक की अवेहलना दिखायी देती हैं, तथा कुछ में भावनाओं के आधार पर भावनात्मक कथानक की निर्मित हुई हैं। इन कथानकों में विखराव तो दिखायी देता हैं, पर समाज

की यथार्थ स्थिति चित्रित होती हैं। मिश्र जी ने कथानक के कृत्रिम रुप को हेय माना उसकी जगह सहजता, स्वाभाविकता और विश्वसनीयता को प्रश्रय दिया।

अतः कहा जा सकता है इनकी कहानियों में विषय वस्तु की प्रधानता रही। कहानियों की विषय वस्तु को समृद्ध ,गहन और संश्लिष्ट बनाकर प्रस्तुत किया गया। स्वतन्त्रता के बाद की सामाजिक,राजनैतिक,धार्मिक,आर्थिक,नैतिक स्थितियों का वर्णन,जीवन का वस्तुपरक चित्रण संवेदनात्मक अभिव्यक्ति मनः स्थिति पात्रों के द्वन्द्व, अर्न्तद्वन्द्व दिलचस्पी मानवीय सम्बन्धों में आए बदलाव मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था की अभिव्यक्ति कथानक में क्रमिक रुप में हुई, जिसे इनकी रचना सामर्थ्य की उपलब्धि कही जा सकती हैं।

द्वितीय अध्याय मिश्र जी के कथा साहित्य का वस्तु विधान
उपध्याय –4–कथानक में इतिहास एवं कल्पना

किसी भी ऐतिहासिक कृति में कल्पना की भूमिका उपेक्षणीय नहीं हैं। क्योंकि अरस्तु का कहना हैं "कि कृतिकार प्रकृति को जैसी की तैसी नहीं बल्कि उसकी कल्पना में उसका जो सवरुप होता हैं,उसे अभिव्यक्ति देता हैं।[91] अतः कहा जा सकता हैं कि रचनाकार कल्पना और अनुभव के माध्यम से अपनी रचनाओं की नींव को मजबूत बनाता हैं, ताकि जो रचनायें रुपी इमारतें खड़ी हो,वे पुख्ता हो परन्तु अंग्रेजी विचारक ड्रयउन ने निरंकुश कल्पना शक्ति से सावधान किया हैं। उनके अनुसार कल्पना शक्ति पर बौद्धिक अंकुश अवश्य होना चाहिए।[92] क्योंकि यदि ऐतिहासिक कृतियों को यदि कत्रिम रुप देकर कोरी कल्पना का आश्रय लिया जाएगा तो वे कृतियॉ पठनीय और आर्कषक होगी, लेकिन उनमें अतीत के भौतिक सत्यों की उपेक्षा होगी। अगर हम उपन्यासों के कथानक में इतिहास और कल्पना की चर्चा करें तो "कोई भी उपन्यास चाहे वह ऐतिहासकि हो या सामाजिक,कल्पना के द्वारा विविध मानवीय संवेदनाओं का विस्तार करके भावनाओं और विचारों के बीच एक नवीन सामंजस्य खोजने का प्रयास करता हैं, और अपने सीमित रुप में जीवन के सत्य को अधिक से अधिक अभिव्यक्त करने का लक्ष्य रखता हैं।"[93] उपन्यास को वर्तमान जीवन का महाकाव्य कहा जाता हैं। अतः जिस उपन्यास की वस्तु जीवन की वास्तविकताओं से जुड़ी होती हैं,उसी उपन्यास का कथ्य अधिक प्रभावशाली होता हैं। अगर हम ऐतिहासिक उपन्यासों को ले तो ऐतिहासिक उपन्यास एक ओर इतिहास को अपनाते हैं तथा दूसरी ओर उपन्यास कला को। यदि वे कोरा इतिहास लिख देते हैं,तो वह उपन्यास कला के अविश्वासनीय सत्य को अपनाकर उपन्यास को अरुचिकर बना देते हैं।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने भी इसी पक्ष का समर्थन करते हुए लिखा हैं,कि ऐतिहासिक उपन्यास कोई इतिहास नहीं, जिससे इतिहास ज्ञान सीखा जाए। उसमें तो एक कहानी मिलेगी। इतिहास काल विशेष की चीज हैं। ऐसी चीज क्यों न दी जाए जो युगों से ऊपर की हो, जो शाश्वत हो,सार्वभौम हो । वह हैं इतिहास रस। अतः पाठकों को यह आशा नहीं करनी चाहिए कि उपन्यास काव्य या कहानी को पढ़कर वे ऐतिहासकि ज्ञान अर्जन करेंगे। ऐसी पुस्तकों में से तो उन्हें इतिहास रस की ही प्राप्ति होगी।[94]

अतः ऐतिहासिक उपन्यासकार कल्पना साहित्य तथा इतिहास के वास्तविक तत्वों की रक्षा करते हुए उपन्यास को कलात्मकता प्रदान करते हैं। उपन्यास के कलात्मक पक्ष को उभारते हुए मिश्र जी ने स्वयं लिखा हैं। कि "मनोवैज्ञानिक,दार्शनिक या सामाजिक

सत्य रचना के भीतर तभी मूल्यवान होते हैं,जब वे उसकी समग्रता संकुलता एवं कलात्मकता की रक्षा करते हैं"। [95] जीवन में बढ़ती आपाधापी पर चिन्ता व्यक्त करते वे लिखतें हैं कि "रचना,कहानी,साहित्य के सम्बन्ध में आज सबसे बड़ी चिन्ता की बात यही है कि हमारी कल्पना शीलता में कमी आती जा रही हैं। जो हमारा जीवन हैं,जिन चीजों के लिये हमारा संघर्ष हैं–ये ऐसे हैं कि कल्पना के लियें जगह नहीं छोड़ते । इन परिस्थितियों के चलते आगे क्या होगा......कह नहीं सकता। लेखन तो रहेगा क्योंकि वह मुनष्य की स्वयं को व्यक्त करने की व्यग्रता से जुड़ा हुआ हैं....... लेकिन हमारी कल्पना शीलता क्या ऐसे ही सीमित होती चली जाएगी?जरुर इसका ताल्लुक हमारी जिन्दगी की आपाधापी से है जो बढ़ रही हैं........ जो हमें थमने,थमकर अपने में डूबने कल्पनाशील के स्वभाव को बनाए रखने का मौका नही देती...... अतः मिश्र जी का मानना हैं कि रचनाओं में कलात्मक उभार अवश्य होना चाहिए है, साथ ही वे आज की दौड़ धूप वाली व्यस्त जिन्दगी पर चिन्ता व्यक्त करते हैं क्योंकि आज के परिवेश में मानव की कल्पना शक्ति का ह्मस होता जा रहा हैं। कल्पना शक्ति के अभाव में रचनाएॅ अपने वास्तविक स्वरुप से हटती चली जाती हैं और उनमें नीरसता आती जाती हैं।

गोविन्द मिश्र के उपन्यासों तथा कहानियों के कथानक में इतिहास और कल्पनाः→

उपन्यास'हुजूर दरबार' व 'पॉच ऑगनों वाला घर' तथा 'धांसू' संग्रह और 'खाक इतिहास' संग्रह की कुछ कहानियों को लेखक ने इतिहास दृष्टि से देखा और परखा हैं।

उपन्यास 'हुजूर दरबार' में लेखक ने 'स्वतंत्रता प्राप्ति काल की पृष्ठभूमि में हुए ऐतिहासिक परिवर्तन(राजतन्त्र का प्रजातन्त्र में विलीनीकरण) दोहरे भाव से जीती रियासती मानसिकता,उनकी मूल्यहीनता,उन्मत्ता सामान्य मनुष्य के प्रति उनके अमानवीय व्यवहार तथा प्रयास साधारण जनता की करुणिक कथा का चित्रण किया हैं। "हुजूर दरबार" का कथानक इतना जीवन सदृश्य हैं कि उसको बताना हो तो उपन्यास के जीवन दृश्यालेख के बारे में ही सतत बोलना पड़ेगा।जीवन के एक सनातन सत्य के बहु अयामी रुप का यह चित्रमय प्रस्तुतीकरण हैं। यह सत्य अनादि काल से समाज में चल रहे दो वर्गो का संघर्षः एक वर्ग सत्ताकांक्षी लोगों का है और दूसरा उनकी जी हुजूरी करने के लिये मजबूर किये गये दुर्बलों का,यह संघर्ष सम्बन्ध वैसे एक तरफा विजय का, सत्ताकांक्षी वर्ग की विजय का हैं, लेकिन इन सत्ताकांक्षियों में भी सत्ता के लिये लालायित अनेक प्रकार की अंतर्गत लड़ाई चलती रही हैं। अतःइस लड़ाई को स्थूल रुप में सत्ताधीश एवं सत्ताहीन लोगों का सम्बन्ध, सत्ताधीश और सम्बन्ध कहा जा सकता हैं।[96] अतीत की घटना और चरित्रों पर आधारित यह उपन्यास स्वतन्त्रयोत्तर काल के मूल्य

संक्रमण राजनीतिक उथल–पुथल और समाज से गहरे जुड़ा हैं। उपन्यास टीकमगढ़ रियासत और ओरछा रियासत के धरातल पर प्रतिष्ठित होने के बावजूद आधुनिक भाव बोध से जुड़ा हैं। उपन्यास के कथानक दो भागों में बटा दिखाई देता हैं–राजमहल के भीतर का कथानक,जिसमें महल की भव्यता,विलासिता,रानियों का वर्णन हैं। इसमें लेखक कथानक में उन्हीं घटनाओं का चित्रण किया हैं,जिसमें राजमहल के वातावरण को अधिक सघनता और स्पष्टता के साथ उजागर किया जा सके। तथा उपन्यास को इतिहासानुकूल बनाया जा सकें।

राजमहल के बाहर का कथानक,जिसमें अन्य घटनाओं के साथ मुख्य कथा व्यवस्था की घुटन को अपने नियति मानने वाले मुख्य पाा हरीश का संत्रास को दर्शाती हैं ,जिसके पिता तथा दादा महल में राजगुरु थें। हरीश अपनी माँ की आँखों में संत्रास को देखता हैं। जो परिस्थिति वश विवशता में जी रही थी। वही विवशता अन्ततः लेखक की रहती हैं। उसका महाराज और नेपाल सरकार द्वारा उपयोग किया जाता हैं।राजतन्त्र का प्रजातन्त्र में विलीनीकरण के बावजूद भी उसे गाँव में ही नहीं कलकत्ता दिल्ली में परेशान किया गया। उसकी पीड़ा ,संत्रास का उदाहरण दृष्टव्य हैं।

"वे कहते हैं कि तुम जैसे गिरो–कटों को इसलिये कुर्सी बनाया जाता हैं ताकि तुम हमें चलाओं और हमारा रुतबा बना रहें.... दरबार चलता रहें। जैसे हमारी परम्परा में अब तक कोई विध्न नहीं पड़ा वैसे ही आगे भी न पड़ें। हम तो तुम्हें इस अंतर्राष्ट्रीय स्वांग में भी फंसना चाहते थें,ऐसे केन्द्रों को हम इसलिये अपने कब्जे में रखना चाहते हैं जिससे कि हमारी ठकुराइत चले। मठों–मन्दिरों में भी हम इसलिये जाते हैं,हड़तालों में इसलिये करते हैं।"(97)

उपन्यास में रियासत के बदलते स्वरुप का ऐतिहासिक चित्रण हैं। पंडित नेहरु और प्रजामण्डल के नेता जैसे पात्र उपन्यास को यथार्थ स्वरुप प्रदान करते हैं।परन्तु लेखक रुपी झरोखे के माध्यम से जब हम राजपरिवारों के पात्रों के जीवन में झाँकते हैं, तब कल्पना और इतिहास का समिश्रण उपन्यास को महत्वपूर्ण बनाता दिखाई देता हैं।

<u>'पाँच आँगनों वाला घर':–</u> 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास में एक संयुक्त परिवार की कथा के माध्यम से सन् 1940 से लेकर 1990 तक के खण्ड में घटित सामाजिक राजनैतिक सांस्कृतिक नैतिक परिवर्तन का प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया गया हैं। उपन्यास की कथा को तीन खण्डों में विभक्त किया गया हैं। पहले खण्ड में एक ओर संयुक्त परिवार में रहने वाले सदस्यों के बीच रागात्मक स्नेह पड़ोसियों,हिन्दू मुसलमानों के बीच आपसी भाई चारे के सम्बन्धों ,सौहार्द,त्याग ,एकता,सौमनस्य को दर्शाया गया हैं तथा दूसरी ओर स्वतन्त्रता प्राप्ति की आकांक्षा में जन–जीवन के अपूर्व सहयोग उल्लास ,अंग्रेजों की दुष्यनीति, स्वतन्त्रता प्राप्ति पर देश के विभाजन,गाँधी की हत्या, नेताओं की

लोलुपता तथा जन साधारण के मोहभंग की स्थितियों को ऐतिहासिक सन्दर्भो में कलात्मकता के साथ उभारा गया हैं।

दूसरे खण्ड में 1960 से लेकर 1975 तक की कथा में एक ओर संयुक्त परिवार के विघटन से होने वाली बुजुर्गो की पीड़ा को,नवीन पीढ़ी की मूल्यहीनता को,परिवार के अत्यन्त संवेदनशील पात्र (जो कथानायक हैं) राजन की पत्नी की द्वारा उसकी संवेदनाओं को कुचल उसे परिवार से काट देने के प्रयास को ,राजन का पूर्ण एकल परिवार के व्यक्ति बन जाने की स्थितियों के प्रस्तुतीकरण को कलात्मकता के साथ उभारा गया हैं।

इसके साथ–साथ दूसरी ओर सन्नी जैसे पात्र के माध्यम से छठें दशक के प्रारम्भ में देशव्यापी ऐतिहासिक मोहभंग की स्थिति से क्षुब्ध से जन साधारण की मनःस्थिति को, 24 जून 1975 में इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा इन्दिरा गांधी के चुनाव को अबैध ठहराये जाने की घटना को, आपातस्थिति में राजनीतिक सिद्धान्त विहीनता अवसरवादी नेताओं की कुप्रवृतियों जैसी ऐतिहासिक घटनाओं को कलात्मक रुप में व्यक्त किया गया हैं।

तीसरे खण्ड में 1980 से 1990 तक के काल में पश्चिम की भोगवादी संस्कृति में पूरी तरह रंगी तीसरी पीढ़ी की धुरीहीनता को, उनके आचरणों को, मूल्यहीनता, स्वच्छन्दता की दुष्यपरिणामों को चित्रित किया हैं।

इस उपन्यास के कथानक पर टिप्पणी करते हुए डॉ0 रामजी तिवारी जी ने लिखा हैं कि "संरचना की दृष्टि से 'पॉच ऑगनों वाला घर' अपनी बनावट और बुनावट में अत्यन्त सघन और संस्लिष्ट हैं। कथानक के विकास के लिये प्रसंगों का नियोजन इतने कौशल से किया गया हैं कि न तो कहीं स्फीति हैं और न ही बिखराव। कथानक और चरित्रों को पूर्ण विकास का अवसर मिला हैं। ऐतिहासिक प्रामाणिकता और औपन्यासिक कला की सिद्धि का मणि–कंचन योग इस कृति में विलक्षण परिपाक का उदाहरण प्रस्तुत करता हैं। प्रभावपूर्ण और आर्कषण रचनात्मक भाषा गोविन्द मिश्र की अपनी सिद्धि हैं।[98]

अतः उपन्यासकार मिश्रजी ने उपन्यास में विशुद्ध ऐतिहासिक घटना प्रसंगों में तथ्यमूलक कल्पना का सहयोग लिया हैं। डॉ0 रामजी आगे लिखते हैं कि———

मिश्र जी के इस उपन्यास में सामाजिक राजनीतिक बौद्धिकता का वर्चस्व दिखाई देता हैं।

कहानियों के कथानक में इतिहास और कल्पना:→

'खाक इतिहास' और 'धॉसू' संग्रह की कुछ कहानियों में लेखक ने ऐतिहासिक मुद्दों को उठाया हैं।

धॉसू कहानी संग्रह:—

इस संग्रह की कहानियॉ 'बहुधंधीय' 'धॉसू', 'जनतन्त्र' राजनीति सन्दर्भो में सामाजिक ऐतिहासिक तथा आम की त्रासदी के चित्र उपस्थित करती हैं।

'धॉसू' कहानी आपातकालीन स्थिति में जनसाधारण

मोह भंग को चित्रित करती हैं। 'जनतन्त्र' आम—आदमी की त्रासदी का चित्र उपस्थित करती हैं।

'वे कहते हैं' कि तुम्हारा दिमाग खराब हैं,कोठियों से नीचे बात ही नहीं करते। सोचते—सोचतेही खराब हुआ हैं।मैं कहता हूॅ, मनुष्य चिन्तनशील प्राणी हैं—दर्जा पॉच की किताब में लिखा हैं। वे ही मेरे बारे में इतना क्यों सोचते हैं? डॉक्टर साहब कहते हैं,तुम्हें सोचना नही चाहिए। अब गालियॉ वे दे, हर वक्त बात भी वे करें, मेरी कोई सुने नही और मैं सोचूॅ भी नहीं?भई,चलता—फिरता हूॅ तो कुछ तो करुॅगा सही![99]

इन कहानियों में समकालीन यथार्थ,सामाजिक व राजनीतिक सत्ता की ताकतों,घटनाओं को इतिहास पुट देकर कलात्मक विस्तार दिया गया हैं।

" मिश्र जी की रचना—दृष्टि वर्तमान को परम्परा से जोड़ती हुई भविष्य की थाह लेती हैं। इसलिये उनका गंतव्य न तो सामयिकता से बद्ध रहता हैं,न इतिहास के बीत चुके सन्दर्भो में खो जाता हैं और न ही कटे भविष्य के अनदेखे सपनों में दौड़ लगाता हैं। समय की निरंतरता का एहसास उनकी रचना का एक अहम् पहलू हैं। वे शायद उस क्षण को हासिल चाहते हैं जिसमें अतीत का अतीतत्व और उसका वर्तमानत्व इस तरह एक साथ सम्मिलित होते हैं जो अपनी निरंतरता में नयी उद्भावनाएॅ प्रकट करता हैं।[100]

खाक इतिहास कहानी संग्रह

इस कहानी संग्रह की कहानियॉ 'खाक इतिहास'', 'आल्हखण्ड' को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा—परखा गया हैं। 'खाक इतिहास' की पात्र मरिया अंर्तराष्ट्रीय कम्यूनिज्म की बर्बरता का शिकार बन अपना सब कुछ खो चुकने के बाद टूटती नहीं हैं अपितु मानवीयता से ओत—प्रोत हो अन्धी औरत को शिक्षा प्रदान करती हैं। वह इतिहास का शिकार होती हैं। परन्तु इतिहास के क्रूरतम सत्य के आगे घुटने नहीं टेकती। कथाकार ने चैकोस्लोविया की राजधानी प्राहा में घटित घटना को कथ्य बनाकर

मार्क्सवादी,राजव्यवस्थाओं में चल रहे बर्बरता और मानवीयता के दमनकारी नृत्य को बड़ी कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया हैं। ये कहानियाँ कुछ ऐतिहासिक आयामों को खोलती है, और इतिहास के कूरकाल प्रवाह के बहाब के खिलाफ स्वस्थ और प्रासंगिक मानवीय मूल्यों को बनाये रखती हैं।

इतिहास–अनिश्चित आयाम का अहसासनाम से लेखक ने चार पृष्ठों में बेहद दार्शनिक भाषा में जो भूमिका लिखी हैं। उसका मतलब यह निकलता हैं कि जिन्दगी का कुरुप और घृणित पहलू ही साहित्य का एकमात्र आधार नही हैं। वह जो सकारात्मक हैं और इतिहास के कूर बहाव के खिलाफ इंसाननियत को टिकाये रखता हैं, वह भी साहित्य का हिस्सा होना चाहिए। इससे आगे जाकर लेखक यह मानता दीखता हैं। ''कि वही साहित्य अगर होगा जो इन्सानियत के इन जिन्दा रुखों से जुड़ा होगा।''[(101)]

वैसे समकालीन मानवजीवन का यथार्थ चित्रण करने वाली कहानियों और उपन्यासों को में भी ऐतिहासिक सन्दर्भ रहते हैं 'क्योंकि सम्पूर्ण काल प्रवाह ही इतिहास हैं–चाहे वह वर्तमान हो अथवा अतीत और पुरातत्त्व के द्वारा सयोजित प्रमाण हमें निरन्तर निर्देश देते हैं कि मनुष्य की आशाएँ और आकांक्षाएँ पीढ़ी–दर पीढ़ी अथवा युग–युगान्तरों में बहुत कम बदलती हैं।''[102]

द्वितीय अध्याय— मिश्र जी के कथा साहित्य का वस्तुविधान

उपअध्याय—5— कथानक में आंचलिकता

आंचलिक दिशाएं:→

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी—कथा के क्षेत्र में छठें—सातवें दशक में आंचलिकता समीक्षा का विषय बनी और उससे सम्बद्ध अंचल, आंचलिक, आंचलिकता,स्थानीय रंग जैसे तत्वों पर पर्याप्त विचार किया गया। परिचमी साहित्य में 'मेरिया एजवर्थ' ने अपने उपन्यास 'कैसल रैकरेंट' की रचना करके इस नवीन शैली को जन्म दिया। परन्तु भारतीय साहित्य में 'रेणु' ने अपने उपन्यास 'मैला आचल' में जिस अंचल और आंचलिक शब्द का प्रयोग किया उसने एक कथागत आन्दोलन रुप धारण कर लिया और यह आन्दोलन गहरे में जाकर एक सृजन दृष्टि बन गयी।

आंचलिकता का तात्पर्य:→

आंचलिकता के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों तथा उपन्यासकारों ने अपने अपने मत प्रकट कियें हैं→

(1) डॉ0 नगीना जैन— आंचलिकता का अर्थ हैं क्षेत्र—विशेष के सत्य का उद्‌घाटन करता हुआ जीवन,जो किसी एक परिवेश विशेष का नहीं, वरन् उस खण्ड की समग्र क्षेत्रीयता का प्रतीक हैं। अंचल के भौगोलिक या सामाजिक या सांस्कृतिक सीमा—बद्ध खास क्षेत्र के सामान्य जीवन सत्यों का अन्तर या एकरुपता का निर्देशन,देश काल,जाति धर्म भौगोलिक स्थिति,आर्थिक सामाजिक प्रणाली

रीति—नीति के मनोवैज्ञानिक रहस्य के बीच स्थापित क्षेत्रीय जीवन की स्वीकृति आंचलिकता को व्यक्त करती हैं अंचल—विशेष की एक विशिष्ट भौगोलिक खोज का हैं आंचलिकता।''[103]

डॉ0 ह0के कड़वे के अनुसार—अंचल शब्द से वैशिष्टय पूर्ण भू—भाग या भू प्रदेश का बोध होता हैं जो अपनी स्थानीय भौगोलिक या प्राकृतिक विशेषताओं के कारण अन्य संलग्न भूमि से अलग दिखाई देता हैं, उसकी जलवायु एवं प्राकृतिक पार्श्वभूमि, लोगों का रहन—सहन आचार—विचार ,बोल—चाल की भाषा,वेशभूषा यहॉ तक कि उसका सम्पूर्ण जन—जीवन आप में ईकाई बन जाता हैं। अंचल का सामुदायिक तथा सांस्कृतिक जीवन अपनी विशिष्टता रखता हैं। अंचल विशेष के जन—जीवन एवं जन संस्कृति का प्राकृतिक पार्श्वभूमि में रेखांकन करने की साहित्य की जो एक विशिष्ट प्रवृत्ति हैं,वही आंचलिकता हैं।''[104]

आंचलिक उपन्यासः→आंचलिक उपन्यास हिन्दी साहित्य में एक नव–चेतना के रुप में उभरे हैं। औपन्यासिक परिप्रेक्ष्य में इस चेतना का अभ्युदय 1950 के बाद हुआ। रचना शीलता का नवीन और विशिष्ट भाव बोध होने के कारण उपन्यास के अतिरिक्त साहित्य की अन्य विद्यायों जैसे कहानी,नाटक इत्यादि को भी आंचलिकता ने प्रभावित किया। परन्तु बीसवीं सदी के नैवेदशक तक आते–आते इस चेतना में बिखराव आ गया, और यह कड़ी कमजोर पड़ गयी।

हिन्दी साहित्य कोश में इस सत्य को स्वीकाते हुए डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने स्पष्ट किया हैं कि→ आंचलिक शब्द प्रायःउपन्यास लेखन के प्रसंग में प्रयुक्त होता हें, यद्यपि कहानी,काव्यग्रादि अन्य विघाएँ भी इससे अछूती नहीं हैं। आंचलिक रचनाओं में कोई विशेष अंचल व क्षेत्र या उसका कोई एक भाग व गॉव ही प्रतिपाध या विवेच्य होता हैं। आंचलिकता की सिद्धि के लिये स्थानीय दृश्यों,प्रकृति,जलवायु त्यौहारों, लोकगीत, बातचीत का विशिष्ट ढंग, मुहावरे ,लोकोक्तियॉ,भाषा के उच्चारण की विकृतियॉ,लोगों की स्वाभावगत या व्यवहारगत विशेषताएँ,उनका अपना रोमांस,नैतिक मान्यताएँ आदि का समावेश बड़ी सर्तकता और सावधानी से किया जाता हैं आंचलिक रचना भले ही सीमित क्षेत्र से सम्बद्ध हो पर प्रभाव की दृष्टि से सार्वजनिक हो सकती हैं,बशर्ते उसका सृष्टा वैसी प्राणवत्ता व तलस्पर्शी सूक्ष्म दृष्टि रखता हो तथा उसके विचारों में एक गरिमा और कला में सौष्ठव हो।"[105]

अतः आंचलिकता कथाकार का वह दृष्टिकोण हैं जो किसी विशिष्ट सांस्कृतिक ईकाई को उसकी सम्रगता में चित्रित करता हैं,जिसमें जमीन की गहरी छुअन,गंध होती हैं कुशल कथाकार के कलालाधव से यह साकार हो उठती हैं तथा कथाकार अपनी सूक्ष्म मर्मीस्पर्शी रागदृष्टि द्वारा इस सामुदायिक जीवन के तमाम अछूते पहलुओं पर प्रकाश डालने में समर्थ होता हैं। इसे प्रस्तुत करने में उसका दृष्टि कोण वैज्ञानिक मानवशास्त्राी और लोकतत्ववेत्ता के समान होता हैं।

कथानक में आंचलिकताः→ आंचलिकता उपन्यासों में देश और वातावरण के सृजन के लिये लेखक पर्याप्त श्रम करना पड़ता हैं क्योंकि आंचलिक कथा में किसी अंचल विशेष की लोकपरम्परा, भाषा,लौकिक मान्यताओं विश्वास विशिष्टता, जातीय संस्कार तथा वेश भूषाओं का यथातथ्य चित्रण करना होता हैं। अतः इन उपन्यासों का कथानक इतना जटिल तथा मुश्किल होता हैं कि उसके तंतुओं अथवा सूत्रों को अलगाया नहीं जा सकता हैं। फलस्वरुप कथानक विविधता और बिखराव, विसंगतियॉ आ जाती हैं,जो इसके दोष नहीं माने जाते हैं अपितु, ये सब अपनी अलग विशिष्टता के रुप में उभारते हैं।

इस सन्दर्भ में डॉ0 रामदरश मिश्र ने लिखा है कि "इन उपन्यासों में कथागत बिखराव का आभास होता हैं। समग्रता को समंजित करने,अपने पक्षों के बांधने,कोण वैविध्य के समवाय, अनेक जीवन स्तरों को एक साथ रखने, समाज और व्यक्ति चेतना के अनेक सूत्रों को संगठित करने के बहुमुखी प्रत्यनों में विच्छिन्नता का प्रतिभास स्वाभाविक ही हैं। यहां बाह्म संगठन देखने की चेष्टा न्यायोचित नहीं हैं क्योंकि इनका संगठन आंतरिक ही हो सकता हैं।"(106)

कुछ उपन्यासकारों ने विशिष्ट भूमि तथा उससे सम्बन्धित पिछड़े जनपद की कथावस्तु लेकर आंचलिक उपन्यासों की रचना की हैं।

गोविन्द मिश्र की रचनाओं के कथानक में आंचलिकता:-

मिश्र जी ने अपने उपन्यास 'लाल पीली जमीन' तथा फांस कचकौंध जैसी, कहानियों का कथानक आंचलिक तत्वों से बुना हैं। इनमें बुन्देली आंचलिकता की भीनी-भीनी मोहक गन्ध का आभास होता हैं।

लाल-पीली जमीन उपन्यास के कथानक में आंचलिकता

इस उपन्यास में बुन्देलखण्ड के एक अंचल विशेष का चित्रण हैं। अंचल ही इस उपन्यास का नायक हैं। इस आंचलिक जीवन का सन्दर्भ प्रस्तुत कर उपन्यासकार ने सम्पूर्ण समाज में व्याप्त हिंसा के सामाजिक कारणों की पड़ताल की हैं। कथाकार ने नवीन कथानक,यथार्थ, परिवेश क्षेत्रीय व्यक्तियों के दम्भ,पात्रों की मनोवृति,आंचलिक भाषा बिंबों एवं प्रतीकों के कुशल संयोजन से उपन्यास में आंचलिक मांसल तत्वों का प्रयोग किया हैं। लेखक ने इस अंचल विशेष की भौगोलिक पृष्ठभूमि की यथावत पहचान करायी हैं। तथा उपन्यास को स्थानीय रंग प्रदान करने के लिये बुर्ज,किला,पहाड़,काली चट्टानों का कालापन,पीपल की सरसराहट,मन्दिर कुइयों,तीतर बटेर की लड़ाई सॉड़ों की लड़ाई साधनहीन बच्चों के खेलचिया,गुल्ली-डंडा,दंड बैठक,कुश्ती,पशुओं की नार के पीछे गिरते गोबर को पकड़ने के खेल बड़े लड़कों द्वारा छोटे और सुन्दर बच्चों के फॅसाने सन्दर्भो को रख वातावरण की भयावहता को वर्णित किया हैं। यहॉ के जीवन की मूल्य हीनता,संस्कार हीनता तथा मानवीय स्त्रोत्रों की पहचान लेखक ने 'लाल पीली जमीन' की मिट्टी से करवाई हैं।

"वहॉ की सम्यता इसी मुरम पर खड़ी थी। सारी की सारी बस्ती जैसे गाली-गलौच और मार-पीट के गारे चुने से उठाई गयी थी और उसी पर टिकी थीं। यहॉ नौजवानी आदमी को आती थी तो ठीक कुत्ते की तरह। एकदम ठक से भेजे में चढ़ जाती और बौखलाहट में मच-मच करती ही रहती। इस कमल के साले फूल को तोड़

कर ही रहना हैं–यह वहॉ की प्रेम की भाषा थी;और कब फॅसोगी? यह प्रेम –निवेदन । मुग्दर भांजना और मूँछों वाला होकर लाठी लिये घूमना,सर्वोकृष्ट मूल्य थें। मारपीट,लड़ाई झगड़े,गाली गलौज की खुश्बू को ढोते हुए वहॉ के हवा के झोंके उठते थें और इधर से उधर जाते थें। कहीं कुश्ती होती...कहीं तीतर और मुर्गी की लड़ाई होती। जानवरों का भी वहीं स्वभाव बन गया था जैसे सॉपों की लड़ाई,जीवों और सॉड़ों की लड़ाई और नार में जाते हुए गोरु बछेरुओं की लड़ाई। कहीं बन्दर बन्दरिया के नाच होते–बन्दरिया मायके चली जाती हैं,बन्दर मनौतियॉ करता हैं,बन्दरिया नही मानती तो बन्दर लाठी उठा लेता हैं–और बन्दरिया को हॉक कर ले आता हैं''(107) उपन्यास में बुन्देलखण्ड के कस्बे की समस्याओं,विंसगतियों का प्रमाणिक उद्‌घाटन किया गया हैं इन समस्याओं का कलेवर अत्यन्त विस्तृत और व्यापक हैं। कथाकार अपनी सूक्ष्म दर्शी दृष्टि के द्वारा इस अंचल के अनछुए पहलुओं पर प्रकाश डालने में समर्थ हुआ हैं, और जन–जीवन की दुर्बलताओं को उनकी सम्पूर्णताओं में उभार सका हैं।''

मिश्र जी की कहानियों के कथानक में आंचलिकता:–

कहानी के कथानक में विकास की पॉच अवस्थाऍ मानी गयी हैं

आरम्भः– यह रोचक होना चाहिए,(2) आरोहः– इसमें प्रमुख पात्र की मानसिक स्थिति का विकास दिखाया जाना चाहिए।(3) चरम स्थिति–यह वह स्थिति हैं जहॉ कहानी की रोचकता में क्षण भर के लिये स्तब्धता आ जाती हैं पाठक सोचने लगता है कि अब न जाने क्या होगा?(4) अवरोह– आगे क्या हुआ था, अथवा चरम स्थिति का समाधान ही अवरोह हैं तथा (5) अन्त या उपसंहार– इसमें कहानी का परिणाम निहित रहता हैं। इस स्थिति पर कुछ कहानीकार सम्पूर्ण रहस्य का उद्‌घाटन कर देते हैं तथा कुछ परिणाम को अस्पष्ट रखकर पाठकों को मनन करने की साम्रगी दे देता हैं। मिश्र जी की कहानियॉ'फॉस' और 'कचकौंध' में आंचलिक तत्वों की अभिव्यक्ति हुई हैं।

फॉस–फॉस कहानी की कथावस्तु में आंचलिकता का पुट हैं। इसमें बुन्देलखण्ड के एक ग्रामीण अंचल में घटित घटना को उठाया गया हैं। गॉव की एक औरत जिसका पति हॉट में गया हैं,और दो चोर उसके घर में घुस आते हैं। उनमें से एक औरत को उलझाता हैं तथा दूसरा घर के सामानों को टटोलता हैं बातों–बातों में वह गल्ती से कह देता हैकि वे उसी गॉव के हैं जहॉ उस औरत का मायका हैं।फिर क्या था आत्मीयता का बहाव और उस बहाव में बह जाते हैं। कहानी में भाषा कथानक तथा चरित्रों के माध्यम से आंचलिक तत्वों को सहेजा गया हैं तथा वातावरण को सजीव बनाया गया हैं। कहानी में गॉव की पात्रा के माध्यम से आधुनिक जीवन स्थितियों में परिवर्तित मानवीय

मूल्यों की बात लेखक ने बड़ी कुशलता से रख़ी हैं। बदलती जीवन स्थितियों में भी आत्मीय सम्बन्ध भारी बदलाव लाते हैं।

कचकौंचः→ बुन्देली परिवेश में लिखी गयी इस कहानी के कथानक में बुन्देलखण्ड अंचल के विविध पक्षों को समग्रता से उभारा गया हैं। बूढ़े ग्रामीण स्कूल मास्टर के माध्यम से भारतीय व्यैक्तिक,पारिवारिक जीवन की विवशताओं,सामाजिक विषमताओं,राजनैतिक विडम्बनाओं के प्रमाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किया हैं→

''भीख ही हैं.....भिक्षावृत्ति .....निम्नचाकरी..... सही कहा हैं....मन पर पसेरिन गेहुओं का बोझ हैं। गॉव का प्रधान,सहायक,सब डिप्टी,बोर्ड का चैयरमैन,शिक्षा मंत्री मुख्यमंत्री बड़े शहर के होटल चलाने वाले,अस्पताल और बड़े–बड़े स्कूल......उनका मन बड़ा हैं जहां ये बड़ी–बड़ी हस्तियां चूहे बनकर घुसी हुई हैं और गेहूँ को कुतर रही हैं। उन्हें लगता है,उन सबकी कारस्तानियॉ एक हैं,जैसे एक गिरोह के डकैतों का लूटने का ढंग एक होता हैं हर चीज के पीछे ससुर कोई न कोई षड़यन्त्र या कोई न कोई व्यापार हैं।सब–की–सब छोटी–मोटी पगडंडिया हैं, जो दूर जा कर किसी बड़ी सड़क से मिलती हैं वह सड़क भी सिर्फ भूलभूलैया की ओर ही जाती हैं एक सूध कुर्सियां हैं जैसे राजगिरी के रज्जुपथ देखा था....पीछे वाली इस कुर्सी को ढकेलती है और यह आगे धकियाती हैं।'' (108)

इस कहानी में आंचलिक परिवेश बुन्देली शब्दावली,मुहावरों और कहावतों के प्रयोगों द्वारा कहानियों में आंचलिक तत्वों की अभिव्यक्ति हुई हैं,तथा आंचलिक परिवेश में नागरीय चेतना की संक्रमणशीलता पिछले जीवन का संघर्ष खोखले होते विश्वासों और सहज संवेदनशीलता का भर पूर चित्रण हुआ हैं।

उपअध्याय –6
कथा योजना का वैशिष्ट्य

महायुद्ध की भयानक प्रतिक्रिया के फलस्वरुप जीवन एवं जगत में अनेक कान्ति कारी परिवर्तन हुए और परिवेश का यथार्थ बदल जाने के परिणामस्वरुप कथा साहित्य में भी नानाविध परिवर्तन हुए। आधुनिक भावबोध, संवेदना तथा संचेतना के फलस्वरुप ,कथ्य, शिल्पशैली के क्षेत्र में नव प्रयोग हुए। कथानक एवं चरित्र चित्रण जो कभी उपन्यास शिल्पविधि के प्राण तत्व समझे जाते थें। वे आधुनिक उपन्यासों के रुपबन्ध में फीके लगने लगे और कथ्यों एवं अनुभवों के गहन स्तरों को सम्प्रेषित करने में सुसंगठित कथानक अवरोधक लगने 'लगा। कथाकारों द्वारा नव उपन्यासों में प्रतीकों,मानसिक जटिलता व विरुद्व चिन्तन के स्तर पर नानाविध प्रयोग किये गये। कहानी की संरचना में भी अनेक स्तर पर परिवर्तन हुए । कथातत्व का ह्यस,घटना कम का अभाव कथ्य के निरन्तर सूक्ष्म होने की प्रवृत्ति, कथानक की सूक्ष्मता की प्रवृत्ति ने कहानी की संरचना को प्रभावित किया। अतः इन रचनात्मक तेवरों के बीच मिश्र जी ने अपनी कृतियों के रचनात्मक दौर में कथा योजना का संयोजन किस प्रकार किया। यह विचारणीय विषय हैं। पर इस विषय पर अल्प प्रयास दृष्टव्य हैं–

मिश्र जी की औपन्यासिक कृतियों में कथा योजना का वैशिष्ट्यः–

उपन्यास'वह/अपना चेहराः– स्वातंत्र्योत्तरी काल में व्यक्ति का विभाजन व टूटन की समस्या को उद्घाटित करने वाले उपन्यास की कथावस्तु में स्थितियों, घटनाओं व पात्रों के मानसिक प्रवाहों में किसी भी प्रकार की अतिरेकी नहीं हैं। कम से कम शब्दों के माध्यम से यथार्थ को कलात्मक रुप में उभारा गया हैं। परन्तु नायक की मनोदशा, विचार कमों के उलझाव में कहीं–कहीं पुनरावृत्ति दोष आ जाता है। वस्तु के प्रति तटस्थ और निर्लिप्त कथाकार दो तरह की भूमिका निबाहता हुआ कथावस्तु को आगे बढ़ाता हैं। एक स्तर पर मैं के माध्यम से लेखक मनोविश्लेषक की भूमिका से पात्रों की किया –प्रतिकिया के प्रति हल्के से कुछ संकेत देता रहता है और दूसरे स्तर पर वह तटस्थ निरीक्षक व आलोचक की तरह घटना,किया –प्रतिकिया पर अपनी टिप्पणियॉ सूक्ति वाक्यों के स्वरुप में प्रस्तुत करता है। लेकिन में दोनो भूमिकाएँ उपन्यास की कथावस्तु में किसी भी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचाती, बल्कि मूल प्रवाह का अभिन्न अंग बन कलात्मकता को एक नया एवं प्रभावशाली आयाम देती हैं। (109) भोगे हुए यथार्थ को एक परिप्रेक्ष्य में रखकर मानवीय मनोवैज्ञानिक सत्य को उठाकर उसे कलात्मक रुप देना अपने आप में एक जटिल

चुनौती हैं। जिसे मिश्र जी ने सफलता पूर्वक झेला। उपन्यास की कथा का संयोजना उनके कलात्मक संयम की परिचायक हैं।

'उतरती हुई धूप':— उपन्यास की कथा 'प्रेम और यथार्थ के बीच प्रेम के भावात्मक उफान को अपने सम्पूर्ण सन्दर्भो में नहीं उभार पाती हैं। प्रेम की असफलता केबाद की स्थितियों को दर्शाने वाली यह विवाह के पूर्व बेहद भावुक हैं। प्रेमी को एक रात अपना स्वत्व समर्पित कर देती हैं। शेष भाग में नायक का एक मात्र झुकाव शरीरगत हो जाता हैं। वह नायिका को सशरीर प्राप्त करने के लिये बैचेन,तनाव-ग्रस्त रहता है। पर नायिका बच्चे और भविष्य के प्रति सर्तक हो समाजिकता के प्रति सचेत होती हैं और कथा चक जीवन के इन्हीं विचार खण्डों के बीच विकसित हो अपने अन्तिम बिन्दु पर पहुॅचती हैं। उपन्यास में किस्सागोई तो है साथ ही भावात्मक उथल—पुथल के प्रसंगों को अतिरेक संवेदना का स्पर्श अधिक मिला है कुछ प्रसंग सस्ती मिठास या चटखरे उत्पन्न करते हैं। जो लेखक़ के भोगे हुए यथार्थ तक सीमित हैं। प्रेम और सेक्स के विषय में परिवर्तित मानसिकता के अतिरिक्त लेखक जीवन के अन्य किसी वृहत्तर सन्दर्भो की ओर नहीं जाता हैं।

'लाल—पीली जमीन':—आंचलिक उपन्यासों की श्रंखला को आगे बढ़ाते हुए मिश्र जी ने इस उपन्यास में बुन्देलखण्ड अंचल के परिवेश विशेष की घटनाएॅ दुर्घटनाएॅ, टूटते—बिखरते,असहाय व्यक्ति की करुण कराहे का चित्रण किया हैं इस परिवेश की कथा कहने का फ्रेम बर्क जान पड़ती हैं किस्सा गोई की स्वतन्त्रता की छूट तले कथानक का आकार और मिजाज तय करने की संयोजन कला कई स्थलों पर उद्वरणीय बन उठती हैं। [110] 'परिवेश के चित्रण में एक पक्ष परिवेश की मिट्टी का है और इस मिट्टी व्याख्या में सभ्यता के तनाव को लक्षित किया गया हैं। कथा के एक छोर में अस्तित्वगत खोज में लगे नायक के अकेले असहाय,अपमान की पीड़ा के अनुभव है व संवेदनाओं की त्रासदी है और दूसरे छोर पर सुरेश के आतंकपूर्ण वारदातों का चित्रण हैं। लेखक ने पात्रों की मानसिकता की भीतरी तहों को पहचान कर उन्हें स्वाभाविक रुप में उद्घाटित किया हैं। एक परिवेश को उसकी समग्रता के साथ प्रस्तुत करने में कथाकार की शिल्प साहसिकता की कुछ मूल्य बातें सामने आई। पाठक"उपन्यास के उस परम्परागत स्वाद से वंचित रहा जिसका नाम हिन्दी उपन्यास है और साथ ही एक नाम है भावामुल रचनात्मकता निश्चिततः यहॉ परिवेश का नशा कथा को ज्यादा ही चढ़ बैठा है जिससे कई बार परिवेशगत किस्सागोई दण्डबाजी सी कर बैठती हैं।................परिवेश यहॉ इसलिये भी अधिक आतंकित करता हैं। क्योंकि उसके अतिरिक्त जो कथा सूचनाएॅ हैं, वे लगभग पूर्व

परिचित हैं।उनकी संवेदनाओं के सम्प्रेषण में लेखक का शिल्प तथा भाषा कई बार 'आउट–ऑफ–वे'जरुर जाकर मद्द करते है लेकिन परिवेश वर्णन का निजी स्वाद लेखक बार बार और बार–बार ......होता ही चला जाता है।" फिर उपन्यास की कथा की बुनावट में मिश्र जी ने सधे हाथों का प्रयोग किया है। आंचलिक ढंग के उपन्यासों में यह सराहनीय कहा जा सकता हैं।

हुजूर दरबारः– 'हुजूर दरबार' उपन्यास की कथा का उद्घाटन संक्रान्ति काल के ऐतिहासिक मोड़ पर व्यक्ति और व्यवस्था के बहुआयामी द्वन्द्व से होता है। भारतीय सामन्ती ऐयाशी के पतनशीलता के उद्घाटित करने वाले उपन्यास की समाप्ति जनतन्त्रिक ऐयाशी के पतनशील चरित्रों को सांकेतिक रुप उभारकर होती हैं। कथा का प्रारम्भिक छोर रियासत से जुड़ने पर प्रमुख पात्र की विवशता,संघर्ष से हैं। जिसे परम्परा से उसके बाप,दादा ढोते चले आ रहे हैं,व्यवस्था के षडयन्त्रों सत्ताधारियों की मनोवृत्तियों,मनोस्थितियों आजादी के आन्दोलनों में ऐतिहासिक परिवर्तन की उखाड़ पछाड़ से जुड़ता हैं। तथा दूसरा छोर प्रजातान्त्रिक विद्रूपताओं, महाराजाधिराजों की स्वार्थपरिता, मूल्यहीनता से जुड़ता हैं। कथा के प्रारम्भिक रुप में कथाकार ने उभारा हैं। पर लेखक राजदरबार के वैभव व शानों शौकत में अधिक उलझ गया हैं। पर दूसरे छोर में 'वह सत्तापक्ष के लोगों की झूठी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये चल रहे प्रयास अपनी कुर्सी को मजबूत करने के कुटिल दावपेचों,खरेकी रहस्यमयी मृत्यु,अर्थाजन के लिये मानवीय मूल्यों की बलि,निर्लज्ज आदतों का जीवंत रुप प्रस्तुत कर सका हैं। परन्तु अवचेतन के स्तर पर अभिव्यक्त असम्बद्व दी खते अर्न्तमुखी प्रलाप कहीं–कहीं कथा की गतिशीलता को बाधित करते व एक भ्रम पैदा करते हैं। पर सरंचात्मक दृष्टिकोण से इन दो धुरियों–कथा और आवधारणा के बीच डोलायमान स्ट्रेस चाहे उपन्यास मे रहा हो,इस स्थिति ने कृति को एक बड़े फलक पर गतिशील हो सकने की सम्भावना से सम्पृक्त किया है। स्थितियों और सन्दर्भो से ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण एक व्यापक परिप्रेक्ष्य ग्रहण किया हैं।[111]

तुम्हारी रोशनी में:– आधुनिक नारी के सूक्ष्म मूल्यबोधों, भावबोधों और समस्त जीवनगत आधुनिक चेतना को व्यक्तिगत एवं सामाजिक धरातल पर सशक्त रुप से अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली कथा को समझने के लिये बुनावट धागों की तह तक जाना होगा। परम्परागत दायरो से नारी मुक्ति की छटपटाहट आधुनिकता के बोध का अहम् पहलू है, यह छटपटाहट उपन्यास की पढ़ी लिखी खूबसूरत,बड़े ओहदे पर प्रतिष्ठित नायिका में दिखायी देती हैं। अपनी शर्तो पर जीने वाली यह नायिक अपने पुरुष मित्रों के सम्बन्धों से, अपने अन्दर के खाली कोणों की असहाय छटपटाहट पाट लेना चाहती है। उसके

मित्रों में अनन्त यान्त्रिक सम्यता की तह में दबी उसकी इस फड़फडाहट को पहचान लेता है और अपनी तार्किक विचारधारा व बौद्विकता से उसे प्रेम के उस भावात्मक बिन्दु अंत तक ले जाना चाहता है, जिस देवत्व की सी ऊँचाइयों का अहसास हो। कथा का प्रारम्भिक छोर अनन्त और सुवर्णा की मुलाकातों, एक दूसरे को जानने की जिज्ञासाओं, आत्मीयता नायिका की छटपटाहट,प्रेम में एकाधिकार की भावना नारी अस्मिता,विवाहोत्तर सम्बन्धों के स्वीकारों अस्वीकारों से जुड़ता हैं। दूसरे छोर पर नायिका के पति रमेश के अन्दर का संस्कारगस्त पुरुष जाग जाना व उस पर बदिशें लगाना, व पति के अधिपत्य की अनावश्यक चेष्टा करना व इस तमाम स्थितियों के बीच सुवर्णा का मॉ के यहॉ जाने का निर्णय लेना, व पति से तलाक न लेने पाने द्वन्द्व व अनन्त से न जुड़ पाने की पीड़ा से जुड़ता है। कुल मिलाकर घटना, प्रसंगों और व्यक्तियों के मर्म को उद्‌घाटित करने व उन्हें बरीकियत से संयोजित करने में मिश्र जी का कलात्मक संयोजन सराहनीय हैं। एक तरह से सम्पूर्ण सर्जनात्मक दृष्टि को रचने का कौशल इस उपन्यास में संभवतः आजादी के बाद के हिन्दी उपन्यासों में पहली बार उभरा है। " कथा और विचार दोनों को एक साथ रचने का–और वह भी कथा–साहित्य जैसी ललित विधा में रचने का प्रयास –न केवल रचना के प्रभाव की दृष्टि से समझने की दृष्टि से भी हमें सर्वथा नया आयाम प्रदान करता हैं।"[112]

उपन्यास की कथा वर्तमान नारी के अर्न्तमन की सूक्ष्मतम भंगिमाओं तथा वृत्तियों को प्रेम परिप्रेक्ष्य में उभारकर व्यक्ति और समाज के अन्धेरे पक्षों को उभारती हुई वृहत्तर सन्दर्भों से जुड़ जाती हैं।

उपन्यास धीरे –समीरे की कथा योजनाः– भौतिकवादी भोग–विलास सुख वैभव से थके हारे विभिन्न वर्ग, प्रान्त से आये, विभिन्न व्यवसायो, व्यापारों, पेंश –धन्धे से जुड़े यात्री, कुछ आधुनिक युवक युवितयॉ इस ब्रज यात्रा से जुड़ते हैं। अलग–अलग उद्‌देश्य व खोज में तल्लीन ये यात्री आन्तरिक जीवन के अर्थ सन्दर्भो को अपने–अपने तरीके से जाते भी है। इस प्रकार ये यात्रा' जीवन यात्रा का एक अलग प्रतिरुप रखती हैं। ब्रजयात्रा उद्‌घोषित रुप मेंतो धार्मिक यात्रा है पर सब समान मनः धार्मिक उसमें शामिल नहीं हैं। यह स्थिति अनास्था और अधार्मिकता को जॉचने परखने का एक परिप्रेक्ष्य भी देती हैं।

कथा की प्रमुख केन्द्र बिन्दू सुनन्दा है, जो अपने पुत्र किशोर की खोज में यात्रा से जुड़ती हैं। बाहरी रुप से यह खोज किशोर है। पर इस बाहरी यात्रा में अर्न्तमुखी प्रस्थान भी सम्भवतः दृष्टव्य हैं। ब्रजयात्रा के विविध पडावों, स्थान महात्म्य उनसे जुड़ी किवदन्तियों, अख्यानों मिथकों के साथ चलता है कथा प्रवाह और चरित्रों की

प्रकृति,जीवन यात्रा के अनेकानेक प्रवाह। इन सभी के बीच स्थायी रुप से बनी रहती हैं। कथा की गत्वरता,निरन्तरता और जीवन्तता। उपन्यास की कथा संयोजना में प्रगल्य कथाकार मिश्र जी कौशल देखते ही बनता हैं। परन्तु "मिश्र जी की रोमानी आदर्शवादिता से प्रेरित रचना दृष्टि कई बार अपनी एकांगिता के कारण यथार्थ के नकार पक्ष पर ही ज्यादा देर रुक जाती हैं जिससे समूची कथा चेतना असन्तुलित हो जाती हैं।"[113] यद्यपि अलग अलग समय पर अलग अलग पात्रों के स्वभाव चरित्रों के वैयक्तिक सुख–दुख,मनोवस्थाओं और आपसी सम्बन्धों की विविधताओं का मूर्तिकरण करने में कथा यात्रा में विछिन्नता आ जाती है। "पर निरन्तरता और विछिन्नता इन दो धुरियों पर कथा का सारा टिकाव है। प्रभाव की सिद्दि भी इन दोनों दो अभिप्रायों के बीच हुई है"। यात्रा मुख्य हैं, निरन्तर है, प्रभावी है। रच बस कर लिखी गयी है। स्थल और सन्दर्भ के छोटे से छोटे विस्तार को र्स्पशती हुई उसे ऐतिहासिक स्थायिक,प्रामाणिकता देकर पूरे वैभव और रचनात्मक ऐश्वर्य से कमाया गया हैं।"[114] अतः यात्रा के दौरान चरित्रों के वैशिष्टयों की भी सशक्त ढंग से रुपायित कर कथा संसार में प्रवाह बनाये रखना मिश्र जी जैसे सिद्व हस्त कथाकार का ही काम हैं।

पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास की कथा योजना का वैशिष्ट्यः– 'पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास में औपन्यासिक कला का उत्कृष्ट रुप देखा जा सकता हैं 1940 से लेकर 1990 तक के पचास वर्षो के काल खण्ड तक फैली उपन्यास की कथा भारतीय पृष्ठभूमि में एक परिवार की तीन पीढ़ियों की कथा के माध्यम से पारिवेशिक परिवर्तनों के साथ पारिवारिक विघटन की प्रकिया के प्रतिरुप में समाज में सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन का सजीव चित्र उपस्थित करती हैं।

संरचनात्मक दृष्टि से यदि कथा योजना के वैशिष्ट्य का यदि आंकलन किया जाये तो उपन्यास में कथात्मकता रसमयता सर्वत्र बनी रहती है। बुनावट और बनावट की दृष्टि उपन्यास की कथा में सश्लिष्टता हैं इसका सौष्ठव निराला हैं। "कथानक के विकास के लिये प्रसंगों का नियोजन इतने कौशल से किया गया हैकि न तो कहीं स्फीति है और न ही बिखराव। कथानक और चरित्रों को पूर्ण विकास का अवसर मिला है। [115] पर परिवेश को लेखक ने उसके विस्तार में नहीं, अपितु उसकी स्फीति में दर्शाया हैं। चरित्र अपनी सम्पूर्णता में उभरते हैं। कृति का कथ्य अपनी आवयविक संघटना में प्रखरतट रुप में प्रकट होता है। मिश्र जी की कलात्मक दक्षता का वैशिष्ट्य यह है कि कथा का सफल नियोजन और विकास कम पाठक को बांधे रखता है। उसकी उद्‌गम उत्सुकता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती हैं। पाठक तादात्म्य भाप से विभिन्न रसात्मक प्रंसगों का अवसाद लेता हैं। विचार के धरातल पर पाठक अनुभव और ज्ञान समृद्व होता चलता हैं।

प्रकृति,जीवन यात्रा के अनेकानेक प्रवाह। इन सभी के बीच स्थायी रुप से बनी रहती हैं। कथा की गत्वरता,निरन्तरता और जीवन्तता। उपन्यास की कथा संयोजना में प्रगल्य कथाकार मिश्र जी कौशल देखते ही बनता हैं। परन्तु "मिश्र जी की रोमानी आदर्शवादिता से प्रेरित रचना दृष्टि कई बार अपनी एकांगिता के कारण यथार्थ के नकार पक्ष पर ही ज्यादा देर रुक जाती हैं जिससे समूची कथा चेतना असन्तुलित हो जाती हैं।"[113] यद्यपि अलग अलग समय पर अलग अलग पात्रों के स्वभाव चरित्रों के वैयक्तिक सुख–दुख,मनोवस्थाओं और आपसी सम्बन्धों की विविधताओं का मूर्तिकरण करने में कथा यात्रा में विछिन्नता आ जाती है। "पर निरन्तरता और विछिन्नता इन दो धुरियों पर कथा का सारा टिकाव है। प्रभाव की सिद्दि भी इन दोनों दो अभिप्रायों के बीच हुई है"। यात्रा मुख्य हैं, निरन्तर है, प्रभावी है। रच बस कर लिखी गयी है। स्थल और सन्दर्भ के छोटे से छोटे विस्तार को र्स्पशती हुई उसे ऐतिहासिक स्थायिक,प्रामाणिकता देकर पूरे वैभव और रचनात्मक ऐश्वर्य से कमाया गया हैं।"[114] अतः यात्रा के दौरान चरित्रों के वैशिष्टयों की भी सशक्त ढंग से रुपायित कर कथा संसार में प्रवाह बनाये रखना मिश्र जी जैसे सिद्व हस्त कथाकार का ही काम हैं।

<u>पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास की कथा योजना का वैशिष्ट्यः–</u> 'पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास में औपन्यासिक कला का उत्कृष्ट रुप देखा जा सकता हैं 1940 से लेकर 1990 तक के पचास वर्षो के काल खण्ड तक फैली उपन्यास की कथा भारतीय पृष्ठभूमि में एक परिवार की तीन पीढ़ियों की कथा के माध्यम से पारिवेशिक परिवर्तनों के साथ पारिवारिक विघटन की प्रकिया के प्रतिरुप में समाज में सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन का सजीव चित्र उपस्थित करती हैं।

संरचनात्मक दृष्टि से यदि कथा योजना के वैशिष्ट्य का यदि आंकलन किया जाये तो उपन्यास में कथात्मकता रसमयता सर्वत्र बनी रहती है। बुनावट और बनावट की दृष्टि उपन्यास की कथा में सश्लिष्टता हैं इसका सौष्ठव निराला हैं। "कथानक के विकास के लिये प्रसंगों का नियोजन इतने कौशल से किया गया हैकि न तो कहीं स्फीति है और न ही बिखराव। कथानक और चरित्रों को पूर्ण विकास का अवसर मिला है।[115] पर परिवेश को लेखक ने उसके विस्तार में नहीं, अपितु उसकी स्फीति में दर्शाया हैं। चरित्र अपनी सम्पूर्णता में उभरते हैं। कृति का कथ्य अपनी आवयविक संघटना में प्रखरतट रुप में प्रकट होता है। मिश्र जी की कलात्मक दक्षता का वैशिष्ट्य यह है कि कथा का सफल नियोजन और विकास कम पाठक को बांधे रखता है। उसकी उद्गम उत्सुकता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती हैं। पाठक तादात्म्य भाप से विभिन्न रसात्मक प्रंसगों का अवसाद लेता हैं। विचार के धरातल पर पाठक अनुभव और ज्ञान समृद्व होता चलता हैं।

अपनी सूचनाओं और अनुभवों को वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक विश्लेषण के साक्ष्य की कसौटी पर कसता चलता है।"[116] कला पक्ष की दृष्टि से यह उपन्यास साहित्य की एक श्रेष्ठ कृति है।

<u>कहानियों की कथायोजनाः—</u> नयी कहानी के दौर में ही कथानक का ह्रास होने लगा था। कथा कहने की प्रवृत्ति में बदलाव आया था। कथानक की अवधारणा बदली और परम्परागत कथा परिपाटी के स्थान पर वस्तु को ग्रहण कथात्मक विन्यास की जगह नयी तरह की घटनाओं, प्रसंगों और स्थितियों को संयोजित किया जा रहा था।

चूँकि मिश्र जी ने अपना लेखन 1963 से प्रारम्भ किया। इसलिये उनकी कहानियों को कहानी के परम्परागत स्थूल निकषों पर (कथानक, घटना, चरित्र–चित्रणकथोपकथन, देशकाल, वातावरण, उद्‌देश्य, भाषाशैली) परीक्षित नहीं किया जा सकता हैं। उनकी कहानियों में भी नवीन अवधारणा का प्रारुप दिखायी देता है। एक ओर उन्होंने कहानी के माध्यम से मानव जीवन के यथार्थ व्यक्तिगत,सामाजिक यथार्थ को चित्रित किया तो दूसरी ओर कहानी के रुपबन्ध को यथार्थ के अनुरुप नया आकार दिया।

जब नवीन अवधारणा अनुसार कथातत्व की सत्ता की अनिवार्यता को नकारा गया और कथा या कथानक कोई अनिवार्यता न ही रह गयी। तो कहानी को एक मनः स्थिति एक मूड एक तरंग माना गया और मनः की तरंगों का चित्रण कहानियों में किया गया और वातावरण सांकेतिकता, सूक्ष्मतः संगीतात्मकता शैल्पिक सुंगठता पर ध्यान दिया गया। मिश्र जी की शुरुआती दौर की कहानियों में यह प्रभाव दिखायी देता हैं। उन्होंने मानव जीवन की विसंगतियों को चित्रित करने के लिये अर्मूत रुपों की परिकल्पनाएँ की और मानव जीवन के विभिन्न रुपों के अनुरुप ही प्रतीकों का प्रयोग किया।

समकालीनता के दूसरे दौर में कथा से मुक्ति की प्रवृत्ति ने बहुत अधिक जोर पकड़ा,इससे कथा का ही नहीं,कथानक का आधार पूरी तरह चरमराने लगा। अंतः पुर की लगभग सभी कहानियों,'अपरिचय' ,'पड़ाव','घेरे','अपाहिज', 'खंडित','झपट्‌टों गलत नम्बर चीटियॉ में उन्होंने मनः स्थिति के विभिन्न पक्षों को उजागर किया। तथा युग से जुड़ी मानसिकता के विभन्न पहलुओं के विभिन्न उलझावों के विभिन्न स्तरों का चित्रण किया।

परन्तु जल्दी ही मिश्र स्थितियों मनः स्थितियों और घटनाओं के नये विन्यास और सन्तुलन की ओर बढ़े। इस दौर में मिश्र जी ने व्यक्ति की स्थिति को परिवेश के सन्निवेश में गहराया। मिश्र जी कथा योजना का वैशिष्ट्य यह रहा कि उन्होंने प्रतीकों के प्रति उनका आर्कषण कम हुआ और उन्होंने वर्तमान सामाजिक,राजनीतिक क्षेत्र की विसंगतियों तथा विडम्बनाओं से आवेष्ठित मानव जीवन के आकलन पर जोर दिया। कहानी में विवरणों के संयोजन में पात्रगत और स्थितिगत स्थितियों को स्पष्ट किया। 'धॉसू तथा खुद के खिलाफ' कहानी संग्रहों में मिश्र जी में सामाजिक तथा राजनीति

होती है और सपाट बयानी लगती है,पर ऐसे स्थल कम हैं। भाषा के प्रयोग और बिम्बों की रचना में लेखक अत्यन्त सफल और सतर्क कहा जा सकता हैं।"[117] इतिहास की अराजकता और इतिहास दृष्टि के चौकन्नेपन से टोही गयी ये कहानियॉं इतिहास के क्रूर बहाव के खिलाफ मानवीय संवेदना को टिकाये रखती हैं।

आधुनिक काल के कुछ कहानीकारों ने अपनी कहानियों में मानवीय जीवन मूल्यों को परिस्थितियों के प्रकाश में प्रकाशित किया। मिश्र जी का कहानी संग्रह 'पगला बाबा' कहानियॉं इन कहानीकारों की कहानियों से विशिष्ट और भिन्न हैं। वे मूल्यात्मक आदर्श को नये सन्दर्भो और प्रसंगों में परिभाषित करती हैं। व्यक्ति का सामाजिक जीवन अंततः जीवन मूल्यों की स्वीकृति,संशोधन और प्रभावान्विति से जुड़ा हैं। इस तथ्य को स्वीकृति कर मिश्र जी अपनी कहानियों को मानवीय मूल्यों व सामाजिक सरोकारों से सम्पृक्त कर मानवता की उच्च सीढ़ी तक ले जाते हैं। इन कहानियों के समस्त पात्र अकेले निस्सहाय और अकिंचन होने के बावजूद भी जीवन के विशिष्ट आयामों को खोलते हुए समाज में एक आदर्श उपस्थित करते हैं। सरंचनात्मक दृष्टि से इन कहानियों की कथा–योजना का वैशिष्ट्य यह है "कि प्रत्येक कहानी वस्तुगत यथार्थ का एक ऐसा अतःविषयी बिम्ब है जो रचना की बुनावट या टेक्सचर से धीरे–धीरे उभार लेता हुआ भावना–संस्कार में सजीव हो उठता हैं। पात्र, घटना, एवं परिवेश के ताने बाने पीछे छूट जाते हैं। हाथ आती हैं एक संवेदना मात्र जो नायक नायिका का पाथेय बनती है और पाठक को भी बहुत दूर तक लिये चलती हैं। कहानियों के सभी पात्रों की आत्मा का प्रकाश कथा के पूरे वृत्त को प्रकाशित करता हैं। इस संग्रह की मायकल लोबो कहानी व्यक्तित्वांतरण का एक विशिष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। शराबी मायकल की बेटी रुथ के शब्द पापा, मैं कब तक आपको इस तरह उठाती रहॅूंगी।" सम्पूर्ण कथा की गति तथा नियति को संचालित करते हैं। मिश्र जैसे प्रगल्य कथाकार की कथात्मक क्षमता का वैशिष्ट्य यह है कि वे मात्र एक वाक्य के माध्यम से व्यक्तित्वांतरण का प्रयास करते है व सफल भी होते हैं। इसी प्रकार कहानी 'पगला बाबा' की कथात्मक चेतना विशुद्व मानवीय निरपेक्ष ,लोकसेवागत भावना से जुड़ती हैं। और कहानी का पात्र 'पगला बाबा' अनाथों,निराश्रतों,लावारिस शवों के दाह संस्कार काम अपने हाथ में ले मानवता का एक नवीन द्वार खोलता हैं। 'अर्द्धवृत्त' की सौता 'प्रतिमौह' का कबाड़ी अर्थ ओझल का प्राध्यापक सिर्फ इतनी रोशनी का सौतेला पिता सभी पात्र के व्यक्तित्व का प्रकाश पाठक की आत्मा की उजास पर दस्तक देता हैं। पात्रों की लम्बी चौड़ी जिन्दगी की यथावतता को चित्रमय बनाकर प्रभावपूर्ण रुप में प्रस्तुत करने में मिश्र जी का कलात्मक कौशल देखते ही बनता हैं।

ये हृदयस्पर्शी कहानियों भाषा और शिल्प और कथ्य की दृष्टि से उत्कृष्ट श्रेणी की कृतियॉं हैं। जो "व्यक्तित्व का विघटन करने वाली शक्तियों के विरुद्व मानवीय ऊर्जा

की स्थापना ग्रहण करतीं हैं। यें कहानियॉ भारतीय दर्शन व अध्यात्म चेतना के प्रति लेखक के रुझान का धुधंला संकेत देती हैं। तथा आत्मिक आयाम के नवीन प्रवेश द्वार खोलती हैं।

अतः कथात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से मिश्र जी की कहानियों का अपना वैशिष्ट्य यह है कि उन्होंने कहानी की नवीन अवधारणा के अनुसार नयी प्रवृत्तियों,दृष्टिकोण को अपनाया। संवेदना,सोच, भाषा और संरचना के स्तरों पर इनकी कहानयॉ अपनी अलग पहचान निर्मित करती हैं।

1 डॉ0 रामेश्वर लाल 'खंडेलवाल' :जयशंकर प्रसाद 'वस्तु और कला' पृ0 5
2 काव्य मीमांसाः (अनु0) 'केदारनाथ शर्माः' पृ0 87
3.काव्यालंकारः पृ0 5/4/
4.जयशंकर प्रसाद 'वस्तु और कला' पृ0 5,6,7
5 नयी कविता का 'आत्म संघर्ष' पृ0 104,105
6. भगवान सिंहः 'रुपविधान' और सम्प्रेषणःउत्तरार्द्ध–14, पृ0 41
7. रवीन्द्र श्रीवास्तवः'शैली विज्ञान और आलोचना की भूमिकाः' पृ0 24
8. विश्वानाथ तिवारी,साठोत्तरी पीढ़ी के नाम,ज्ञानोदय फरवरी 1969 पृ0 19
9. गोविन्द मिश्रः पत्र प्रेषित,भोपाल 26/06/02
10. 'वही वही
11 वही वही
12 गोवन्दि मिश्र ,वह अपना चेहरा(राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पैपर बैक संस्क) पृ0 सं 88
13 वही पृ0 95,96
14 वही पृ0 96
15 गोवन्दि मिश्र ,'उतरती हुई धूप'(राजपाल एण्ड संस दिल्ली 1973) पृ0 83
16 गोवन्दि मिश्र ,'लाल पीली जमीन'(रामकमल प्रकाशन दिल्ली संस्क) पृ0 129
17. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' (नेशनल पब्लिशगि हाऊस दिल्ली 1981) पृ0 335
18 गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' (राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1985) पृ0 सं 20
19 वही पृ0 सं 9
20 वही पृ0 167
21 गोविन्द मिश्र पॉच ऑगनो वाला घर(राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली1995) पृ0 84
22 गोविन्द मिश्रः पॉच ऑगनो वाला घर'' पृ0 99
23 वही. पृ0 280
24 गोविन्द मिश्र 'फूल इमारते और बन्दर'(राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 113
24 गोविन्द मिश्र 'फूल इमारते और बन्दर'(राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0' संस्क 2000) पृ0 263
25 वही पृ0 301
26 निर्झरिणी भाग 1 भूमिका से
27 गोविन्द मिश्र 'हाजिरी' नर्झरिणी भाग1 पृ0 96

28 गोविन्द मिश्र 'साजिश' निर्झरिणी भाग1 पृ0 122

29 गोविन्द मिश्र 'फर्क',निर्झरिणी भाग 1 पृ0 154

30 गोविन्द मिश्र 'शुरुआत' निर्झरिणी भाग 1 पृ0सं0 168

31 गोविन्द मिश्र झपट्टा निर्झरिणी भाग 1 पृ0 257,258

32 गोविन्द मिश्र 'चीटियां' पृ0सं0 266

33 गोविन्द मिश्र 'पड़ाव' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 328

34 गोविन्द मिश्र 'घेरे'. निर्झरिणी भाग 1 पृ0 338

35 गोविन्द मिश्र 'झूला' निर्झरिणी भाग2 (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1996) पृ0 40

36 वही पृ0 40,41

37 वही पृ0 41

38 गोविन्द मिश्र 'गोबर गनेश' निर्झरिणी भाग2 पृ0 69

39 गोविन्द मिश्र ' पैतालिस अंश का कोण.....' निर्झरिणी भाग 2 पेज न0 74

40 निर्झरिणी भाग 2 खुद के खिलाफ पृ0 97

41 निर्झरिणी भाग 2 खुद के खिलाफ पृ0 99

42 निर्झरिणी भाग 2 पृ0 99

43 नर्झरिणी भाग 2 पृ0 99

44 डॉ पुष्पसिंह: खुद केखिलाफ: कहानी टूटने का दर्द , (संपा0) चन्द्रकात बादिवडेकर निर्झरिणी भाग 2 गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 100

45 गोविन्द मिश्र. 'निरस्त' निर्झरिणी भाग2 पृ0 131

46 गोविन्द मिश्र "हमदर्दी" निर्झरिणी भाग 2 पृ0 सं0 137

47 गोविन्द मिश्र 'ज्वालामुखी' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 144

48 गोविन्द मिश्र 'किस कीमत पर' निर्झरिणी भाग 2 ' पृ0 सं0 170

49 वही पृ0 सं0 172

50 गोविन्द मिश्र 'अलग–अलग समय' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 177

51 गोविन्द मिश्र 'संडाध' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 192

52वही पृ0 193

53 गोविन्द मिश्र 'न आने वाली सुबह' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 सं0 198

54 गोविन्द मिश्र 'आवाज खुलती हुई'. निर्झरिणी भाग 2 पृ0 203

55 गोविन्द मिश्र 'उल्कापात' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 218

56 गोविन्द मिश्र खाक इतिहास निर्झरिणी भाग 2 पृ0 225

57 पत्र समीक्षा– गोविन्द मिश्रःवल्लभ सिद्धार्थ 'संवाद अनायास',(राधाकृष्ण प्रकाशन,दिल्ली)

पृ0 9

58 निर्झरिणी भाग 1 'फांस' पृ0 227

59 गोविन्द मिश्र 'वरणांजलि' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 245

60 शैलेश मटियानी कहानी लिखने के सिद्धान्त ओर (संपा0) चन्द्रकान्त बांदिवडेकर गोविन्द मिश्र की कहानियॉ गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम , (वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली 1990) पृ0 217

61गोविन्द मिश्र 'पगला बाबा' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 सं0 264

62 वही पृ0 सं0 265

63 गोविन्द मिश्र 'प्रतिमोह' निर्झरिणी भाग 2 ' पृ0 सं0 267

64 वही पृ0सं0 269

65 निर्झरिणी भाग 2 'मायकल लोबो' पृ0 सं0 274

66 वही पृ0 सं0 274

67 निर्झरिणी भाग 2 सिर्फ इतनी रोशनी पृ0 298

68 वही पृ0 300

69 गोविन्द मिश्र अर्थ ओझल' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 310

70 गोविन्द मिश्र 'राम सजीवन का मां' निर्झरिणी भाग 2 पृ0सं0 324

71 निर्झरिणी भाग 1 ' निष्कासित' पृ0 332

72 गोविन्द मिश्र 'कालखण्ड' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 338

73 वही पृ0 338

74गोविन्द मिश्र 'धुंधलका' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 345

75 गोविन्द मिश्र यो ही खत्म? निर्झरिणी पृ0 366

76 निर्झरिणी भाग 2 'भगवान ने चाहा तो ....' पृ0 सं0 375

77 गोविन्द मिश्र 'इन्द्रलोक' निर्झरिणी भाग 1 पृ0सं0 387

78 वही पृ0सं0 388

79 गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 'बोझ' पृ0 सं0 392

79 निर्झरिणी भाग 2 बोझ पृ0 395

80 निर्झरिणी भाग 2 बोझ पृ0 395

81 निर्झरिणी भाग 2 बोझ पृ0 395

82 गोविन्द मिश्र 'युद्ध' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 सं0 419,420

83 वही पृ0 सं 420

84 गोविन्द मिश्र 'केयर टेकर' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 सं0 428
85 वही पृ0 सं0 428
86.(डॉ) प्रेमकुमार,समकालीन हिन्दी उपन्यास का 'कथ्य–विश्लेषण , प्रथम संस्क ',(इन्दु प्रकाशन अलीगढ़ 1983) पृ0 14
87. डॉ परमानन्द श्रीवास्तव,हिन्दी कहानी की रचना प्रकिया पृ0 199
88 (डॉ0) सूर्यवाला 'धीरे समीरे': 'भारतीय आस्था भाव की प्रदक्षिणा', (संपा0) चन्द्रकांत वाडिवडेकर वाणी गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली 1990) पृ0 187
89. डॉ राम जी तिवारी, सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र (संपा0) (डॉ) उर्मिला शिरीष प्र0 संस्क (मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल 2000) पृ0 75
90. चितरंजन मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' मध्यवर्गीय चेतना का विकास(संपा0) चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 173
91 डॉ0अरविन्द पाण्डेयः'पाश्चात्य काव्यशास्त्रः' पृ019
92 आलोचना (उपन्यास विशेषांक) अक्षरा पृ00 54
93 अंग्रेजी उपन्यास का विकास और उसकी रचना पद्धति पृ0 116
94 आचार्य चतुरसेन शास्त्री 'वैशाली की नगर वधू' भूमिका से
95 गोविन्द मिश्र,'समय और सर्जना' पृ0 118
96. चन्द्रकान्त वांदिवडेकर 'हजूर दरबार सत्ता का कूर खेल' गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1990) पृ0 121
97 गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार ' प्र0 संस्क (नेशनल पब्लिशिंग हाउस,दिल्ली 1981) पृ0 334,335
98. (डॉ0) राम जी तिवारी 'छटपटाती नैतिकता की कथा 'पॉच ऑगनों वाला घर' (संपा0) उर्मिला शिरीष 'सृजन यात्रा' गोविन्द मिश्र पृ0 75
99 गोविन्द मिश्र : 'जनतन्त्र'
100 (डॉ0) भगवान दास वर्मा, 'गोविन्द मिश्र की रचनाशीलता' (संपा0) चन्द्रकान्त वांदिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम'(वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 18
101 'संजय खाती' 'खाक इतिहास': ''एक लेखक की दुनिया'(संपा0) चन्द्रकान्त बाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाशन दिल्ली) पृ0 276
102 लाउराकीःयुग और उपन्यासः उपन्यास लेखन शिल्प पृ0 108
103 डॉ नगीना जैन,आंचलिकता और हिन्दी उपन्यास (अक्षर प्रकाशन दिल्ली 1976) पृ0 5

104 (डॉ0) ह0 के कड़वे 'हिन्दी उपन्यासों में आंचलिकता की प्रवृति' (अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर 1978) पृ081

105 (डॉ0) धीरेन्द्र वर्मा,'हिन्दी साहित्य कोश' पृ0 95

106 (डॉ0) रामदरश मिश्रः हिन्दी उपन्यासःएक अर्न्तयात्रा, पृ0 190

107 'गोविन्द मिश्र' 'लाल पीली जमीन'

108 गोविन्द मिश्र 'कचकौंध' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 278,279

109. पद्मजा घोर पड़े 'वह/अपना चेहरा' टूटन की समस्यां चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 68

110. राजकुमार गौतम 'गोविन्द मिश्र' की औपन्यासिक यात्रा (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम पृ0 49

111. राजी सेठ 'हुजूर दरबार' पराभव का उत्सव (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 117

112. डाॅ0 बटरोही (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 150

113. (डॉ) भगवान दास वर्मा (संपा0) चन्द्रकान्त वादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम' पृ0 28

114. राजी सेठ(संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम'पृ0 176

115 (डॉ0) राम जी तिवारी (संपा0) सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र उर्मिला शिरीष पृ0 75

116 (डॉ0) राम जी तिवारी (संपा0) सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र उर्मिला शिरीष पृ0 75

117. चितरंजन मिश्र'(संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 272

कथा वस्तु के बाद कथा साहित्य का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व पात्र योजना तथा चरित्रांकन शिल्प हैं।

चरित्रांकन शिल्पः– पात्रों की अपनी निजी सुन्दरता, एवं सौम्यता होती हैं, परन्तु शिल्प के अभाव में वे प्रभुत्वहीन,प्रभावहीन एवं नीरस प्रतीत होते हैं अतः उपन्यासकार विविध शैल्पिक विधियों की सहायता से अपने पात्रों को जीवन्त बनाते हुए उनके व्यक्तित्व को उद्घाटित करते हैं। ये विधियॉ है–
व्याख्यात्मक,वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, अभिनयात्मक इत्यादि हैं।

मिश्र जी ने अपने उपन्यासों में इन विभिन्न पद्धति को नवीन और कलात्मक रुप प्रदान कर पात्रों के विचारों, भावों, प्रवृत्तियों, स्वाभावगत विशेषताओं को स्वाभाविक रुप में उद्घाटित कर अपने कलात्मक वैशिष्ट्य का परिचय दिया।

कहानीकार चरित्रांकन की दो पद्धतियों को अपनाता हैं–
प्रत्यक्ष प्रणाली, और नाटकीय प्रणाली
इन दोनों प्रणालियों का प्रयोग कर मिश्र जी पात्रों की सृष्टि में उन तथ्यों की ओर ध्यान देते हैं। जिनसे उनके पात्रों की सजीवता, यथार्थता व वास्विकता भंग न हों।

उपध्याय– 1–पात्रों का वर्गीकरणः– मिश्र जी ने पात्रों की आन्तरिक तथा बाह्रीय सभी वृत्तियों, मनोंविकारों, मनोव्यापारों एवं विशेषताओं को यथार्थ रुप में पहचानकर उन्हें सूक्ष्मता, स्वाभाविकता, सजीवता, एवं गहनता प्रदानकर अपने पात्रों के व्यक्तित्व का रुपायन किया हैं।

मिश्र जी के उपन्यासों के पात्रों का वर्गीकरणः– सामान्यतः उपन्यासों में प्रवृत्तिं, के अनुसार आन्तरिक और बाह्म रुप में पात्र चित्रण दृष्टिगत होता हैं। इसके अलावा स्वाभाव के अनुसार स्थिर, गतिशील, व्यक्तिवादी, वर्गववादी पात्रों का चित्रण मिलता हैं।

पात्र चित्रण बाह्यवर्णनः– पात्रों के बाह्य व्यक्तित्व के चित्रण में वर्णनात्मक शैली का परिचय मिलता है, जिसमें पात्रों के रंग और वेश भूषा का परिचय प्राप्त होता हैं। उपन्यास 'हुजूर दरबार' के पात्र– राजा रुपप्रताप सिंह, दीवान ,उमा, छोटेलाल, खरे, भैयाबाई, नेपाल सरकार, राधाबाई उपन्यास 'पॉच ऑगनों वाला घर' के पात्र 'मुंशी राधेलाल, जोगेश्वरी देवी, सन्नी, माइकी चाची कमलाबाई के चित्रण में लेखक इस शैली का परिचय दिया हैं।

आन्तरिक पात्र चित्रणः– अन्य उपन्यासों के पात्रों के अन्तरंग परिचय में लेखक ने घटना, प्रसंगों व प्रतिकियाओं द्वारा पात्रों के स्वभाव को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। उपन्यास 'वह/ अपना चेहरा' के पात्रा शुक्ला, केशवदास रचना उपन्यास 'उतरती हुई धूप' की नायिका, अरविन्द, 'लाल पीली जमीन' का केशव 'हुजूर दरबार' का हरीश, हरीश की मॉ, पिता, 'तुम्हारी रोशनी में' सुवर्णा, अनन्त, रमेश, 'धीरे समीरे' की सुनन्दा, नन्दन, सत्येन्द्र शैलजा, नरेन्द्र, रघु, राधे गंगाधर, रत्ना, मंजुलाबेन', 'बाह्मणी', रमाजी जी इत्यादि इस प्रकार के पात्रों की श्रेणी में आते हैं।

वर्गवादी पात्रः– वर्गवादी पात्रों में उन विशेष व्यक्ति का चित्रण होता हैं, जो समाज के किसी विशेष वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनके समस्त कार्यकलाप उस वर्ग के अनुकूल होते हैं,तथा वे उनके सुख–दुख, भाव, अनुभूति व्यक्ति की न होकर उस विशेष वर्ग की होती हैं। इसलिये वे टाइप होते हैं। सुवर्णा, सुनन्दा, 'उतरती हुई धूप' की नायिका, शैलजा, रन्नो, मालती, रचना इत्यादि सभी युवतियॉ आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती हैं।

राजा रुद्रप्रताप सिंह, नेपाल सरकार, दीवान 'छोटे लाल,' मॉ साहिबा, इत्यादि सभी पात्र सामन्तवादी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

शुक्ला, अनन्त, नन्दन, रमेश, सत्येन्द्र, पुरुष वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

केशवदास आफीसर वर्ग का तथा उमा के बाप हरीश का पिता, राधाबाई ,शोषित वर्ग का,केशव हताश, निराश, लाचार युवावर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं।

व्यक्तिवादी पात्रः– व्यक्तिवादी पात्र विशिष्ट संस्कारों से अवेष्ठित होते हैं। इनके विचार, मनोभाव, मनःस्थिति संस्कार सामान्य व्यक्ति से भिन्न होते हैं। मिश्र जी को व्यक्तिवादी चरित्राांकन में भी सफलता प्राप्त हुई हैं– जोगेश्वरी देवी, राधेलाल, सन्नी, मोहन, कमलाबाई, गोवर्द्धन, खरे, मास्टर, कौशल्य, मास्टर कंठी, हरीश की मॉ, केशव के पिता, उमा, सुवर्णा, सुनन्दा इत्यादि इसी तरह के पात्रा है, ये पात्र उपन्यास में अपनी विशिष्टता लिये हुए हैं।

स्थिर पात्रः– "स्थिर चरित्र वास्तव में वे होते है जो आदि से अन्त तक निरन्तर स्थिर अर्थात् एक रस होते हैं। परिस्थितियों तथा बाह्यप्रभाव से मुक्त रहते हैं। जो विशेषताएँ प्रारम्भ में दृष्टिगत होती हैं वे अन्त तक वर्तमान रहती हैं। अतः गत वर्तमान रहती हैं। अतः ये सरलता से पहचान लिये जाते हैं।[1]

मिश्र जी के उपन्यासों मं इस तरह के पात्र कम ही मिलते हैं– भैयाबाई केशव के पिता, हरीश की मॉ, शान्तिदेवी, नाइकी चाची इत्यादि इसी तरह के पात्र हैं।

गतिशील पात्रः– गतिशील पात्र अपने वातावरण, परिस्थिति तथा बाह्य प्रेरणाओं से प्रभावित होते हैं। पात्रों के संस्कार बाह्म परिस्थितियों से टकराते हैं और उनमें मानसिक

चेतना का आत्म संघर्ष होता हैं। इस क़ारण उनमें स्वाभावगत परिवर्तन हो जाता हैं। शिल्पकी दृष्टि से वही गतिशील चरित्रा श्लांघनीय होता हैं। जिनका विकास स्वाभाविक गति से होता हैं। सुवर्णा, सुनन्दा, सत्येन्द, शैलजा, अनन्त, शुक्ला, हरीश, केशव, राधेलाल, सन्नी, जोगश्वरी देवी, राजन्, रम्मों, ओमी, मोहन इत्यादि इसी तरह के पात्रों की श्रेणी में आते हैं।

कहानियों के पात्रों का वर्गीकरणः— कहानियों के पात्रों में विधिवता होने के कारण उनका वर्गीकरण अनेक दृष्टियों से किया जाता हैं। मिश्र की कहानियों के पात्रों को निम्नलिखित भागों में बॉटा जा सकता हैं।

सामान्य पात्र, विशिष्ट पात्र

सामान्य पात्र, आसामान्य

(1) अर्न्तमुखी पात्र, बहिर्मुखी पात्र

(1) अर्न्तमुखी पात्रः— अपने ही विचारों और भावनाओं में तल्लीन एकान्त प्रिय, आत्मसन्तपर, शान्ति प्रिय पात्र अन्तर्मुखी कहलाते हैं, मिश्र जी कहानियों में कुछ अर्न्तमुखी पात्र देखे जा सकता है— 'झूला' कहानी की मॉ, 'धुधंलका' की रुक्मिणी, माध्यम का सुख कहानी की युवती कालखण्ड के मुक्तिसिंह 'उलझती—टूटती चूड़ियॉ का पात्रा

(2) बहिर्मुखी पात्रः— "ऐसे पात्र जिनकी रुचि अपने चारों ओर के संसार में होती है तथा जो एकान्त की अपेक्षा लोगों की संगत तथा शान्ति की अपेक्षा कियाशीलता पसन्द करत हैं।"[2] मिश्र ने अनेकानेक अर्न्तमुखी पात्रों की सृष्टि की हैं— प्रमुख कहानियों के पात्रों में (ऑकड़े ओवर सियर), घेरे का पिता, 'जनतन्त्र' का (बूढा मास्टर) 'कचकौंध' (ग्रामीण मास्टर), 'जिहाद'का (युवा आफीसर), 'एक सड़क दो तस्वीरे' की (युवती) , 'कहानी—नही' का (गाइड) , 'खंडित की (वृद्धा), ' संध्यानाद' का (पिता) , ' न आने वाली सुबह' के (पंडित उमा शंकर), 'खाक इतिहास की (मारिया), 'फांस' की (ग्रामीणा), ' मुझे घर ले चलो' का (गानेसी), ' गुरु जी' का (युवा), 'आसमान कितना नीला' की (युवती), ' निष्कासित का (ईमानदार आफीसर), ' सूखी क्यारी' की(भारतीय नारी), ' भगवान ने चाहा तो' के (रणवीर राय), 'अवरुद्ध' के (रामेश्वर भाई), उपचार का डाक्टर ,'इजाजत नहीं' के (कैलाश बाबू), ' धॉसू' का (राजनीतिक)।

सामान्य, विशिष्ट पात्र'— मिश्र जी कहानियों में कुछ विशिष्ट पात्रों की सृष्टि हुई है— ये पात्र समय की आधीनता से परे स्व की आधीनता के कारण रिश्तों के यथार्थ को भी लाघ जाते है और विपन्न, वंचित होने के बावजूद भी आधुनिकता के सम्मुख मानवीयता जैसे संभावनापूर्ण पूर्ण मूल्य का संयोजन करते हैं।

'खाक इतिहास की (मरिया), 'आल्हाखण्ड' का (स्वतन्त्रता सेनानी), 'वरणांजलि को (पिता), 'पगला बाबा' संग्रह की कहानी (पगला बाबा), मायकल लोबो, अर्द्धवृत्त की (सौता),

'प्रतिमोह' का (कबाड़ी) 'सिर्फ इतनी रोशनी' का (पिता) , अर्थ ओझल का (प्राध्यापक), 'फांस' की (ग्रामीण) गुरु जी कहानी का युवा इत्यादि विशिष्ट पात्र कहे जा सकते हैं।

आमान्य पात्र– असामान्य पात्रों में वे पात्र आते हैजो विकृत, वर्जित, आत्मविभाजित, आत्मनिर्वासित,असतुन्ट, नंपुसक, कायर हैं।

मिश्र जी की किन्हीं कहानियों में इस प्रकार के पात्रों का भी चित्रण मिलता हैं–

आत्मविभाजित पात्र– इन्द्रलोक की (युवती) तथा यक्षिणी के पत्राः यक्ष के नाम की (युवती)

असन्तुष्ट – 'यो ही खत्म' की (पार्वती मौसी), 'खुद के खिलाफ'(विमला), 'एक कटी–छटी अंगड़ाई' की (नायिका), ' जंग की (मॉ)

वर्गगत पात्रः– वे पात्र जो किसी विशेष वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं– मिश्र जी की कहानियों में वर्गगत पात्रों की संख्या अधिक हैं।

युवावर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली पात्रः– 'हमदर्दी' का (बेरोजगार युवक) 'जिहाद' का (आफीसर)'दिल चस्पी'(युवा प्रेमी), 'बदरंग' (युवा), 'अवमूल्यन' (दोस्त) 'रगड़ खाती आत्महत्याये' (युवा) 'चिलमन और धुआं'(का युवा कथानायक), 'दिलचस्पी' (युवा) झपट्टा का (बांकू) 'केयर टेकर'(पिता), 'प्रतिमोह' (कबाड़ी)इत्यादि इसी तरह के युवावर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र हैं।

आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करने वाली पात्राः–'भटकता तिनका' की (युवती), 'संगीत और बर्तनों की खनक' की (अविवाहित नौकरी पेशा युवती), 'यक्षिणी का पत्र यक्ष के नाम' की (युवती) 'एक सड़की दो तस्वीरे'(युवती), 'सीधा....दूर तक सीधा' की (युवती), 'कर्क' की (युवती), 'कोशिश'(पत्नी), 'असमान कितना नीला'(युवती), 'इन्द्रलोक' की (युवती), 'गिद्ध की (युवती) ।इत्यादि आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती हैं।

पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रः– 'कचकौध' (बूढ़ा मास्टर), 'निरस्त का (वृद्ध), 'जंग' की (मॉ), 'धुधंलका की (रुक्मिणी), 'युद्ध' का (पिता), ' अवरुद्ध'(रामेश्वर राय),' कालखण्ड'(मुक्ति सिंह), 'राम सजीवन की (मॉ) 'अर्थ ओझल' का (प्राध्यापक) 'गुरु जी का'(कथानायक),' गिद्ध'(माता–पिता), 'भगवान ने चाहा तो'के(रणवीर राय), 'निष्कासित'(रामेश्वर राय), 'इजाजत नहीं'(कैलाश बाबू), 'खंडित' की (मॉ) कहानी नहीं का (गाइड) संध्यानाद (वृद्ध मास्टर) इत्यादि पात्र पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं।

प्रमुख बाल पात्रः– बाल वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रमुख बाल पात्रों की संख्या मिश्र जी की कहानियों में कम हैं फिर जिन बाल पात्रों का चित्रण मिश्र जी ने अपनी कहानियों में किया हैं वह आधुनिक जीवन की वास्तविकताओं को व बाल मानसिकता पूर्णतः उभारने में सक्षम हुए हैं– ' शुरुआत' कहानी का (कस्बे से शहर लाया बच्चा), 'दौड' की (बालिका),'चुगलखोर(बालिका),'पड़ाव' का (बच्चा) 'केयर टेकर' का (बच्चा–निर्मल), 'बोझ'

की (बालिका),'मायकल लोबो की (बालिका),'सिर्फ इतनी सी रोशनी' की (बेटी), 'नय़े पुरानें मॉ बाप' की(बालिका),'आवाज खुलती हुई की (बालिका),' प्रतिमोह'(लड़का),'वरणांजलि' का (पुत्र) कहानी 'उल्कापात' की (गत्तो) इत्यादि पात्र प्रमुख बाल पात्रों की श्रेणी में आते हैं।

विभिन्न नौकरी पेशा,व्यवसायी वर्ग के पात्रः– 'एक बूँद उलझी'(इंस्पेक्टर) 'मायकल लोबो'(वकील मायकल लोबो), 'धांसू'(बिचौलियॉ) 'जिहाद'(अफीसर) 'रोता और ख्याब देखता मुन्ना'(क्लर्क), 'हाजिरी'(निम्नवर्ग के कोयल) में 'काम करने वाले (लेखा और कीली), मजबूरियों के वृत्त (कर्मचारी) 'सीधा दूर तक सीधा'(अफीसर), 'दोस्त'(अफीसर), 'ढलान' का (वृद्ध कर्मचारी), 'ऑकड़े' का (ओवर सियर, ठेकेदार),'कचकौध' का (बूढ़ा मास्टर) व 'जनतन्त्र' का (बूढ़ा मास्टर) 'अन्तः पुर'(छद्म कान्तिकारी), 'बहुधंधीय'(आचार्य जी),'गोबर गनेस' का (राजनीतिक कार्यरर्ता), 'गिद्ध' (नौकरी पेशा युवती नेता), 'प्रभामण्डल' (योगी)श ' निरस्त' का (बूढ़ा मास्टर) कहानी नही का(गाइड), 'जंग–गिद्ध' (नौकरी पेशा युवती), 'एकसड़क दो तस्वीरें की (लेखिका), 'बंदरंग की (कार्लगर्ल), 'बांध' की (नौकरी पेशा युवती),'झपट्टा'(बांकू), 'अपाहिज'(नेता,मालिक साहब), हज्जाम मन सुख राम का (हज्जाम) इत्यादि पात्र विभिन्न नौकरी पेशा व्यवसायी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस प्रकार गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में विभिन्न वर्ग के पात्रों का चित्रण मिलता हैं।

उपध्याय –2 प्रमुख पात्र 1_ नारी पात्र, पुरुष पात्र और बाल पात्र
उपन्यास 'वह/ अपना चेहरा'

प्रमुख पुरुष पात्र शुक्ला:– उपन्यास एक नायक एक युवा सरकारी अफसर हैं, जो एक आदर्शवाद लेकर संस्था से जुड़ता हैं,संस्था में उसका उच्चाधिकारी केशवदास हैं, जिसके अनैतिक सम्बन्ध अपने दफ्तर में काम करने वाली रचना से हैं। जो ट्रेनिंग के दिनों में नायक की मित्र थी। केशदास और नायक के बीच मूक द्वन्द्व छिड़ता हैं हर जगह केशवदास का व्यक्तित्व वजनी पड़ता और उसका व्यक्तित्व नायक पर हावी रहता हैं। इसी कारण उसका अहम् आहत होता है, और एक कुंठा उसके अन्दर घर कर जाती हैं। अपना दबा आक्रोश निकालने के लिये वह केशवदास की लड़की से फ्लर्ट करता है,परन्तु इससे उसके अवचेतन को बल नहीं मिलता है वरन् उसके अन्दर ग्लानि और हताशा की पर्त पड़ती चली जाती हैं अपने अपमान,घुटन व प्रतिशोध,वासना की गुत्थियां से टकराते–टकराते व रचना से एक दिन आधा बलात्कार जैसा कुछ कर बैठता है,उसे एक आत्मसन्तोष होता है कि कहीं कुछ जरुर हुआ तो हैं और केशवदास के अनैतिक सम्बन्धों का विरोध करने वाला नायक स्वयं ही नीति मूल्यों की दहलीज लांघ जाता हैं। उसकी मानसिकता छटपटाहट,प्रतिशोध,दबा आक्रोश की परिणति, अस्तित्व का खंडित होना सभी स्थितियॉ"भारत के हर नगर व महानगर की भीड़ में अपने अस्तित्व की तलाश करने वाले और उसे सुरक्षित रखने में जुड़े सामान्य भारतीय मानस की कहानी हैं।" पारिवेशीय परिस्थितियों की जकड़न में नायक का चेतना सम्पन्न व्यक्तित्व भी खंडित हो जाता हैं। और आत्महंता नायक जब रचना से बलात्कार जैसा कुछ करने के बाद जब वास बेसिन में लिपिस्टिक साफ करने के लिये जाता है तब शीशे मं उसे अपनी अगुंलियॉ केशदास की तरह कॉपती नजर आती हैं। और केशवदास का व्यक्तित्व उस के व्यक्तित्व को लीलता नजर आता हैं। उपन्यास सन्दर्भ में शैलेश यटियानी जी लिखते है – "अपनी नैतिकता अथवा विचार शीलता के तहत आचरण करने वाले व्यक्ति की व्यवस्था से टकराने पर होने वाली दुर्दशा को मिश्र जी ने कामी सन्तुलन के साथ उजागर किया हैं।" अतः उपन्यास में नायक के अतंविरोध, खीज,छटपटाहट,नपुंसकता का सजीव चित्रण हुआ हैं।

नारी पात्रा रचंना:– रचना के चरित्र में कथाकार ने आज की उन नारियों का चित्र खींचा है,जो दफ्तर में कार्यरत है तथा जो हर तरह से अपने अफसरों को खुश रखना चाहती है। कालेज ट्रेनिंग के दौरान जब उसकी मुलाकात नायक (शुक्ला) से होती है तब उसका सौन्दर्य शील, प्रमुख सम्पन्न व्यक्तित्व एक गरिमामयी चिन्ह अंकित करता है,परन्तु दफ्तरी माहौल में अपने अफसरी से उसके अनैतिक सम्बन्ध उसके व्यक्तित्व की

गरिमा क्रो खंडित करते नजर आते हैं और नायक स्वयं उसे सस्ती किस्म की लड़की समझ उसे बलात्कार कर बैठता हैं। कथाकार ने कम शब्दों के इस्तेमाल व सांकेतिक रुप में रचना के व्यक्तित्व को पूरी तरह उभारने में सफलता हासिल की हैं।

(2) केशवदास :– उपन्यास का दूसरा महत्वपूर्ण केशवदास है जो महत्वपूर्ण पद पर अधिष्ठित प्रौढ़ उच्चअधिकारी है, कथाकार ने इस पात्र के माध्यम से अधिकारी वर्ग की मनोवृत्ति,स्वार्थपरिता, टुच्चोपन,व कइयापन को उद्घाटित किया है। इस पात्र के अनैतिक सम्बन्ध अपने दफ्तर में अधीनस्थ पद पर कार्यरत स्त्री अधिकारी रचना से हैं। नायक से सहानुभूति रखने वाला केशवदास उसे इसलिये हमेशा नीचा दिखाने की कोशिश करता है क्योंकि उसे पता चलता है कि रचना नायक की ट्रेनिंग के दिनों की मित्र है। इसी सन्दर्भ को लेकर दोनों के बीच मूक प्रतिद्वन्द्वता उनकी मानसिक बैचेनी व टकराहट का कारण बनती हैं और दोनों के बीच दूरियॉ बढ़ती चली जाती हैं अन्ततः केशवदास का बजेनी व्यक्तित्व नायक पर हावी होता चला जाता हैं।

उपन्यास 'उतरती हुई धूप' के प्रमुख पात्राः–

नारी पात्राः– उपन्यास की प्रमुख पात्रा पूर्वाद्ध में बेहद भावुक,संवेदनशील व अपने प्रेमी के प्रति स्वत्व समर्पिता दिखायी देती है। विवाह अन्यत्र होने के पूर्व वह एक रात अपने प्रेमी के साथ होटल में बिताती है और उसे अपना स्वत्व समर्पित करते वक्त 'त्वदीयं वस्तु गोविन्दमं ' कथाकार ने लड़की के वैवाहिक जीवन को सांकेतिक रुप में छोड़कर विवाह के दस साल बाद की स्थितियों पर प्रकाश डाला हैं। नायक जब उससे मिलने आता है उस समय वह एक बच्चे की मां और एक भाई साहब कहलाने वाले व्यक्ति के सहयोग से पी0एच0डी कर रही होती हैं। परिस्थितियां नायिका की मानसिकता बदल देती है वह बेहद सर्द तथा तटस्थ दिखायी देती हैं। नायिका का यह बदलाव नायक को परेशान कर देता हैं। बच्चे के भविष्य के प्रति सचेत नायिका सामाजिकता के प्रति सजग और आत्मनिर्भर दिखायी देती है और प्रदत्त अकेलेपन के बावजूद भी नायक की इच्छाओं को पूर्ण नहीं कर पाती है। नायिका की यह तटस्थता कुछ–कुछ नारी स्वातन्त्रय जैसे–प्रश्नों को उभारती हैं।

पुरुष पात्र अरविन्दः– उपन्यास का प्रमुख पात्र अरविन्द युवा–प्रेमी उपन्यास के पूर्वाद्ध में अत्यन्त संजीदा,स्थितियों के प्रति तटस्थ दिखायी देता हैं। शादी के पूर्व जब नायिका यह कहती है कि मैं एक दिन सिर्फ तुम्हारे पास रहना चाहती हूँ..... सिर्फ तुम्हारे पास.... और उसे अपना स्वत्व समर्पित कर देती है, तब कुछ पल की भावुकता के बावजूद वह तनाव महसूस नही करता अपितु स्थितियों को अपने अनुकूल बनाने में सफल भी होता है। परन्तु नायिका को विवाह अन्यत्र होने काफी अन्तराल बाद जब वह उसे सशरीर

प्राप्त करना चाहता है, उन अहसासों की कोमलता को पुनः जीवित करने के लिये छटपटाता है,खीजता है,इतना ही नहीं नायिका के पी0एच0डी करने वाले भाई साहब से उसके सम्बन्ध को शंकाकी दृष्टि से देखता है। उपन्यास के अन्तिम चरण में उसकी बौखलाहट उसके व्यवहार को असामान्य बना देती है ,और वह हताश,निराश हो वापस लौट जाता है परन्तु अपने अतीत से नहीं कट पाता हैं।

<u>उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' के प्रमुख पात्रः–</u> उपन्यास पात्रों की संख्यात्मक बहुलता है उपन्यास में वर्णित प्रमुख पात्र इस प्रकार है–

<u>प्रमुख पुरुष पात्र केशवः–</u> केशव उपन्यास का अत्यन्त संवेदनशील पात्र है कथाकार ने सम्पूर्ण पारिवेशीय स्थितियों और घटनाओं को उसके मानस–पटल पर उभारा है। ये स्थितियॉ व घटनाएँ असमय ही केशव को वृद्वत्व प्रदान करती चली जा रही है बचपन में अपनी मॉ के अनैतिक सम्बन्धों का प्रत्यक्ष दृष्टा होने के बावजूद भी वह भावुक नहीं होता। वरन् उसकी आत्मीयता और सहानुभूति अपने लाचार और विवश पिता के प्रति बढ़ती चली जाती हैं।पर वह चाहकर भी उनके के लिये कुछ नही कर पाता है,उसकी पीड़ा की मासंलता बढ़ती चली जाती है वह अपने को नितान्त असहाय और अकेला पाता है। "केशव के अकेलेपन में निःशक्त और दयनीय पिता की मजबूरियों का जितना हाथ हैं। उससे कहीं अधिक उसकी माता की व्यभिचारिणी वृत्ति का भी है। अतिशय संयत ढ़ंग से किये गये इस चित्रण में गोविन्द मिश्र ने केशव की तीव्र व्यथा की गहनता का सशक्त अहसास कराया हैं।"[3]

परिवेश की भयावहता केशव को प्रभावित करती है पर वह इन्हीं स्थितियों मे जीने के लिये विवश है। यहॉ बच्चों में कोई मूल्यात्मक संस्कार नहीं है,हिंसा यहॉ रग–रग में समायी हैं। केशव अपने मित्रों से आत्मीय नहीं हो पाता है परन्तु स्थितियों की गिरफ्त उसे अपने रंग में ढालती है और वह भी लड़कों की फालतू जमात में शामिल हो उन्हीं तरह घूमने के लिये विवश होता हैं।

नसमझी में केश्व किशोर अवस्था कुछ कोमल अहसासों से जुड़ता है वह बिट्टी के समझ अपने प्रथम प्रेममयी उद्गारों का इजहार करता है तथा मालती और छवि की ओर आर्कषित होता है, जिसे किशोरीय अवस्था का आर्कषण मात्र कहा जा सकता है, परन्तु वह वास्तविक प्रेम करता है युवावस्था में उमा सें। जिसे उपन्यास के पूर्वार्द्ध में सांकेतिक रुप में चित्रित किया गया है। उपन्यासकार ने बड़े ही कलात्मक ढंग से उपन्यास के शुरुआत में अमानवीय स्थितियों की धुन्ध में गिरफ्त केशव की व्यथा व व्यर्थता बोध सूक्ष्म चित्रण किया हैं "मैं उस मजबूत दीवार की जड़ में एक कब्र के

अन्दर लेटा हुआ हूँ। खुद को जिन्दा करने की बीच–बीच में मेरी कोशिश बेकार गयी हैं।"[4]

मैं यहाँ हूँ।.....एक कोने में मरा पड़ा हुआ है। मेरे अन्दर का सारा वह तत्व जिसे मानवीय कहा जा सकता है, राख हो चुका है।"[5]

कितना असहनीय होता है,मानवीयता का मर जाना। पारिवेशीय स्थितियों के प्रभुत्व में व्यक्ति की मानवीयता मर जाने की मासंल व्यथा मात्र केशव की ही नहीं वरन् उन समस्त संवेदनशील व्यक्तियों की है, जो स्थितियों की गिरफ्त में अपने व्यक्तिगत पहचान खो जाने के लिये व्यथित हैं। परिवेश की स्थितियों के आगे व्यक्ति अपनी समस्त जिजीविषा और जीवट के साथ अत्यन्त दयनीय नजर आता हैं। अपने अस्तित्व बचाव के उसके समस्त अस्त्र चूक जाते है उसके हाथ में एक छटपटाहट के अलावा कुछ नहीं बचता है। "गोविन्द मिश्र ने व्यक्ति को–केशव को विलक्षण तीव्र संवेदन–क्षमता देकर और परिवेश की मार के बदले में इस संवेदना की राख में परिणित होने वाली चिन्गारियों का अजीब–सा विघुत आलोक पैदा किया है।"[6]

उपन्यास लालः पीली जमीन के युवा पुरुष पात्रों का चरित्र–चित्रणः–

उपन्यास में वर्णित सभी युवा पात्र कल्लू,शिवमंगल,सुरेश,शिवराम और कैलाश संस्कारहीन तथा संवेदन शून्य है तथा हिंसा,अत्याचार,अपराध और छिछले बल प्रदर्शन को ही अपना शौर्य समझ समाज में भयावह स्थितियाँ उपस्थित करते है। सुरेश अपने नाटेपन और नपुसंकता की हीनता के कारण अपने व्यक्तित्व को इस तरह तैयार करता है कि लड़कियों को उसे देखकर कँपकपी छूटे उन्हें उसके डरावने सपने आए। इसलिये वह यादव की बेटी छवि को बड़े भयानक ढंग से आंतकित करता है और उनकी प्रतिष्ठा को खुले आम चुनौती देता है। इतना ही नही भट्ट की लड़की को पहाड़ पर भगा ले जाता है। और तीसरे दिन उसकी की दुकान पर आकर चाय पीता है,और खुलेआम यह भी कहता है कि लेकिन तुझे एक बार ही और तंग करुँगा जब छोटी तैयार हो जायेगी। इस प्रकार के अपराध और सेक्स जैसी विकृतियों को अपनाने वाले ये युवा समाज के अभिशाप बन देश को भयानक अंधःस्थिति में ले जाने का पथ बना रहे हैं।

प्रमुख नारी पात्राः– उपन्यास वर्णित सभी नारी पात्रा शान्ती मालती छवि,शलैजा,पड़ित की पत्नी,केशव की माँ,पारिवेशीय को विवश दिखायी देता हैं। इन स्थितियों में किशोरी बालिकाएं या तो घर की चाहरदीवारी में कैद कर दी जाती है या उम्र से पहले उन्हें वैवाहिक बन्धन में बाँध दिया जाता हैं।

शान्ति और छवि:— जरुर यौवन की कोमलता का अहसास पाती है। शान्ति को ये अहसास मिलता है बड़े के साथ झूला झूलते वक्त व उसे रोटियॉ बनाकर खिलाने में और वह उसका हाथ पकड़ मोहल्ले के सामने निकालकर मोहल्ले के मुँह पर कालिख पोत अपनी नफरत को निकालना चाहती है पर नियति को कुछ और ही मंजूर होता है। इस परिवेश में इतना दमखम रखने वाली शान्ति गन्दे,लगोटधारी पंडित की वासना का शिकार बनती है और बलात्कार की मानसिक पीड़ा को झेलते—झेलते मर जाती है। नारायण से प्रेम मधुरता का अहसास करने वाली छवि सुरेश द्वारा बेइजत की जाती है। और इस अहसास निर्ममता से कुचल दिया जाता हैं।

मालती की सुन्दरता जो केशव के किशोर मन को आर्कषित करती है वह भी अधेड़ उम्र के व्यक्ति की चौथी पत्नी बनने को विवशता होती हैं।

शलैजा मास्टर कौशल की लड़की शलैजा का पहलवान कल्लू भगा ले जाता है। नियति की शिकार शलैजा के पिता की मानसिकता अपनी पुत्री को स्वीकार नहीं कर पाती हैं।

पंडित की पत्नी और केशव की मॉ भी पारिवेशीय स्थितियों की मार को झेलने की विवश होती हैं।

इस प्रकार उपन्यास की सभी नारियॉ पारिवेशीय स्थितियों का शिकार बन स्त्री होने की विवशता को ढ़ोती नजर आती है।

उपन्यास हुजूर दरबार के प्रमुख पुरुष पात्र

हिज हाईनेस महाराज रुद्रप्रताप सिंह— उपन्यास का दूसरा प्रमुख पुरुष पात्र हिज हाईनेस महाराज रुद्रप्रताप सिंह हैं। कथाकार ने उनके व्यक्तित्व के बहुआयामी पक्षों को बड़े ही स्वाभाविक रुप में उभारा है। उनका चरित्र अत्यन्त ही टिपिकल है, एक ओर वे मानवीय संवेदनाओं से संम्पृक्त उदारता,व्यवहार,कुशलता, जनकल्याण की भावना ओतप्रोत हैं रियासत के बाहर प्रजामण्डल के आन्दोलन के बढ़ते प्रभावों के कारण वे अन्दर ही अन्दर सत्ता आवरण की केचुल उतारने के लिये खुद को तैयार करते हैं। उनकी इस छटपटाहट को कथाकार ने बड़े कलात्मक ढंग से उभारा है। दूसरी ओर उनमें परम्परागत राजसी विकृतियॉ भी है— शराब,शिकार,शबाब तीनों की लत उनमें हैं वे अधेडावस्था में दो रानियों के बावजूद नेपाल की तरुण सुन्दर राजकुमारी से विवाह करते है इतना ही नहीं दशहरे पर सॉटेमारों का खेल देखते वक्त जब उनकी निगाह अति कोमल किशोरी राधाबाई पर पड़ती है वे उसके परिवार वालों को धन देकर उसेअपने जनानखाने में रख लेते है राजघराने की अन्य दासियों से भी उनके सम्बन्ध स्थापित होते है। राजसी रुआब,बड़प्पन,प्रर्दशन की प्रवृत्ति,बाग—बगीचे तालाब खुदवाने के राजसी परम्परागत शौक भी उनमें है। पर वे प्रगतिशीलता के समर्थक,समय की धारा को

अतिशीघ्र पहचानने वाले हैं। रियासत में होने वाली राजनैतिक सरगर्मियों की नजाकत से वे भली भॉति परिचित है नेपाल सरकार से वे कहते है कि "प्यार आदमी के अन्दर की सबसे उम्दा चीजों को खोलता है...... यह तो है ही ।दबाने से भड़कते है लोग।"[7] वे प्रजामण्डल के साथ समझौता कर लेते है पर अपनी शंकाओं को प्रजामण्डल के नेता खरे के सामने तर्क विर्तक रास्ते प्रस्तुत करते है– हर आदमी पद पाते ही अपना घर भरने की पहले सोचगा। वह जाएगा तो दूसरा वही करेगा.... दूसरे के बाद तीसरा ....हर बार एक नया चूसने वाला..... शोषक का एक लगातार चलने वाला सिलसिला। भारत के सच्चे सपूतों को इस समय यह सोचना चाहिए कि गैर जिम्मेदार प्रजातन्त्र देश के लिये एक जबर्दस्त खतरा हो सकता है। मौजूदा इमारत को उखाड़ने के पहले उन्हें अच्छी तरह सोचना चाहिए।"[8] वे रियासत के विलीनीकरण के समझौते पर वे मेनन साहब की कलम लेकर बड़े ही सहज तरीके से दरखास्त कर देते है। मेनन साहब जब कलम मॉगते है तब उनके ये शब्द वातावरण की मायूसी को धो डालते है कि हुजूर इसे अब मेरे पास ही रहने दे... बदले में आपको इतना बड़ा राज्य दे रहा हूँ।[9]

रियासत की विलीनीकरण के बाद उनका व्यक्तित्व बड़े ही सरल रुप में उभरता है कुछ पढ़े –लिखे लोग उन्हें राजनीति में उतरने के लिये भड़काते है पर वे सोचते है, कि जिस जनता ने उन्हें निश्छल प्यार दिया वे उनके साथ बेईमानी करने जैसा दूसरा पाप नहीं करेंगे।

मिश्र जी का वैशिष्ट्य यह है, रुद्रप्रताप सिंह महाराज का व्यक्तित्व अपने स्वाभाविक और वास्तविक स्वरुप में उभरा है देशकाल, परिवेश, परिस्थिति के अनुसार उनका व्यक्तित्व सार्थकता ग्रहण करता हैं।

दीवान छोटेलाल राजरामः– महाराज रुद्रप्रताप की रियासत का दीवान छोटेलाल राजाराम अतिशय बदमाश,अवसरवादी,षडयन्त्रकारी,घाघ,चापलूस स्वार्थी किस्म का दीवान हैं। एक ओर वह महाराज का शुभचिन्तक आत्मीय बनने का नाटक करता है वही दूसरी ओर अंग्रेज ऐजेन्टों से मिलकर उनका संरक्षण प्राप्त करता हैं। महाराज के तोहफे जब वह महाराज की रखैल राधाबाई तक पहुचाने जाता है तब उसे देखकर दीवान की नियत डावाडोल हो जाती है वह राधाबाई को राजमहल से निकलवाकर उसे उसके घर भेज देता है दीवान की चालों से नावाकिफ राधाबाई महाराज से एक बार मिलने की चाहत में दीवान को अपना सब कुछ समर्पित कर देती है और उसकी रखैल बनने को बाध्य हो जाती है। दीवान की मक्कारी और धूर्तता पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है और वह राधाबाई के पेट में पल रहे अपने बच्चे को स्टेट का गोपनीय मामला बताकर गिरवा देता है इतना

ही नही उसी रात वह महाराज के दिए गये राधाबाई क़ीमती जेवरों को लूट उसकी हत्या कर देता हैं।

रियासत के विलीनीकरण पर अवसरवादी दीवान प्रजामण्डल के मन्त्रियों को घूसखोरी और भ्रष्टाचार के रास्ते पर ले जाकर अपनी सूझ–बूझ से सचिवालय में महत्वपूर्ण पद प्राप्त कर अवसर का लाभ उठाता है। कथाकार ने दीवान के व्यक्तित्व सभी पहलुओं,प्रवृत्तियों मानसिक घटनाओं को बड़े ही निर्लिप्त ढंग से उभारा हैं।

<u>हरीशः–</u> हरीश 'हुजूर दरबार' उपन्यास का प्रमुख पात्र है,कथाकार ने इस पात्र के संवेदन वृत में उपन्यास में वर्णित सभी घटनाओं व स्थितियों को उभारा है,वह इन स्थितियों का दृष्टा और भोक्ता हैं बचपन से ही उसे राजमहल का संरक्षण प्राप्त होता है और उसमें गुलामी के संस्कार रोपे जाते है । राजमहल से सम्पर्क होने पर उसका किशोर मन गर्णित होता है, वह राजमहल के प्रति मॉ की उपेखा को नही समझ पाता है न वह उमा की जो उसके पिता के दूर के रिश्तेदार कन्या थी राजमहल के प्रति नफरत को समझ पाता है। राजमहल की तरफ से उसकी शिक्षा–दीक्षा का प्रबन्ध होता है उसकी ड्यूटी सुबह शाम हरमन्दिर में जाने की लगा दी जाती है। अपने दादा की तरह उसके सम्बन्ध भी राजघराने से बनते हैं ।महाराज रुद्रप्रताप की तीसरी रानी नेपाल सरकार की वासना का साधन उसे बनना पड़ता हैं। युवा होते हरीश का मन नेपाल सरकार की खूबसूरती के पाश में बध्य होता चला जाता है और वह हर शनिवार राजमहल में अपनी ड्यूटी बजाने जाता है। परन्तु नेपाल सरकार की उपेक्षा पर उसे अपने गुलाम होने का भान होता है,उमा के दुःख का अहसास होता है और वह गुलामी की खिलाफत कर जीवन के नये अर्थ को ढूढ़ने पटना आ जाता है और वहॉ एम0ए0 में अच्छे अंक प्राप्त कर, फैलोशिप लेकर अमेरिका जाने की तैयारी करता है,परन्तु सत्ता अधिकारियों द्वारा फैकें गये जाल में फॅस वह सामाजिक तनावों पर प्रोजेक्ट बनाता है। इसी सिलसिले में वह कलकत्ते में जमता हैं, वहॉ भी नेपाल सरकार पहुॅच जाती है और उसे रियासत में अपने पिता के पास रहने को कहती हैं। वह प्रोजेक्ट की व्यस्तता की वजह से उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने की खिलाफत करता है,जिसके कारण उसे षड़यन्त्रों का शिकार बनना पड़ता है। उसके ऑकड़ों को तितर बितर कर दिया जाता है। उसका जीना दूभर किया जाता है। षड़यन्त्रों के बीच फॅसे नायक यन्त्रणा उसे तोड़ देती है,वह बची खुची सांमग्री इकटठी कर दिल्ली इस आशा से जाता है कि वायदेअनुसार उस बंधी बधाई तनख्वाह मिल सके,पर उसे वहॉ भी ऑफिस–दर ऑफिस भटकना पड़ता हैं,कथाकार ने सत्ता परिवर्तन के बाद जनतान्त्रिक विद्रूपताओं का बड़ा ही कलात्मक चित्रण किया हैं। जेल निष्कासन मठ की सुरक्षा का तहस –नहस इन स्थितियों के बीच हरीश अत्यन्त असहाय महसूस करता हैं। वह रियासत वापस आता है यहॉ भी म्यूनिसिपालिटी के मेम्बर

जुझारुसिंह उसके मौरुसी मकान पर क़ब्जा करने का दॉव खेलता है। पुलिस कचहरी उसे कही भी न्याय नहीं मिलता है मुकदमा दायर किया जाता है। हरीश को संत्रस्त किया जाता है। वह भयातुर होता है उसे अपने चारों तरफ जुझारु दिखायी देते हैं। दीन–हीन हरीश इन शक्तियों के आगे बिखर जाता है फिर इस आशा से दिल्ली आता है कि शहर में उसे नया आयाम मिल सके। पिता के निधन पर वह रियासत जाता है। उसके अवचेतन फिर वही आवाजें सुनायी देती हैं।

कथाकार ने घटनाओं, स्थितियों तथा अनेक प्रसंगों के माध्यम से हरीश के व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया हैं तथा उसके मन की पर्तो को बड़ी सहजता से खोला हैं "हरीश की मनःस्थिति कुछ इस प्रकार उभरती है।" मेरा जीवन भी कुछ अजीब ही रहा। एक नहीं दो–दो युग मेरे ऊपर से गुजर गये और मैं शुरु ही न हो सका। सिर्फ पैदा होना, बढ़ना,पढ़ जाना ही तो चल पड़ना नहीं होता। मैं रियासत की गुलामी से भागा तो वे मेरे अवचेतन के पीछ पड़ गये, मेरी कंडीशनिंग शुरु कर दी गयी। सोचा था कि स्वतन्त्र भारत की फिजा में हम सिर्फ चलेंगे ही नहीं दौड़ेगे.....लेकिन कया पहले और क्या अब।"[10]

कथाकार ने हरीश की संवेदना प्रभावपूर्ण ढंग से चित्रित किया हैं।

नेपाल सरकारः– नेपाल सरकार 'हुजूर दरबार' उपन्यास की सबसे सबल नारी पात्रा है,वे महाराज रुद्रप्रताप की तीसरी रानी बनकर रियासत में आती हैं,अत्यन्त रुपसी पढ़ी–लिखी आधुनिक महिला होने के कारण महाराज का उन पर विशेष अनुहार था। संगीत, पेन्टिग, शिकार, पढना टेनिस बैडमिंटन बिलियर्डस, टेबिल टेनिस,खेलना, शिकार इत्यादि उनके शौक थें। राजमहल में उनका जीवन अन्य रानियों से भिन्न किस्म का था। वे राजमहल के वैभव विलास की दुनिया के आलावा बाहरीय घटनाओं स्थितियों की जानकारी में रुचि रखती थी। कभी–कभी राजमहल से अलग लक्ष्मण बाग में रहती और राजमहल के बाहर राजनैतिक गतिविधियों से परेशान महाराज के तनावों को बॉटने की कोशिश करती तथा आने वाले समय के रुख को पहचान साधारण जीवन की तैयारी पहले से करती। हरीश के शब्दों में उनका व्यक्तित्व इस प्रकार उभरता है –" बहुत ही भटकने वाला व्यक्तित्व था उनका हरदम छटपटाता हुआ, किसी एक चीज पर ठहरना नामुमकिन। वे स्वप्न जिन चीजों के देखा करती थी, चाहती बिल्कुल उल्टा थी– एकदम साधारण महिला का जीवन बिताने की बात घूम–फिरकर कई बार करती थीं, जबकि दरअसल रानीपन उनमें बेइंतहा था और उसी के लिये कोशिश भी थी। शायद आने वाले दिनों में जिस चीज की आशंका या डर था, वे उसके लिये तैयार कर रही थीं खुद को। नयी चाहे पाल रही थीं और खुद को दिलासा दे रही थी कि जो आने वाला था उससे

उन्हें कोई तकलीफ नही होगी क्योंकि यही था जो वह चाहती थी एक साधारण नागरिक की तरह रहना।"[11] वे अपनी शारीरिक मॉग के अनुसार हरीश का इस्तेमाल करती है, जब तक हरीश रियासत में रहता है तब तक उनके व्यक्तित्व की गिरफ्त से मुक्त नही हो पाता हैं। कथाकार ने उनके व्यक्तित्व में अतिरिक्त महत्वकांक्षा का पुट भरा हैं। रियासत के विलीनीकरण पर महाराज की तटस्थता उनमें छटपटाहट पैदा करती हैं। आरे महाराज उनके लिये मिल खुलवा देते हैं। महाराज की मृत्यु पर खड़ा करती हैं और राजनीति में उतरने का सोचती है उनकी इन गतिविधियों को देखकर ऐसा लगता था जैसे "उन्हें बदला लेना था.... इससे या उससे नही..... समय से, जिसने उन्हें कही का नहीं रखा था। वे चुपचाप एक किनारे नही बैठेगी.....उसी सीढ़ी का सहारा लेंगी जिस पर चढ़कर लोग उनके महल तक पहुंच गये थें। भले ही इसके लिये ढोंग करना हो, स्वयं को मिटाना हो.....कुछ भी करना हो। वे सत्ता में पहुँचेगी....फिर से....इस बार किसी राजा की पत्नी बनकर नहीं, अपने बलबूते पर ....उन गुणों या दुर्गणों को पालकर जो इस वक्त के थे.... और सत्ता में पहुँचने के बाद वे वह होगी जो महारानी होकर कभी नहीं बन सकी।"[12] वे चाहती है कि हरीश रियासत का बनकर रहे, उसे तरह–तरह के प्रलोभन देती है, जब हरीश उनकी आज्ञा न मानने की खिलाफत करता है तब वे उसे कलकत्ता, दिल्ली गॉव में संत्रस्त करवाती है, उसका पी0एच0डी खराब करवाती है उनका कहना था कि तुम मेरे लिये रजिस्टर्ड थें। तुम मुझसे मिलकर नही चलोगे तो मैं कोप करुँगी। तुम्हारे पास हमारे लिये ही सफेद किये गये है। हमने मन्त्री से कह कर तुम्हारा पी0एच0डी खराब करवाया, क्योंकि हम तुम्हें हबाबाजी सिखाना चाहते थे....ताकि तुम्हारे साथ उड़ा जा सके....तुम्हें मंत्री बनाना चाहते थें।"[13]

कथाकार ने कई घटना प्रसंगों के माध्यम से नेपाल सरकार के व्यक्तित्व विभिन्न पहलुओं को उभारा है उनकी राजसी प्रवृत्ति,रानीपन का रुआब महत्वाकांक्षा सत्ता के विलीनीकरण के बाद उनकी मनोदशा आक्रमण हिंसक मनोवृत्ति बड़े ही कलात्मक ढ़ंग से उभर कर चित्रित हुई हैं।

उमाः– "हुजूर दरबार" उपन्यास के नारी पात्रों में दूसरी प्रमुख पात्रा उमा है,जो हरीश के पिता की दूर के रिस्तेदार की कन्या थी। बचपन से ही हरीश और उमा के बीच आत्मीयता स्थापित होती हैं। हरीश की मॉ के मरने बाद जब हरीश की देखरेख के लिये उमा और उसकी मॉ दोनों हरीश के घर रहने लगती है तब दोनों के बीच स्नेह के तन्तु पनपते हैं,हरीश की मॉ की तरह उमा को भी हरीश का राजमहल जाना पसन्द नहीं होता है हरीश से बात चीत पर राजमहल के प्रति उसकी उपेक्षा का पता चलता है –"मुझे लगता है कि अक्सर दूसरी तरफ से उतनी बेताबी नहीं होती जितनी हमारे लोगो में दास बन जाने की होती हैं....जैसे हम उस तरह के बैल है जो नह दिये जाने की ढोह में रहते

है.... हमेशा। उसे गौरव की चीज समझते हैं।"[14] कथाकार ने उमा को समान्य धरातल से उठाकर उसके माध्यम से गम्भीर दर्शन प्रस्तुत कर उसके व्यक्तित्व को विलक्षणा प्रदान की हैं। जिस गुलामी,अपमान,सत्ता प्रभुत्व से बचने के लिये नायक अनिश्चितता की डोर में हिल्गा रहता है उमा उससे आसानी से मुक्ति पा लेती है। सत्ता परिवर्तन के बाद जब मठ छात्रागृह में परिवर्तित होता हैतो मेस का काम उमा के पिता के जिम्मे आता है उसी मेस के छात्रों द्वारा जब उसके पिता का अपमानित होना पड़ता है तब वह अपने दृढ़ निश्चय से पिता को गॉव वापस चलने के लिये मजबूर कर देती हैं। हरीश के समझाने पर वह उबलपड़ती है" कहां का समाज और कौन से मूल्य..... क्या यह हमारा मूल्य नहीं है कि बुजुर्गों का आदर करना चाहिए? वह छोड़ों,एक आदमी को यह अधिकार किसने दिया है कि वह दूसरों के दुख पहुचायें? कहते है स्वतन्त्रता हासिल करने के पीछे की प्रेरणा यही थी कि मनुष्य की एक गरिमा है ....लेकिन देखों, न,हम पग–पग पर यही दिखाते है कि हमें आदमी की कद्र करना नहीं आता ..... हम कद्र करना नही चाहते।"[15] कथाकार का वैशिष्ट्य यह रहा कि उसने उमा की प्रतिक्रियाओं द्वारा उसके स्वाभाव और उसकी सात्विकता को उसकी प्रतिक्रियाओं द्वारा उभारकर उसके व्यक्तित्व को ऊँचाई प्रदान की हैं।

खरेः— हुजूर दरबार उपन्यास का तीसरा विशिष्ट पात्र खरे है, जो प्रजामण्डल का नेतृत्व करने वाले एक ईमानदार,देशभक्त त्यागी गॉधी की भॉति सत्ता आकांक्षा से निर्लिप्त लोकसेवा में तल्लीन रहने वाले नेता है, वे और उनका सहयोगी दल ब्रिटिश और रियासत के राजशाही के खिलाफ आन्दोलन करते हैं। आन्दोलन उग्र रुप धारण करता है और कारगर साबित होता है ,परन्तु स्वातन्त्रोत्तर काल में उनके सहयोगी सत्ताकांक्षी बनने के लिये लालयित होते हैं। इस बात से खरे दुःखी होते है। वे प्रजामण्डल के शीर्षस्थ नेताओं को। मण्डल के बाहर रहकर जनता की सेवा में लगने का प्रस्ताव रखते है पर अवसरवादी राजनीतिको के ये असहनीय हो जाता है खरे सोचते है ...... "ये नेता आखिर उस नागरिक सभ्यता की पैदावार है जो मध्यवर्ग की है, हमेशा अवसरवादी रही हैं। उनका लालच... स्वयं को आगे बढाने की प्रवृत्ति जाने माने है....उनमें खरे त्याग ढूढ़ते है? उसके लिये तो गॉवों नेता तैयार करने होगे.....ऐसे जो सिद्वान्त के लिये मर मिटें...ये ही वे नेता होंगे जो नगर के इन लालची नेताओं की लगाम खींचे रहेंगे।"[16]

खरे प्रजामण्डल से इस्तीफा देते है, और अपनी अर्न्तात्मा की प्रेरणा पर जनता के साथ एकरुप होने के लिये गॉव की ओर निकल जाते हैं। अपनी मुँह बोली मॉ मैयाबाई की मृत्यु पर उन्हें लगता है जैसे वे अनाथ हो गये है उनकी हत्या बड़े ही रहस्यमय तरीके से हो जाती है वे सत्ताकांक्षी लोगो की कूर लोलुप नियति का शिकार बन जाते हैं।

उपन्यास तुम्हारी रोशनी के प्रमुख पात्र

प्रमुख नारी पात्रा सुवर्णाः– उपन्यास तुम्हारी रोशनी में मिश्र जी इस उपन्यास में आधुनिक परिवेश में नारी जीवन का सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत कर उसकी वैयक्तिक स्वातन्त्रता पर बल देकर उसकी महत्ता प्रतिपादित करने का यशस्वी प्रयास किया हैं। उपन्यास की नायिका सुवर्णा एक प्रतिष्ठित अधिकारी हैं,उसका एक अपना अलग व्यक्तित्व दर्शन हैं, वह अपने जीवन के प्रति गहनता से सोचती है, साथ ही अपने कुछ निर्णय स्वयं लेती है, उसके कुछ पुरुष मित्रों का अलग दायरा है,जिससे उसके पति को कोई एजराज न होने के कारण वह मिलती है,यद्यपि वह जीवन को अपने तर्को के आधार पर जीना चाहती है, पर इस जीने में वह घर और बाहर दोनों ही जगह अपना आनुपातिक सन्तुलन बनाए रखना चाहती है एक स्थल पर वह कहती है – गृह स्थिन होना गर्व की बात है मेरे लिये......... यहॉ भी अपना काम मुझे उतना ही अच्छा लगता है,जितना दफ्तर का काम। जैसे मै दफ्तर में सफल होना चाहती हूँ वैसे ही घर में भी। वहॉ मैं किसी आदमी से पिछड़ी नहीं रहना चाहती, यहॉ किसी औरत से नहीं।"[17] वह अपनी अस्मिता को जाग्रत रखने केलिये पुरुष की गुलामी नहीं, मित्रता चाहती है यही कारण है कि जब उसके मित्र जुनूनी होने लगते है या उसी बनायी सीमाएँ तोड़ने लगते है,तब वह उनसे सम्बन्ध विच्छेद कर लेती हैं–

बाहर की इस नरम–नरम खाल के अन्दर कहीं वह बेहद सख्त हैं। इस सख्ती को जब चाहे वह छू भी सकती हैं। एक लकीर उसने अपने चारों तरफ खींच रखी है, जिसे लॉघने की इजाजत वह किसी को नहीं देती.....क्या लक्ष्मण रेखा.... नहीं, ऐसा कुछ नहीं, पर कुछ है जरुर जो एकाएक फनफनाकर उठ बैठता है,उसकी सारी कोमलता सोख लेता है, वह कुछ और ही हो जाती है फिर।[18]

उसका चरित्र यद्यपि कोई ठोस नैतिक आदर्श उपस्थित नही करता पर आधुनिक परिवेश में परम्परा की लीक से हटकर एक नये प्रकार मर्यदाओं को सृजित करता है,उसका व्यक्तित्व अत्यन्त सधा हुआ है वह अनन्त दीपक की जुनूनी का किस्सा सुनाते हुए कहती हैकि "जिन्दगी के आधार ठोस होते है, उन्हें अनदेखा करना जानबूझकर बेवकूफ बनना है। कोई भी चीज वहीं तक ठीक है जहॉ तक वह जिन्दगी को बेहतर बनाये, उसमें कुछ अच्छा जोड़े। में हवाबाजी.... इससे थोड़ी देर की गुदगुदी के अलावा क्या मिल सकता है?[19] सुवर्णा विवाह पद्वति के प्रति सचेत हैं, वह पॉबन्दियॉ पसन्द नही करती है और पति से समानता स्वतन्त्रता और धार्मिता की अपेक्षा करती है रमेश के कहने पर कि वह शाम को समय चाहता है कि ये समय साथ बीते,तब सुवर्णा कहती है कि "वह मैं भी चाहता करती हूँ....और यह चाहना ही असली चीज है, समय की पाबन्दियॉ नहीं, जो तुम थोपना चाहते हो तुम यह भी जानते हो कि मैं इस

तरह के बन्धन पसन्द नही करती।"[20] प्रेम मे व्यक्ति के अन्दर संत्व उभारता है इस चरित्र की अच्छाइयॉ उभारती है अनन्त से भावात्मक रुप से जुडने पर भावात्मक रुप से बने इस रिश्ते में सुवर्णा क चरित्र के समस्त पहलू खुलते चले जाते हैं। यद्यपि वह प्रेम में तनावों के होने के कारण उसे निरर्थक मानती है, परन्तु अनन्त के समागम से वह प्रेम की नैसर्गिक धारा को अपनी इच्छानुसार प्रवाहित कर उससे उत्पन्न घुटन दर्द,पीड़ा तथा तनावों के यथार्थ का सामना करने के लिये प्रस्तुत दिखाई देती है इतना ही नहीं वह अपने सभी रोल बखूबी निवाहने के लिये प्रयासरत होती है, परन्तु उसके पति रमेश द्वारा जब श्याम मोहन के जन्मदिन पर पार्क मे श्याम मोहन को मिठाई खिलाते समय उसे जबरदस्ती घसीटकर कार में बिठाया जाता है और घर में थप्पड़ मार कर उसका अपमान किया जाता है तब वह स्वाभिमान,स्वतन्त्रता,समानता एवं आत्मरक्षा के प्रति सजग दिखाई देती हैं। और तबादला लेना चाहती है और जब तक तबादला नही होता वह मॉ के पास चली जाना चाहती है। रमेश द्वारा एक समझौते का प्रस्ताव, और उसके तीव मित्रों क अलावा अन्य किसी से मिलने पर कोई बंदिश न लगाने की बात पर वह कहती है– कि 'मैं यह नहीं मानती कि सिर्फ इसलिये कि तुम मेरे पति हो,तुम यह तय करो कि मैं इससे मिलूॅ, उससे न मिलूॅ। बात तीन चार आदमियों की नहीं है, उस स्वतन्त्रता की है जो ईश्वर ने मुझे दी है और तुम उसे हड़प लेना चाहते हो.... पर बहस की क्या जरुरत .... तुम इन लोगों से मिलने की बात मान भी लो तब भी मेरा फैसला वही रहेगां।"[21] और वह मॉ के घर जाने का निर्णय लेती है और रमेश के द्वारा वैवाहिक बन्धनों की बात कहने पर कहतीहै..."विवाह....या कोई भी संस्था हमारी जिन्दगी से बड़ी तो नहीं होती। कहीं बन्धन लाचारी हो सकते है,हम दोनों के साथ वह होने की जरुरत नही हैं। मेरे लिये यह जाना घर छोडना नही हैं.... वैसे तुम चाहों तो ऐसा सोच सकते हो तलाक मॉगोगे वह भी दे दूॅगी। मेरे लिये अभी जाना मुझे वह मौका देगा जब मैं अपने जीवन के बारे में तुम्हारे अपने बारे में थमकर, ठण्डे–ठण्डे सोच सकूॅगी.... अगर मुझे लगा कि यह सिर्फ काई थी जो मेरे मन पर उतरा आयी और मैं अब भी तुम्हें चाहती हूॅ तो बात दूॅगी। फिर रहना दोनों की मंजूरी से होगा। फिलहाल मुझे तुमसे .....अलग....दूर रहने की जरुरत हैं।"[22] वह मॉ के यहॉ चली जाती है वह अपने व्यक्तित्व के साथ अस्तित्व की जिजीविषा की रक्षा के प्रति भी सजग है । अस्तित्व के लिये वह निरन्तर संघर्ष करती हैं, और अनन्त के मिलने आने पर वह कहती है कि –इन दिनों तुम मेरे लिये बहुत सुलभ न रहो! मैं कमजोर नही होना चाहती। मुझे कमजोर करने के बजाय ताकत दो।"[23]"

उपन्यास में सुवर्णा के व्यक्तित्व में लेखक ने उसकी ऑखों पर बहुत ध्यान केन्द्रित किया है, और इनके माध्यम से व्यक्ति और समाज के अन्धकारमय पक्ष को उजागर किया हैं। उपन्यास में सुवर्णा की अन्तिम स्थिति अत्यन्त ही कारुणिक हैं ।

मिश्र जी ने इस उपन्यास मे सुवर्णा के माध्यम से आधुनिक नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व को नये परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर उसके मन की आधुनिक जिजीविषा को, विभिन्न मनोविकारों को तथा उसके व्यक्तित्व के विभिन्न अनछुए पहलुओं को रुपायित किया हैं। उपन्यास के विषय में अमृत नागर जी ने लिखा है कि "सुवर्णा का चरित्र चित्रण की दृष्टि से भी रोचक है और सामाजिक अध्ययन की दृष्टि से भी। आज की अमर्यादित नव स्वतंत्र चेतना तथा सांस्कृतिक गुलामी के दोहरे तंग और उसे हुए जाल में जकड़ी उच्चवर्गीय शिक्षित भारतीय नारी का तुमने अच्छा चित्रण किया है। एक जगह तो वह अपनी नारी प्रकृति के अनुसार एक ही पुरुष के प्रति समर्पित होना चाहती है किन्तु उसकी एक पुरुष वाली चेतना में ही कितने पुरुष समाए है ....कि वह यह निर्णय नही कर पाती कि उसे किस पुरुष से क्या चाहिए। अपने मन की सुनहली चाहतों में वह इतनी बिखरी हुई है कि अपनी स्वतन्त्रता को न तो वह ठीक तरह से समझ पाती है और न ही उसे मर्यादित कर सकती है। वह पति से दबती है और दूसरी ओर नव स्वतन्त्रता चेतनावश विद्रोह भी करती हैं......फिर करुण और विवश है। तुम्हारी चरित्र चित्रण की शैली में काव्य की भाषा भी अच्छे रंग भर देती हैं।
बटरोही जी ने इस उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि 'मुझे लगता है कि अपने दौर की संवेदना के अनुरुप जो काम यशपाल ने 'दिव्या' के जरिए,शरत ने 'शेष प्रश्न के', जैनेन्द्र कुमार ने 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' के तथा भगवती बाबू ने अपने कुछ आरंभिक उपन्यासों के माध्यम से किया, वीसवीं सदी के उत्तरार्द्व की संवेदना को 'तुम्हारी रोशनी में उससे भी कहीं यथार्थ और रचनात्मक ढंग से उजागर करती हैं।[24]

अनन्त

अनन्त मध्यवर्गीय शिक्षित तथा बुद्विवादी पात्र है,तथा अत्यन्त संवेदनशील हैं। उसका जीवन दर्शन तर्क पर आधारित हैं। वह अपने जीवन के लिये अपने विचारानुसार अलग मार्ग तय करता है। उपन्यासकार ने उसकी मूल चेतना प्रेम को अनेक परिप्रेक्ष्यों में उद्‌घाटित किया है– "वैसे जीवन के सन्दर्भ में कुछ हासिल करना, कुछ कर गुजरना..... ऐसी परिकल्पनाएँ मुझे बेमानी लगती है। वहाँ जहाँ सब कुछ खत्म ही होता है अन्ततः वहाँ किसे प्राप्ति कहाँ जाये? चूँकि सब कुछ खत्म होता है...... इसलिये शायद हर व्यक्ति की कशिश कुछ ऐसे के लिये होती है जो खत्म न हो। मुझे जैसे साधारण व्यक्ति की यह कशिश जीने के क्रम में ही व्यक्त होती है..... "शायद प्रेम नश्वर के बीच किसी अनश्वर के लिये हमारी ललक का मूर्त रुप हैं। बाहर से देखो तो प्रेम में सब कुछ और भी तेजी से खत्म होता दिखता है ....पर दरअसल खत्म होता नहीं पूरेपन की अनुभूति वहाँ बेशक क्षणिक हो समय के माप से....लेकिन वह अपने पीछे कितना कुछ छोड़ जाती

है..... कितना कुछ।[25]" सुवर्णा से उसके सम्बन्धों को,उसकी मानसिकता के विविध आयामों को तथा उसकी आकांक्षाओं से परिपूर्ण अनेकमुखी व्यक्तित्व को बड़ी सूक्ष्मतः से रुपायित किया गया हैं। वह भौतिकवादी सम्यता के बीच प्रेम को सिर्फ यातना मनाने वाली सुवर्णा को बौद्विक व तार्किक विचार धारा से उसे भावात्मक संसार में ले जाता हैवह उसके अन्तःकरण में छिपी फड़फड़ाहट को पहचान लेता हैं तथा स्वयं भी सुवर्णा के अन्तरंगता में प्रेम की गहन अनुभूतियों का अहसास करता है और वह खुद को जमता महसूस करता है "क्या मैं पैदा हो रहा हूँ? [(26)]" वह प्रेम में देवत्व की ऊँचाइयों को छूने का सा अनुभव करता है और प्रेमतत्व को पहचानने की कशिश उसके मन में उठती हैं।

रमेशः— रमेश सुवर्णा का पति, अच्छे पद पर और शिक्षित होने के नाते सुवर्णा को समानता के कुछ उपादान तो प्रदान करता है भी वह चाहता है कि वह उसके प्रति एक निष्ठ रहे। परन्तु साथ ही उसमें यह विडम्बना दिखायी देती है कि उसके सम्बन्ध अपने सहकर्मी उर्वशी से हैं। रमेश अपनी उदार सोच के कारण अपनी पत्नी सुवर्णा को अपने मित्रों से मिलने की छूट प्रदान करता है परन्तु जब उसका संस्कारी पुरुष जाग्रत हो जाता है, तब वह सुवर्णा के साथ दिवस पर पार्क में उसे मिठाई का टुकड़ा खिला रही होती है तभी वह वहॉ आता व सुवर्णा को घसीटता हुआ कार में बिठा लेता है व घर आकर उसे धमकाता है व अपमानित करता है और उसे अपने मित्रों से न मिलने की बंदिशे लगाकर अपने अहम् को बनाए रखने के लिये प्रत्यनशील रहता हैं। रमेश की बचकानी हरकत सुवर्णा को पिस्तौल लेकर धमकाना,उपन्यास की कलात्मकता को बाधित करती है और रमेश चलताऊ उपन्यास के पात्र जैसा नजर आता हैं। रमेश के रुप में कथाकार ने पुरुष वर्ग की अंहकारी मनोवृत्ति व कपटी उदार सोच का चित्रण किया हैं।

धीरे समीरेः— उपन्यास में पात्रों की संख्या अधिक है और उपन्यास में कुछ समय के लिये आने वाले पात्र भी अपनी विशिष्टता देखते है जैसे— रघु भैया, बह्मणी,मंजुला बेन उनका नौकर राधे,शैला रामप्रसाद,नरेन्द्र की पत्नी रत्ना इत्यादि इन पात्रों को भी मिश्र जी ने गतिशलता प्रदान की हैंपर प्रमुख पात्र जिनके ईद—गिर्द उपन्यास का ताना बाना बुना गया है वे इस प्रकार है—

प्रमुख नारी पात्रा सुनन्दाः— धीरे समीरे उपन्यास की प्रमुख पात्रा सुनन्दा हैं। और उसी को केन्द्र में रखकर सम्पूर्ण उपन्यास का ताना बाना बुना गया हैं। इस संवेदनशील अध्यापिका परिचय ब्रजयात्रा में नन्दन नामक युवक से होता हैं। व्यास, कथावाचक,चौबे और सेवक की भूमिकाओं में उपस्थित होने वाले इस युवके के आर्कषण में सुनन्दा बध जाती हैं और ये आर्कषण परिणय सूत्र में परिवर्तित हो जाता हैं। सुनन्दा को कुछ दिन मानसिक और भावनात्मक बल प्राप्त होता है। परन्तु पुत्र जब होने के बाद वह जब

नन्दन को जिम्मेदारियों का अहसास कराना चाहती हैं। तब लेखक बनने की इच्छा से आक्रान्त नन्दन पारिवारिक जिम्मेदारियों को छोड़कर चला जाता है। सुनन्दा की जिम्मेदारियॉं बढ़ जाती है पर उसके जीवन प्रवाह में अन्तर नहीं आता है। पर जब उसके किशोर को उठवा लिया जाता है तब अपने खोये हुए पुत्र की तलाश वह यात्रा से जुड़ती हैं, पर न उसके पास इस खोज के लिये कोई साधन है न संकेत, न किसी तरह की शक्ति और कर्म का स्त्रोत्र हैं।[27] इस यात्रा में उसके ऊपर हमलें होते है पर अपने आप से विरक्त सुनन्दा पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है इस हमले से उसे बचाता है सत्येन्द्र, वह सुनन्दा में संघर्षो को झेलने की ताकत पैदा करता है। दोनों में आत्मीयता बढ़तीहै और अन्त में उसके माध्यम से सुनन्दा अपने खोये हुए पुत्र को प्राप्त ही नहीं करती,अपितु अपने ससुर जमुना लाल चौबे को फटकारती भी है आप क्या पुलिस बुलायेगे? मैं खुद पुलिस लेकर आयी हूँ। धंधा तो आप करते है,तम्बुओं का धन्धा, उसी तरह बेटे–बहू बेचने का धंधा.... अपनी बहु बेच रहे थे...... कहॉं ले जायेगे इतना पैसा हटिए.... आपकी जमीन–जायदाद मेरे लिये धूल है। मुझे कुछ नहीं चाहिए अपने बच्चे के ..... आप क्या, सारी दुनिया मुझसे इसे नहीं छीन सकती.....। जब नन्दन उसे अपने साथ ले जाने के लिये गिड़गिड़ाने लगता है। तब वह उससे भी कह देती है जो अपनी देखभाल नही कर सकता, जो खुद नही चल सकता, वह दूसरों का सहारा क्या बनेगा, तुम इसी लायक हो कि तुम्हारा बाप तुम्हें कुमढ़े की तरह बेच आए.... पति नामें के छाते की जरुरत मुझे नहीं। गोविन्द मिश्र जी ने सुनन्दा के व्यथा में उसकी अलिप्त मनोदशा को दर्शाकर अन्ततः उसमें एक सबल नारी को रुपान्तरण कर एक समीकरण बिठाया है तथा नारी मुक्ति की तलाश को ब्रजयात्रा के साथ मिलाकर उसे समकालिक परन्म्परा से जोड़ा है कहॉं लेखकीय वैशिष्ट्य देखते बनता हैं।

शैलजाः– उपन्यास की दूसरी नारी पात्रा शैलजा है, जो आधुनिक युवती का प्रति निधित्व करती हैं। मौज–मस्ती के क्षणों को ही जीवन की वास्तविकता समझने वाली इस युवती पर यात्रा अपना कुछ इस प्रकार असर छोड़ती है कि वह अपने ग्रुप को छोड़ अर्न्तमुखी हो जाती हैं। व आलौकिक आनन्द को प्राप्त करती हैं। अद्भुत क्षण उसके सुधामयी फुहारों से भिगो देते हैं। जिसकी मिठास में उसके व्यक्तित्वांतरण होता हैं। इस सम्बन्ध में चन्द्रकान्त वाडिवडेकर जी लिखते है कि 'ऐसे व्यक्तित्वांतरण करने वाले क्षण अतार्किक होते है, (तर्क की शर्तपर पढ़ने वाले पाठक को अविश्वसनीय लग सकते हैं) परन्तु सही और सामर्थशील होते है। शैलजा को ब्रजयात्रा के सारे बाह्य तफसील अद्भुत प्रतीकात्कता से भरे दिखायी पड़ने लगते है,मन को खाली कटोरा बनाकर खुले आकाश में रख देने की बाबा की सीख शैलजा को आविष्ट करती हैं।

प्रमुख पुरुष पात्रः–

नन्दनः– नन्दन सुनन्दा का पति हैं। कथाकार ने उसमें लेखक बनने इच्छा जाग्रत कर लेखकीय जीवन के विभिन्न पहलुओं को विवरण के स्तर पर उभारा हैं। इस पात्र की व्यक्तिगत रुप से विशिष्टता उपन्यास में नही उभरती हैं। तीन भूमिकाओं (लेखक,पुत्र,पति) में आने वाला ये पात्र अपनी कोई विशिष्ट पहचान नही बना पाता है। लेखक बनने की चाह उसे पिता का घर छोड़ने को मजबूर करती है फिर वह पारिवारिक जीवन को अपने लक्ष्य में बाधक समझ उसे छोड़ देता है। अन्त में लेखकीय जीवन की विफलता, हताशा उसे दयनीय स्थिति में ला देती हैं। पिता घर पनाह पाने वाले नन्दन को उसका पिता नशे की लत लगा देता है। "अन्ततः उसकी नियति भीख मॉगती सी खुले आम नकारी–सी, उसके रहे सहे आत्मभाव को भी ध्वस्त कर देती है वह उपन्यास का उपेक्षित पात्र ही बना रहता है। करुणा उपज पाये, यह भी नहीं हो पाया।[28] "

सत्येन्द्र सत्येन्द्र पेशे से वकील हैं। उसमें वकीलो का सा चातुर्य कइयॉपन,घटनाओं के कार्य कारण और हेतु जानने की जिज्ञासा हैं, यही जिज्ञासा उसे सुनन्दा के निकटला देती हैं। सुनन्दा के ऊपर होने वाली घटना से वह सुनन्दा को बचाता ही नहीं है,अपितु उसमें संघर्षो से जुझने की क्षमता भी पैदा करता हैं। दोनों के बीच आत्मीयता पनपती हैं। वह सुनन्दा के पुत्र को खोजता ही नहीं हैं, अपितु इस रहस्यमय गुत्थी को सुलझाता भी हैं कि नन्दन कौन था उसके पुत्रः को क्यो उठवाया गया । सारे सूत्रों का पता वह सुनन्दा पर होने वाले हमले से लगाता हुआ नन्दन के पिता जमुनालाल तक पहुँच जाता हैं। वहॉ भी वह उसकी कुटिल वृत्ति ,पेशे की चालबाजी उभर आती है और वह जमुनालाल को समझाकर उनसे फीस और मेहनतामा तय करता हैं। परन्तु सुनन्दा की निश्चछलता के आगे उसकी व्यापारी बुद्वि परास्त हो जाती हैं। और वह सुनन्दा को सब कुछ बता उसके पुत्र को छुड़ाने में उसकी मद्द करता हैं। "उपन्यास के उत्तरार्द्व में ही सत्येन्द्र कोउपन्यास के अन्तिम शुचिता को स्पर्श करना है और वहीं वह प्रखर की तरह से कुटिल और चालबाज हैं। सब कुछ इतना पास–पास, इतनी विकट तेजी से, एक दूसरे की आहटों के अतिक्रमण के बीच हुआ है कि प्रभाव की निर्मलता निःसत्व हो गयी हैं। अन्त तक आयी वे बातें एक कृति का अन्त लगाती हैं...चरित्र के रास्ता पा जाने का वास्तविक परितोष नहीं ।[29] "

फिर भी उसके चरित्र का ये रुपान्तरण उसे विशिष्ट पात्र की श्रेणी में ला देता हैं।

उपन्यास- 'पॉच ऑगनों वाला घर' के प्रमुख पात्रः– 'पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास में संयुक्त परिवार का चित्रण समग्र पारिवेशीय पृष्ठभूमि में किया गया हैं। पात्र भी उसी मात्रा में हैं। जैसे–जैसे समय स्थितियॉ बदलती है, पात्रों की जीवन दशा बदलती चलती हैं। चरित्रात्मकता की बुनावट अत्यन्त महीन है, कथाकार ने पात्रों के बाह्य व्यक्तित्व के साथ–साथ उनकी अन्दरुनी बैचेनी द्वन्द्व,छटपटाहट,हलचलों को पूरी तटस्थता से उभारा हैं।

उपन्यास की प्रमुख नारी पात्रा जोगेश्वरी देवीः– पुरानी पीढ़ी के पात्रों में जोगेश्वरी देवी का चरित्र अत्यन्त प्रौढ़ है, कथाकार ने युग अनुरुप उनमें अनेक गुणों का समावेश किया है वें एक कर्मठ भारतीय नारी का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। उनकी पारिवारिक प्रबन्ध क्षमता, धैर्यशीलता ममत्व, आत्मविश्वास, महात्वाकांक्षा, निर्भीकता सरहनीय हैं। अपने गॅजेडी पति की मृत्यु के बाद वह अपने बड़े बेटे राधेलाल की सहायता से अपने संयुक्त परिवार को पुख्ता बनाती है। उनके जीवन में कई उतार चढ़ाव आते है, मुंशी राधेलाल, स्वतन्त्रता के प्रयास में अपनी भूमिका के निर्वाहन हेतु भूमिगत हो जाते है, सन्नी लापता हो जाते है, सम्पूर्ण परिवार का वाहन अपने कन्धे पर लेने वाली जोगेश्वरी देवी राधेलाल की मृत्यु पर तटस्थ हो, सम्पूर्ण किया कर्म का संचालन बड़ी कुशलता से करती है शिव के समान विषपान करने वाली जोगेश्वरी देवी सम्पूर्ण कार्यक्रमों को निपटाने के बाद फूट–फूट कर रोने लगती हैं। वे बेटे की मृत्यु का सद्मा तो झेल जाती हैं परन्तु राधेलाल की सहायता से तिनका–तिनका जोड़ कर बनाए गये घर का बटवारा सहन नहीं कर पाती है, और इस पीड़ा को ढ़ोत–ढ़ोते चल बसती हैं।

जोगेश्वरी देवी के साथ–साथ अन्य नारी पात्राएँ शान्ति देवी,नाइकी चाची, कमला बाई, ओमी भारतीय नारियों का कोई न कोई आदर्श उपस्थित करती हैं। कथाकार ने इन पात्राओं में बड़े कलात्मक ढंग से युग अनुरुप गुणों का समावेश करके भारतीय नारियों के बलिदान त्याग पारिवारिक उत्तरादायित्व के निर्वाहन हेतु निहित स्वार्थो के त्याग को चित्रित किया हैं।

रम्मोंः– उपन्यास की दूसरी प्रबल पात्रा रम्मों है, जो दूसरी पीढ़ी की प्रतिनिधि पात्रा है, कथाकार ने इस पात्रा के माध्यम से मध्यम वर्गीय परिवार की आत्मकेन्द्रिता,अहद जीवेतृष्णा ,भोगवादी प्रवृत्ति बाहय व्यवहार को कथाकार मनोवैज्ञानिक कारणों में खोजता हैं। आनुवांशिक भोगववादी प्रवृत्ति ,कुंठा ,निरंकुश के कारण रम्मों संयुक्त परिवार में विकास पाने वाले अपने पति राजन् को परिवार से काट देती हैं। रम्मों और राजन् की आत्मकेन्द्रिता उनके बच्चों में दिखायी देती हैं,जब राजन् के अटैक पर उनके बच्चे उनकी पीड़ा से अनभिज्ञ रहते हैं। तो उनकी अंर्त आत्मकेन्द्रिता रम्मों के दुख का कारण बनती है।"जीवन का रस सब प्रकार से भरपूर भोगने की इच्छा, अपना स्तर ऊॅचा करने के

लिये किए गये कारनामों का सजीव चित्रण उपन्यासकार ने किया हैं। एक समय अपने परिवार में उन्मत्त सामग्री की भॉति विचरने वाली रम्मों को अपने बच्चों के कारनामों के कारण आई गहरी उदासी झेलनी पड़ती हैं। अन्तिम दिनों में बाजी हार चुकी रम्मों को अधिक अर्न्तमुखी बनाया जाता तो चित्रण में और शक्ति पैदा होती। लेकिन रम्मों मूलतः बहिमुखी व्यक्तित्व हैं, सम्भतः इसलिये लेखक ने इसे टाल दिया।।''[(30)]

<u>उपन्यास के प्रमुख पुरुष पात्रः—</u>

<u>राजन्ः—</u> राजन् उपन्यास का प्रमुख पुरुष पात्र है, कथाकार ने उसकी संवेदना में सम्पूर्ण उपन्यास की कथा कही हैं। संयुक्त परिवार में पले बढ़े राजन् का लगाव परिवार के प्रति स्वाभाविक है, परन्तु नागर संस्कृति में पूरी तरह ढ़ली उसकी पत्नी रम्मों परिवार के प्रति राजन् के भावात्मक लगाव को पूरी तरह काट देती हैं। यही कारण है कि रम्मों के इशारों पर नाचने वाला राजन् अपनी के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह न करने पर दुखी तो होता है,पर जल्दी ही इस दुःख से मुक्त भी हो जाता हैं। और धीरे—धीरे आत्मकेन्द्रित हो अपने एकल परिवार में लीन हो जाता है। रम्मों द्वारा जब उसे जेल 7भेजवाने की धमकी दी जाती हैंतब वह चरम विषाद से घिर जाता है, और विवाद की चरमावास्था में सोचता है, जिस मयानी पर घर टिकाया वही कमजोर निकली। उसके हार्ट अटैक पर बच्चों की उसके प्रति उपेक्षा. उसे मर्मान्तक पीड़ा देती हैं।

<u>सन्नी चाचाः—</u> उपन्यास का दूसरा प्रौढ़ पुरुष पात्र सन्नी है, कथाकार ने उनके चरित्र में दो पहलुओं को उभारा है। उपन्यास के पूर्व में उनमें आम युवाओं जैसे दिग्भ्रमित दिखायी देती हैं। और सारंगी से विशेष लगाव रखने वाला ये पात्र परिवार के सदस्यों के बीच लगभग उपेक्षित—सा दिखायी देता हैं। परन्तु उपन्यास के उत्तरार्द्ध में लापता सन्नी निस्वार्थ देश सेवा से जुड़कर अपने जीवन को व्यापक आयाम देते हैं। ''सारंगी से शुरु होने वाला उनका ज़ीवन सन्यास की सीढ़ियों से होता हुआ संघर्ष की ऐसी उदात्त भूमि पर पहुँच जाता है कि वे मूल्यनिष्ठ रचनात्मक कर्म चेतना के प्रेरक प्रतीक बन जाते हैं।''[31]

इस प्रकार एक कलाकार की छटपटाहट,निस्वार्थ देश सेवा जैसे भाव उनकी उदात्त जीवन शैली, मूल्यनिष्ठा,साधुत्व का परिचय देते हैं।

<u>मुंशी राधेलालः—</u> उपन्यास के पुरुष पात्रों में म0ुंशीराधेलाल परिवार के मुखिया के रुप मे उभरते हैं। कर्मठ,साहसी,नेकदिल,उदार,सदाचारी और कलाप्रेमी राधेलाल,कवि—सम्मेलनों मुशायरों,मुजरों जैसे शौक रखते हैं, परन्तु उनके दृष्टिकोण व्यापक लिये हुए होते है,क्योंकि एक दिन वह सब कुछ छोड़कर स्वतन्त्रता संग्राम की धारा में प्रवाहित हो जाते हैं। भूमिगत होकर वे 'रणभेदी' अखबार की प्रतियॉ जगह—जगह

पहुँचाने जैसे जोखिम काम को हुलिया बदल कर करते हैं। अपने काम और उद्देश्य तत्परता से लगे वे अपने स्वास्थ्य की परवाह नहीं करते, स्वास्थ्य खराब होने पर घर में उनकी दवा –इत्यादि होती है, पर चन्द दिनों बाद वे देश के लिये अपनी कुर्बानी दे चल बसते हैं।

बंटू बिट्टो और छोटू नयी पीढ़ी के प्रतिनिधि पात्र है, जो पूर्णतः आत्मकेन्द्री मनोवृत्ति वाले है, जिनमें परम्परागत संस्कारों की अंश मात्र झलक नहीं दिखायी देती हैं। परन्तु परिवर्तित वातावरण और भिन्न प्रकार की परिवरिश के अनुसार उनके अपने तर्क व अपनी अलग जीवन शैली हैं। कथाकार ने इन पात्रों के माध्यम से न केवल आधुनिक पीढ़ी की विकृतियों का चित्रण किया हैं अपितु विभिन्न सन्दर्भों में इन विकृतियों के कारणों की पड़ताल भी की हैं। अंग्रेजी शिक्षा, पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव, संस्कारों की अन्भिज्ञता, आत्मकेन्द्रिता संवेदन शून्यता मूल्य हीनता ही रिश्तों में बिखराव व दुःख का कारण हैं।

पात्र– योजना

मिश्र जी 1963,1964 में लिखी कहानियाँ मध्यवर्गीय परिवार के पात्रों के वैयक्तिक पारिवारिक संघर्ष, बदलती सोच, मानसिकता,आर्थिक विवशता,एकरसता से जीवन में आयी टूटन इत्यादि के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं। ये पात्र अपनी स्थितियों–परिस्थितियों आर्थिक दबावों के बची सामाजिक विसंगतियों से जूझते हुए वैयक्तिक मानसिक संघर्ष और अस्मिता के लिये संघर्ष करते हुए चलते है। आर्थिक दबाव और सामाजिक परिस्थितियों के बस ,ये पात्र पारिवारिक सम्बन्धों से सही समझौता न कर पाने के कारण तनाव झेलते नजर आते है।

<u>कहानी भटकता तिनका की नारी पात्राः–</u> इस कहानी में मध्यवर्ग की एक ऐसी आधुनिक नारी का चित्राण है,जो अपने लिये उपयुक्त वर की तलाश में प्रौढ़ा की दहलीज पर पहुँच जाती है। नायिका की मनः स्थिति,सोच मानसिक संघर्ष में उसके वास्तविक चरित्र का उदघाटन होता हैं।

कहानी 'उलझती–टूटती चूड़ियांः– नारी पात्रा रश्मि,कली शोभना, पुरुष पात्र– चटर्जी,सुमेश, किरण

यह कहानी दाम्पत्य जीवन की एकरसता, मनोविज्ञान और पति–पत्नी की मनःस्थिति को बाखूबी अभिव्यंजित करती है। पति–पत्नी के सम्बन्धों में विकृत प्रेम व पर पुरुष ,पर स्त्री के आकर्षण को उजागर करती हैं।

रश्मिः– रश्मि चटर्जी की पत्नी है पैसे और ओहदे वाले पति से शादी करने की इच्छा से वह प्रागढ़ता से चाहने वाले अपने प्रेमी किरण के स्नेह को परेकर चटर्जी से शादी कर लेती हैं। पति की वयस्तता से जीवन में नीरसता के पलों में उसे किरण का प्यार स्मृत हो आता है और उस प्यार के खालीपन को भरने के लिये उसका झुकाव पति के अन्डर में प्रक्टिस करने वाले युवा सुमेश की ओर होता है। उसकी मनःस्थिति उसके चरित्र का उद्घाटन करती हैं।

कलीः– 23 वर्षीय कौमार्य के भार दबी अनुब्याही युवती चटर्जी की साली है।अपने शरीर पर थपेड़े मारती कामना की लहरों के आगे जीजाजी में पहले पुरुष का सान्निध्य पा उस ओर खिचती चली जाती है,पर जीजाजी के मुँह आने वाली जर्दे की गंध उसे रोक देती है। इस मानसिक संघर्ष के बीच वह उन स्थितियों की शुक्रगुजार होती है। जिसने उसे गिरते–गिरते बचाया।

शोभनाः– शोभना का विवाह सुमेश से होने वाला है पर लेखक किरण का व्यक्तित्व उसे प्रभावित करता है। वह लेखक की रचना उलझी डगारें के लिये भेजने वाले बधाई पत्र में लेखक के प्रति अपने भावात्मक उद्गार को प्रकट करती हैं। पर लेखक उसे आगाह करता है कि वह बचपन से किसी को प्यार करता हैं। शोभना मनः स्थिति में उसके चरित्र का उद्घाटन होता हैवह सुमेश से शादी के लिये हॉ कर देती हैं। और किरण से पत्र में बधाई की जगह सहानुभूति मॉगती हैं वह सोचती है वह किरण की कहानिय्रों में हमेशा जलती रहेगी। पात्रा की मनःस्थिति लेखक प्रति उसके लगाव को झलकातीं हैं। शोभना का चरित्र पर उसके पत्र द्वारा प्रकाश पड़ता हैं।

चटर्जीः– रश्मि का पति मुवक्किल,पैसा,बच्चे, बीवी की उलझनों में उलझा हुआ जीवन में रोमांस का अनुभव करने के लिये अपनी साली कली के यौवन की ऑच से अपनी ढीली जवानी में कुछ कसाव महसूस करना चाहता है। पर इस प्रयास में ढलती उमर का दब्बूपन उसे दबोच लेता है। उसकी मनः स्थिति ये है कि वह दुबारा इस प्रयास के बारे में सोचता है परन्तु डरता है कि बुढापा फिर उस मौके पर कहीं आकर न दाब ले। चटर्जी की काम भावना, और उसकी मानसिकता के बीच उसका चरित्र उभरता है।

सुमेशः– कहानी का युवापात्र जो वकालत की प्रक्टिस के लिये चटर्जी से जुड़ता हैं, पर मिसेज चटर्जी के अपने प्रति अतिरिक्त लगाव से डरता है उसे लगता है कि कहीं वह मिसेज चटर्जी को नाखुश करके चटर्जी साहब की बदोलत मिलने वाले मुकदमों को- न खो दे। मिसेज चटर्जी की देह की गरम–गरम ऑच में वह अपने को संभाल नहीं पाता है। परन्तु जिस लड़की से उसकी शादी होगी उसके प्रति वफादार न होने का हल्का दुख उसे होता है। परन्तु उसकी स्थितियॉ कुछ इस प्रकार बनती है कि उस लड़की को

खुश रखने के लिये आमदनी जरुरी होती है और आमदनी के लिये मिसेज चटर्जी। पात्र की स्थिति–परिस्थिति एवं उसकी मनोभावना में उसका चरित्र उभरता है।
किरणः– रश्मि का पूर्व प्रेमी जो वर्तमान समय में लेखक हैं शोभना को लिखे गये पत्र में रश्मि के प्रति अपने प्रगाढ़ प्रेम का परिचय देता है। और अपनी शोभना को एक दोस्त की हैसियत से अपनी तरफ खिचाव को कम करने की सलाह देता है। किरण के पत्र में उसकी मानसिक प्रकिया व मनोभावना व चारित्रिक विशेषताएं स्पष्ट हुई हैं।

नारी–पात्रा

(3) <u>संगीत और बर्तनों की खनक</u>

कहानी में आर्थिक विवेचना से ग्रसित परिवार का उत्तरदायित्व वाहन करने वाली पात्र की मनः स्थिति का चित्रण हैं जो अपनी जवानी के मदहोश दिनों को ट्यूशन की तंग रुटीन में गुजार देती है। संघर्ष के दिनों अपने मित्र पराग की सहायता से वह प्राइवेटली परीक्षाएं पास कर अध्यापिका बन अपने भाई–बहनों की शादी का दावा रखती है। एक फर्म में छोटा–आफीसर बन जब पराग उसके लिये फर्म में अच्छी नौकरी तलाश,उसे अपने पास आने के लिये पत्र लिखता है। तब उसका मन जीवन में कुछ बदलाव और पराग के सान्निध्य के लिये मचल उठता है। परन्तु पारिवारिक स्थितियॉं और भाई–बहनों के उत्तरदायित्व बोध पराग के खत से बहते मधुरम् संगीत को डूबो देता है। पात्र के हृदयगत भावनाओं और अर्न्तविवाद के बीच उसके चरित्र का उद्घाटन हो जाता है। पात्र का चरित्र आर्थिक दबाव जिम्मेंदारियों के बीच उसके मानसिक संघर्ष तथा उसके आत्म विश्वास को दर्शाता है।

माध्यम का सुख कहानी की नारी पात्राः– कहानी पात्र के मानसिक धरातल पर कथाकार ने उसकी आन्तरिक भावों अतृप्त इच्छाओं ,जीवन में घटित घटना व वर्तमान जीवन स्थितियों के माध्यम से उसके चरित्र के कुछ पहलुओं को उजागर किया है। जो एक ब्याहता है, अपंने पड़ोस में आने वाले स्टूडेन्ट में अपने प्रेमी की झलक देख एक तरह की आत्मीयता में बंधती चली जाती है। कथाकार ने इस पात्रा की मनःस्थिति में सामाजिक परम्परागत बन्धनों को न तोड़ पाने पर अफसोस और संकोच को व्यक्त कराया है। वर्तमान स्थितियों में भी वह चाहती है। कि कभी वह उस स्टूडेन्ट को अपनी स्थितियों से वाकिफ करायेगी, पर वही संकोच और सामाजिक बन्धनो की जकड़न उसे रोकती है और उसके भाव अन्तःकरण में कैद होकर रह जाते है।

पुरुष पात्रः–कहानी का ये पात्र जो एम0ए का स्टूडेन्ट है पात्र के पड़ोस में आता है और नायिका की मधुरता और सौम्यता में घुलता चला जाता है। छत पर प्रतिदिन नायिका को देखकर उसके मन में उठने वाले भाव नायिका के प्रति उसके लगाव को

दर्शाते है। पर पात्रा भी सामाजिक बन्धनों में बाध्य संकोच के कारण उससे बात करने की हिम्मत नहीं जुटा पाती है।

इस कहानी पात्रों के मानसिक जगत में उठने वाले भावों, और मानसिक हलचल का बड़ा ही कलात्मक ढंग से चित्रण हुआ है। शिल्प की दृष्टि से ये चरित्र विश्वसनीय प्रतीत होते हैं।

कॅपकपी के दायरे

पुरुष पात्र

आर्थिक विवेचना से घिरे व पत्नी की लम्बी बीमारी से तंग पात्र की खीज,तनाव व स्थितियों में उसके चरित्र का उद्घाटन हुआ है। पत्नी की कराहें पात्र का अभिन्न हिस्सा बन जाती है। चरम पीड़ा व यातना को ढोती पत्नी की विवशता को देखकर वह सोचता है कि उसकी पत्नी मर क्यों नही जाती,पर पत्नी के मरने का ख्याल भी उसके अन्दर कॅपकपी पैदा करता है। पात्र: के मानसिक संघर्ष को व्यक्त करने के लिये कथाकार ने अर्न्तविवाद की सफल योजना कर पात्र के ह्रदयगत भावों को व्यक्त कर उसके चरित्र व जीवन के विभिन्न पहलुओं को उद्घाटित किया है।

दरियाई नाला और मुँह चाटती लहरें

नारी पात्रा:– कहानी में देह व्यापार करने वाली युवती की विवशता, निश्छल प्रेम करने वाले पुरुष के जीवन में आने पर जीवन स्थितियां के बदलाव का चित्रण हैं। यद्यपि वह अपनी जीवन स्थितियों में आए बदलाव पर खुश होती है पर साफ व्यक्तित्व वाले उस मनुष्य के जीवन में कालिख लगने के डर से वह अच्छी जिन्दगी का परित्याग कर पुनः नारकीय जिन्दगी: को अपना लेती है। युवती की व्यथा, उसका अर्न्तनाद,प्रेम ह्रदयगत गम्भीरता में पात्रों के चरित्र की व्यजंनात्मक रुप प्राप्त हुआ है।

'सतह का झाग'–पात्र –पति–पत्नी

कहानी में पति–पत्नी के सम्बन्धों में आए बदलाव का चित्रण है। पति–पत्नी की मनः स्थिति में दोनों के चरित्र का उद्घाटन होता हैं पत्नी का आकर्षकर पर पुरुषों की और होता है। व पति भी अपने अतीत के दिनों में प्रेमिका के साथ बितायी प्रेमिल स्मृतियों में तल्लीन रहता है। कहानी पात्राों के माध्यम से आधुनिक दाम्पत्य जीवन के कुछ पहलुओं को उजागर करती हैं।

कहानी 'महकता अधियारा' नारी पात्रा

कहानी में कुरुप नारी पात्रा की मनः स्थिति में उसकी आन्तरिक भावनाओं अतृप्त इच्छाओं व कुंठाओं का चित्रण हुआ है। जिसके माध्यम से उसके चरित्र के कुछ पहलू खुलते है व जीवन स्थितियॉ वर्णित होती है। कालेज दिनों में एक युवक को एक तरफा प्यार करने वाली ये युवती युनीर्वसिटी की लेक्चरार बन जाती है और अपने शहर में डबलपमेन्ट आफिसर बन आने वाले उस युवक से मिलने जाती है। उसके ऑफिस के बाहर मिलने वालो की भीड़ के बीच इन्तजार करते हुए वह ख्वाबों में खो जाती है, परन्तु अपनी कुरुपता का भान होने पर वह बिना मिले ही वहॉ से चली आती है।
कहानी की पात्रा का चरित्र स्वप्नों के माध्यम से उद्घाटित होता है। ये पात्रा व्यक्तिगत हीनता अथवा परिवेशगत असमायोजन से उत्पन्न निराशा से ग्रसित हैं, उसके जीवन कुछ ऐसा नही जो उत्साहवर्धक हैं।

(9) 'रोता और ख्वाव देखता मुन्ना' पुरुष पात्रः—

कहानी में आर्थिक विवेचना से ग्रसित पात्र की व्यथा,स्थितियों, व मनः स्थितियों में उसके चरित्र के विभिन्न पहलू खुलते है साथ उसकी व्यथा में संस्थाओं में होने वाले भ्रष्टाचार, कवि समाज में चलने वाले पक्षपात का पर्दाफाश भी होता है। एक संस्था में मात्र ढाई सौ रुपंये में परिवार के ग्यारह सदस्यों का पेट पालने वाला ये पात्र कुछ ऊपरी कमाई के लिये हाथपैर मारता है। इसलिये उसे प्रोमोशन नहीं मिल पाता है। उसकी रचनाएँ इसलिये नहीं छपपाती है क्योंकि उसका अपना स्टेटस नहीं है, कवि मण्डली को चाय पिलाने के लिये जेब में पैसे नहीं है। वह इस नीरस जिन्दगी की नीरसता को पाटने के लिये कालेज के दिनों की जिन्दगी व प्रेयसी के साथ गुजारने वाले मधुर क्षणों के ख्याबों में खों जाता है पर ख्वाब टूटने पर उसकी जिन्दगी पुनः घिसे—पिटे रुटीन पर आ जाती है।

कथाकार ने इस पात्र की कथा,खीज, विवशता, हताशा तनाव, कशमाकश के माध्यम से मानव जीवन स्थितियॉ व देश की वस्तु स्थिति का भान कराया है।

(10)'उड़ती पेज की बहकी बातें' पुरुष पात्रः—

डायरी और पत्र शैली में लिखी गयी इस कहानी के पात्रों की स्थिति व चारित्रिक विशेषताएं डायरी के पन्नों व पत्र के माध्यम से उभरती है। कहानी के नायक का टेम्परामेन्ट से कवि होना, शादी के बाद भी प्रेमिका से विलग होने का खालीपन ऑफिस

की असिटटेन्ट पूजा से लगाव,कागज के टुकडे के माध्यम से पूजा का नायक भावनाओं से वाकिफ होना सभी डायरी के पत्रों में कैंद होता है। पत्र द्वारा पूजा द्वारा नायक को समझाना कि जिस प्यार की कल्पना तुम मुझसे करते हो, उसे मैं अपने पति से पाना और उसको देना चाहती हूॅ। नायक की पीड़ा पुनः डायरी के पन्नों में उतरना, सभी स्थितियॉ उनके चारित्रिक पहलुओं को उजागर करती हैं।

(11) 'ठहराव की ईट' पात्र पति–पत्नी

कहानी में पति पत्नी के जीवन में आई एकरसता,उब,नीरसता,ठहराव के माध्यम से पात्रों के चरित्र का उद्घाटन होता है। यह ठहराव की ईट सरकती है। जब एम.ए. के दाखिले के इन्टरव्यू लेते वक्त उसका सामना एक प्रौढ़ा से होता है जो उसकी पूर्व प्रेमिका है। उसके द्वारा उसे वाकिफ होता है कि वह विधवा हो चुकी है व दो बच्चों की जिम्मेदारी उस पर है।

कहानी पात्रों के चरित्र व दाम्पत्य जीवन की एकरसता को बखूबी अभिव्यंजित करती है व पति–पत्नी के सम्बन्धों में विकृत प्रेम को ऑकती है।

(12) 'कटी–घटी अंगडाई' नारी पात्राः–

कहानी की पात्र के चरित्र का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक रुप में हुआ है। जो लेडीज कम्पार्टमेन्ट में अपने छोटे–भाई बहनों को बिठाने आए युवा की ओर आर्कषित होती है। उसके कुछ सान्निध्य से वह उसके साथ बिताने के कुछ मधुर स्वप्न देखने लगती हैं।

स्वप्न के माध्यम से पात्र की आन्तरिक भावना, अतृप्त इच्छा व कुण्ठा पर प्रकाश पड़ता है।

(13) 'रगड खाती आत्महत्याएं' –पात्र –युवक

कहानी में विकृत प्रेम व उसकी भयानक परिणति का चित्र उपस्थित हुआ। कथानायक द्वारा इस पात्र का चरित्र व स्थितियां मुखरित हुई हैं। पात्र के प्रेमिका की अन्यत्रशादी होना,शादी के बावजूद भी ससुराल के तरफ से दोनों के मिलने में कोई पाबन्दी न लगाना , बच्चे के जन्म देने के बाद प्रेमिका के मौत के हादसे कई यथार्थ को उद्घाटित करते है। प्रेमिका के पति की दूसरी शादी दो बच्चे के बाद वैसेक्टौमी कराना व दुर्भाग्य वश उसके दोनों बच्चे और बीवी की मृत्यु हो जाना। इसके बाद वंश चलाने के लिये

दोनों के मिलने पर कोई आपत्ति जाहिर न करना, और बच्चे के जन्म के बाद प्रेमिका का मारा जाना, नायक की व्यथा इन स्थितियों में पात्रों के चरित्र का उद्‌घाटन करती है।

कहानी में पात्र के संताप और उसके प्रेमी हृदय का कलात्मक चित्रण हुआ है। पात्र की जिन गुत्थियों का चित्रण हुआ है वे विश्वनीय है व वर्तमान समाज की विसंगतियों का व्यजंनात्मक चित्र उपस्थित करती हैं।

(14) 'यक्षिणी का पत्रः यक्ष के नाम' नारी पात्रा

कहानी की अत्यन्त खूबसूरत नायिका की महत्वाकांक्षा उसकी परिणति उसकी मनः स्थिति उसके चरित्र के मनोवैज्ञानिक पहलुओं को उजागर करती है। उसकी महत्वाकांक्षा उसे फिल्मी कैरियर तक पहुँचा देती है। वहाँ प्रोडयूसर के द्वारा ठगा जाना व साथ काम करने वाले हीरो द्वारा उसकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने का परिणाम यह होता है वह बिजनेस माइन्डेड होती चली जाती हैं और लोगो को अपने शरीर की तपिस मिटाने का जरिया बनाती है। व उनसे वास्ता नहीं रखती है। उसके जीवन में आने वाला एक कम उम्र का युवक उसके सामने शादी का प्रस्ताव रखता है। पर उसका मन विविधताओं से इतना भरे जाता है कि 'एक पर पॉच दिनों से ज्यादा टिकता ही न था।''[1] प्रौढ़ा की दहलीज पर पहुँचकर पुनः उसका मन पूर्व प्रेमी को भावों के फूल चढ़ाने के लिये मचल उठता है। और उसकी सम्पूर्ण व्यथा व चारित्रिक विशेषताएं पत्र के माध्यम से चित्रित होती है। पात्र परिवेश के साथ असमायोजन से उत्पन्न निराशा से ग्रसित होती हैं।

(15) 'चिलमन और धुँआ':– पुरुष पात्र

इस कहानी के पात्रा के चरित्र का उदघाटन उसकी मनः स्थिति व संवेदना में होता है। प्रेमिका का वियोग उसकी जिन्दगी को वीरान कर देता है परन्तु एक परिचिता (जहाँ ये दोनों पहली बार मिले थे) शादी में जब वह अपनी प्रेमिका की कारुणिक स्थिति देखता है तो उसकी ऑखों की कोरों में ऑसू उभर आते है।

(16) 'बर्फीले पहाड़ पर' पुरुष पात्र

कहानी के पात्र को कॉलेज के दिनों की स्मृतियॉ,रोमांस,दोस्तों के साथ बिताये क्षण,पढाई के लिय किए संघर्षो को भुला नहीं पाता है और बार–बार इलाहाबाद के प्रति लगाव उसे इस शहर तक खींच लाता है। इस पात्र में लेखक अपनी स्वाभागत विशेषताओं को वाणी दी हैं।

(17)' एक सडक, दो तस्वीरें'नारी पात्रा

नारी पात्राः– कहानी के आरम्भ में पात्रा के चरित्र में विचारों की प्रौढ़ता और अपने लक्ष्य के प्रति दृढ़ आग्रह दिखायी देता हैं। जिससे अपने अस्तित्व व नारी अधिकारों के लिये संघर्षशील चेतना दिखायी देती है। वह अटूट निष्ठा और धैर्य के साथ अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व को मुखरित करती है। उसकी महत्वाकांक्षा उसे कॉलेज यूनियन सीक्रेटरी व प्रेसीडेन्ट बनाती हैं। नारी को उसके अधिकारों के प्रति सचेत करने के लिये उसकी एक पुस्तक छपती है 'भारतीय नारी कल और आज'। परन्तु बाईस साल के अन्तराल के बाद वह परिस्थितियों के आगे अपना सब हार चुकी एक थकान की मूर्ति दिखायी देती है। परिस्थितियों की धूल उसकी महत्वाकांक्षाओं को बुहार देती हैं। पात्रा का चित्र स्वतः पूर्व, सजीव व जीवन्त हैं।

(18)'हाजिरी' पुरुष पात्र– लोखा

नारी पात्रा– कीली

लोखाः– कोयले के खदान में मजदूरों का प्रतिनिधित्व करने वाला ये मेहनत कश पात्र, अपने साथ काम करने वाली अपनी प्रेमिका से शादी करने के वास्ते झुमके लेने शहर जाता हैं। लौटने पर प्रेमिका मैनेजर के साथ भागने की घटना सुनकर ,शहर जाकर जाय की दुकान पर नौकरी कर अपने पढाई जारी रखता है व अग्रवाल कोलियरी में क्लर्क बन जाता हैं। और प्रेमिका के मिलने उसे उसकी स्थितियों मे भी अपनाने को तैयार होता है।परिस्थितियों के आगे हार न मान ये पात्र अपने जीवन को विकास दे जीवन में सामजस्य स्थापित करता हैं।

कीलीः– लोखा को प्रगाढ़ स्नेह करने वाली ये पात्रा परिस्थितिवश मैनेजर द्वारा ठगी जाती है। पेट में बच्चा आने पर एक अधेड़ को बेच दी जाती है। मजबूरन उसे उससे शादी करनी पड़ती है। घूँघट में उसी कोलियरी में काम करने वाली कीली भावनाओं के संवेग रोक नहीं पाती हैं । और लोखा के पास जाकर अपनी सारी व्यथा सुनाती है। और लोखा को अन्यत्र शादी करने को कहती हैं

कहानी में निम्नवर्ग के पात्रों की प्रेम भावना, मधुर सम्बन्ध,संघर्षशीलता का चित्रण है। ये पात्र मजदूर वर्ग का सजीव, जीवन्त चित्र उपस्थित करते हैं।

1965 से 1970 तक कहानियों के पात्राः– सॉतवें दशक की कहानियों में वर्णित तत्कालीन समाज के विभिन्न वर्गके ये पात्र विभिन्न स्थितियों के बीच विभिन्न सम्बन्धों सन्दर्भो को उपस्थित करते हैं। जिनमें पति–पत्नी के सम्बन्धों में आये

बदलाव,अलगाव,तनाव,नीरसता,अजनवीपन के चित्रण के साथ–साथ आधुनिक सभ्यता के बीच व्यक्ति के निरन्तर अवमूल्यन,अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने की नाकामयाब कोशिश ,व्यक्ति ,व्यक्ति के सम्बन्धों में आए बदलाव,सम्बन्धों को बनाये रखने की चाह,बनाए रखने की निरन्तर अयोग्यता का भी चित्रण मिलता है।

(19) 'मजबूरियों के बुत' पुरुष पात्र

कहानी का ये पात्र आर्थिक विवेचना से ग्रसित वर्तमान दाम्पत्य जीवन के कुछ पहलुओं को उजागर करता है और इसी प्रकाशवृत में पात्र की मनः स्थिति,खीज, तनाव,चारित्रिक विशेषताएं उजागर होती हैं चीजों के बढते दाम बच्चों की निरन्तर बढ़ती मॉगों के कारण पत्नी को नौकरी करने भेजता है परन्तु एक दिन पत्नी को दूसरों की बॉहों में आलिंगन बध्य देखकर स्वयं टूटा हुआ महसूस करता है। पात्र की कस्बाई मानसिकता इस बात को स्वीकार नही कर पाती है। परन्तु आर्थिक तंगी के कारण उसे ये समझौता करना पड़ता है। कहानी पात्र की विवशता,और घुटन का सजीव चित्र उपस्थित कर वर्तमान दाम्पत्य जीवन के एक पहलू को नवीन दृष्टिकोण में उपस्थित करती हैं।

(19) 'खण्डहर की प्यास'– पति–पत्नी

कहानी पारिवारिक सम्बन्धों के संक्रमण काल में पति–पत्नी के वैवाहिक जीवन के खोखलेपन व नीरसता का चित्रण करती है। घर का गृहस्वामी अपना स्टेटस बढ़ाने के लिय डबलबेड तो ले आता हैं परन्तु डबल–बेड पर एक साथ पड़े ये पति पत्नी अपने कॉलेज के दिनों के रोमांस व प्रेमी प्रेमिका की स्मृति में खायें रहते हैं। वर्तमान दाम्पत्य जीवन स्थितियों के इन पात्रों का चरित्र वर्तमान परिस्थितियों में स्वाभाविकता का द्योतक है।

(20)'नये पुराने मॉ–बाप'– बाल पात्रा

कहानी में बालिका के बाल मनोभावों का सजीव चित्रण हैं। ये पात्रा बहुत करीब से अपनी बड़ी बहन को घुलता हुआ देखतीहै। बहन जिसे लड़के को पसन्द करती है। पिता उसे पसन्द नहीं करते हैं। घर में दीदी की उम्र की नयी मॉ आ जाने पर उसे अस्वाभाविक लगता हैं पिता की बच्ची के प्रति ककशता बहन के प्रति बाली बर्बरता के व्यवहार के खिलाफ बच्ची बहन और बहन के प्रेमी को मानवीयता व कोमलता में घुलती चली जाती हैं। दोनों के प्रति उसकी आत्मीयता इतनी बढ़ जाती है। कि वह उन दोनों को ही अपना नया मॉ–बाप मान बैठती हैं। कहानी की इस बाल पात्रा में बच्चों की स्थिति व मनः स्थिति को ऑका जा सकता है।

(21)'साजिश'		पुरुष पात्र

कहानी में वर्णित ये पात्र वर्तमान दाम्पत्य जीवन में पति–पत्नी के बीच बढ़ती दूरियों का पूर्ण,सजीव,सममत,चित्रा उपस्थित करते हैं। कहानी का पात्रा प्रेमिका से विवाह न होने पर पत्नी से आत्मीय नहीं हो पाता हैं दूरियॉ बनी रहती है। पर बच्ची की मृत्यु के बाद ये फासले कम होते है उसे वह महसूस करता है कि एक बाप से जो अपेक्षित है वह उससे नही हुआ, बच्ची की जैसी तीमारदारी होनी चाहिए थी,उससे नहीं हुई,जितनी सरला दोषी है उससे कम वह भी नही है........ आज के यथार्थ की बढ़ती जटिलताओं को प्रस्तुत करने वाले इस पात्रा में बाप के पश्चाताप का कलात्मक चित्रण हुआ है।

(22) 'सीधा दूर तक सीधा'		पुरुष पात्र

वर्तमान मानवीय सम्बन्धों में आए बदलाव,स्वार्थसिद्व करने प्रवृति को उभारने वाला ये पात्र सरकारी अफसर है और एक लेक्चरार से आत्मीय रुप में जुड़ता है,परन्तु इसका तबादला नायिका के शहर में होने पर सके नायिका उसके नायिका अपने पिता को इसके पास जन्मपत्री में अपना रिकोडर्स ठीक करवाने उद्देश्य भेजती हैं। आत्मीय सम्बन्धों में स्वार्थ सिद्व करने की इस तरह को नायक समझ जाता हैं। पात्र की मनः स्थिति उसके अर्न्तभावों को चित्रित करने में सक्षम होती हैं।

(23)'अवमूल्यन'		पात्र–मित्र

इस कहानी के पात्र की मनः स्थिति भी मित्रगत सम्बन्धों में आयी औपचारिकता का सजीव चित्र उपस्थित करती हैं। पात्र काफी अन्तराल पर मिलने वाले मित्र के साथ गुजारे हुए क्षणों में मधुरता बनाए रखना चाहता है। पर जल्दी ही दोनों के बीच औपचारिकता आ जाती हैं और दोनों औपचारिकता में लटके रह जाते हैं। पात्र की मनः स्थिति उसके स्वाभावगत विशेषताओं को कलात्मक रुप में उभारती है।

(24)'आजीवीकरण'

कहानी में कुत्तों को सांकेतिक मानकर मानव की उस आकांक्षा को प्रस्तुत करती है। जो समस्त भयावह मानसिक प्रतिबन्ध के बावजूद मानव में बनी रहती हैं।

(25)'घाव' पुरुष आफीसर पात्र

कस्बे का ऑफिसर पात्र अपने यहाँ आने वाले व्यक्ति की चाटुकारिता के पीछे छिपी उसकी स्वार्थपरिता को पहचानता है पर विवशता कि वह उसको घर से जल्दी जाने को नही कह पाता, मजबूरीवश उसे थोड़ा बहुत वक्त देना पड़ता है। परन्तु उसके तबादले पर व उसकी पैनी नजरों में छिपे उसके मूल उद्देश्य को पढ़ लेता है।

कहानी के पात्र सजीवता लिये हुए वर्तमान मानवीय स्वाभाव की जटिलताओं को चित्रित करती है।

(26)'उपेक्षित' पुरुष पात्र

कहानी का पात्र पति पत्नी के दाम्पत्य जीवन में घुसकर अपनी काम वासनाओं का शमन करना चाहता है। दोस्त की पत्नी के तरफ उसका झुकाव बढता है व तीनों डाकबगले में एक रात गुजारते हैं। अधिक शराब के नशे में धुत् पति को देखकर यह अपनी बातों से उसकी पत्नी का खिंचवा अपनी ओर करना चाहता है परन्तु पत्नी का पति को बेंडरुम ले जाना इसे उपेक्षित कर जाता है। कहानी पात्र की विकृति मनोवृति, अतृप्त काम कुंठा की और संकेत देती है।

(27)'कुत्ते' पुरुष पात्र

पत्नी से ऊबे इस पात्र की खीज वर्तमान दाम्पत्य जीवन में आए बनवटीपन का स्वाभाविक व सजीव चित्र उपस्थित करती हैं। पत्नी की आरामतल्खी इसे खलती है और वह बरसाती लड़की के साथ बिताए गये क्षणों को याद करता है। उसे अनिच्छा से वह सब करना पड़ता है जो पत्नी चाहती हैं। पति की मनः स्थिति उसके स्वाभावगत भावों को सूक्ष्मतः से उकेरती हैं। पात्र स्वयं अपनी मनः स्थिति को विश्लेषित करता है।

(28)'फर्क' नारी पात्रा

एक पैसे वाले अधेड़ को ब्याही ये युवती अपनी और अपने मामा के बेटी की शादी में होने वाली सजावट को ऑकती है। साधारण तरीके की सजावट होने वाली मामा की बेटी की शादी में जब उसके वर की कार पात्रा के नजदीक से गुजरती हैं तब उसकी मनः स्थिति इस प्रकार विश्लेषित होती है– अपने पति की आंच उसेऔर गम का देगी– उसी अन्दाज से जैसे इनके सामीप्य का शीत मुझ पर बुढ़ापा बिछाता चला जा रहा है। उसे कुछ न मिलकर भी जैसे कितना कुछ मिल गया है और मैं इतना सब

पाकर भी अकिंयन हूँ........[1] पात्रा के मनोभावों को उभार कर चरित्र शिल्प की दृष्टि एक स्वाभाविक पात्रा के माध्यम से कथाकार ने सामाजिक यथार्थ को चित्रित किया है।

(29)'दिलचस्पी' पुरुष पात्र

कहानी में पात्र की अतृप्त इच्छा–दमित वासनाव यौनेच्छा का सूक्ष्म अंकन हुआ है। शहर में आयी अपनी प्रेमिका को एक शादी में खोजने वाला ये पात्र प्रेमिका को वहॉ न पाकर, बत्ती गुम हो जाने पर औरतो की भीड़ में एक औरत के मुख को थथोलकर उसे चूम बाहर निकल जाता है वर्तमान युवा वर्ग की विकृतियों
को उकेरने वाला ये पात्र अपनी पूरी सूरत और सीरत में उभरा है।

(30)'बदरंग' विभिन्न युवा पात्र

बदरंग कहानी में होटली क्लब जीवन, पश्चिमी अंधानुरण से उत्पन्न वितृष्णा व यौनभूख का चित्रण हुआ है। कहानी के सभी युवा पात्र नीना देव,दौलत,शेखू अपनी यौन भूख को मिटाने के लिये क्लबों,होटलों में कार्लगर्ल के साथ रात बिताते हैं। पैसे की हवस में नीना जैसी अच्छे घरों की लड़कियॉ इस प्रकार के धन्धों को अपनाती हैं। वर्तमान युवावर्ग की मनोवृतियॉ, विकृतियॉ पश्चिम अनुकरण से युवावर्ग के व्यक्तित्व के स्खलन ने कहानी में अभिव्यक्ति पायी हैं।

(31)'शुरुआत' बाल पात्र

कस्बे से महानगरीय परिवेश में पिता द्वारा लाये गये इस बाल प्रतिनिधि पात्र की मनः स्थिति व विवशता अत्यन्त ही सूक्ष्म चित्रण कथाकार ने इसके अन्र्तमन में प्रवेश कर किया हैं। वर्तमान युग में ऐसे विवश बालकों की संख्या अधिक है। पात्र की मानसिकता शहरी परिवेश के बच्चों से नही मिल पाती है। एक संकोच उसके अन्दर घर कर जाता है। परन्तु परिवेश अलग थलग पड़े इस बच्चे का पिता हमेशा उसे बच्चों के बीच ढकेलने की कोशिश में रहता है। अन्ततः बच्चा एक बालिका से मैत्री सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। पात्र की स्वाभागत विशेषताओं को अत्यन्त सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिली है। पात्र अपने स्वाभाविक रुप में उद्घाटित होता है।

(32)'कोशिश' पुरुष पात्र

कोशिश कहानी की मनःस्थिति, पुरुष नारी के परस्पर आकर्षण,स्पर्श जन्य, संवेदनजन्य सूक्ष्मतम भावनाओं को अभिव्यक्त करती है। पर दाम्पत्य जीवन में चटर्जी की पत्नी के प्रति अपने लगाव भटकाव का विश्लेषण स्वयं पात्र करता हैं– मिसेज चटर्जी का आर्कषण

भी मेरे लिये क्रम नहीं हुआ– जैसा कि इतने बार मिलने पर हो जाना चाहिए था। उसमें कोई न कोई चीज हर बार नयी और चुभते हुए ढंग से खूबसूरत लग बैठती थी..... मैं ख्याब देखने लग जाता है।[32] वर्तमान जीवन से उठाया गया ये पात्र अपनी भूमिका में सहज और स्वाभाविक प्रतीत होता हैं।

(33)'दोस्त' पुरुष पात्र

कहानी के इस अधिकारी के स्वभाव में वर्तमान अधिकारी वर्ग की प्रवृति,दम्भ,स्वार्थ भावना व मानवीय सम्बन्धो की ललक का चित्रण है। महानगरीय परिवेश में लाइसेंस लेने वाले व्यक्ति से,परिवेशीय नीरसता के कारण अधिकारी उस पात्र से चाहता है। कि उससे कुछ दोस्ताना सम्बन्ध बने, उससे मिलने जुलने के क्रम बनाये रखने के लिये वह उसे लाइसेंस देना टालता रहा है ,जिसे पात्र स्वयं विश्लेषित करता है– अपने एक दोस्त का कहना कि कुछ काम लटका कर रखना चाहिए ताकि गिरफ्त में रहे वह भी याद आ रहा। वह और नियंत्रण लायेगा अच्छे कार्यक्रमों के स्वयं लेने आयेगा, क्लब, डिंक्स, डिनर.........डांस ....पर इसने सिर्फ यही कहा कि अभी तो वह आया ही हैं, बैठे थोड़ी देर गपशप हो। कहानी का पात्र वर्तमान मानव जीवन की जटिलताओं, विसंगतियों,व गुत्थियों को उभारता है।

(34)'जिहाद' युवा आफीसर

कहानी का युवापात्र में शुरुआती दौर में ऑफिस में होने वाले भ्रष्टाचार धूसखोरी,विसंगतियों का पर्दाफाश करने के लिये अतिरिक्त आत्म विश्वास दिखायी देता है। जो अपनी बात सबसे आगे रखने, बीच–बीच में उचक पड़ने की प्रतिकियाओं को झलकता हैं। कथानायक द्वारा पात्र की प्रकिया विश्लेषित होती हैं। वह अंधेरे में छलांग लगाता, असंम्भव होकर दिखाने के लिये मुट्ठियां कसता......[1] परन्तु बड़े–बड़े के जालसाजी चक्रव्यूह को तोड़ने की उसकी यह विद्रोहत्मकता धीरे–धीरे बुझने लगती है, और उसकी ये नाकामी शराब के नशे में धुत वमन के रुप में निकलती हैं और वह एक बहादुर पर हारे सिपाही सा लगता है। वर्तमान स्थितियों,विसंगतियों के बीच निर्मित चरित्र अपनी भूमिका में स्वाभाविक व तर्कसंगत लगता हैं।

(35)'ढलान' पुरुष पात्र

कहानी के प्रमुख पात्र की लम्बी बीमारी के उसकी मनः स्थिति कथानायक द्वारा विश्लेषित हुई है, उसकी पलकें सामनेदीवार पर कुछ देखते हुए उठ गिर रही थी जैसे वहां कोई चीज उग रही थी,या कि वहां वह जुमले बांध रहा था.....या वे सारी चीजें

टटोल रहा था कि जिनसे वह बंधा हुआ था, स्वस्थ रहने के लिये नहीं, मात्रा चलते–फिरते रहने के लिये।[33]

इस प्रकार के विश्लेषण में उसके चरित्र साथ–साथ उसके पेशा,उसकी स्वाभावगत विशेषताएं व व्यक्तित्व का स्वरुप भी उद्घाटित होता है– जिन्दगी की वह तेज रफ्तार उसके अंह के लिये बेहद जरुरी थी, मैं सोच सकता हूँ–क्योंकि वह बड़े ही आत्मविश्वास का आदमी था– पोशाक, चालढाल से बातचीत तक। रेल के ऑपरेशन विभाग में वह बजिद्द लगातार छः साल तक चलता चला आया, जहाँ दूसरे एक–दो साल मैं हैं बोलकर निकल जाते थे।[34]

इस पात्र पीड़ा का सही चित्रण कथाकार नहीं कर पाया है। जिस लक्ष्य को लेकर कहानी चलती है। उसके सूत्र बीच में उलझ जाते हैं।

(36)'गिरफ्त' वृद्ध पिता

कहानी के इस वृद्व पिता में समाज के उन वृद्व पिताओं की मनः स्थिति चित्रित होती है,जो वृद्व होने तक अपनी सन्तान की जिम्मेदारियों से मुक्त नहीं हो पाती है। देह साथ न दे पाने पर भी अत्यन्त सचेत, चतुर,चालाक ये पिता अपने पड़ोस में आए अच्छी नौकरी वाले युवक को अपनी बेटी की शादी की गिरफ्त में लेने की भरसक कोशिश करता है। यह वृद्व पात्र कहानी में अपनी पूरी सूरत और नियति के साथ उभरा है।

ऑठवें दशक की कहानियों के पात्रः– ऑठवें दशक की कहानियों के विभिन्न वर्ग, विभिन्न स्तर के सभी पात्र युग की बदलती परिस्थिति के अनुसार बदलती मानसिकता के सभी उलझावों को विभिन्न स्तरों में उद्घाटित करते हैं–

(37)'चुंगलखोर' बालपात्र– सोहन

ये बाल पात्र दिल्ली की एक क्लर्की बस्ती का नौकर आस–पड़ोस के सभी घरों का काम कर देता क्योंकि यह जानता है दिल्ली में कब सही आदमी उतर आए, कब किससे काम सलट जाए..... क्या पता... बस टिप्पस भिड़ने की बात है। मिलते रहना चाहिए..... कितने बस इसी नुस्खे से बस गये। इसलिये वह सूघता रहता– किसके यहां कौन आता है,वह कब जाता है– उसके पीछे हो लगता बस स्टैंड या टैक्सी तक कुछ भिडाने की कोशिश करता और नहीं तो 'नमस्ते साब' करके अपना खाका उनके दिमाग में बैठाती ही सही, अगली बार तक के लिये ....[35] परन्तु सारी कोशिशों के बावजूद भी वह उन लोगों के बीच अपना स्थान नहीं ढूढ़ पाता है।

कहानी का पात्र अपनी भूमिका में सहज, स्वाभाविक लगता हैं और निम्नवर्ग की स्थितियों को उभारता है।

(38)'हिल्गो हुए' पुरुष पात्र

सम्बन्धों की औपचारिकताओं के बीच महानगरीय परिवेश की कम्पनी में कार्यरत कर्मचारियों की स्थिति और परिवेशी प्रभाव से बनी मानसिकता का जीवन्त चित्र प्रस्तुत करते है। दिल्ली मं नौकरी की तलाश में आए अपने सम्बन्धी युवा पात्र की कुछ हरकतें गृहस्वामी को अच्छी नहीं लगती पर सम्बन्धों की औपचारिकता वश और दिल्ली की व्यस्त जिन्दगी, भाग दौड़, टैफिक के बीच उठाने वाली उसकी परेशानियों को देख वह उससे कुछ नही कहपाता हैं।

पात्रों के सहज स्वाभाविक चित्रण के बीच महानगरीय जिन्दगी के एक सच को कहानी अलग दृष्टिकोण से उभारती हैं।

(39)'दौड़'– बाल–पात्रा

महानगरीय परिवेश में आर्थिक विवेचना से ग्रसित परिवार की इस बाल पात्र के मॉ को रात को अर्थ कमाने हेतु जाना पड़ता है। नौकर के भरोसे रहने वाली ये बालिका खाने को ढूढ़ती पडोसों के घरों में उपेक्षित सी डोलती रहती है।

अपनी स्थितियों में गुजरते हुए इस बाल पात्र की मनोदशा महानगरीय परिवेश की स्थितियों को एक अलग दृष्टिकोण से उद्घाटित करती है।

(40)'ऑकड़े' ईमानदार ओवरसियर

कहानी में एक ईमानदार ओवरसियर पात्र का चित्रण है। जिसकी ईमानदारी उसे एक स्वार्थी,धूत, जालसाज ठेकेदार के चंगुल में फॅसा देती है। ईमानदारी का विगुल बजाने वाला ये पात्र स्वार्थी लोगों के बीच अपनी ईमानदारी बरकरार रखने के पहले ही जालसाजी के चक्रव्यूह में फॅस जेल में सड़ने के लिये विवश होता है। जहॉ उसे अपनी जमानत करवाने के लिये फोन करने का अवसर जमानत का समय निकल जाने पर दिया जाता है। वास्तव में कहानी ईमानदार व्यक्तियों की त्रासदी का जीवन्त प्रतिरुप प्रस्तुत करती है और साथ ही मानव विकृतियों कूरताओं का सजीव रुप भी प्रस्तुत करती है।

(41)'बांध' अविवाहित नौकरी पेशा युवती

महानगरीय परिवेश के यथार्थ को उद्घाटित करने वाली ये कहानी अविवाहित नौकरी पेशा करती युवती का चित्रण करती है जो आफिस में दिन भर काम की थकान से बोझिल रात के वक्त खाने के समय अपने साथ कार्यरत कर्मचारी के यहॉ करीब–करीब रोज चली जाती। कर्मचारी उसके प्रति पत्नी की उपेक्षा और उसे टालने की वजह समझता है पर वह उपेक्षा नही कर पाता हैं।

वर्तमान स्थितियों का जीवन्त रुप प्रस्तुत करने के लिये की गयी पात्रों की सृष्टि,बड़े ही स्वाभाविक स्थितियों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। अतः वर्तमान स्थितियों के बीच ये पात्रा अपनी भूमिका में खरी उतरती हैं।

(42)'झपट्टा' पुरुषपात्र–बाकू
नारी पात्रा– बिट्टी,और आशा।

बाकू:– परिवेशीय स्थितियों के अनुरुप बदलने वाला ये पात्र बचपन में ग्रामीण जीवन,किशोरावस्था में कस्बे और युवावस्था में बम्बई जैसा परिवेश में पहुॅचकर अपनी स्वाभाविकता खोता चला जाता है। परिवेशीय स्थितियॉ उसकी सारी संवेदनाओं को सुखा डालती हैं।दो पत्नियॉ जो उससे मेल नहीं खाती को अपने से अलग कर देता है और रोज नयी–नयी लड़कियॉ पटाने के पैतरे बना उन पर झप्पटा मारता,महानगरीय परिवेश की ये लड़कियॉ उसके चंगुल में आसानी से आ जाती हैं। वह लड़कियों को सिर्फ 'पेरी मेसन' की किताब समझता है,पढ़ना और फेक देना,अच्छी लगी तो दोबारा पढ़ना बस। परन्तु कम्पनी के मैंने जिंग डायरेक्टर बन जाने के बाद उसकी सीक्रेटरी आशा के साथ भी वही पैतरे अपनाता है पर आशा से वैवाहिक बन्धनों में बॅधकर वह बन्धन के सुख को उठाना चाहता है परन्तु जब आशा उसकी उम्र और उसके किए गये कृत्यों की उपेक्षा करती है, तब हताश ये पात्र पश्चाताप् करता नजर आता है। उसे पता ही नही चलता कि इस झप्पटेबाजी में कब उसकी उम्र सरक गयी।

बिट्टी:– बिट्टी बाकू के बचपन में आने वाली पहले ग्रामीण लड़की जिसके साथ बाकू खेलता है। और खेल–खेल में उसे प्रथम पत्र लिखता है। जिसे बिट्टी चबा जाती है और उसके जीवन म`आए बदलाव को स्वयं बाकू ही विश्लेषित करता है 'वह उस पत्र को ऐसे पी गयी कि डकार भी न ली। पास आना तो दूर,उसने खेलना कूदना भी बन्द कर दिया। वह साड़ी पहनने लगी और अब सिर्फ बड़ों के साथ रहती थी.... इस ग्रामीण बालिका का चित्रण अत्यन्त ही स्वाभाविक जान पड़ता है।

आशा:– महानगरीय परिवेश की लड़की जो बाकू की सीक्रेटरी बनकर आती है बाकू की प्रतिकियाओं का विरोध सहज रुप से करती है। परन्तु जब आवेग में अपने पैतरों को छोड़ जब वह झपट्टा मारने के बाद आशा से प्यार करने और उससे विवाह करने की बात कहती है तो वह उसे अपने उम्र और पद का लिहाज रखने की बात कहती है परन्तु उन दोनों को वार्तालाप सहज और स्वाभाविक नही लगता है।

(43)'चीढ़ियॉ' पुरुष पात्र

कथाकार ने निम्नमध्य वर्ग के इस पात्र की पीड़ा में एक बहुत बड़े सामाजिक सत्य को बड़े कलात्मक ढंग से उद्घाटित किया है। एनीस्थितियॉ का मरीज यह पात्र अपनी पीड़ा में गुजरते हुए सरकारी अस्पताल के यथार्थ से परिचित होताहैं। दर्द मुक्त होने पर रात्रिके समय जब एक लेडीज डाक्टर्स अपनी आराम तल्खी में बाधा उत्पन्न करने वाली प्रसव वेदना से तड़फती स्त्री के बच्चे को रात्रि में जन्म लेने से इन्जेक्शन द्वारा रोकती है। तब घड़ी नक्षत्र ,ग्रहों में विश्वास करने वाले इस संवेदनशील पात्र को ये भयावह स्थिति अत्यन्त पीड़ादायक लगती हैं और वह चाहता है एनीस्थिसिया की बैचेनी उसे पुनः होने लगे। स्थितियों की भयावह पीड़ा उसे अपने कष्ट से ज्यादा पीड़ा दायक लगती है।

(44) 'कचकौंध' बूढा मास्टर

बुन्देलखण्ड के आदर्शवादी बूढ़े मास्टर पात्र की मनः स्थिति में आंचलिक परिवेश में नगरीय चेतना की संक्रमणशीलता के साथ–साथ वर्तमान भारतीय जीवन वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक,राजनैतिक–यथार्थ को चित्रित किया गया है। पात्र की जीवन्त स्थितियॉ आम आदमी की त्रासदी का जीवन्त और प्रामाणिक दस्तावेज बड़े कलात्मक ढंग से उद्घाटित करती है। यह स्कूल मास्टर प्रत्येक स्तर पर मोहभंग की स्थिति से गुजरता है। पारिवारिक स्तर पर इस मोहभंग का कारण उसके लड़के बहू है। और बाहरी स्तर पर गॉव शहर, शिक्षा पद्वति, निष्क्रिय नौकरशाही, भ्रष्ट अफसर शाही अर्थात् सम्पूर्ण व्यवस्था के बीच उसकी ईमानदारी उसके लिये कठिनाई पैदा करती है। शिक्षा विभाग की धांधली की शिकायत पर अधिकारियों की निष्क्रिता उसका विश्वास तोड़ देती है।

(45)'अपाहिज'पुरुष पात्र– मालिक साहब,नेता जी

मालिक साहब:– नवधनाढ्य वर्ग का ये पात्र अपने जीवन में धनिक वर्ग की समस्त नजाकत उतार लेता है। बड़े बड़े नेताओं से कार्य कराने के लिये सम्पर्क बनाता है और अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखता है।

नेताः— नेता की भूमिका निबाहने वाला ये पात्र नेताओं की भ्रष्टताओं को उभारता है
तिकड़ में भिड़ाने और राजनीति तथा लोगों के बीच अपना स्थान बनाये रखने के लि
प्रयत्नशील रहते है। उनकी मनःस्थिति का एक प्रतिरुप —उनकी इच्छा इस वक्त हुकूम
करने की हो रही थी,आए तो थे इसी इरादे से,लेकिन दो चार आगे बढ़ गये उनकी आध
कोशिश तो यही रहती है कि और कोई न पनप पाए.... उनका घर भरता चला जाए
अन्त में उनका बरामदे में पड़े एक रोगी को लात जमा देना,सामान्य जीवन को आकान्
करने वाले नेता की छाया की भयावहता को उभारता है।

(46)'जनतन्त्र'पात्र —बूढ़ा हेडमास्टर

अपने वैयक्तिक जीवन स्तर पर विडम्बनाओं,विवशताओं कूरताओं को झेलने वाला बूढ़ा मास्टर बीबी की बेवफाई से लाचार, बाह्य स्तर पर स्कूल में पागल करार दिए जाने, घर दूसरे के नाम करने व समाज की उपेक्षाओं के साथ—साथ वर्तमान शासन तन्त्र तथा न्याय व्यवस्था के चकव्यूह में फॅस जाता है। यह बौद्विक पात्र व्यवस्था व समाज की सभी विडम्बनाओं, विसंगतियों को पहचनानता है पर प्रतिरोध न करने की पीड़ा उठाने को विवश हैं । पात्र की पीड़ा विशिष्ट सामाजिक ऐतिहासिक सन्दर्भ में आम आदमी की त्रासदी का प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करती है।

(47)'अन्तःपुर' पुरुष पात्र गोर्डे

अन्तःपुर कहानी का पात्र गोर्डे सुविधापरस्त बुद्वि जीवी की भूमिका में आता है जो कान्ति का जोखिम उठाये बिना गरिमा व भौतिक नाकाबपोश और छद्म दल का सदस्या बन जाता है। जो कान्ति भी करता है और सुख—सुविधाओं को भी प्राप्त करता है। परन्तु शहर में होने वाली गतिविधियों से बेखबर रहता हैं। अन्तःपुर के पर कोटे में सुरक्षित उन्हें देश स्थतियों से काई मतलब नहीं रहता है। ये पात्र कान्तिकारिता और बुद्विजीवीपन को अपनी भौतिक सफलता का साधन बनाता है।

(48)'पड़ाव' बाल पात्र

पड़ाव कहानी का ये बालपात्र पिता की आततायी छाया से भयभीत पिता के साथ जाने वाले नये परिवार के बच्चों से लम्बे संकोच के बाद मिल पाता है। बच्चे की करुणा के अथाह सागर सी भरी,जमा हुई दर्द को उभारती ऑखे परिवार के मुखिया की सहानुभूति प्राप्त करती हैं। इस रहस्यमय बच्चे के प्रति सहानुभूति उन्हें आकान्त कर देती हैं। वह बच्चे के दर्द को अच्छी तरह पहचान लेते है। कहानी के पात्र की पीड़ा एक नये दृष्टिकोण से उभारती है।

(49)'घेरे' वृद्ध पात्र

कहानी का अवकाश प्राप्त अत्यन्त संवेदनशील वृद्ध पात्र बच्चों की व्यस्तता के बीच अपने अकेलेपन से उबरने के लिये पुराने समानों को अपने ईद–गिर्द इकट्ठा कर किसी से जुड़े होने का अनुभव करता हैं परन्तु पार्क में कुछ वृद्वों के सम्पर्क में आने से वह अपनी स्थितियों से उबर पाता है। मिलने–मिलाने के कम में वृद्वों और कुछ मजदूरों की संख्या दल का रुप धारण करती है। परन्तु जल्द ही मानव विकार–ईर्ष्या द्वेष चुगली स्पर्द्वा उनके बीच बठने लगती है और ये दल बीसियों दलों में बॅट जाता है,परन्तु एक वृद्व की मृत्यु पात्र को झकझोर जाती है। पात्र मानवीय सम्बन्धों की मरीचिका के लोभ को बड़े कलात्मक ढ्रंग से चित्रित करता है।

निर्झरिणी भाग 2 कहानियों के

विभिन्न पात्रः–

(50)'खंडित'– प्रमुख पात्राः– मॉ–बेटी

कहानी की वृद्व पात्रा जो पहाड़ी इलाके में अपने पति द्वारा बनाये गये आर्चर्ड से जीवन पर्यन्त जुड़ी रहना चाहती है। पढ़ी–लिखी,बहादुरी के लिये मशहूर ये महिला, अकेले दम पर व्यापर चलाने वाली, ,खेतिहर मजदूरों के अन्याय का डटकर मुकाबला करने वाली इस पात्रा की बेटी में ब्याह शहर में कर लेना इसे पसन्द नही होता है और इस कारण मॉ–बेटी के सम्बन्धों में तनाव व बदलाव स्पष्ट दिखायी देता है। परन्तु वे अपने तरीके से खेल खेलकर वह अपने स्वर्गवासी पति की इच्छा पूरी करने के लिये बेटी आर्चर्ड से जुड़े रहने के लिये मजबूर करती है,परन्तु उन्हें हर वक्त लगा रहा है कि बेटी उनकी देख–रेख के लिये नहीं अपितु उनके पैसे पर निगाह रखने के लिये रखी गयी है। मॉ मानवीय सम्बन्धों की मरीचिका के लोभ से उबर नही पाती हैं। मॉ को परम्परागत मूल्यों और रुढ़ि के प्रतीक रुप चित्रित किया गया है।

बेटी– शहरी युवक से विवाह करने वाली यह पात्रा ने अंग्रेजी बोलना व शहरी लहजे को अपने जीवन शैली में उतार लेती है। व जंगल में भी महानगर का पेस ढूढ़ती है। मॉ बीच की दूरियां को वह कुत्ते की अतंरंगता से पाटने की कोशिश करती है और मॉ के प्रति अपने सम्बन्धों में एक ऊब महसूस करती है।

मॉ–बेटी दोनो पात्रा बदलती हुई मानसिकता प्राणी है।

(50)'स्वर लहरी' – वृद्वा

निम्नवर्ग की वृद्वा जो ट्रेन में सभी यात्रियों को अपने आ आ की स्वर लहरी के केन्द्र में ले लोगो का ध्यान अपनी ओर खींचकर उनकी सहानुभूति लेना चाहती है। जैसा कि यात्री सोचते है एक यात्री सहानुभूति पूर्वक जब उसे लड्डू दे देता है तब वह उससे इशारा कर पानी मॉगती है। मगर जब वह पानी नही देता तो वह लौटे पर थूक देती है। उसका ये थूकना समाज के लोगो के प्रति उसके दबे आक्रोश या प्रतिशोध को दर्शाता है। लगता है सब तरह से वंचिता पात्रा की दबी कुंठा इस प्रकार की प्रतिक्रिया में निकलती है।

(52)'सिलसिला' विभिन्न दर्शक पात्र

मानवीय अवमूल्यन को उभारने वाली ये कहानी वृद्वावन गार्डन के दर्शकों के माध्यम से सामूहिक रुप में वर्तमान प्राणी समाज की संवेदनहीनता का जीवन्त चित्र उपस्थित करती है। वृद्वावन गार्डन के नजारों के देखते वक्त जब इन दर्शकों की निगाह झील में पड़ी एक लाश की ओर जाती हैं। जो उनमें दहशत पैदा हो जाती है। कुछ इस घटना की इत्तला होटल में देने की सोचते है। परन्तु जब फुलवारी के दूसरे ओर जाते है तो उनकी ये इत्तला खूबसूरती के नजारों के बीच गुम हो जाती है वे ये भी भूल जाते है कि फूलवारी दूसरे हिस्से में कोई मरा पड़ा है।

कहानी में घटना के माध्यम से मानवीय सम्बन्धों में हो रहे अवमूल्यन व वर्तमान समाज यथार्थ को उभारा गया है।

(53)'झूला' – पात्रा मॉ

बेटों के विदेश चले जाने पर इस हताश मॉ के जीवन में कोई उत्साह नहीं रहा जाता है। और निराशा से ग्रसित ये मॉ बस जीवन को ढोती नजर आती है। उसके घर में शहनाई बनजे व पोते–पोतियों के मुख देखने की कसक रहती है। बड़े बेटे की आने की खबर सुनकर खुशी उनकी रंग–रंग दौड़ जाती है। और वे उसे शादी के बन्धन में बॉधने के पैतरे अपनाती है। बेटियों को बुला भेजती है। बेटो को शादी के लिये कई लड़कियॉ दिखाती है, एक लड़की के प्रति थोड़ा सकारात्मक रुख देखकर वे उसके मॉ–बाप को बुला भेजती है उस वक्त लड़का दोस्तों के साथ फिल्म देखने चला जाता है। लड़की वे स्वयं पसन्द कर भारतीय परम्परा के अनुसार शादी पक्की होने की रस्म आदयगी करना चाहती है, परन्तु बेटा उनकी आशा पर यह कहकर पानी फेर देता है। भारतीय परम्पराओं की लकीर पर चलने वाली ये मॉ बेटे की विदेशी रंग–ढंग में रंगी

विदेशी मानसिकता को नहीं पहचान पाती हैं पिता का दुख भी उस समय चरमावस्था पर पहुँच जाता है। जब वे बटवारा करके उसका हिस्सा उसे देना चाहते है पर बेटा उसे भीख समझता है। कहानी की मॉ भारतीय परम्परागत मूल्यों और मान्यताओं में जकड़ी अत्यन्त भावुक संवेदनशील है।

(54)'बहुधंधीय' प्रमुख पात्र—आचार्य जी

कहानी का यह भ्रष्ट नेता दॉव—पेचों के माध्यम से एक दूसरे से तिकडमें भिड़ाकर बड़े—बड़े मन्त्रियों से सम्पर्क बनाकर राजनीतिक को धन्धे के रुप में अपनाकर अपने व्यक्तित्व को वजनदार बना व सम्पूर्ण सुख साधनों का उपयोग करता है वह सोचता है— "यह कारोबार तो दिमाग के बल पर ही है। धन्धा बना भी तो बुढ़ापे में जाकर। शरीर तो अब भी स्वस्थ हैं, दिमाग ही अक्सर उल्टी करता रहता है...... कभी—कभी तो दस्त में सब कुछ पलपल निकालने को हो आता है.... साले को बदहजमी की शिकायत है, ठूस भी तो रखा है उन्होने कितनो का मलमूत्र।[36]

कहानी का पात्र राजनीति से जुड़े भ्रष्ट लोगों की तस्वीर उभारता हैं। जिसकी स्वार्थ परिता समाज के लिये मारक सिद्व होती हैं।

(54)'गोबर गनेस' पात्र ईमानदार राजनीतिक

विशुद्व राजनीतिक क्षेत्र से जुड़े एक ईमानदार पात्र की पीड़ा का चित्रण हैं, जिससे कई राजनीतिक कार्य लिये जाते है, और वह राजनीतिक में अपना स्थान बनाने के लिये सभी कार्यो को स्वेच्छा से करता चला जाता है। जब उसे एक प्रान्त में चुनाव के लिये पार्टी का औब्जर्वर बनाकर भेजा जाता है तब वह अपना काम पूरी लगन से करके अपनी पार्टी को विजय दिलाकर जब अध्यक्ष से लोकसभा के चुनाव के लिये टिकट मॉगता है तब अध्यक्ष उसकी अडियलबाजी—असूलबाजी व हिसाबी—किताबी पर व्यंग्य करता है और उसके व्यग्यं में उसके सारे कार्यो की मेहनत पर पानी फेर दिया जाता है पात्र की विवशता यह है कि वह इस कार्य में अपने लिये अच्छी रकम भी नहीं खींच पाता है।

(55)'पैतालिस अंश का कोण' विदेशी वृद्ध पुरुष पात्र

विदेशी परिवेश में लिखी गयी कहानी में ग्लासगों के अपाहिज पात्र की पीड़ा को उठाया गया है। जिसके अपाहिज होने पर उसके मॉ—बाप,बहन उसे छोड़कर चली जाती हैं। घर सिर्फ उसके पास रह जाता है। पर घर सोशल सिक्योरिटी के सहारे होता है। उसे सोशल सिक्योरिटी देकर हर माह रुपया दिया जाता है। पर जार्ज स्क्वायर की सड़क के

किनारे पड़ी बेंच पर बैठने वाला ये पात्र आने जाने वाले दूसरे देशों के यात्रियों के बीच अपनत्व के अहसास को ढूढ़ा करता है। अपने लोगों के बीच अजनवी रहने पर पीड़ा ।उसके मर्म को आहत करती है। अन्त में हताश वृद्ध की पीड़ा दबे आक्रोश के रुप में उभरती है विदेशी परिवेश के पात्र की व्यथा कें माध्यम से कहानी मानवीय अवमूल्यन की कथा को बड़े ही मार्मिक ढंग से उद्घाटित करती है।

(56)'धॉसू' – पात्र– बुद्विजीवी नेता

धॉसू कहानी का पात्र एक पका हुआ राजनीतिक है जो दॉव पेंचों और पैंतरेबाजी से सत्ता के बड़े पदों से हासिल करना व स्थितियों का रुख अपनी ओर मोड़ना जानता है। "परन्तु समाज में कोढ की तरह उगे ये वे नेता है जो सत्ता और सामाजिक अन्याय,अत्याचार उत्पीड़न के बीच व्यवथात्मक स्थायित्व का पोषण करते है।"[37]

(57)'खुद के खिलाफ' पात्र–विमला

प्रेम की असफलता, पति की निष्क्रियता के कारण आधातों को झेलने वाली ये पात्रा पतन के निम्नतम गहवर में गिरी असामाजिक स्थितियों में पहॅुच जाती है। पति द्वारा लाये बन्दों के साथ हम बिस्तर बनना व अर्थ कमाना वह स्वीकार करती है,परन्तु प्रेमी के साथ सब कुछ छोड़ कर जाने को तैयार होती है। पर प्रेमी की पुरुष मानसिकता इन स्थितियों में उसे स्वीकार नही कर पाती है। तब प्रेम और विवाह जैसे परम्परागत प्रस्थापित नैतिक प्रतिमानों के खिलाफ उसका दबा आक्रोश फूट पड़ता है। "प्यार जो खुद एक आदर्श है वह स्वार्थी बन्दों के बूते की चीज नहीं। उनके लिये तो वह ताजा चीज को हथियाने का हथकंडा हैं।"[(38)] _इस प्रकार पात्रा के दबा आक्रोश सम्पूर्ण समाज व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह सा टॉग देताहै।

(58)'शापग्रस्त' अप्रवासी भारतीय

कहानी में अप्रवासी भारतीय की पात्र की पीड़ा उद्घाटित होती है, जिसकी बीबी और बच्चे विदेशी चकमक ने, उसे छोड़कर चले जाते है। मूल्यों के टूटने के दर्द से हताशा, निराश पात्र आने वाले भारतीयों को अपनी कहानी सुनाताहै वे बच्चे व बीबी के लौट आने के इन्तजार में प्रतिदिन शराब के नशे में डोलता रहता है।

(59)'गिद्ध' पात्राः– नौकरी पेशा अविवाहित युवती

गिद्ध कहानी की अविवाहित नौकरी पेशा बड़ी होती आत्मविभाजित युवती मॉ–बाप की इच्छाओं तले दबी अपने निजत्व व अस्तित्व को खोजती है। और उनके इच्छाओं की

लम्बी,चौड़ी लिस्टों के बीच एक घूसखोर,दलाल किस्म के नेता की हवस का शिकार बनती है। समाज की निन्दा,लाछंन व उपेक्षा के भय से ये पात्रा अपने साथ होने वाले बलात्कार पर मौन रहने को विवश होती है।

(60)'प्रभा मण्डल'–योगी

कहानी का पात्र एक ऐसा राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त योगी है जो अपनी बुद्विजीविता से बड़े–बड़े,रईस,उघोग पति, नेता, व्यवसायियों के बीच अपना स्टेटस बना लेता है। में–आलीशान,क कोठी ,परिचारिकाएँ स्कूल कई सेवकों के बीच इनका प्रभुत्व प्राचीन राजाओं का सा आभास देता है। अपने स्टेटस के बल पर व शुरुआती दौर में कुछ दैवीय चमत्कार के कारण बड़ी बड़ी हस्तियॉ को अपने प्रभुत्व वृत में लेने वाला ये योगी देवीय शक्ति के तामझाम के बीच अपने पुत्र रघु की मृत्यु का कारण बनता है। परन्तु "रघु की तो सिर्फ एकजान थी और अब वे पालते हैं, उन्हें जो रघु जैसी सैकड़ों जाने लेते है। यह सब इस लिये कि बाबजी यश, चमक–दमक के आदी हो गये है। इस प्रभामण्डल के लिये दुश्चक्र से निजात नहीं।[39] और पुत्र शोक के समय यह पात्र टिपटिमाते प्रभामण्डल के बीच एक बुझे हुए सूर्य की भॉति लगते ।

(61)'निरस्त'– वृद्व पिता

निरस्त का वृद्व पिता जीवन के मानवीय मूल्यों के बदलते स्वरुप पर दुखी होता है। और वृद्वावस्था में पत्नी की नजदीकी चाहता है। पर वृद्वावस्था के स्वाभावगत प्रतिक्रियाओं के कारण पत्नी व बच्चों से उनकी दूरियॉ बनती चली जाती है। और वे अपने आस–पास पुरानी चीजों एकत्र कर अपने अकेलेपन को दूर करने के प्रयास में लगे रहते है। कहानी के पात्र की स्वाभावगत विशेषताओं व स्थितियों के बीच कथाकार वृद्वावस्था की कारुणिक स्थिति को उभारता है।

(62)'हमदर्दी' पात्र– शिक्षित बेरोजगार युवक

कहानी का शिक्षित बेरोजगार नौजवान अपनी कैजुअल नौकरी की मुस्तकली के लिये दिल्ली में मन्त्रियों के दफ्तरों और घरों के चक्कर काटता है पर इस गरीब युवक के इस सम्पूर्ण प्रयास पर आवश्यक कार्यवाही का मतलब कोई कार्यवाही नही की मुहर लगा दी जाती है। हताश, निराश, बैचेन युवक अर्द्वविहोशी की हालत में दिल्ली की सड़क पर गिर जाता है। कुछ हमदर्दी के हाथ उसकी ओर बढ़ते है। पर उसकी सवालिया नजरे समाज नियन्ताओं से यह पूछती है...... अपने पैसे पर खड़े होने की

सुविधा चाहिएं...दे सकते हो क्या?[40] कहानी वर्तमान बेरोजगार युवाओं की वस्तुस्थिति को उभारती है।

(63)'ज्वालामुखी' पात्रा—सावित्री

कहानी में पति के अत्याचार के खिलाफ प्रतिकार करने वाली पात्र का चित्रण है। पति के अत्याचार की अतिशयता व
व मांसल यातनामयी स्थितियों के भोगने के बाद सावित्री उस मुकाम पर पहुँच जाती है जहॉ वह पति के शोषण के खिलाफ प्रतिकार कर बैठती हैं। कथाकार ने सावित्री की जीवन स्थितियों के बीच उसकी स्वाभाविकता को बरकरार रख सावित्री की पीड़ा को एक सती की घटना के प्रतीक के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

(64)'कहानी नही....' पात्र—गाइड

पुरातत्व विभाग में एक साधारण कर्मचारी बनकर मांडू आने वाला ये पात्र रिटायरमेन्ट के बाद पर्यटकों को मांडू घुमाने का कार्य अपने हाथ में ले गाइड बन जाता है। मांडू में अस्सी वर्ष की अवस्था तक जुड़ा रहने वाला ये पात्र वृद्वावस्था मेंअपने बेटो के पास लौट जाना चाहता है। पर पर्यटकों के एक जत्थें को मांडू दिखाते वक्त पुनः उनका मन जीवन पर्यन्ट इस स्थल से जुड़ने का हो जाता हैं। वर्तमान भौतिकवादी युग में सामानों के बीच घिरे मनुष्यों के पास खूबसूरत नजारों के दिखने के लिये वक्त की कमी पात्र को खटकती है। मांडू की खूबसूरती में जीवन की सार्थकता को तलाशने वाला ये पात्र अपने स्वाभाविक रुप चित्रित हुआ है।

(65)'जंग' पात्रा—मॉ —बेटी

जंग कहानी में पात्रा का मनोवैज्ञानिक चित्रण हैं। समाज की ये विरली मॉ अपनी स्वजन्मा बेटी से इसलिये दुराव रखती हैं कि वह अपने पिता से अत्यन्त जुड़ी हुई थी। उनकी इच्छाओं का दमन करने वाले पति के प्रति उनका दबा आक्रोश पति के मरने के बाद बेटी के लिये उभरता हैं। अपनी नौकरी पेशा अविवाहित एकमात्र पुत्री के मान—सम्मान को उसके सहकर्मियों, आस—पड़ोस के बीच गिराने में कोई कसर नही छोड़ती है। कथाकार ने पात्रा के अतीत और वर्तमान की स्थितियों के बीच उसके चरित्र की विशेषताओं की जो संगति बैठायी गयी है। उनमें साम्य नही है। अतीत में वे पति के निष्क्रियता के बीच अपनी महत्वाकांक्षाओं को नया रुख दे समाज में अपने व्यक्तित्व को वजनदार बनाती है। पर वर्तमान में वे कस्बे की एक वाचाल महिला का—सा व्यवहार करती हैं। शायद उनके चरित्र का ये अन्तर अवस्था के बदलाव अर्न्तगत आता हों।

(66)'किस कीमत पर....?' पात्रा युवक,युवती

कस्बे की ये नौकरी पेशा अविवाहित युवती अपने सहकर्मी श्याम से जुड़ती है कस्बाई मानसिकता का तालमेल उनके सम्बन्धों में प्रौढ़ता लाता है। पात्र श्याम से शादी करके अपनी जज्बाती जरुरतों को पूरा करना चाहती है,पर श्याम का अर्न्तमुखी स्वभाव ऐसे बन्धन में बधने का वक्त चाहता हैं। श्याम का व्यक्तित्व आज के युवाओं का प्रतिनिधित्व करता है। तनाव ग्रस्त,हताश ये पात्र श्याम से अपने आपको अलग रख पड़ोस के एक परिवार से जुड़ती है। पर पात्र की अतृप्त इच्छाएँ,दबा आक्रोश अपने पर सहानुभूति रखने वाले पड़ोसी पर उभर कर आता है। कहानी में पात्रों की विशेषताओं को दर्शाकर वर्ममान स्त्री पुरुषों सम्बन्धों को नये रुप में उद्घाटित किया जाता है।

(67)'अलग–अलग समय'–पात्र युवक,युवती

कहानी युवक–युवती के प्रेम सम्बन्ध वर्तमान युग के सम्बन्धों में आए बदलाव को चित्रित करते हैं। कहानी का युवा पात्र प्रेम में जुड़ाव व बन्धन में बँधकर देवत्व का अनुभव करना चाहता है। पर प्रणय को जीवनगत 'थ्रिल' मानने वाली युवती की छटपटाहट को वह सम्बन्धों की डोर में बॉधना चाहता है पर सम्बन्धों की डोर उसके हाथों से सरक –सरक जाती है। वह सोचता है.... सभ्यता की बदहवासी से दूर दो जीवों का पूरा पूरा एकांत....कुछ यह तृष्णा भी होगी कि शायद इस बार कोई ऐसा आ निकले जो थमकर बैठ जाए।[41] युवक की संवेदनशीलता,भावात्मकता उसे हताश कर देती हैं।

(68)'संध्यानाद' पात्र –वृद्व मास्टर

कहानी का वृद्व मास्टर जो अलग–अलग नौकरी करने के कारण हमेशा पत्नी से दूर रहा वृद्वावस्थामें वे चाहते है कि पत्नी उन्हें सहवास का सुख दे। पर पत्नी को बहू–बेटियों के आगे पीछे घूमना उन्हें अच्छा नहीं लगता हैं वे बच्चों की दोगली नीति को बाखूबी समझते हैऔर चाहते है कि पत्नी भी इसे समझे। उनका दबा आक्रोश व कुंठाएँ पत्नी पर हावी होती हैं। और बच्चे मॉ बाप को एक–दूसरे से दूर कर देते है। अन्तिम बिन्दू पर पात्र की पीड़ा वृद्वावस्था की कारुणिक स्थितियॉ पर प्रकाश डालती है। यह कहानी लेखक के मानवमुखी रुझान को सूचित करती हैं।

(69)'संडाध' –पात्रा–पत्नी

'संडाध' कहानी की पात्रा पति के जीवन में पर स्त्री के आगमन से उपजी संडाध को ढ़ोने विवश होती हैं। बच्चे और सास–ससुर के साथ दिन–रात काम करते खटने

वाली ये पात्रा पति की अलग घर लेने की इच्छा व बच्चों को पर स्त्री से मिलवाने की इच्छा का विरोध करती हुई कहती है कि आप जो चाहे कर सकते है, पर मैं न तो दूसरे के घर ही जाऊँगी और न मेरे बच्चे ही उससे मिलने जायेगे। अपनी सम्बन्धों को ढोने वाली इस विवश पात्रा में कहानी के अन्तिम बिन्दु पर अपनी स्थितियों का मुकाबला अकेले करने का आत्म विश्वास जागृत होता हैं।

(70)'आने वाली सुबह'–पात्र पिता

आधुनिक शिक्षा–दीक्षा प्राप्त व प्राचीन संस्कारों कोकुछ हदतक मानने वाला ये पिता अपने पुत्रा के मुस्लिम मित्र के घर आने

आने पर आपत्ति जताता है। संस्कारगत उनकी प्रवृत्तियॉ उनकी पर हावी रहती है। पर उनके धर्मगत और जातिगत संकीर्णताओं के वृत्त उस समय खुल जाते हैं। जब ये मुस्लिम बच्चा उनकी बीमारी पर उनकी सेवा–सुश्रुषा करता हैं।

(71)'आवाज.... खुलती हुई' बाल–पात्र

कहानी में कस्बे के प्राकृतिक वातावरण में विकास पाने वाला यह बाल पात्र महानगरीय संस्कृति के बोध से अनभिज्ञ इस परिवेश में अपना सामंजस्य नही बिठा पाता हैं। इस कारण उसमें रिक्तता आ जाती हैं। पर कस्बे की ओर बालक का पुनःपलायन उसे मुक्ति का अहसास कराता हैं।

(72)'आल्हाखण्ड' स्वतन्त्रता सेनानी

मलौनिया डकैती के केसमें कालापानी की सजा भोगने वाला ये पात्र अंग्रेजों और जपानियों की अमानवीय क्रूरताओं का शिकार बनता हैं पर अतीत, परम्परा अपने समय व धरती से भावात्मक रुप से जुड़ा ये पात्र, इन तकलीफों के बीच बड़ी ताकत का अहसास करता हैं। परन्तु कुछ समय के लिये जब वह अपने देश पहुँचता है,तब अपने स्वतन्त्र देश में बदलते जीवन मूल्य और बदलती मानसिकता पर दुःखी होता है–" मैं अपने स्वतन्त्र देश में नही, एक बाजार में पहुँच गया था.... चुनाव और सरकार बनाना भी।[42] कहानी में 'स्वतन्त्रता' की गरिमा नही, व्यक्ति की गरिमा का साक्षात्कार होता हैं।[43]

(73)'उल्कापात 'बाल–पात्रा गत्तों

मॉ बाप के अलगाव की पीड़ा उठाने वाली इस पात्रा की मनः स्थिति में उसके चरित्र का उद्घाटन होता है। दादा–दादी के ताने उठाने वाली व उनके इशारों पर काम

क़रने वाली ये पात्रा बहन के फेल होने पर दादा–दादी की फटकार से दुखी बहन को ढ़ाढ़स बाधती है कि जब माँ को ही हमसे मतलब नहीं रहा, तब हम दोनो मिलकर स्थितियों से निपटेगें। स्थितियाँ पात्रा को असमय प्रौढ़ बना देती हैं।

(74)'खाक इतिहास'– पात्रा– मारिया

इस चरित्र प्रधान कहानी की पात्रा अर्न्तराष्ट्रीय कम्यूनिज्म की बर्बरता का शिकार बनती है, और एक–एक करके वह अपने आत्मीयों को खो देती हैं ,परन्तु संघर्षो,जुल्मों और हताशा ,यातना से ऊपर उठकर मानवीय संवेदना से ओत–प्रोत हो, अन्धी औरतों को पढ़ाकर जीवन को साकारात्मक आयाम देती हैं, और व्यक्ति को जीने देने वाली शक्ति के किसी आन्तरिक उत्स को छूती हैं। यही उसके चरित्र की विशिष्टता हैं।

(75)'फांस' पात्रा–ग्रामीणा

कहानी की सरल,निश्छल गाँव की नारी को ठगने आए युवक उसे उसके नैहर का बताकर उसे बातों में फॉस मालभत्ता उड़ा ले जाना चाहते हैं। पर इस ग्रामीण भारतीय नारी की सरलता और सहजता उन्हें सचमुच का भाई बना उन्हें अपने स्नेह के वृत्त में बाँध लेती हैं। और उसके स्नेह की परिधि मेंबध्य वे युवक उसके बच्चे को भॉनजा मान जेब से कुछ रुपये निकाल कर देते हैं। कहानी में ग्रामीण भारतीय नारी चरित्र की स्वाभाविकता का सूक्ष्मांकन हुआ हैं।

(76)'मुझे घर ले चलो' पात्र– लिफ्टमैन

कहानी का पात्रा कम्पनी का लिफ्टमैन नौकरी छूटने पर आर्थिक विवंचना का शिकार, नौकरी लगने–छूटने की आशा–निराशा केबीच झूलता हुआ अस्पताल में अपने प्राण गवॉ देता हैं। परिस्थितियों को झेलते पात्र की अव्यक्त मानसिक पीड़ा की छटपटाहट स्वप्न के माध्यम से उद्घाटित हो पात्र के चरित्र पर प्रकाश डालती हैं।

(77)'वरणांजलि' पात्र–पिता

पुत्र के व्यक्तित्व को आधुनिक जीवन के अनुसार ढालने वाले इस पिता के प्रयास से जब बच्चे का स्वाभाविक विकास बाधित होता हैं, और पुत्र की मृत्यु हो जाती हैं। तब 'सन्तति विछोह' की पीड़ा के दंश व अग्नि शलाकाओं में झुलसता ये पिता जीवन–मृत्यु से सन्दर्भित प्रश्नों में उलझता,सुलझता पुत्र के वजूद को अपने आप में समाया पाता हैं। पीड़ा की अतिरेक्तता, और आध्यात्मिकता सन्दर्भो में उलझती सुलझती पात्र की मनोव्यथा,मनोस्थिति कहीं–कहीं स्वाभाविकता को बाधित करती हैं। कहानी का 'एक झोका' आध्यात्मिक विगलन की दिशा में भी जाता साफ दिखायी पड़ता हैं और विगलन

लेखक के हम में नहीं, क्योंकि इससे सन्तुलन गड़बड़ाता हैं। वैचारिक सैद्वांतिक हो कि आध्यात्मिक, विगलन लेखक को अनुभूति में रमने अथवा इसी में तृप्ति अनुभव करने की मनोदशा में ले जाता है,जबकि लेखक का रास्ता अनुभूति और अभिव्यक्ति के सातत्य का हैं।[(44)],

(78)'एक बूँद उलझी'' पात्र– मध्यबर्गीय इंस्पेक्टर

–आधुनिकता व पैसों को जीवन की सार्थकता मानने वाला इंस्पेक्टर सही गलत तरीके से रुपये कमाकर समाज में अपना स्टेटस बना खुश होता है,पर उसकी ये जीवन शैली उसके परिवार को बिखेर कर रख देती हैं। पत्नी से बच्चों की दूरी से उसके जीवन में रिक्तता आ जाती हैं। और वो इस पीड़ा की छटपटाहट में अत्यन्त दयनीय हो जाता हैं। उसमें यह बोध गहराने लगता है, कि परिवार के जुड़ाव के लिये सिर्फ पैसा ही काफी नही हैं। इस पश्चाताप् से अन्त में उनकी मृत्यु हो जाती हैं। पात्र की प्रकिया द्वारा, द्वारा उसके वास्तविक चरित्र का उद्धाटन हुआ हैं।

(79)'अर्द्ववृत्त' पात्रा–सौता,

'ब्याहता'– अर्द्धवृत्त की ब्याहता पति के जीवन में पर स्त्री के आगमन पर कूद्ध बौखलायी ,सौता को अपमानित करने के इरादे से अस्पताल जाती है। पर उसकी ये उपेक्षा,घृणा, सौता के मानवीय स्निग्धता की निर्मल धारा में बह जाती हैं। कथाकार ने इस पात्रा के माध्यम से नारी स्वाभाव के मनोविज्ञान का सूक्ष्मांकन किया हैं।
सौता'–अपना जमा रुपया और मकान अपने पुत्र के नाम न कर ब्याहता के पुत्र के नाम करने वाली ये विलक्षण पात्रा मानवीयता का एक अनुपम उदाहरण पेश कर, सौता सम्बन्धी धारणाओं का खण्डन करती है व सौता के आन्तरिक सौन्दर्य की पहचान कराती है। इस आदर्श पात्रा का चरित्र उसकी महानता का द्योतक हैं।

(80)'प्रतिमोह' पात्र–कबाड़ी

बम्बई में झोपड़ पट्टी में रहने वाले कबाड़ी की जीवन स्थितियॉ व मानवों का अमानवीय व्यवहार उसे कठोर बना देता है। आदमी जात से नफरत करने वाले इस पात्र के पास भाग आने बाबा एक छोकरा अपनी संदूचकी झोपड़ पट्टी में रखने को कहता है कुछ दिन वास्ते वह संदूचकी रख लेता है पर आठ दिन काम की तलाश में भटकने वाले इस लड़के के लिये कबाड़ी के मन में मानवीय करुणा जाग्रत होती हैं और वह उसे झोपड़पट्टी पनाह दे भर पेट खाना खिलाता हैं।''अपमान,अवहेलना से युक्त कष्टप्रद जीवन में भी जब एक दिन कबाड़ी के हृदय के कपाट खुलते हैं तब हम निश्चय ही

मानवीय स्नेह के अस्तित्व को लेकर समाश्वासित हो जाते है।"[1] जीवन स्थितियों व मानवों के अमानवीय व्यवहार से पात्र के स्वाभाव में कठोरता आना स्वाभाविक हैं पर जब उसकी मानवीय चेतना प्रकाशित होती है। तो मानवीयता का सोता उसके अन्दर फूट पड़ता है।

(81)'मायकल लोबो' पात्र– वकील

कहानी का पात्र शराब की लत में अपना पेशा, अक्ल, शिक्षा,बोलने की कला सभी कुछ खो बैठता हैं,सात साल उपेक्षित जीवन बिताने के बाद इस पात्र की बेटी के खीज,आक्रोश ,प्रेम ओर टीस से भरे शब्दों के अर्थ की अनगूँज उसके जीवन को झकझोर देती हैं और इसका प्रभाव उसकी मानवीय चेतना पर पड़ता है। और फिर वह शराब छोड़ देता है। इतना ही नही वह हफ्तें में एक बार चर्च जाकर शराब पीड़ित जनके घृणित और अपमानित जीवन के कष्टों को दूर कर उनके जीवन सही आयाम देने की दिशा में प्रयासरत होता हैं। "जीवन और सत्य के प्रति ऐसी अटूट आस्था और अडिग विश्वास विरले ही मिलता हैं।[45]"

(82)'सुंनदों की खोली' युवा पात्र

बम्बई में चाल में रहने वाले परिवार के सभी पात्र, यौवन में ही आशा उत्साह,उमंग के अभाव में कुंठा ग्रस्त हैं।

(83)'आदेश' क्लर्क पात्र

कहानी का पात्र क्र्लक अपने वाक् चार्तुय के जल में अधिकारी को उलझाकर अपने तबादले को स्थापित करा लेता हैं। इस कौशल द्वारा विश्लेषित होती है, तबादले को लेकर उसकी छटपटाहट, वर्तमान समय में अधिकारियों के प्रतिष्ठा सम्बन्धी बदलते जीवन मूल्य तबादले को रद्द कराने का उसका विशिष्ट पैंतरा,वर्तमान परीक्षको की अंक पाने की पद्वति ,जो वर्तमान सच को उद्घाटित करती हैं। पात्र के कथन व आचरण द्वारा उसके चरित्र का वास्तविक स्वरुप उद्घाटित होता है।

(84)'गुरु जीं' युवा–पात्र

कहानी का युवा पात्र बम्बई में नौकरी की खोज में कष्ट प्रद संघर्षो को सहना व इस प्रयास में विभिन्न सम्बन्धों की स्थापना के लिये दौड़, धूप करना तथा असफलता में भी आशा के सूत्र से आगे बढना सभी स्थितियों का भगवान की कृपा मानने वाले इस

पात्र का आत्मविश्वास एक आम भारतीय की आस्था और विश्वास का सजीव चित्र उपस्थित करता हैं।

(85)'सिर्फ इतनी रोशनी' सोतिया–पिता,मॉ–बेटी

बेटीः– कहानी की बाल पात्रा सौतिया, बाप से मॉ विवाह कराके इस बाप से प्रकृत जैसा स्नेह प्राप्त कर दोनों के जीवन में कुछ जोड़ मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं।
सौतिया पिताः– सौतिया पिता के अनुपम स्नेह के वृत्त में धर्म गत, जातिगत,सगे–सौतले की रेखा समाप्त हो जाती हैं। सिर्फ इतनी रोशनी में तीनों प्रमुख पात्रों की आत्मा कहानी के पूरे वृत्त को आलोकित करती हैं। यह कहानी मृत्यु का तीक्ष्ण तीर हृदय में लिये हुए भी जीवन की सुन्दरता को देखने और प्यार को जीने का अहसास कराती हैं।

(86)'अर्थ ओझल' पात्र प्राध्यापक

कहानी का प्राध्यापक जो अपने मेधावी छात्रों के विकास में दिन–रात लगा रहता है। समाज और परिवार की उपेक्षा,निन्दा,लांछना,उपहास का शिकार बन मृत्यु को प्राप्त होता हैं। उनके व्यक्तित्व का सत्य उनकी मृत्यु के कई वर्षो बाद उनके एक शिष्य द्वारा उनके पुत्र के सामने खुलता हैं। पिता के बारे में बनी गलत धारणा का शिकार पुत्र की गुत्थी जब सुलझती हैं। गोविन्द मिश्र ने इस व्यक्तित्व का अपनी कला से जीवन्त रुप में सामने रखा हैं।

(87)'आसमान कितना नीला' पात्रा प्रतिभा सम्पन्न युवती

कहानी की प्रतिभा सम्पन्न युवती शादी और कैरियर में पहले कैरियर को चुनती है। आक्सफोर्ड में वजीफा और भरती की सूचना मिलने पर पात्रा में उत्साह के साथ आत्मविश्वास जागृत होता हैं और वह मंगेतर से कह देती हैं। कि मेरे आने तक अगर तुम्हें कोई बेहतर मिले तो तुम शादी कर सकते हो। कहानी की आत्मविश्वासी पात्रा आधुनिक युवती का वास्तविक चित्र उपस्थित करती हैं।

(88)'रामसजीवन की मॉ' पात्र रामसजीवन और जटाशंकर,वृद्धा

अड़ोसी–पड़ोसी जटाशंकर और रामसजीवन के बीच वैमनस्य का कारण रामसजीवन की मॉ बनती हैं।ग्रामीण परिवेश की सीधी सचरित्र यह वृद्धा अतीत की स्थितियों में ही जीती है,एक ऑगन के विभाजित होने पर जटा शंकर की बकरी से अत्याधिक लगाव उन्हें जटाशंकर के चबूतरे तक ले जाता है। जटाशंकर के चबूतरे की

ओर प्रतिदिन बैठना,उनमें भेद पैदा करता हैं। और चबूतरे पर एक दीवार खड़ी कर दी जाती हैं वृद्वा की मृत्यु हो जाती हैं। पर दोनों के बीच वैमस्य बढ़ता चला जाता हैं। पर रामसजीवन की बेटी के विवाह पर जटाशंकर का हृदय पिघलता हैं वे बरातियों का आतिथ्य सत्कार में जुट जाते है इतना ही नहीं वे रामसंजीवन की बेटी को भीगी ऑखों विदाई देते हैं। कहानी की वृद्वा पात्रा होकर भी पाठक पर अजीव प्रभाव छोड़ती हैं व सभी पात्र भारतीय मानवीय मूल्यों उद्घाटित करते हैं।

(89)'निष्कासित' पात्र ईमानदार ऑफिसर

रामेश्वर राय ईमानदार,अनुशासन प्रिय व कठोर अधिकारी कहानी के प्रमुख पात्र हैं। जो मूल्यों की रक्षा हेतु अपने अधीनस्थ अधिकारी मोहन कुमार को पच्चीस हजार रुपये रिश्वत देने के आरोप में गिरफ्तार करा देते है। पर गिरफ्तारी के बाद मोहन कुमार के परिवार का बिखर जाने की स्थिति उन्हें विचलित कर देती हैं। पात्र के अन्तर्द्वन्द्व,मानसिक जगत की हलचल, ऊहापोह उसके चरित्र को स्वाभाविक बनाते हैं। और उन्हें लगता है कि मानवीय मूल्यों की रक्षा हेतु उठाया उनका कठोर कदम आने वाली पीढ़ी को रास्ता देगा।

(90)'कालखण्ड' पात्र मुक्तिसिंह

देश में होने वाले आन्दोलनों में किसी प्रकार की भूमिका न निबाहने वाला ये निष्क्रिय पात्र एक तरह की जीवन शैली, एक अधोवस्त्र में चबूतरे पर पड़े पलंग पर इन घटनाओं से परे पड़ा रहने वाले इस पात्र को सत्याग्रही की एक घटना झकझोर देती हैं। नौजवान सत्याग्रही के प्रदर्शन पर अंग्रजो का क्रूरतम अत्याचार मुक्ति सिंह के हृदय को हिला देता हैं। उनके हृदय की छटपटाहट मानसिक जगत की हलचल में उनकी जीवन शैली जातिगत संकीर्णताऍ, सभी स्थितियॉ धुंधला जाती हैं। और वे न जाने किस अतंश्चेतना से आगे बढ़ते चले जाते हैं और सत्याग्राहियों की तरह प्रदर्शन करते हैं। अंग्रेजों के अत्याचार से देश के कार्यो में अपने आप को लगा देने उनका शरीर पुलकित होता चला जाता हैं।

मुक्तिसिंह जैसे निम्न स्तर के पात्र का ये बदलाव उन्हें आदर्श पात्र की श्रेणी में रख देता हैं।

(91)'धुंधलका'– पात्रा रुक्मिणी

अचानक पुत्र की मृत्यु और दूसरी सन्तान न होने की पीड़ा रुक्मिणी को संसार से विरक्त कर देती हैं। और वे आदमी की दुनिया से अलग भगवान की अष्टयामी सेवा में दिन भर लगी रहती हैं। आदमियों और रिश्तेदारों के लिये कठोर रुक्मिणी के सूखे

और वीरान जीवन में उनके भाई–भाभी का बेटा-आलोक खुशिहाली लाता है। वे आलोक से आत्मीय हो लहक उठती हैं। पात्रा के चरित्र की वास्तविकताओं का उद्घाटन युक्तिपूर्वक हुआ हैं। स्वाभाविकता पर कोई व्याघात नही हैं और पात्रा मानक्ता जैसे विराट जीवन लक्ष्य की ओर गमन करती हैं।

(92)'यों ही खत्म' पात्रा पार्वती मौसी

कहानी की पात्रा पार्वती की जीवन स्थितियॉ,पति का अत्याचार उन्हें आसामान्य बना देता हैं और उनका जीवन गरियाने व छूआ–छूत में बीतता है पर इस पात्रा के हृदय को दस्तक देती है एक अछूत की पत्नी की प्रसव वेदना और उन्हें अपने दुख से आगे बाहर दर–दर,टुकड़ो–टुकड़ों में फैला दुख बड़ा दिखायी देता हैं। और उनका जीवन जुड़ जाता है, मानवता के सार्थक सन्दर्भो सें। पात्रा की पीड़ा और व्यथा का उदातीकरण कलात्मक और सांकेतिक रूप में हैं ,जिसमें मानवीय सबलता और दुबर्लता दोनों ही दिखायी देती हैं। पात्रा का चित्रण विश्वसनीय व स्थितियों के अनुरुप हैं।

(93)'हज्जाम मन्सुखराम'– पात्र हज्जाम मन्सुखराम

कहानी में पात्र हज्जाम मन्सुखराम की पीड़ा का चित्रण हैं जिसे हज्जाम बनाने के लिये बड़े अधिकारियों के यहॉ जाने का मौका मिलता है। वह अपने को स्टेटस का हज्जाम समझ बैठता है। पर उन्हें जब डे.आईजी. साहब के सिपाही द्वारा समय पर हज्जाम न बनाने आने पर दस जूते लगाये जाते है। तब उनका मोहभंग हैं। पात्र अफसरों के अत्याचार व व्यवस्था के भ्रष्टाचार पर क्षोभ व्यक्त करता हैं।

(94)'सूखी क्यारी भारतीय नारी

कहानी में भारतीय नारी की सहृदयता का चित्रण है जो सन सत्तावन के अंग्रेजों के खिलाफ चल रहे स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय अपनी क्यारी के पीछे छिपे लहूलुहान अंग्रेज को पानी पिलाकर उसे भागने का मौका देती है पात्रा का देश के शत्रु के प्रति ये व्यवहार भारतीय जीवन मूल्यों को प्रतिपादित करता है।

(94)'भगवान ने चाहा तो....' पात्र कुशल अधिकारी

कहानी के प्रबुद्व आत्मविश्वासी,महत्वाकांक्षी व कौशल क्षम की बाजीगरी द्वारा पदोन्नति व विदेशी नौकरी को पाने वाले पात्र के जीवन की एक छोटी घटना के माध्यम से ईश्वरीय इच्छा सर्वोपरि जैसे सत्य का संधान किया गया हैं। जो सारी कोशिशों के बावजूद विदेश नही जा पाता है।और तनावग्रस्त हो हार्टअटैक का शिकार होता हैं। ईश्वर के प्रति आस्थावान हो पात्र विदेश जाने के प्रोग्राम को रद्द कर देता हैं।

(95)'अवरुद्व' पात्र– स्वतन्त्रता सेनानी

कहानी के पात्र रामेश्वर भाई आजादी की लड़ाई में अंग्रेजों के खिलाफ नफरत के कारण जुड़ते हैं पर अंग्रजों के भारत से जाने पर अपनी दुनिया में वापस आ जाते हैं। पर वर्तमान समय की एक घटना उन्हें झकझोर देती हैं नेता की स्वार्थपरिता के कारण निकाले गये जूलूस और दिखावटी प्रर्दशन को विद्यार्थियों का एक दल रोक देता है व उनसे टोपी उतारने को कहता है। क्योंकि युवाओं का आक्रोश है कि टोपी और खद्दर के पीछे नेताओं का भ्रष्टाचार पलता हैं। तन्त्र और व्यवस्था के भ्रष्टाचार के खिलाफ युवाओं का ये प्रर्दशन उनकी ऑखे खोल देता है। और उन्हें लगता है जैसे कि मूल्यों के प्रति किया जाने वाला सतत प्रयास अभी जारी रखना होगा। पात्र का चरित्र मूल्यों के प्रति सचेत, जागरुक और अन्वेषी बनाता हैं।

(96)'इन्द्रलोक'   पात्रा–युवती उर्वशी

भौतिक साधनों की चकाचौध व भावात्मक आर्कषण में भटकती उर्वशी का भटका व उसके दाम्पत्य जीवन को विखराव की कगार पर खड़ा कर देता हैं। पर पति की सहदयता इन स्थितियों में भी उसे स्वाकार्य करने को तत्पर होती हैं। पश्चाताप् की अग्नि में सुलगती पात्रा की मानसिकता पति के उपकार के बोझ तले दब उसका सामना नहीं कर पाती है उसे लगता है कि कहीं वह पुनः भटक न जाये। पात्रा के मनोद्वन्द्व, मनोवृत्ति भावात्मक आर्कषण की परिणिति व मनोव्यथा में उसके चरित्र को स्वाभाविकता में उभारा गया हैं।

(97)'बोझ' बाल पात्रा

बोझ कहानी की बाल पात्रा की मानसिकता परिवार में मॉ द्वारा आत्महत्या करने और घर में दूसरी युवती के आने से आहत होती हैं। चार साल की बच्ची असमय प्रौढ़ हो जाती है। और घर पर दूसरी युवती के वजूद से अपने आप को बचाये रखने के लिये अपने मॉ के अक्स को स्वयं में उतार लेना चाहती है। बाल मनोविज्ञान का गहरा स्पर्श करने वाली इस विशिष्ट पात्रा की मनोस्थिति कही–कहीं अस्वाभाविक लगती हैं।

(98)'आक्रा भाला' पात्रा हंसा

गॉव में साधारण स्थितियों में दाम्पत्य जीवन का सुख भोगने वाली हंसा को जब उसका पति बड़ा आदमी बनने के लिये बम्बई लाता है। तब बम्बई का परिवेश उसे रास नहीं आता है। फिर आर्थिक तंगी से गुजरते हुए दूसरे के घर में झाडू पोछा करके भी

हंसा पति के साथ खुश रहने की कोशिश करती हैं। पर पति द्वारा बम्बईयां रंग–ढंग अपनाना, घर में विदेशी सामानों का रखना हंसा का मंगलसूत्र चुराना व पर स्त्री से सम्बन्ध रखना हंसा को तोड़ देता है। विवश पात्रा को अपनी जीवन स्थितियों से उबरने का कोई रास्ता नही दिखायी देता हैं। अपनी स्थितियों झुलसती पात्रा की मनोवस्था में उसके चरित्र का निरुपण स्वाभाविकता की सृष्टि करता हैं।

(99)'उपचार'–पात्र डाक्टर राजपाल

आतंकवादी घटना के दौरान लाये गये दो घायलों में डाक्टर राजपाल अधेड़ जिसके बचने की उम्मीद ज्यादा थी, उसे बचा लेते है। पर इसी बीच घायल नौजवान की मृत्यु हो जाती हैं। डाक्टर के मानस पटल पर हमेशा नौजवान का प्रश्न कौधता रहता है और डाक्टर साहब तो क्या मैं मर जाऊ?[1] डाक्टर की आत्मा की कचोट उसे नौजवान के परिवार तक खींच ले जाती हैं। वहॉ पति की मृत्यु के आघात से मूर्तिवत उसकी पत्नी की वे मदद करना चाहते है। पर नौजवान की पत्नी की पथराई ऑखों में जबाव की जगह प्रश्न चिन्ह देखकर उनकी आत्मा आहत होती है, मन कन्दन कर उठता हैं। वे चीख उठते है डाक्टर शरीर का इलाज कर सकता है। जब आदमी अपनी ही जाति को मारने पर तुला हैं तो इसका इलाज कहा है डाक्टर के पास साम्प्रदायिकता की अग्नि द्वारा हुए मानवता पर कुठाराघात से पात्र व्यग्र हो उठता है उसकी व्यग्रता, मानसिक उहापोह, में पात्र का चरित्र उसकी स्वाभाविकता को उद्घाटित करता हैं।

(100)'युद्व' पात्र पिता

तीन पीढ़ियों के अर्न्तद्वन्द्व को दर्शाने वाली इस कहानी का पिता पुत्र की जीवन शैली, व्यवहार, अपनाये गये आधुनिक तरीकों पर क्षुब्ध होता है, और शादी ब्याह के सम्बन्ध पर पुत्र की पश्चात्य सोच पर कोधित हो उसे घर निकल जाने को कहता है । जल्द ही वह महसूस करने लगता है पुत्र का व्यवहार उनके द्वारा की गयी उनकी परवरिश का दोष है। या फिर उसके पिता के जीन्स बेटे मे उतर कर उससे बदला ले रहे हैं। पर वे नयी पीढ़ी की मानसिकता को समझ अपने पितृ धर्म के
निर्वाहन हेतु अपना घर पुत्र को सौंप उसे अपने अनुसार जीने की सलाह देते है ।कहानी में पात्र विशेष के माध्यम से बदलते जीवन मूल्यों को तथा जीवन दर्शन को प्रस्तुत किया जाता हैं।

(101)'केयर–टेकर' –पात्र पिता रामसिंह, पुत्र निर्मल

पिता:– पात्र की अफसर बनने की अदम्य लालसा, चेष्टाएँ,नये जीवन रुप का अर्कषण और फिर प्रतिकूल परिस्थिति वश इच्छाओं, आकांक्षाओं, कामनाओं,सपनोंका अपूर्ण रह जाना उसे कुर बना देता है । पात्र के चरित्र का मनोवैज्ञानिक चित्रण हैं। और मार्मिक घटना द्वारा पात्र की मनोस्थिति को उभारा गया हैं।
पुत्र:– पिता के अत्याचार और कूरताओं को ढोने वाला ये पात्र केयर–टेकर पिता के काम का बोझ स्वयं उठाता है, संघर्ष करता हैं। और गेस्ट हाउस के आगुन्तक के सामने पिता की कूरताओ पर पर्दा डालता हैं। बच्चे के वेदना में उसके चरित्र की स्वाभाविकता उद्घाटित होती हैं।
(102)'इजाजत नहीं 'पात्र मास्टर कैलाश–बाबू

वृद्वावस्था में भी युवाओं जैसा जोश,उमंग और उत्साह रखने वाला पात्र को अपने बच्चों को निष्क्रियता,कर्तव्यहीनता दुखी कर देती हैं। वे आज की पीढ़ी की निष्क्रियता,निकम्मेपन, व कुंठा को देख कर दु:खी होते हैं। और वृद्वावस्था में भी काम करने के लिये अपनी कमर कस लेते हैं। क्योंकि पुत्रों का निकम्मापन व कर्तव्य हीनता उन्हें आराम करने की इजाजत नहीं देती हैं।

मिश्र जी ने पात्र के चेतना के परिष्कार द्वारा किन्हीं किन्हीं कहानियों को मानवतावादी बनाया है। कहीं–कहीं इनके पात्र अपनी जीवन स्थितियों में डूबते उतराते मानस का संस्कार करते चलते है व हमारी संवेदनाओं को गहराते हुए मानव मूल्यों के प्रति हमें अधिक संचेत, जागरुक व अन्वेषी बनाते हैं। कुछ विशिष्ट पात्र वंचित, विपन्न, रिक्तता के बीच जीवन जीने की उद्दाम लालसा लिये जीवन को सार्थक सन्दर्भो से जोड़ते दिखायी देते हैं। पात्रों की वास्तविकता का उद्घाटन युक्ति संगत हुआ हैं। जिससे उनकी स्वाभाविकता पर व्याघात नही होता हैं और नहीं यांत्रिकता दृष्टिगोचर होती हैं। मिश्र जी ने पात्रों के अन्र्तमन में प्रवेश कर उनके किया कलाप,व्यवहार ,चितवृत्तियों का जो चित्रण प्रस्तुत किया है ।वह वर्तमान स्थिति में उलझते सुलझते मानव हैं ।शुरुआती दौर की कहानियों के कुछ पात्रों के मानसिक जगत का जो चित्र खींचें गये है वह कहीं–कहीं सतही दिखायी देते है और उनकी स्वाभाविकता बाधित होती है। पर बाद की कहानियों के पात्रों का मानसिक जगत अत्यन्त रोचक, आत्मीयतापूर्ण व आकर्षक हैं। किन्हीं–किन्हीं पात्रों की स्वाभावगत दार्शनिकता ने उनके व्यक्तित्व को गरिमा प्रदान की हैं जिसके कारण वे दीर्घ समय तक स्मृत किए जाते है और अविस्मणीय बन जाते हैं।

उपअध्याय 3 –पात्र चयन में इतिहास और कल्पना

"ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विभिन्न सन्दर्भो के भीतर आदमी पर पूरी ऐतिहासिक प्रकिया का,उसकी जिन्दगी के प्रकृत प्रवाह में स्वयंभूत और सहज परिवर्तनों के साथ–साथ प्रभावशाली सामायिक, राजनीतिक,आर्थिक व अवांतर दबावों का क्या असर हो रहा है,इसकी पहचान विभिन्न सन्दर्भो के भीतर आदमी की जिन्दगी में ऊपर से देखी समझी जा सकने वाली स्थितियों, घटनाओं व्यापारों और उनके साथ अनुस्यूत आदमी के चरित्र और व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों तथा केवल संवेदना के विभिन्न स्तरों व रुपों के माध्यम से की जा सकती है।"[46]एक समर्थ रचनाकार अपने अनुभव,अनुभूतियों,चिन्तन के कौशल क्षंम के आधार पर जीवन सन्दर्भो को पहचानता हैं,और जीवन को पुनरसर्जन की प्रकिया से गुजर कर अपने सृजन कर्म में प्रवृत होता है तथा अपने समय और परिवेश की ऐतिहासिक परिणितयों की यथार्थ वास्तविकताओं की चुनौती स्वीकार कर,एक सम्पन्न ऐतिहासिक दृष्टि से अपने समय और परिवेश को उसकी वास्तविकताओं में मूर्त और परिभाषित करता हैं।

मिश्र जी का साक्षात्कार जिन परिस्थितियों विसंगतियों और अर्न्तविरोधों से हुआ उन वास्तविकताओं को उन्होनें अपने कथा साहित्य की घटनाओं,स्थितियों और पात्रों में मूर्त किया तथा अपनी रचनात्मक कौशल का उपयोग न केवल आदमी की जिन्दगी के विभिन्न सन्दर्भो की सही पहचान के माध्यम से किया बल्कि उसे उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रतिष्ठित किया। वे आदमी के ऐतिहासिक अस्तित्व को परिभाषित करते हैं तथा उसकी पहचान और इतिहास को पुनरसर्जित करते हैं। आज की वस्तुस्थिति यह है कि आज का आदमी अपने संघर्ष की जिन्दगी जी रहा हैं, वह जिन्दा रहने के लिये संघर्षशील हैं, पर वह सच्चे और वास्तविक जीवन सन्दर्भो से वंचित रहता है,अपने तमाम अभिधानों और विशेषणों के बीच वह उस तत्व से वंचित रह गया है। जिसे इन्सानियत या आदमीपन कहा जाता है। सही जिन्दगी वाला आदमी निरन्तर अनुपस्थित होता हुआ स्वयं इतिहास बनता चला जा रहा है। मिश्र जी मनुष्य के उन प्रमाणों की शोध में संलग्न होते है। जिसे आज के यथार्थ ने अनावृत कर दिया है। वे इतिहास के परिप्रेक्ष्य में उसकी प्रांसगिकता से पड़ताल करते हैं। इसके साथ ही वे अव्यक्त अंशों को भी अपनी सर्जनात्मक के नये आयामों में प्रतिष्ठित करते हैं। इसलिये तात्कालिकता और ज्ञयेता के आग्रहों से मुक्त उनके पात्रों की जिन्दगी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में दृष्टि गोचर होती है। उनके पात्रों और उसके सन्दर्भो को इतिहास के बीच पहचाना जा सकता है। कथासाहित्य के भीतर उनके पात्र यथार्थ को पुनरुजीवित करने वाले होते है वे कल्पना को मूर्त करने वाले होते है, इसलिये उनका कथा साहित्य उन सारे

पारिवारिक,सामायिक,राजनीतिक सन्दर्भो को ऐतिहासिकता, समय और परिवेश की सच्चाई को मूर्त करता है। जो आज के आदमी की त्रासदी हैं। मानवीय धरातल से लिये गये उनके पात्र आम आदमी के सुख–दुख चिन्ताओं, तकलीफों, असन्तोष से परिचित होते हैं, तथा जीवन सन्दर्भो को आक्रान्त करने वाली इतिहास प्रकिया से भी गुजरते हैं। अपने पात्रों के विषय में मिश्र बताते हैं। कि "मेरी कोशिश होती है कि जैसे मैंने उन लोगों को देखा, पात्रों के जीवन में वो जैसे थे वैसे ही वो मेरी रचना में आ जाएँ।(47) मिश्र जी के पास इतिहास को आर– पार देखने की शक्ति है इनके 'खाक इतिहास' संग्रह की कुछ कहानियॉ इतिहास के खिलाफ लड़ जाने वाले युद्ध सन्दर्भो को विश्लेषित करती है। इतिहास की अराजकता और इतिहास दृष्टि को जिस चौकन्नेपन से लेखक ने इन कहानियों में देखा परखा है..... यदि इतिहास को उजागर करना सजग प्रगतिशीलता समझी जा सकती हैं, तो ये कहानियॉ निश्चित ही समकालीन साहित्य की उपलब्धि हैं।

इतिहास की अराजकता और क्रूरतम प्रहारों के बीच मानवता से ओत–प्रोत इनके पात्र इतिहास की जीवन शक्तियों से टूटते नहीं है। वरन् मानवीयता से ओत–प्रोत होते हैं। विसंगत जीवन स्थितियों से सम्बद्ध उनके पात्र, घटनाएँ यथार्थ की वस्तुपरकता के साथ प्रस्तुत होते है। कथाकार न तो यथार्थ का अन्वेषण करता है और न ही उसे विशिष्ट बनाने के लिये आवश्यक छॉट–तराश। अपितु वह आस पास की जिन्दगी की मामूली चीजों के उन व्यक्त अव्यक्त, प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष आयामों को उपलब्ध कराता है जिसके कारण उन्हें ऐतिहासिक सन्दर्भो में पूरी अर्थवत्ता के साथ समझा जा सकता है । उनकी उपस्थिति को भी तार्किक संगति से समझा जा सकता है। इतिहास सचमुच में घटनाएँ नहीं, बल्कि एक व्यक्ति के भीतर बैठी झेलने की यह शक्ति है...साहित्यकार का यथार्थ की दुहाई देते हुए बहाव में अपनी गर्दन डुबों देना नही, बल्कि शरीर बहाव में रखते हुए सिर ऊपर रख दूर तक देखने का है.....समकालीन समाज दुर्गुणों को गिनाते रहने तक ही अगर हम साहित्य को सीमित कर देना चाहते है तो हम समकालीनता के केवल उस तत्व को हाथ में उठाये हुए है जो तुच्छ है, बह जाने वाला है।[48] अतः ये कहानियॉ ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में पात्रों के दुख झेलने की कुव्वत को दर्शाती है।

उपन्यास 'हुजूर दरबार' में लोकतंत्र,राजतन्त्र की वास्तविकताओं को इतिहास के परिप्रेक्ष्य में पात्रों के माध्यम से उभारा गया है। उपन्यास का संवेदनशील पात्र जिसके संवेदन वृत्त में राजतन्त्र के प्रजातन्त्र में विलीनीकरण की सम्पूर्ण स्थितियॉ गुजरती है, और इन्हीं स्थितियों के बीच ऐतिहासिक क्रूरताओं से सन्त्रस्त पात्र तथा सत्ता धारियों की अमानवीयता चित्रित हो जाती हैं। उपन्यास के अन्य पात्रों की सृष्टि इतिहास के आधार पर हुई हैं

उपन्यास का प्रमुख पात्र हरीश सत्ता धारी के अन्याय,अत्याचार शोषण तथा असमानता के बीच आत्मसंघर्ष करता हैं तथा परिस्थितियों से निपटने के लिये खुद को तैयार भी करता है पर स्थितियों की भयावहता, दहशत उसे जुझने और टूटने के लिये विवश कर देती हैं। इस उपन्यास के पात्र दो भागों में विभक्त होते है। एक वे जो सत्ता अधिकारी है और अपने अधिकार सुखों में लिप्त जन साधारण को त्रस्त करते, है और दूसरे वे जो उनसे संत्रस्त रहते है। राजारुद्र प्रतापसिंह,जुझारु सिंह नेपाल सरकार, राधाबाई,छोटेलाल दीवान ये सभी पात्र किसी रियासत के पात्रों का प्रतिनधित्व करते नजर आते हैं प्रजामण्डल के नेता खरे रियासत की राजनीतिक गतिविधियों को उभारते है। पंडित नेहरु भी उपन्यास के पात्र है। "उपन्यास सामयिक राजनीतिक गतिविधियों का ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत करता है। उपन्यास के पात्रों को हम ऐतिहासिक माने या न माने क्योंकि आखिर यह उपन्यास ही है। किन्तु इसके पात्रों का सृजन ऐतिहासिक पात्रों के आधार पर हुआ हैं,यह सच हैं।[49]

धॉसू संग्रह की अधिकांश कहानियॉ बदलती राजनैतिक स्थितियों के स्वरुपों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उभारती है और जीवन से उठाये गये कहानियों के पात्रों राजनीतिक स्थितियों, हलचल, नेताओं की कूटनीतिक धूर्तता,भ्रष्टाचार को मूर्त करते है।

अन्य कहानी संग्रहों में परिवार और समाज,गॉव तथा कस्बे से उठाये गये इनके पात्र विविध रुपों में मॉ,पत्नी–प्रेमिका,पति,बच्चे शोषित नारियॉ,अस्मिता के तलाश में प्रयत्नरत् नारियॉ नौकरी पेशा में संग्लन नारियॉ,वृद्ध, अधिकारी, कर्मचारी, स्वतन्त्रता सेनानी, वकील, व्यापारी, लेखक इत्यादि रुपों में उपस्थित होकर अपनी शक्तिमत्ता दौर्बल्य प्रांसगिकता अप्रासंगिकता को लिये हुए संवेदना और सोच के माध्यम से विश्लेषित हो अपनी ऐतिहासिक प्रवृत्ति का परिचय देते है। संवेदना और सोच की व्यवहारिक प्रकिया द्वारा वे अपने परिवेश और ऐतिहासिक परिस्थिति में अपनी भूमिका और नियति विशेष का परिचय देते है पर जल्द ही वे अपने निजी नियति और ऐतिहासिक परिस्थिति के कुन्द को तोड़ पूरे समाज,जाति राष्ट्र का प्रतिनिधित्व कर ऐतिहासिक परिस्थति के द्वार खोलते नजर आते है। इतना ही नहीं 'पगला बाबा'कहानी संग्रह के पात्र मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था की स्वर्णिम किरणों को बिखेरते नजर आते हैं। जिसे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में मानवीय मूल्यों के स्वीकार और अप्रासंगिक अस्वीकार का सकारात्मक रवैया कहा जा सकता है।

अतः कहा जा सकता है कि कथाकार जिन्दगी की सूक्ष्म पकड़ सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक चेतना में गहरी चिन्तना तथा सरोकारों के प्राजंल कलात्मकता के स्थान पर सच्ची ऐतिहासिकता में वर्णित करते हैं। मिश्र जी अपने साक्षात्कारों के दौरान इस बात का स्पष्टीकरण करते है कि "मेरी शायद एक आध कहानी भूले भटके ऐसी हो

जिसके पात्र काल्पनिक हो, अन्यथा सब जीवन से लिये गये है। इनका चुनाव बहुत सायास होता है,ऐसा मुझको नहीं लगता यह जरुर है कि हर वक्त एक भीड़ मेरे मन में होती है। पात्र मुझे याद नहीं रह पातें। लेकिन कोई खास गली,खास अन्दाज,पात्रों के खास तौर–तरीके याद रह जाते हैं। लिखते समय वह सब उतरता चला आता है...... एक खास चीज या खास परिवेश जिससे आप हमेशा परेशान होकर लिखने बैठते है तो पात्र या घटनाएँ अपने आप आने लगते है, मैं उन्हें छोड़ देता हूँ और वे फिर स्वयं अपनी जगह बनाना शुरु कर देते है।"[50] अतः मिश्र जी के कथा साहित्य मे ऐतिहासिकता के भीतर उत्पन्न विसंगतियॉ अन्तविरोध पात्रों के माध्यम से उभरते है। जिसमें कहीं कल्पना का पुट भी दिखायी देता है।

तृतीय अध्याय– मिश्र जी के कथा साहित्य की पात्र योजना और चरित्रांकन शिल्प

उपअध्याय–4

चरित्रांकन शिल्प

आज मानव जीवन जटिलतम होता जा रहा है,बदलते सामाजिक,पारिवारिक रिश्ते,सामाजिक विषमताएँ,विसंगतियाँ,राजनीतिक मोहभंग,औद्योगीकरण मूल्य संक्रमण,बेरोजगारी,पीढ़ियों का अर्न्तद्वन्द्व आर्थिक,विवंचनाएँ,संत्रास,असुरक्षा,तनाव,मानव पर पड़ते विभिन्न दबावों ने मानव जीवन में जटिलताएँ उत्पन्न की हैं। मिश्र जी ने जीवन जगत की जटिलताओं को देखा तथा सूक्ष्मतः से अनुभव किया और इन विसंगतियों से जूझते पात्रों को अपने कथा साहित्य में उभारा। मिश्र जी की रचना की सार्थकता की पहचान बदलते जन–जीवन के चरित्र में ऑकी जा सकती हैं। वे जीवन –जगत के यथार्थ की ऊपरी सतहों की सच्चाइयों की बजाय उसकी अंदरुनी अर्थवत्ता को भी उद्घाटित करते है, और अपनी सकिय सोच से उसे प्रमाणिक बनाते है। सही पहचान,सोच तथा सक्रियता का चारित्रिक वैशिष्ट्य उनके कथा साहित्य को अपरिहार्य बनाता है और वे चरित्र सम्पन्नता से उज्जवल भविष्य के झरोखे को खोलते हैं।

मिश्र जी ने निम्न,उच्च माध्यवर्ग के पात्रों का आकलन बड़ी सूक्ष्मतः से किया है। विशेषकर मध्यवर्ग की स्थितियों का उद्घाटन अधिक हुआ है। वे स्वयं अपने साक्षात्कारों में इस बात का स्पष्टीकरण करते है–"रचना लिखने की प्रेरणा मेरा परिवेश आस–पास की रगड़ झगड़ देती है। यह आस–पास का तनाव परिवेश ही प्रेरणा बनता है। साधारण मध्यवर्ग के व्यक्तियों का जीवन उनके द्वन्द्व,तनाव विषमताएँ, आकांक्षाएँ, सबके भीतर से गुजरकर लिखता हूँ।"[51] अतः मिश्र जी ने आज के मानव जीवन की संगतियों विंसंगतियों, अर्न्तविरोधों अर्न्तद्वन्द्वों के परिवर्तन का सम्पूर्ण प्रक्रिया और आदमी के चरित्र व्यक्तित्व पर पड़ने वाले उसके प्रभावों,सन्दर्भो को पूरी ईमानदारी और तटस्थता से रेखांकित किया है। वे चरित्र की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विशेषताओं को प्रकट करने के लिये उसे अपने पूरे परिवेश में सन्दर्भित करते है। उन्होंने कहानियों और उपन्यासों की रचना प्रक्रिया को नये स्तर पर प्रतिष्ठित कर पात्रों के माध्यम से स्थितियों को उभारा।

उनके कथा साहित्य में चरित्रों का वैविध्य दिखायी देता है। वे चरित्रों में दोहराव से बचे हैं। उनके पात्रों में चरित्र के साथ व्यक्तित्व का स्वरुप भी दृष्टि गोचर होता है। ये पात्र अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं को उभारते हुए समाज के प्रतिनिधि पात्र बने जाते हैं। "चरित्रों और घटनाओं का मितान्त वैयक्तिक रुप प्रायः उनके उपन्यासों में नही रहता, वे अधिक व्यापक समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं, परन्तु अपनी वैयक्तिक पहचान को कभी नहीं खोते। उम्र,स्वभाव,वृत्ति,प्रवृत्तियों का स्वतन्त्र रुप ,रुचि वैशिष्ट्य एवं रुचि

वैभिन्न्य,विचार,अवधारणाएँ,परिवेशगत भिन्नता से उत्पन्न गुण दोष इत्यादि दृष्टियों से गोविन्द मिश्र के चरित्रों में विविधता हैं और एक चरित्र दूसरे चरित्र की पुनरुक्ति हैं,ऐसा कही नही दिखाया जा सकता हैं। 'लाल पीली जमीन' और 'हुजूर दरबार' जैसे उपन्यासों में भी जहॉ सामूहिक मानसिकता के दर्शन कराये गये है, वहॉ भी चरित्र गत विशिष्टता बरकरार हैं।''[52] ये पात्र कथाकार के मानस से उपजे न होकर जीवन जगत से ही चुने हुए होते है इसलिये उनका पात्र जगत अत्यन्त ही विश्वसनीय एवं प्रमाणिक हैं उपन्यास 'वह/अपना चेहरा' व 'उतरती हुई धूप' दोनों उपन्यासों के बारे में नेमिचन्द्र ने लिखा है कि ''कुछ स्थितियों में लड़कियों खासकर औरतों की अनेक सूक्ष्म संवेदनाएँ और प्रतिक्रियाएँ तथा व्यवहार के अनेक रुप उनके लेखन में मिलते हैं, इससे उनके चरित्रों में एक प्रकार की विश्वसनीयता रहती है और उनके आचरण की प्रेरेणाएँ काल्पनिक नहीं, वास्तविक और जीवन्त लगती हैं। ''[53]

उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' में पात्रों की संख्या का बाहुल्य हैं पर वे सभी पात्र परिवेश में अपनी सार्थकता ग्रहण करते हैं, लेखक पात्रों को उनके परिवेश से अलगाता नहीं हैं। इसमे उन्होंने बुन्देलखण्डी अचंल के छोटे से कस्बे के तमाम चरित्रों की कस्बाई मानसिकता का चित्रण किया हैं तथा इन चरित्रों के माध्यम से स्वतन्त्र भारतीय समाज की विषमताओं, विसंगतियों अमानवीयता व स्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। ''परिवेश की हिंसा इतना सर्वग्रासी हैं जिसमें चरित्र इकाइयों की पहचान धुधंली पड़ती जाती हैं। संज्ञाएँ व्यक्तित्व धुमैली परछाइयों में खों जाते हैं।शिवमंगल, कल्लू, कैलाश, शिवराम, कल्लन, बड़ें, नारायण पंडित, बोस, मास्टर कंठी, शैलजा, बिट्टी, छवि, शन्नो मौसी, शान्ति मालती अंत तक पहुॅचते–पहुॅचते तमाम आकृतियॉ गड्ड–मड्ड हो जाती है। सबके ऊपर टॅगा रहता है एक युग या वर्ग का हिंसक स्वभाव जो गुणों को गुणों के लिये सौन्दर्य को ,सौन्दर्य के लिये, अभाव को अभाव के लिये, व्यथा को व्यथा के लिये लांछित करता है। कोमलता उठाती है और कुचल दी जाती है। सम्बन्ध मानवीयता का स्पर्श करने के पहले नष्ट कर दिये जाते हैं। पात्रों की मनः स्थिति पाश्विक मनोवृत्तियॉ,चरित्र के पूरे व्यक्तित्वों, उनकी टूटन, मनोदशा, मानसिकताओं का फोटोग्राफिक चित्र खींचा गया हैं। इसमें चरित्रात्मकता की .नेमिचन्द्र जैन, (सपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम, तलाश भी है और तराश भी।''[54]

'हुजूर दरबार' उपन्यासों में पात्रों का बाहुल्य हैं पर मिश्र जी का वैशिष्ट्य यह है कि उन्होंने सभी चरित्रों के मानसिक स्पन्दनों,सत्तांतरण की विभिन्न स्थितियों घटना प्रसंगों से प्रभावित पात्रों की मानसिक दशाओं,संवेदनाओं व्याकुलता,व्यग्रता, को बड़े ही कलात्मक ढंग से उभारा है। मिश्र जी ''जिस प्रकार मनुष्य के भावात्मक स्पन्दन का अत्यन्त उत्कृष्ट चित्रण करते हैं, उस तरह स्वभाव को या कथा को मोड़ देने वाले

मानसिक स्पन्दनों का भी कुशलता से चित्रण करते हैं। यह एक कलात्मक पारखीपन का लक्षण हैं।[55] उपन्यास में पात्रों की अधिकता के वावजूद भी "एक –एक चरित्र अपनी पूरी सूरत और सीरत के साथ आता हैं"। थोड़ी दूर अकेले चलकर या तो ओझल हो जाता है। या कथा वस्तु का हिस्सा बनकर दूसरे चरित्रों के साथ उलझ जाता हैं।"[56]मिश्र जी ने इस उपन्यास में अलग–अलग स्वभाव के मनुष्यों के व्यक्ति के अन्तर्मन की तहों तक पहुॅच कर उनकी मानसिक अवस्थाओं का चित्रात्मक वर्णन बड़े ही कलात्मक ढंग से किया हैं।

"तुम्हारी रोशनी में" उपन्यास में मिश्र जी ने सुवर्णा के माध्यम से स्वतन्त्रयोत्तर नारी के मन के अनेक सूक्ष्म बिन्दुओं संवेदनाओं,भावनाओं को नयी अभिव्यंजना में उभारा हैं, सुवर्णा चाहती है कि उसे अपनी शर्तो के आधार पर जीवन व्यतीत करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। उसके पति रमेश के अलावा उसके मित्रों का दायरा अलग है वह सभी से स्वतन्त्र रुप में मिलती हैं पर उनसे बंध नही पाती हैं। इन्हीं मित्रों में अनन्त का सान्निध्य उसके अन्दर आत्मीयता और प्रेम तत्वों को विकसित करता हैं।

सुवर्णा के पति रमेश का चरित्र मध्यवर्गीय पुरुष की आकांक्षा से परिपूर्ण हैं,वह सुवर्णा को समानता के नाते कुछ उपादान तो प्रदान करता है, पर पति के अहम् से मुक्त नहीं हो पाता है और चाहता है कि उसकी पत्नी अपने मित्रों से न मिलें। उसके प्रति एक निष्ठ हैं अनन्त अपने प्यार और समर्पण सुवर्णा के अन्दर छिपी क्षमता के स्त्रोत्रो को खोलता हैं।

सभी पात्र अपनी–अपनी सोच के दायरे में उभर कर जटिल तनावी,यथार्थ की सृष्टि करते हैं। लेखक यथार्थ मानसिक सन्दर्भो के उभारते हैं। "इस उपन्यास में चरित्रात्मक बुनावट काफी महीन होने के बावजूद भी मनोंवैज्ञानिक तथा दार्शनिक बिम्बों की बहुतायत के कारण भाषा में रहस्यमयता का पुट कुछ ज्यादा ही हैं। शुद्ध काम औ शुद्ध अध्यात्म की धूमिल सीमा रेखाओं दो पात्रों के बीच लम्बी–लम्बी बौद्धिक चर्चाओं प्रेम की चिरंतनता और उसके आध्यात्मिक रुप की रहस्यपूर्ण उपपत्तियों ,सामान्य भौतिक घटनाओं के दार्शनिक विश्लेषणों रोशनी शीर्षकों आदि के कारण सामाजिक मनौवैज्ञानिक धरातल कई बार हवाई बन जाता है।[57] कुल मिलाकर इन चरित्रों के माध्यम से लेखक उच्च मध्यवर्गीय दाम्पत्य तथा परिवारिक जीवन की असफलता–सफलता, विषमताओं, कटुताओं आधुनिक नारी की अस्मिता के अनछुए पहलुओं को उद्घाटित करता हैं।

'धीरे समीरे' उपन्यास में मिश्र जी ने ब्रजयात्रा के परिवेश और यात्रा में आए अनेक चरित्रों की प्रकृति जीवन स्थितियों,स्वार्थ,राग–द्वेष को उजागर किया हैं। इसी यात्रा के माध्यम से उन्होंने वर्तमान जीवन की जटिलताओं के बीच सही मानव,उसके अस्तित्व व्यक्तित्व की खोज आस्था, विश्वास रिश्ता और मानसिकता की पुनः स्थापना की

कोशिश की हैं ।"कुछ संक्षिप्त परन्तु अर्थगम्भीर वाक्यों से किसी चरित्र की विशिष्टता को सशक्त ढंग से रुपायित कर कथा संसार में जीवन्तता उत्पन्न करने की कलामें गोविन्द मिश्र को महारत हासिल हैं। रघु भैया और ब्राह्मणी नन्दन,सुनन्दा,सत्येन्द्र नरेन्द्र और उसकी पत्नी रत्ना, मजुला बेन और उनका नौकर राधे,शैलजा और उसके साथी रामप्रसाद कितने ही व्यक्तित्वों को लेखक ने जीवंतता प्रदान की हैं। कुछ चन्द वाक्यों से किसी व्यक्ति के पूरे जीवन के प्रारुप को चित्रमय बनाकर प्रस्तुत करने की कला गोविन्द मिश्र के पास हैं। [58] लेखक ने छोटे–छोटे वाक्यखण्डों के माध्यम से चरित्रों के नैसर्गिक स्वरुपों को उभारा हैं। "ऐसे छोटे संकेतात्मक वाक्यखण्ड न केवल चित्राकार की सशक्त अल्परेखाओं, की भॉति चरित्र को स्पष्ट करते हैं, लेखक की अपनी चारित्रिक सृष्टि में गहरी अवगाहन क्षमता की भी प्रतीति देते हैं। "[59] उपन्यास में यात्रा का जो परिवेश है उस परिवेश और पात्रों के बीच का सन्तुलनात्मक सौष्ठव सराहनीय हैं, पात्र अपनी पूरी नियति और स्थिति में उभरते हैतथा यात्रा में अपना प्रभाव छोड़ते हैं।
विभिन्न कहानियों के निर्माता मिश्र जी ने अपनी कहानियों में असंख्य चरित्रों को उनके नैसर्गिक स्वरुपों में उभारा हैं। समाज के विभिन्न वर्ग, विभिन्न अवस्था के ये चरित्र समाज के विभिन्न वर्गो की मानसिकता के उलझावों सुलझावों सम्बन्धों, व्यवहारों को किया प्रतिकियाओं तथा संवेदनाओं के माध्यम से उभारते हैं।

'नये पुराने मॉ–बाप' कहानी संग्रह की कहानियों के सभी चरित्र बच्चों से लेकर वृद्ध तक सभी आधुनिक सम्यता के बीच पीड़ित हैं और व्यक्ति सम्बन्धों की चाह को बनाए रखने में अपनी अयोग्यता से बैचेन और विकल हैं। संग्रह की कहानियों में मुखरित इस बैचेनी विकलता को चरित्रों की प्रतिकियाओं,सोच, संवेदना के माध्यम से पहचाना जा सकता हैं। इस संग्रह की सार्थकता की पहचान जन जीवन के इन बदलते हुए चरित्रों में ऑकी जा सकती हैं। कथाकार को ये विशिष्टता रही कि उसने जीवन की यथार्थ सच्चाइयों के साथ–साथ चरित्रों की अदरुनी अर्थवत्ता को भी उदघाटित किया हैं।

अन्तःपुर कहानी संग्रह की कहानियों के सभी पात्रों के माध्यम से मिश्र जी ने वर्तमान युग में बदलती स्थितियों–परिस्थितियों के अनुरुप बदलती मानसिकता के उलझावों के विभिन्न स्तरों को उद्घाटित किया हैं। परिस्थितियों के प्रकाश में उभरे ये पात्र कही–कही समसमायिक सामाजिक राजनीतिक स्थितियों पर टिप्पणी करते दिखायी देते है परन्तु जहॉ लेखक मानसिकता को चित्रित करता है वहॉ लेखक इस प्रकार टिप्पणियों में नहीं उलझता। कहानियों वर्णित सभी चरित्र चाहे वह ग्रामीण परिवेश से लिये गये कस्बे या शहरी परिवेश से उठाये गये हो,सभी अपनी भूमिका में स्वाभाविक लगते हैं। परन्तु इनके पात्रों की भूमिका की सफलता असफलता पर टिप्पणी करते हुए निर्मल वर्मा ने लिखा है कि "गोविन्द जी वहॉ असफल रहे है, जहॉ उन्होंने इंडिविजूयल्स

को पोट्रे किया हैं। वहॉ बहुत सफल रहे हैं,जहॉ उन्होंने 'टाइप्स' को लिया हैं और हर टाइप...... जब मैं टाइप शब्द का इस्तेमाल करता हूॅ। तो निन्दा के अर्थ में नही। टाइप वह चीज होती हैं...... जिसमें कि एक व्यक्ति प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व तो करता ही हैं,लेकिन एक इंस्ट्रयूमेन्ट और एक माध्यम के तौर पर नही बल्कि अपनी इंडिविजूयल आइडियोलोजीकल व इक्सैंट्रिसिटीज़ के स्तर पर ..... इसलिये एक व्यक्ति एक युनिवर्सल ट्रुथ का प्रतिनिधि भी बन जाता हैं। लेकिन अपने वैयक्तिक ईडियोसीनक्रेसीज के स्तर पर । वहॉ पर जहॉ इन्होंने ऐसे व्यक्तियों को अपने पात्रों के रुप में चुना हैं चाहे वह मास्टर साहब हो या 'अपाहिज' के मालिक साहब हो, वहॉ पर हम यह भूल जाते है...... हमें गोविन्द मिश्र के पात्र ज्यादा दिनों तक याद नहीं रहते, लेकिन वे पात्र जिस तरह के टाइप्स .... जो एक खास तरह के पैराडौक्सोज और विडम्बना को व्यक्त करते हैं। वह बहुत गहरे तौर पर हमे प्रभावित करते हैं ''...... [60] वैसे मिश्र जी ने व्यक्ति चरित्र निरुपण में सामाजिक राजनीतिक स्थितियो की तथा आधुनिक जीवन की व्यजंना की हैं। तथा आधुनिक जीवन की विसंगतियों विद्रूपताओं और वीभत्सताओं को छोटे–छोटे कथा–प्रसंगों में अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से उभारा हैं। 'धॉसू' कहानी संग्रह में कथाकार ने राजनीति से जुड़े चरित्रों के माध्यम से राजनीतिक क्षेत्र में पनप रही अवसरवादिता, स्वार्थपारिता,समाज की विद्रूपताओं विकृतियों,भ्रष्टाचार से त्रस्त आम आदमी की यातना विवशता के उभारा हैं। 'धॉसू' कहानी का चरित्र छद्म रुप से फेके मोहरों से राजनीति में अपनी जगह बनाने वाले नेता के चरित्र का उद्घाटन करता हैं। 'गोबर गनेस' का नायक ईमानदारी से राजनीतिक में अपना पार्ट अदा करने पर राजनीतिक दॉव पेच से वंचित रह जाने वाले व राजनीति में अपनी 'इमेज' स्थापित करने में असक्षम व्यक्ति की मनः स्थिति का उद्घाटन करता हैं। 'जनतन्त्र' का मास्टर राजनैतिक भ्रष्टाचार व स्थितियों का शिकार हो यातना भोग रहा हैं। सभी चरित्र समसमायिक राजनीतिक स्थितियों,विडम्बनाओं की उद्घाटित करने में सक्षम होते हैं यहीं मिश्र जी का वैशिष्ट्य है, कि वे व्यक्ति चरित्रों को सामाजिक राजनीतिक आर्थिक स्थितियों में उभारते हुए जीवन मूल्यों के प्रश्नों को उठाते हैं।

'खुद के खिलाफ' में वर्णित घटनाओं स्थितियों तथा विभिन्न प्रसंगों में व्यक्त निराशाओं असफलताओं और पराभव के पीछे मूल्यों के टूटने की पीड़ा हैं। साथ चरित्र भ्रष्ट व्यवस्था के नकाब को उघाड़ते हैं। चरित्र की स्थितियॉ कही व्यवस्था के दोषों को अनदेखा करने के लिये उन्हें विवश करती हैं। वह व्यवस्था के प्रतिसमर्पण करते हैं, पर उनकी चेतना प्रवाह में विलुप्त होकर जब व्यवस्था उसे एक पुर्जा बनने को विवश करती है, तब वे खुलकर व्यवस्था का विरोध करते हैं। 'खुद के खिलाफ' कहानी संग्रह की नारी पात्रा पुरुष की स्वार्थी मानसिकता और समाज व्यवस्था के परम्परागत प्रस्थापित नैतिक प्रतिमानों का खुलासा करती हैं। प्रेम की असफलता,आर्थिक विवंचना से ग्रसित परिवार के

स्थितियों कों संभालने तथा पति के निकम्मेपन के कारण उसे निम्न स्तर तक उतरना पड़ता हैं परन्तु जब वह सब कुछ छोड़कर इन्हीं स्थितियों में अपने प्रेमी के साथ जाने को तत्पर होती है तब प्रेमी की पुरुष मानसिकता उसे इस रुप में स्वीकार नहीं कर पाती। 'गिद्ध' की चरित्र नायिका जो एक नौकरी पेशा अविवाहित युवती हैं उसे स्थितियों का शिकार बन मौन रहने को विवश होना पड़ता हैं। अपने मॉ बाप की इच्छा की पूर्ति के लिये यह युवती एक नेता की हवस का शिकार बन जाती हैं।

'ज्वालामुखी' की सावित्री पति द्वारा प्रताड़ित और अपमानित होती हैं परन्तु जब ये 'ज्वालामुखी'फटता है तब अत्याचारों के निषेध में खड़ी हो शोषण के खिलाफ प्रतिकार करती हैं।

'शापग्रस्त' का विदेश में बसने वाला भारतीय निरस्त का 'बूढ़ा बाप,' 'हमदर्दी का नौजवान' 'कहानी नही' का गाइड जंग की मॉ–बेटी सभी स्थितियों की मार झेलने व मानवीय मूल्यों की टूटने की पीड़ा ढोने को अभिशप्त नजर आते हैं। इस संग्रह में घटनाएं,स्थितियॉ चरित्र गौण पड़ जाते हैं। उभरकर आता हैं मानवीय मूल्यों की पीड़ा टूटन। इसका कारण यह है कि लेखक वस्तु या पात्र को दुख की जमीन से उठाता है (क्योंकि वह उसे प्रभाव की सबसे उर्वर जमीन दिखती हैं) और उस पीड़ा के कारणों को पाश्चचित्रों के सहारे विश्लेषित करता हैं।'' [61]

'खाक इतिहास' संग्रह की कहानियॉ 'खाक इतिहास' और 'आल्हाखण्ड' इतिहास की बर्बरता युद्ध मनुष्य पर ढाये जाने वाले जुल्म और आदमी की दयनीयता की चरमसीमा दिखाकर करुणासिक्त भावसंसार की सृष्टि कर मनुष्य के व्यक्तित्व की तहों में दबे शक्ति स्त्रोत्रों की जमीन तलाशती है। कहानी के पात्र अपने संवेदना,सोच और व्यवहार पद्धति द्वारा पूरे समय और ऐतिहासिक परिस्थिति,उस परिस्थिति में अपनी नियति और भूमिका का निर्वाह कर इन्सानियत को बरकरार रखते हैं।

'संड़ाध' और उल्कापात' कहानियों के पात्र समसमायिक मध्यवर्गीय परिवार में नारी की स्थितियों शक्तिमत्ता दुर्बलता को सोच और संवेदना के माध्यम से विश्लेषित करते हैं।

'आने वाली सुबह' के पिता की ऑखों से जब जातीयता की धुन्ध छटती हैं तब वे इन्सानियत नाम के तत्व से आभासित होते हैं।

ग्रामीण परिवेश से ली गयी 'फॉस कहानी की पात्रा की निश्छलता सरल व्यवहार मानवीयता का हल्का स्पर्श कराती हैं।

'सध्यानाद' कहानी में परिवार के बीच से उठाया गया वृद्ध पात्र, उसकी जीवन स्थितियॉ ढलती उम्र के साथ पत्नी की दूरियॉ इन दूरियों के बीच एक दूसरे के सहारे की लालसा व्यापक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं।

पुत्र–शोक पर आधारित कहानी 'वरणांज़लि' पिता के सुख दुख की मांसल अनुभूतियों के बीच जीवन के आध्यात्यिक दर्शन की सांस्कृतिक समीक्षा प्रस्तुत करती हैं।

इतिहास के कूर बहाव के खिलाफ इन्सानियत को बरकरार रखने वाली इन कहानियों की स्थितियॉ कहीं अमानवीय हैं कहीं विकृत और कहीं हस्याप्रद हैं। घटनाओं,स्थितियों और पात्रों की वस्तुगत यथार्थता पात्रों की संवेदना और विचार प्रकिया के साथ रुपान्तरित होकर अर्थ पाती हैं। ये कहानियॉ लेखक की अन्वेषण वृत्ति का परिचय देती हैं। जिसमें पात्र अपने पूरे समय और परिवेश इतिहास के कूर यथार्थ का पूरा परिचय देते नजर आते हैं। 'पगलाबाबा' कहानी संग्रह के सभी पात्र मानवीयता के उत्कृष्ट उदाहरण पेश करते हैं, इन चरित्रों के माध्यम से मिश्र जी ने मानव के अन्तःकरण की अतल गहराइयों में छिपे प्रेम के स्त्रोत्रों का अन्वेषण किया हैं तथा मानवीय मूल्यों को उभारा हैं। आत्मिक धरातल पर लिखी ये कहानियॉ किसी न किसी मूल्यात्मक आदर्श को ओर संकेत देती हैं।

'पगलाबाबा' कहानी का पात्र पगलाबाबा स्वेच्छा से डोम कर्म स्वीकार कर अनाथ,निराश्रित,लावारिस लाशों का दाह संस्कार करता है। इस चरित्र द्वारा मिश्र जी ने विशुद्ध मानवीय सेवागत भावना को उजागर कर संघर्ष में भी मानवीयता की पड़ताल की हैं।

'अर्थओझल' का गुरु जो अपने परिवार और समाज की गलतफहमियों की वंचनाओं का शिकार बनता हैं वह दूसरों की गलतफहमियों को दूर करने में अपना कीमती वक्त बरबाद न कर अपने छात्रों का बौद्धिक विकास करने में तल्लीन रहता हैं। मिश्र जी का ये वैशिष्ट्य है कि ये मनुष्य के व्यक्तित्व को विश्वास की ऊॅचाई तक खड़ा कर उसे उत्कृष्टता प्रदान करते हैं। 'गुरुजी' कहानी का पात्र असफलता और संघर्षो के बीच आशा के सूत्र से आगे बढ़ सभी को भगवान का आर्शीवाद मान ईश्वर के प्रति अपनी अडिग आस्था रखता है।

'प्रतिमोह' कहानी का पात्र बम्बई में जीवन के कठिन संघर्षो अपमान और अवहेलना झेलने के कारण देहात से भाग कर आए कबाड़ी बच्चे को सन्दूकची रखने पर खींजता हैं। उसकी ये खीज और झिड़की परिस्थिति जन्य हैं पर जब छोकरा भटकता रहता हैं। तब उसे उसकी चिन्ता सताने लगती हैं और उसके हृदय में मानवीय प्रेम की रस धारा फूटने लगती हैं वह छोकरे को भरपेट खाना खिलाता है और झोपड़ी में पनाह देते हुए कहता है कि बॉक्स यहीं होना अब झोपड़े में अपुन दो आ जाएगा..... कोई फिकर नहीं होना।'' [62]

'अर्द्धवृत' की पत्नी अपनी 'सौता' से सौतिया डाह रखती है, परन्तु सौता के आन्तरिक सौन्दर्य के प्रकाशवृत में उसकी ईर्ष्या का शमन हो जाता हैं।

'सिर्फ इतनी सी रोशनी' कहानी के पिता का चरित्र जो सौतेला बाप होकर भी पुत्री और तलाक प्राप्त स्त्री को प्रगाण स्नेह देता है इस स्नेह की फुहार में जातिगत–धर्म गत् व सगे–सौतले की सभी दीवारें ढह जाती हैं।

'मायकल लोबो' कहानी का चरित्र जिसे शराब की लत पतन के रास्ते पर ले जाती हैं पर बेटी के शब्द 'पापा मैं कब तक इस तरह आपको उठाती रहूँगी।[1] उसकी आत्मा को झकझोरते है और वह शराब छोड़ देता है। इतना ही नही वह चर्च में जाकर शराब पीड़ितो के अपमान और अवहेलना भरे जीवन के दुखों को दूर करने की चेष्टा करता हैं।

अतः मिश्र जी ने अपने कथा साहित्य के चरित्रों के माध्यम से प्रेम सौन्दर्य प्रकृति मानवता जैसे शाश्वत स्त्रोत्रों को उभारा है। भारतीय धरातल से उभरने वाले ये चरित्र समकालीन जीवन के चित्रों को उभारते हैं, संघर्षो को झेलते अपनी व्यक्तिगत पहचान स्थापित कर उस मानवीयता से जुड़ते चले जाते हैं जो भारतीयता से अनुप्राणित हैं। सभी पात्र अपनी अलग प्रकृति और नियति में उभरते हैं। उनमें चारित्रिक संवेदनशीलता और अतिरिक्त यथार्थ वादिता नहीं दिखायी देती हैं।

1. ई0 एम0 फॉस्टर्र 'एस्पेक्ट्स आफ दी नॉवेल', 1946, लन्दन पृ0 66
2. जनरल साइकॉलोजी–हेनरी ई0 गेरेट, पृ0 505
3. (डॉ0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 101
4. गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' पृ0 11
5. गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' पृ0 11
6. चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 93
7. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' प्रथम संस्क (नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1981) पृ033
8. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 188
9. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 250
10. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 327
11. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 66
12. . गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 296,297
13. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 सं0 334
14. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 168
15 गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 316
16. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 234
17. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' पृ0 20
18 गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी मे' पृ04 2
19.गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' पृ0 43
20. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' पृ0 57
21. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी मे' पृ0 149
22. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी मे' पृ0 150,151
23. गोविन्द मिश्र '. तुम्हारी रोशनी में' पृ0 160
24. बटरोही पत्र समीक्षा, गोविन्द मिश्र सृजन के आयामः पृ0 151
25. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' पृ0 48
26. गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में' पृ0 39
27. नन्दकिशोर मित्तल(संपां0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 183
28. राजी सेठ (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर ''गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम पृ0 177
29. 'राजीसेठ' (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 178
30. चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' का 'औपन्यासिक संसार' पृ0 80

31 राम जी तिवारी'छटपटाती नैतिकता की कथा पॉच ऑगनों वाला घर' (संपा0) उर्मिला शिरीष, सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र पृ0 74
32. गोविन्द मिश्र 'कोशिश' निर्झरिणी भाग1 पृ0 171
33. गोविन्द मिश्र 'ढलान' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 194
34. . गोविन्द मिश्र 'ढलान' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 194
35. गोविन्द मिश्र 'चुगल खोर' निर्झरिणी भाग1 पृ0 215
36. गोविन्द मिश्र 'बहुधंधीय' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 47
37. सुधीर चन्द्र 'धॉसू': 'मानवीय सम्बन्धों के अवमूल्य की कहानियां' (संपा0)चन्द्रकान्त बाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 258
38. गोविन्द मिश्र 'खुद के खिलाफ' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 99
39. गोविन्द मिश्र 'प्रभामण्डल' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 123
40. गोविन्द मिश्र 'हमदर्दी' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 137
41. गोविन्द मिश्र 'अलग–अलग समय' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 181
42. गोविन्द मिश्र 'आल्हाखण्ड' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 210
43. (डा0) माधुरी छेडा गोविन्द मिश्र की कहानियों में उर्ध्वधामी चेतना चन्द्रकान्त बादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 226
44. शैलेश मटियानी कहानी लिखने का सिद्धान्त और गोविन्द मिश्र की कहानियॉ (संपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 220
45. गजानन चौहान 'पगला बाबा': मूल्यविषयक रोशनी से भरपूर कहानियां चन्द्रकान्त बादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 289
46 यदुनाथ सिहं समकालीन कहानी के रचनात्मक आशय प्रथम संस्क,(ओम प्रकाशन दिल्ली, 1987) पृ0 24
47 गोविन्द मिश्र 'मेंरे साक्षात्कार' पृ0 73
48. राजकुमार गौतम 'खाक इतिहास' मानवीय लगाव में रची वसी रचनाऍ– (संपा0) चन्द्रकांत बादिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाश दिल्ली) पृ0 278
49. (डॉ) राजमल बोरा 'हुजूर दरबार' बनाम कलम कुर्सी दरबार(संपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 145
50 गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार पृ0 126
51. गोविन्द मिश्र, मेरे साक्षात्कार' प्रथम संस्क (किताब घर प्रकाशन दिल्ली,) पृ0 19
52. चन्द्रकान्त वादिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपन्यासिक संसार प्रथम–संस्क (भूमिका प्रकाशन दिल्ली ,2001) पृ0 96
53.नेमिचन्द्र जैन, (सपा0)

54. (डॉ0) भगवान दास वर्मा 'गोविन्द मिश्र रचनाशीलता(संपा0)चन्द्रकान्त वादिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 19

55. चन्द्रकान्त वादिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम ' पृ0 126

56 रचनाशीलता(संपा0)चन्द्रकान्त वादिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 25

57.(डॉ0) भगवान दास वर्मा 'गोविन्द मिश्र रचनाशीलता(संपा0)चन्द्रकान्त वादिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 27

58. चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0सं0198,199

59 चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0सं0199

60. निर्मल वर्मा अन्तःपुर की कहानियां (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0255

61. (डॉ0) प्रभाकर श्रोश्रिय 'खुद के खिलाफ': अतीत का हस्तक्षेप(संपा0) गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 266

62. गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 पृ0 277

चतुर्थ अध्याय

मिश्र जी का कथा– साहित्य और देशकाल वातावरण

यथार्थ के उद्घाटन के लियें कथा साहित्य में देशकाल तथा वातावरण चित्रण अपेक्षित होता है। कालचित्रण के अर्न्तगत साहित्य कार युग विशेष की सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक,आर्थिक, साहित्यक परिस्थितियों रीति रिवाज तथा आचार विचार का चित्रण करता है इसके साथ ही कथा साहित्य में पत्रों की चरित्रगत विशेषता तथा स्थानीय रंगों के द्वारा वातावरण की निर्मिति करता हैं। कथा कार मिश्र जी ने सातवें दशक से अपना लेखन शुरु किया और समसमायिक सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक,आर्थिक, साहित्यक परिस्थितियों को अपने लेखन में उतारने का प्रयास किया।

उपाध्याय 1–कथा साहित्य की सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना

मनुष्य जब जन्म लेता है, तो समाज के प्रागंण में अपनी ऑख खोलता हैं, समाज में रहकर ही अपने व्यक्तित्व को विकास देता हैं,तथा समाज के माध्यम से ही ज्ञान,कला,नैतिकता,परम्पराओं और प्रथाओं पर विचार करता हैं, क्योंकि ये सभी समाज की विरासत हैं और इसी विरासत को संस्कृति कहा जा सकता हैं। अतः मनुष्य के जीने का ढंग संस्कृति हैं, और रीतिरिवाज खेल–कूद,पर्व त्यौहार,संस्कार,रुढियां,कलाएं संस्कृति के अंग हैं।

संस्कृति का क्रामिक विकास होता रहा हैं,तथा समय और काल के अनुसार समाज के भिन्न–भिन्न लोग उसे परिवर्तित और संशोधित करने में अपनी भूमिका निभाते रहे हैं।

आधुनिक युग में संस्कृति के पर्याय के रुप में सभ्यता शब्द का प्रयोग होने लगा हैं। वैसे सभ्यता और संस्कृति मानव के विकास के दो पहलू है, सांस्कृतिक चेतना का प्रति फलन सभ्यता के रुप में देखा जा सकता हैं। चूंकि मानव क संस्कार संस्कृति से सम्बन्धित होते हैं, इसलिये मानव के शारीरिक ,आत्मिक व मानसिक संस्कारों का परिष्करण ही मनुष्य के विकास का इतिहास होता हैं। जैसे जैसे सभ्यता का स्तर विकसित होता जाता हैं वैसे–वैसे कलाकारों का दृष्टिकोण पैना और यथार्थवादी होता जाता हैं क्योंकि साहित्य में बहुत कुछ सांस्कृतिक की अभिव्यक्ति होती हैं..........
सांस्कृतिक चेतना विकासशील होकर जब सृजनात्मक बन जाती है, तब विशेष महत्वपूर्ण समझी जाती हैं। अतः एक प्रज्ञ साहित्यकार अपनी सांस्कृतिक परम्परा का सही रुप

समाज क सामने रख़ता है और साथ ही अपनी युगीन अनुभूतियों का विशलेषण और स्पष्टीकरण साहित्य में प्रस्तुत करना चाहता हैं, तथा अपनी युगीन परिस्थितियों के साथ जीवन के विविध आयामों को उद्घाटित और रुपायित करते समय जीवन मूल्यों और जीवन दशनों को अपना विवेच्य विषय बनाना चाहता हैं।

प्रत्येक युग की सभ्यता और संस्कृतिक की अपनी अलग–अलग समस्यायें होती हैं। भारतीय परिवेश में स्वतन्त्रता के बाद सांस्कृतिक परिवर्तन तीव्रगति से हुआ, परम्परा से आबद्ध भारतीय जनमानस में नवीन चेतना विकसित हुई, शैक्षिणक विकास हुआ इससे उनके जीवन में वैचारिक और व्यवहारिक परिवर्तन आए, उनमें अधिकार बोध जागृत हुआ। उनमें राजनीतिक स्वतन्त्रता की आकांक्षाएँ कुचालें मारने लगी और वे आर्थिक विकास सामाजिक न्याय,धार्मिक सद्भाव और सांस्कृतिक के लिये आकुल–व्याकुल हो उठें। इस चेतना के फलस्वरुप नवीन संस्कृति के ताने बाने बुने गयें।साहित्य में लेखकों ने भी इन नवीनताओं को परम्परा के प्रकाश में स्वीकार किया।

मिश्र जी ने अपना लेखन सॉतवें दशक में प्रारम्भ किया। उस समय मानवीय मूल्यों के प्रति अरुचि,अनास्था और संशय के भाव सामाजिक चेतना में उभरने लगे थें,और समाज में उद्वेगात्मक स्थितियॉ पैदा हो गयी थी। जिसका प्रभाव युवा वर्ग की चेतना पर भी पड़ा। क्योंकि ये वर्ग स्वतन्त्र भारत में नये संस्कार लेकर पैदा हुआ था। ये संस्कार इन्हें एक तरफ परम्परा से जोड़े हुए थे तथा दूसरी ओर उन्हें आधुनिकता की ओर प्ररित कर रहे थें। अतः बदलते हुए परिवेश में सादियों से चले आ रहे मूल्य संसार के साथ सांमाजस्य स्थापित करने में उन्हें कठिनाई अनुभव होने लगी थी। मिश्र जी अपने कथा साहित्य में युवावर्ग के अर्न्तमन के असामंजस्य और अर्न्तद्वन्द्व की स्थितियों को उभारा है तथा नैतिकता और सामाजिक सन्दर्भो में आ रहे परिवर्तनों का भी उल्लेख किया।

'वह अपना चेहरा'(1969) उपन्यास में मिश्र जी ने दफ्तरी माहौल में कार्यरत कर्मचारियों की दूषित मानसिकता टुच्चापन उच्चाधिकारी की अंहकारी वृत्ति के शिकार नवयुवक शुक्ला के आक्रोश चोट खाये अहम् से उभरी प्रतिशोध की मानसिकता,अंत में उसी परिवेश में ढ़ल जाने की विवशता का चित्रण किया हैं।

'उतरती हुई धूप' उपन्यास में यद्यपि ज्वंलत सामाजिक प्रश्नों को नहीं उठाया गया हैं। परन्तु युवा वर्ग की संवेदनाओं व्यवहारों,रोमांस,हताशा,निराशा के बीच झूलत नायक–नायिका प्रतिकियाओं का सूक्ष्म निरीक्षण किया हैं।

'लाल पीली जमीन' उपन्यास में सम–सामयिक युवा वर्ग में व्याप्त हिंसा,कामकुंठा, भटकाव का चित्रण किया हैं।

इसके साथ ही 'भटकता तिनका' 'उलझती–टूटती चूड़ियां',संगीत और 'वर्तनों की खनक','माध्यम का सुख','कपकपी के दायरे' और ख्वाब देखता मुन्ना, 'उड़ते पेज की

उड़ती बातें 'एक–कटी–छटी अंगड़ाई',रगडखाती आत्म हत्याएं 'यक्षिणी का पत्रःयक्ष के नाम' ,'चिलमन और धुआ','बर्फीले पहाड़ पर' ...... 'एक सडक दो तस्वीरें',कहानियों में युवक–युवतियों की बदलती आधुनिक सोच,उनके भटकाव,उच्च आकांक्षाओं की परिणिति,विवशताओं, खीज,व्यर्थताबोध,निराशाओं कशमाकश,रोमांस बेरोजगारी का चित्रण किया गया हैं।

आज सम्पूर्ण विश्व में भारतीय नारी भारतीय सभ्यता और संस्कृति का आदर्श उपस्थित करती हैं। आज वह अपने स्वत्व, अधिकारों,आत्मसम्मान तथा अस्तित्व के प्रति पूरी तरह से सचेत हैं, परन्तु वह अपनी स्वतंन्त्रता अधिकारों की सीमाओं से पूरी तरह परिचित है। वह अपने परिवार को सफल बनाने उसे सजाने संवारने के लिये अनेक प्रकार त्याग करती हैं। मिश्र जी के कथा–साहित्य में नारी के विविध रुपों का प्रस्तुतीकरण हैं कहीं वह पत्नी के रुप में,कहीं प्रेमिका के रुप में, कहीं माता के रुप में तो कही मित्र के रुप में अपनी भूमिका का निर्वाह करती दिखाई देती हैं। कहीं बोल्ड,विद्रोही अपने व्यक्तित्व के प्रति सचेत तो कहीं–कहीं पुरानी मान्यताओं के ढोती हुई सीधी–सादी गृहणियों को चित्रण भी हैं। "मिश्र जी नारी को उसके प्राकृतिक सामाजिक तथा ऐतिहासिक सन्दर्भो में जोड़ते हैं,यथार्थ परिवेश में उसकी आंतरिकता की पुनः प्रतिष्ठा करते हैं और आधुनिकता को प्रकिया के साथ–साथ मूल के रुप में प्रतिष्ठित कर जाते हैं।"[1]

कथाकार सादियों से उपेक्षित नारी के मौलिक अस्तित्व अन्वेषण के प्रमाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं, जो सर्वथा उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना के नवप्रमाण हैं। उपन्यास 'वह अपना चेहरा' कहानी 'दौड़' मजबूरियों के बुत में महानगरों में वस्तु समझकर उपयोग करने वाली नारियों का चित्रण हैं। "लोग अपनी पत्नियों को 'जीव' कम और चीजें ज्यादा समझते हैं।(वह अपना चेहरा) उपन्यास 'उतरती हुई धूप' तथा 'यक्षिणी के पत्र यक्ष के नाम' 'माध्यम का सुख' 'दरियाई नाला' और 'मुँह चाटती लहरें' संगीत और वर्तनों की खनक इत्यादि कहानियों में प्रमिल स्मृतियों का सजोएं प्रेम और काम सम्बन्धों के बीच नारी स्वतंन्त्रता के प्रश्न को उठाया हैं परन्तु उपन्यास 'उतरती हुई धूप' की अन्तिम स्थितियॉ इस बात का आभास कराती हैं कि अन्ततः कथाकार सामाजिक बोध का ही हिमायती हैं " दस बजे उधर से फिर गुजरा। कुछ लोग बाहर सड़क पर थें। यह बड़ी सहजता से अन्दर गया.......और बाहर भी आ गया। इस बार तो सिर्फ औपचारिकता निबाहने की बात थी,वर्ना जानता था कि वह नहीं ही आयी होगी।देर से ही लौटेंगी। शायद जिस समय कल आयी थी उसी समय आयेगी। अब तो यह उन तालों का 'मेक' भी बता सकता था।

'उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' 'किस कीमत पर' ज्वाला मुखी' 'गिद्ध' 'जंग यो ही खत्म' इत्यादि सभी कहानियों के कुछ नारी पात्रा शोषित हैं। पर 'लाल पीली जमीन' उपन्यास की मालती,गिद्ध की लड़की ज्वालामुखी की सावित्री,'संडाध' की पत्नी आकरा माला की हंसा किस कीमत पर की लड़की यो ही खत्म की पार्वती इत्यादि नारियॉ यद्यपि पुरुष या परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा शोषित हैं, पर ये अपने माहौल का शिकार हेकर भी उनसे मुक्त होना चाहती हैं। पर स्थितियों की गिरफ्त की जकड़न में उनके मुक्ति के अहसास दब जाते हैं और पूरी तरह टूट जाने के बाद क्या यह सम्भव हो सकता है "वैसे बता सकती थी कि कौन थी वह ,कभी बता भी देगी.....कौन? इस सवाल से टकरा–टकराकर कितनी बार खाली हाथों लौटना हुआ था। पता ही नहीं चलता था कि वह क्या थी.......थी भी क्या? अब जैसे लगता है कि वह है–शरीर के अतिरिक्त मांस पिंड की तरह अलग दिखायी देती है..... इस समाज में। उस जैसे पिंड को काटकर फेंका नही जाता, हिफाजत से रखा जाता है, सेहत के लिये चूसा जाता हैं।"(2)

उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में' कहानी आसमान कितना नीला की नारियॉ अपने व्यक्तित्व के विकास के प्रति पूरी तरह से आत्मसजग हैं 'तुम्हारी रोशनी मे' की विवाहित नायिका सुवर्णा अपने तर्को और बौद्धिकता के स्तर पर जीवन जीने की हिमायती है तथा अपने व्यक्तित्व की पूर्णता के लिये अपने पुरुष मित्रों से घनिष्ठ सम्बन्ध खती हैं। वह अपना अस्तित्व जाग्रत करने के लिये पुरुष की गुलामी नही मित्रता, समानता चाहती हैं और पति से बराबरी और सहधार्मिणीका रिस्ता चाहती कहानी आसमान कितना नीला की पात्र श्वेता विवाह और कैंरियर में पहले अपने कैरियर को महत्व देती हैं। उपन्यास 'धीरे समीरे' की नायिका सुनन्दा अपने खोये हुए पुत्र की प्राप्ति हेतु स्वयं अपनी लड़ाई लड़ने के लिये तत्पर हो उठती हैं।

'संडाध' कहानी की पात्रा अपने पति के जीवन में आने वाली पर स्त्री के तनाव को तो झेल जाती है पर इस सच का मुकाबला करने के लिये वह मायके का सहारा नही लेती और न ही पति के कहने पर अपने सौत के टूकड़ों पर पलने के लिये खुद तथा अपने बच्चों को तैयार करती है अपितु अकेले ही उस संघर्ष को झेलने के लिये पूरे आत्मविश्वास से तैयार हो जाती है इसी तरह 'मुझे घर ले चलो' की यात्रा श्यामली पति उत्तरादायित्व को अपने कन्धे पर उठाकर जीती हैं।

'हुजूर दरबार' उपन्यास में नेपाल सरकार में रानीपन होने के बावजूद साधारण महिला की छटपटाहट दिखाई देती हैं। मिश्र जी ने उनके चरित्र की ये छटपटाहट इसलिये दिखायी है शायद वे आने वाले समय की आहट को पहचान रही थी तथा उमा जो हरीश की प्रेमिका है उसका व्यक्तित्व साधारण होकर भी अपनी विशिष्ट छाप पाठक के मन पर छोड़ती हैं।

इसी प्रकार उपन्यास 'पॉच ऑगनों वाला घर' में भी नारी के विविध रूप दिखायी देते है। जागेश्वरी देवी अपने गॅजेडी पति की मृत्यु पश्चात अपने बेटे राधेलाल की सहायता ले जिस प्रकार अपने संयुक्त परिवार की व्यवस्था सम्हालती है वह उनकी दायित्व चेतना तथा कर्मनिष्ठा का परिचय देती है। इसके साथ–साथ वे साहसी, धैर्यशील,ओजस्वी भी हैं। राधेलाल की मृत्यु पर उनको धैर्यशीलता का उदाहरण मिलता हैं। इसके साथ–साथ परिवार में होने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रम भी उनकी सॉस्कृतिक निष्ठा के परिचायक है। शान्ति देवी,नाइकी चाची ओमी के माध्यम से लेखक ने नारी स्वभाव की सौम्यता को उभारा हैं। कमलाबाई तवायफ होकर भी अपने विशिष्ट स्वभाव के कारण नारी कोमल भावनाओं का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करती हैं इन सबके विपरीत रम्मों के व्यक्तित्व में मिश्र जी ने मध्यवर्ग की अतृप्त जीवेष्णा,महत्वाकांक्षा आत्मकेन्द्रित तथा उसकी मानसिकता के विविध सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किए हैं।

अतः मिश्र जी ने अपने कथा साहित्य में समकलीन नारी की मानसिकता की गहरी पहचान की अभिव्यक्ति सूक्ष्मतः से की हैं।

कथाकार ने समाज में परिवर्तित स्थितियों के साथ–साथ स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में आए बदलाव,विविध प्रकार के सम्बन्धों तथा विविध प्रकार की मानसिकताओं के विविध आयामों को बड़ी सूक्ष्मतः के साथ उभारा है– "आपसी सम्बन्धों में सबसे नाजुक,सबसे निर्णायक और सबसे विस्फोटक सम्बन्ध नारी और पुरुष का है, इसलिये संसार के सारे कथाकारों का केन्द्रीय विषय भी यही रहा है जो सामाजिक परिवर्तन बड़े–बड़े भाषणों और कानूनों से हीं जाए जा सके और बड़े–बड़े शासक जिन्हें लागू नहीं कर पाए उन्हें किस तरह दो गुमनाम स्त्री–पुरुष ने अनजाने ही, केवल अपनी भावनाओं के बहाव में स्थापित कर दिया, इसे देखने के लिए कहीं दूर जाने की जरुरत नहीं हैं। धर्म,जाति,देश,रंग,प्रतिष्ठा कुल मर्यादा..... सभी की दीवारें सबसे पहले यही और इसी धरातल पर अघोषित टूटी हैं। आज भी नौकरी या चुनाव के लिये जाति या प्रान्त का इस्तेमाल भले ही किया जाए, नारी पुरुष के सम्बन्धों में ये आड़े नही आतें।" [3]

मिश्र जी ने सभी वर्गो के स्त्री पुरुष सम्बन्धों के सामाजिक पक्ष के अनेकानेक सूक्ष्म कोणों को जीवन्त रुप में निरुपित किया हैं तथा हर वर्ग के दाम्पत्य तथा परिवारिक जीवन की सफलताओं एवं कटुताओं आदि को अपने कथा साहित्य में उभारा हैं।

'एक बूँद उलझी' में उच्च मध्यवर्ग के इंस्पेक्टर का चित्रण है जो जीवन में पैसों को बहुत अहमियत देता है और सोचता है कि जीवन में पैसों के बल पर बहुत फर्क पड़ता है परन्तु पत्नी और बच्चों के अलग होते ही उसके जीवन में रिक्तता आ जाती हैं।

आधुनिक युग में पति पत्नी सम्बन्धों में तनाव खीज अजनबीपन,एडजस्टमेंट की स्थितियां दिखायी देती।मिश्र जी ने उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में' 'कुत्ते','संडाध', 'खुद के खिलाफ' 'शापग्रस्त','इन्द्रलोक' 'सतह का झाग' 'माध्यम का सुख' उलझती टूटती चूड़ियां 'ठहराव की ईट', 'मजबूरियों के बुत' 'खंडहर की प्यास' 'साजिश', 'उपेक्षित','कोशिश दौड़' 'बॉध' अपरिचय 'गलत नम्बर' इत्यादि कहानियों में दाम्पत्य जीवन आए बदलाव को तथा सामाजिक सन्तुलन का निर्वाह करते हुए दाम्पत्येतर सम्बन्धों को बड़ी तार्किकता से उभारा हैं।

अनमेल विवाह या पारिवारिक असांमजस्य के कारण स्वतन्त्र विचार रखने वाले विवाह पुरुष पर स्त्री और विवाहित युवती पर पुरुष के साथ प्रणय में विशेष रुचि रखते है और जीवनगत थ्रिल का अनुभव करते हैं मिश्र जी ने इस मूल चेतना प्रणय को भी अपने कथा साहित्य में अनेक परिप्रेक्ष्यों में उद्घाटित किया हैं–" तुम्हारी रोशनी में का पात्रा सुवर्णा इसी जीवनगत थ्रिल का अनुभव करना चाहती है 'सोचता हूँ सुख जो तुम्हारे साथ मिला, वह अब और मेरे भाग्य का नही। तुम्हारी भरी–भरी दुनियां 'थ्रिल' और 'एक्ससाइमेण्ट' की व्यस्तताओं से भरी हुई..... यह तुम्हें थोड़ा बहुत सहेजे रहेगी। थोड़ी कचोट मुझे होने की होगी तो छुटकारे का सुख भी होगा...... लेकिन जब तुम फिर किसी सही व्यक्ति पर पहुँचोगी तो यही से फिर शुरुआत दिखायी देगी... इन्हीं सवालों से" 4

मिश्र जी का कथासाहित्य में आधुनिक समाज में युवा पीढ़ी और वृद्ध पीढ़ी के बीच बढ़ते वैचारिक मत भेदों को अनेक बिन्दुओं में उभारता है। इन मतभेंदो के पीछे सामाजिक संरचना व उसमें होते हुए परिवर्तन की परिस्थतियॉ हैं– 'युद्ध' 'जंग' खंडित 'धेरे' संध्यानांद, अर्थ ओझल' 'निरस्त' 'इजाजत नहीं' इत्यादि कहानयिॉ पीढ़ियों के बीच बढ़ते अन्तरबोध,संवादहीनता पीढ़ियों की टकराहट जैसी मूल चेतना को अनेकों परिप्रेक्ष्यों में उद्धाटित करती हैं। दो पीढ़ियों के बीच उभरा ये अन्तर केवल वय का नहीं है इसके पीछे उनकी जीवन के प्रति अपनी भिन्न मूल मान्यताएं हैं, उनका भिन्न दृष्टि कोण और भिन्न जीवन दर्शन हैं।

स्वतंन्त्रता के बाद भारतीय सामाजिक परिवेश में पारंपरिक मूल्यों को लेकर जो अरुचि के भाव उभरने लगे थें, उसने धीरे–धीरे व्यक्ति चेतना में अर्न्तद्वन्द्व उत्पन्न कर दिया और उनका ये अर्न्तद्वन्द्व व्यक्ति चेतना में मूल्यों के प्रति अस्वीकृति का भाव उत्पन्न करने लगा परिणामतः वर्तमान युग की आपाधापी तथा जटिल अर्थव्यवस्था के बीच संवेदना और भावना से अनुप्राणित सामाजिक और पारिवारिक नैतिक मूल्य शिथिल पडने लगे और मूल्य जगत में गत्यावरोध की स्थिति आ गयी।

कथाकार ने इस नयी चेतना से प्रेरित अनेक समर्थ रचनाएँ लिखी परन्तु 'पगलाबाबा' कहानी संग्रह के माध्यम से यह प्रमाणित किया कि जीवन में दुःख हैं पीड़ा

है त्रास है यह तो बहुत कहा जा चुका है इस संत्रास भरी जिन्दगी में भी अभी मानवीयता शेष है, जिजी विषा है, प्यार का स्पन्दन हैं आदर्श का उफान है और मूल्यों की चेतना है अँधेरी सुरंग में रहकर भी किरण की तलाश में उन्मुख जीव हैं।[5]

कथाकार की प्रबुद्ध संचेतना ने भारतीय समाज में टूटते–विखरते,खंडित और प्रश्न चिन्हत् होते हैं। मानवीय मूल्यों के बीच 'पगलाबाबा' संग्रह जैसी समर्थ रचना के माध्यम से मानवीय मूल्यों के पुनः स्थापन की अनेक संभावनाएँ संजोयी हैं।

कथा साहित्य में सामाजिक परिवर्तन का अर्थ घटनाओं और स्थितियों के ब्योरों से नहीं उनके दबावों में बदलते हुए मानसिक और आपसी सम्बन्धों से है, चीजों और लोगों के प्रति हमारे बदलते हुए सहज रवैये से हैं। "वही रचना व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों स्तरों पर प्रमाणिक हो पाती इसलिये कोई भी कहानी या उपन्यास तभी सार्थक या समय के साथ है जब वह हमे अपने आपसी सम्बन्धों को नये सिरे से सोचने केलिये बाध्य करे, या स्वीकृत सम्बन्धों के अनदेखे आयाम खोले।"[(6)] मिश्र जी के कथा साहित्य में बदलती हुई सामाजिकार्थिक राजनीतिक स्थितियाँ ही विश्लेषित नहीं हुई, अपितु इस बदलते परिवेश में मानव की बदलती मानसिकता और उस मानसिकता में रिस्तो के बनने बिगड़ने की स्थितियाँ भी चित्रित हुई। कथाकार ने मानव जीवन को उसके व्यक्तिगत, सामाजिक ,आर्थिक राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक सन्दर्भो में देखा हैं तथा उसे अपनी रचनाओं में समग्रता से चित्रित किया हैं। समाज के प्रति इनका दृष्टिकोण विशेष जागरुक हैं। सामाजिक यथार्थ के विविध आयाम इनकी रचनाओं उभरकर आए हैं। ये परम्परा के विरोध एवं बदलते सामाजिक मूल्यों के बीच एक नयी नैतिकता लाए हैं।मिश्र जी का उपन्यास 'पाँच आँगनों वाला घर' इन बदलती स्थितियों और मानव की बदलती मानसिकताओं का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता हैं। जिसमें–1940 से 1990 तक के काल में घटित सामाजिक, आर्थिक,राजनैतिक बदलाव के साथ–साथ एक संयुक्त परिवार के चित्रण के माध्यम से बदलती मानसिकताओं व रिस्तों के बनने बिगड़ने की स्थितियों का उद्घाटित किया गया हैं इस परिवार की पीढ़ियों का इतिहास प्रस्तुत करते हुए मिश्र जी ने संयुक्त परिवार का विभाजन एकलपरिवार व आत्म केन्द्रित व्यक्ति और उसका मानसिक विघटन दिखाया हैं। संयुक्त परिवार में पालित पोषित राजन्,अपने एकल परिवार में इतना तल्लीन हो जाता है कि परिवार के प्रति भाव लहरियों उसके संवेदन वृत में उठती हैं पर अपनी पत्नी रम्मों की इच्छाओं की कुंडली में घिर वह अपने इस आत्मिक सुख को भी गवॉ बैठता हैं और अन्ततः उसके दोनों पुत्र इतने आत्मकेन्द्रित हो जाते हैं कि उसकी हार्ट अटैक सर्जरी पर भी नहीं आतें।

इस उपन्यास के विषय में चन्द्रकान्त वाडिवडेकर जी लिखते है कि "परिवार भारतीय समाज की धुरी है। उसे केन्द्र बिन्दु बनाकर चलने वाला यह उपन्यास परोक्ष रुप से पूरे भारतीय समाज का आलोचनात्मक आकलन करता हैं।" [7]

मिश्र जी की सांस्कृतिक चेतनाः—

मनुष्य सजीव और सचेतन प्राणी होने के कारण वह अपनी पूर्व परम्परा के समस्त चिन्तन मनन को आत्मसात करते हुये उसे पुरोगामी बनाता है अतः परम्परा से प्राप्त सांस्कृतिक चेतना अपने परवर्ती लोगो में निरन्तर प्रेषित होती रहती हैं। आज आधुनिक शिक्षा तथा पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण मानव का दृष्टिकोण बौद्विकता प्रधान,प्रगतिशील हो अत्याधुनिक हो गया हैं जिसके फलस्वरुप परम्परागत सामाजिक धार्मिक मान्यताओं में परिवर्तन आया हैं और भारतीय समाज में भारतीय संस्कृति और पाश्चात्य संस्कृति का सम्मिश्रण दिखायी देता है जिसका चित्रण मिश्र जी ने अत्यन्त सफलतापूर्वक किया हैं, उनके कथासाहित्य के पात्रों की जीवन शैली वार्तालाप, संभाषण,बच्चों की शिक्षा वेश भूषा साफ—सफाई इत्यादि में भारतीय के साथ—साथ पाश्चात्य प्रभाव भी परिलक्षित होते हैं। 'हुजूर दरबार' उपन्यास में मनाए जाने वाले विविध त्यौहारों तथा जलसों, उत्सवों में तथा 'ज्वालामुखी' कहानी में वर्णित करवा चौथ व्रत, तीज जागरण सुहागिनों का व्रत इत्यादि से 'धुधलंका' कहानी में रुक्मिणी द्वारा ठाकुर (भगवान) अष्टयागी सेवा अनुष्ठान तथा 'धीरे समीरे उपन्यास में भारतीय संस्कृति के (बिंब)पौराणिक गाथाओं तथा विभिन्न स्मृति संकेत के माध्यम से भारतीय संस्कृति तथा परम्पराओं का निर्वाह किया गया हैं। इसके साथ ही 'पगला बाबा' कहानी संग्रह के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्यों का संवर्धन, रक्षा तथा वृद्धि की गयी हैं।

'तुम्हारी रोशनी में' उपन्यास में सुवर्णा के घर के वातावरण में, वेशभूषा,खान—पान तथा साफ सफाई में वार्तालाप तथा संभाषण में पाश्चात्य प्रभाव परिलक्षित देता दिखायी देता है।इसी प्रकार अन्य कहानियॉ तथा 'फूल इमारते' और 'बन्दर' उपन्यास भी इसी प्रकार का प्रभाव छोड़ते हैं।

इस प्रकार जहॉ उनके कथा साहित्य के पात्र पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित है और बौद्धिकता का दावा करते हैं वहीं वे दूसरी और भारतीय संस्कृति को भी ओढ़े हुए अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं का समुचित निर्वाह कर कर उसे विभिन्न माध्यमों से संप्रेषित करते दिखायी देते हैं।

इस प्रकार मिश्र जी ने सामाजिक सन्दर्भो के देखापरखा और परिवेश को पहचाना। वे अपने समय के प्रतिपूर्ण सचेत रहे इसलिये उनका कथा साहित्य समय सापेक्ष हैं। उनकी संचेतना अत्याधुनिक है और वहसही अर्थो में अपने ऊपर कोई

आरोपित प्रभाव नहीं रखती हैं। समय के साथ–साथ वे अपनी अनुभूतियों के प्रति भी पूर्ण ईमानदार रहें तथा सामाजिकता के प्रति भी पूर्ण प्रतिबद्व रहे यही कारण है कि उनकी समर्थ रचनाएँ सामाजिक सरोकारों से सम्बन्ध रखती हैं,इन रचनाओं के माध्यम से उन्होंने सामाजिक जीवन को उसके वास्तविक स्वरुप में दर्शाकर उसे अधिक स्वच्छतर,उज्जवल बनाने की प्रेरणा प्रदान की।

परम्परा के पूर्णतः समर्थक वे नहीं है लेकिन उत्साही विरोधक भी नहीं। परम्परा फिर वह वैचारिक हो, सांस्कृतिक हो,धार्मिक हो या साहित्यिक हो, के प्रति उनका नजरिया विवेकपूर्ण स्वीकार का हैं। और आधुनिकता के प्रति भी आवेष्ठित ,उत्साही स्वीकार का नहीं समंजस स्वागत का हैं परम्परा और आधुनिकता के विरोधों का निराकरण वे देशिक परिवेश की चुनौतियों और जनजीवन की सांस्कृतिक जरुरतों के सन्दर्भ में करते हैं और मानवीय मूल्यों को विशेषतः पारस्परिक निष्कलुष प्रेम और करुणा को सर्वोपरि मानते हैं इसलिये उनका चिन्तन सकारात्मक ,स्वागतशील,गत्यात्मक और स्वाथ्यकर होता हैं।'' [8]

उपाध्याय द्वितीय–
कथा साहित्य का धार्मिक पृष्ठ भूमि

मिश्र जी के कथा साहित्य पर दृष्टावलोकन करने पर पता चलता है कि उनकी संवेदना धार्मिक सन्दर्भो से भी जुड़ती है, वे मानव धर्म के समर्थक है और सत्य,सौन्दर्य, आस्था,दया,प्रकृति सौन्दर्य दया,पीड़ितों के प्रति सहानुभूति उनकी आस्था के चरण हैं।

धार्मिक दृष्टिकोण भारतीय चिन्तन से प्रभावित हैं। भारतीय दर्शनों में मनुष्य को संसार की केन्द्रीय शक्ति रुप में देखा गया हैं तथा उसकी आवतारणा दो स्तरों पर हुई हैं→

(1)सामाजिक स्तर (2) आध्यात्मिक स्तर

सामाजिक स्तर पर मानव के चरित्र उत्कर्ष के लिये सामाजिक प्रशिक्षण को आवश्यक बताया,जिसका तात्पर्य यह है कि मनुष्य का अन्य मनुष्यों के प्रति सहानुभूति एवं दया भाव रखना तथा व्यक्तिगत स्वार्थ का पूर्ण परित्याग कर सामाजिक पर्यावरण के अर्न्तगत अधिकारों और कर्तव्यों का सामंजस्य करना। भगवदगीता में इसी सामाजिक स्तर की पुष्टि की गयी है। साथ ही मनुष्य के स्वधर्म(कर्म) का पालन करने पर विशेष बल दिया गया हैं। मनुष्य अपने सहज कर्म को, चाहे वह उत्तम हो,चाहे अधम, कदापि न त्यागे।"[9] आध्यात्मिक स्तर भारतीय चिन्तन के अनुसार "व्यक्ति के कर्तव्य मानव समाज तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वास्तव में सम्पूर्ण सृष्टि के अन्दर फैले हैं"। [10] अतः सम्पूर्ण चेतन सृष्टि का विस्तार मानवेतर प्राणी जगत तक है और मानव वैराग्य द्वारा अपने चरम लक्ष्य मोक्ष को पा सकता हैं।

भारतीय दर्शन मानव के निर्माण में नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान मानता हैं।

इसी भारतीय चिन्तन के आध्यात्मिक सामाजिक आत्मिक आयाम उनके कथा साहित्य के कुछ अंशों में उभरते हैं। उनका धार्मिक दृष्टिकोण भारतीय चिन्तन से अनुपाणित आस्थामूलक तथा आदर्शमूलक है वे अपने साक्षात्कारों में बताते हैं कि–

"धर्म वह है जो आपके पूरे जीवन को अनुप्राणित करे, आपकी संवेदना,सहानुभूति को विस्तृत कर दे, आपको और मानवीय बनाए..... तभी तो! बाहरी धर्म अज्ञानी लोगों को बाँधता है, उससे शक्ति भी मिलती हैं उन लोगों को ।'धीरे समीरे' उपन्यास में इसी द्वन्द्व से टकराने की कोशिश हैं। ये क्या बिलकुल बेकार की चीजें होती हैं? कृष्ण और राधा,मन्दिर में घन्टी बज रही हैं, वहाँ आप भी खड़े हैं तो आप भी हाथ जोड़ देते है। हिन्दू समाज में धर्म आपके ईद–गिर्द ही रहता हैं। लेकिन आपके जीवन का हिस्सा कैसे और किस स्तर का हो यह सोचने की बात हैं।"[11]

अतः मिश्र जी का मानना है कि भारतीय परिवेश में धर्म की सत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है वह भारतीय रक्त में प्रवाहित है इसकी जड़े भारतीय मानस में गहरे धँसी हैं बौद्धिक चेतना,आत्मिक चेतना जागृत होने पर स्थिति परिस्थिति वश वह वह निकलती हैं। वे ईश्वर को महामूल्य मानते हैं। धर्म को मानवता से जोड़ते है। ईश्वर में आस्था रखने वाले दर्शनों की तरह मानव में ही ब्रह्म की अभिव्यक्ति पाते है उनका मानना है कि धर्म की की प्रतीति मानव हृदय को विस्तार देती है विचारों को उत्कर्ष पर ले जाती हैं।उसका हृदय विशाल मानव समुद्र की पीड़ा को अपने में समाहित करने के लिये खुल जाता हैं। इस दृष्टिकोण स्पष्ट करने के लिये वे 'धीरे समीरें' जैसे उपन्यास का सृजन करते हैं। वे आगे बताते है कि यह सोचना मेरा पहले नही हाल ही में शुरु हुआ हैं। इसको समझने और फैलाने के लिये ही मैंने 'धीरे समीरें' लिखी एक तरह से। इतना तो मैं समझ गया हूँ कि धर्म को आप खारिज नहीं कर सकते, यह आपके जीवन को विस्तार देता हैं,निश्चितता देता हैं। संसार और ब्रह्मांड जो हैं,वह कोई पागल का प्रलाप जैसी चींज नहीं लगता। उसका कोई खास प्रयोजन हैं, उसमें व्यय हैं। मूल्यों से हम भाग नहीं सकते; और ईश्वर तो मूल्य नहीं,महामूल्य हैं'' ।[12] वे धर्म को मानव से अलग नही देखते हैं पूजा–पाठ के प्रति उनका रवैया विरोधात्मक नहीं हैं, धर्म अगर भावात्मक दृढ़ता शुद्धता प्रदान करता हैं, मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था को जाग्रत करता हैं, संकीर्णताओं की धुन्ध का परदा हटाता है तो वे ऐसे धर्म के हिमायती हैं। वे आगे बताते है कि पूजा पाठ भी जरुरी है अगर वो आपके इस भाव को दृढ़ करे कि यह जो ब्रह्मांड है इतनी बड़ी जो कृति है, कोई कृतिकार है इसका। इस बड़ी कृति से आपका भी कोई रिश्ता हैं। यह प्रतीति स्फूर्ति देती है कि आप अलग–अलग नहीं हैं, जुड़े हुए हैं पूरे ब्रह्मांड से। लेकिन अगर धर्म को मानवता से अलग आप देखेंगे तो वह धर्म नहीं हैं आप पूजा–पाठ करते हैं तो आपके अन्दर करुणा इतनी बढ़ जानी चाहिए कि आप सबके प्रति दयावान हो जाएं ,नहीं तो बेकार। अगर धर्म आपको निश्चित ही बहुत उदार बनाए, संकीर्ण बनाए तो वह धर्म नहीं हैं। धर्म आपको निश्चित ही बहुत उदार बहुत विस्तृत, बहुत बड़ा बनाता हैं मैं इस तरह के धर्म का हिमायती होना चाहता हूँ''। [13] मिश्र के इस चिन्तन की अभिव्यक्ति उनके कथा संसार में सृजित पात्रों द्वारा होती हैं। इस चिन्तन की सघन अभिव्यक्ति 'पगला बाबा' कहानी संग्रह और 'धीरे समीरें' उपन्यास में हुई हैं। मिश्र जी ने मानव गुणों में ईश्वरीय शक्ति को खोजा हैं 'पगला बाबा' कहानी निरपेक्ष लोक सेवा भाव तथा मानवीय कार्य को सकारात्मक समर्थन देती हैं। मर्णिकाघाट पर लावारिस बुढ़िया का दाह संस्कार करते वक्त 'पगला बाबा' की ऑखे छलछला आती हैं। बुढ़िया के शव में उन्हें मॉ की प्रतीति होती हैं। उस शाम जैसे उन्हें अपना धर्म मिल गया था– ''जिसका कोई नहीं, उसका सब कोई। संसार यात्रा का एक छोटा–सा भाग जहॉ व्यक्ति

अशक्त हो जाता है.... मात्र निस्पंद देह..... वहां उसे आगे तरफ ठेल देना,पंचभूत पंचतत्वों का सौंप देना। वे 'पगला बाबा' हो गयें। कहां के थे क्या नाम था, कौन जाति..... धर्म सब 'पगला' में डूब गये। 'प्रतिमोह' कहानी में जब अपमान और अवेहलना से कुंठित कबाड़ी के मन में जब आत्मिक चेतना जागृत होती हैं। तब उसके हृदय में मानवीय स्नेह की धार फूट पड़ती हैं और तब वह स्वयं का अविष्कार करता हैं। और वह तंग झोपड़ी में भी अपरिचित कबाड़ी छोकरे को आश्रय देता हैं। 'अर्द्धवृत' कहानी में दाम्पत्य जीवन में पर स्त्री के आगमन पर सौत का अपमान करने के इच्छा प्रेरित ब्याहता जब उससे मिलने अस्पताल में जाती हैं और सौत अपने पुत्र की बजाय ब्याहता के पुत्र के नाम मकान और जमा राशि कर देती हैं और स्नेह की स्गिनधता में ब्याहता–सौता का भेद घुल जाता हैं। 'मायकल लोबो' हृदय परिवर्तन विषयक कहानी हैं धुत शराबी मायकल को बेटी के मुख से निकले शब्द भीतर एक झकझोर देते हैं तब वह शराब छोड़ देता हैं। और शराब– पीड़ितों के अपमानित जीवन के कष्टों को दूर करने का प्रयास करता हैं। 'सिर्फ इतनी रोशनी' का सौतेले पिता का बच्ची के प्रति प्रगाढ़ स्नेह धर्म जाति सगा सौतेले की दीवारें लांघ जाता हैं 'धीरे समीरे' उपन्यास में ब्रजयात्रा में मानवीय रिस्ते कांयम होते हैं और इन रिश्तों के बीच एक अलग स्तर की मानवीयता अवष्क्रित होती हैं। इनमें मानवीय सहानुभूति, निश्चछलता,निस्वार्थ करुणा,गहरे लगाव भावात्मकता की प्रदीप्त दिखायी देती हैं। यात्रा में आये स्वार्थी बिल्डर नरेन्द्र के ज़ब आभ्यतर कपाट खुल जाते है तो उसका भावात्मक प्रवाह मानवता से जुड़ जाता हैं और वह यात्रा के दौरान मरने वाली अजनबी वैष्णवी वृद्धा का किया कर्म और क्षौर कर्म करता हैं" नरेन्द्र को देखकर वह अवाक् रह गयी..... नरेन्द्र बम्बई का स्वार्थी बिल्डर। रत्ना के मन में नरेन्द्र के लिये प्यार उमड़ने लगा..... तुम भले ही पूजा न करो,ईश्वर को मानो या न मानो...... यह किस धर्म से कम है, जिसे करने की प्रवृत्ति तुम में जागी हैं।

ब्रजयात्रा में सहज रुप में नरेन्द्र में नव व्यक्तित्व की प्रदीप्त जागृत होती जो उसे उन्नयन के सोपान तक ले जाती हैं। यही प्रदीप्त शैलजा
और सत्येन्द्र में भी जागृत होती हैं। यौवन की उंतग लहरों में मौज मस्ती को जीवन की वास्तविकता मानने आधुनिका शलैजा यात्रा में आलौकिक क्षणों का सुधापान करती हैं। क्षण भर की वह प्रतीति उसमें नयी प्रदीप्ति जागृत करती हैं। बाबा के बोल की गूँज में उसका पोर–पोर मधुरता, स्निगधता में भींग जाता हैं। मन से अंहकार को बहिष्कृत कर दे, रीत जाने दे मन को खाली कटोरा बनाकर खुले आकाश में रख दे। कटोरे में ओश की बूँदे गिरेगी,गिरकर भरेंगी। श्री राधे स्वतः ही भाव की सृष्टि कर देंगी"[14]

तर्क और बुद्धिवादी सत्येन्द्र का भी यात्रा में अपनी परम्परा से साक्षात्कार होता हैं यात्रा में ऐसा साक्षात्कार कितने तीरको से हो सकता है "यात्रा का विशेष वातावरण,

इतना कुछ देखना, कितने लोगो से मिलना ,उनके दुःखों को पास से देखना,किसी अजनबी से परिचय या सुनन्दा जैसे किसी के साथ आत्मीयता इनमें से कोई भी माध्यम चुन सकती हैं। परम्परा हममें उतरने के लिये।"[15] उसकी अन्तश्चेतना और उसका द्वन्द्व उसे दो व्यक्तित्व में विभक्त कर देता एक तरफ उसका कार्य उसे बुलाता है दूसरी उसे प्रकृति की लयमयता अनूठा सा आभास कराती हैं। "प्रकृति की दुनिया कितनी लयमय है. ..... लयमयता की सृष्टि में छोटी–छोटी चीजें लगी हुई हैं– पेड़ पौधे, पर्वत, नदी यहाँ कि धूल भी.... हमारे यहाँ,क्या पता ,इसलिये उसकी पूजा होती है। प्रकृति की लय में हम भी हैं। जो काम हमारा हैं उसे करते चलना, जो जिम्मेदारियाँ हमारी हैं निबाहना..... यह उस बड़ी लयमयता में अपना योगदान करना हैं यह किसी पूजा–पाठ से कम नहीं।अलीगढ़,कचहरी,घर.... सत्येन्द्र को मन्दिर की तरह आलोकित दिख रहे हैं।"[16]

उपन्यास आस्था–अनास्था के प्रश्न पर महत्वपूर्ण तबदीली द्वारा हमें अभिनव संसार में ले जाता हैं। जिसमें मानवीय आयामों की आंतरिक प्रवृत्ति से हमारा साक्षात्कार होता है और हम आत्मीय स्पन्दन की अतल गहराईयों में उतर जाते हैं। अन्तर्निहित इच्छाएं जोमूलतः आत्मरक्षा और आत्मविकास की बुनयादी वृत्तियों से संचलित और परिचलित होंती रहती हैं। उनकी तृप्ति के साथ,तथा बाह्य द्वारा दिए गये तत्वों से बना हुआ होता हैं"। [17] मिश्र जी ने यात्रा परिवेश (बाह्यजगत) द्वारा मनुष्य के सम्पादित, संशोधित, बिम्ब, विचार, माप की सृष्टिकर व्यक्ति के अनुभव के आत्मपक्ष (आम्यात्तर)से हमारा साक्षात् कराया हैं। उनके पात्र साधारण होते हुए उन्नयन के सोपान पर खड़े दिखाई देते हैं। बाह्य जगत से सम्पादित और संशोधित उनके पात्र मानवीकरुणा और सहानुभूति से ओत प्रोत हो जाते हैं। भारतीय चिन्तन पद्धति की तरह वे भी धर्म को मानववाद से जोड़ते हैं। उनके विचार से एक समाज जो किसी विशेष धर्म से अनुप्राणित है, रहा हैं...... उस साहित्य उस धर्म की ओर से मुँह फेर लेता हैतो वह उस समाज को पूरा समझता ही नहीं। केवल एक निस्संग दृष्टा की तरह समाज की धार्मिकता को देखना भर नहीं, साहित्यकार को उसी आस्था से देखना होगा जो उस समाज की हैं। वे आगे लिखते हैं। "कि धर्म जब साहित्य के मानववाद को अनदेखा कर देता हैं। तो वह किसी भी व्यवस्था की तरह क्रूर और अन्धा हो जाता हैं।"[18] वे साहित्य में पात्रों के हृदय परिवर्तन की प्रकिया को साहित्य और धर्म का सन्धि स्थल मानते हैं। उनके विचार इस तरह का प्रश्न उठाते हैं। एक पात्र जो यथार्थ में एकदम गलीज, दुष्ट और पतित है ,उसे वैसा ही दिखाकर रुक जाना या उसमें वे कुलबुलाहटें भी दिखाना जो देवत्व की तरफ उचालें मारती हैं? यथास्थिति जो हैं, उस पर थम जाना या कि उसमें परिवर्तनशीलता निहित है या वैसी कोई प्रकिया चल रही हैं उसकी झलकियाँ भी दिखाना? इस प्रकिया

में वे प्रेमचन्द के समर्थक दिखायी देते हैं और मायकल लोबो जैसी सफल का सृजन कर जाते है,जो हृदय– परिवर्तन की कहानियों में जो अपना अनुपम स्थान रखती है।

अतः कहा जा सकता है उनके कथा साहित्य में चित्रित धार्मिक परिप्रेक्ष्य भारतीय दर्शन से अनुप्राणित हैं।

उपअध्याय–3 कथा–साहित्य का राजनैतिक परिदृश्य

कथाकार मानव जीवन को उसके समस्त व्यक्तिगत सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक सन्दर्भो में देखता हैं,तथा उसे अपनी रचनाओं में समग्रता के साथ उतारने के लिये आतुर रहता हैं। चूँकि आज राजनीति मानव जीवन की सबसे बड़ी सच्चाई बन गयी हैं, इसलिये कथाकारों का सीधा साक्षात्कार राजनीतिक विसंगतियों और घटनाओं से होता हैं और वह नगर या महानगर के राजनीतिक माहौल को अपनी रचनाओं में उतारकर पूरे देश की नब्ज टटोलते हैं। आज की राजनीतिक स्थितियों पर गोविन्द मिश्र का विचार हैं कि "हमारे रोज–ब–रोज जीवन पर कहर ढाने वाली मूल शक्ति हैं राजनीति,जो अपने–आप में एक संस्था हैं,जीवन प्रणाली है, जिसके अपने कायदे–कानून है और जो समाज को मरोड़ते समय उस रुप में नहीं आती जिसमें वह धंधे के रुप में होती हैं।" [19]

मिश्र जी ने राजनीतिक परिवेश की तमाम भ्रष्टताओं अफसरी स्तर पर होने वाले घोटालों ,व्यक्ति की गर्दन तक पहुँचने वाली राजनेताओं की गिरफ्त और राजनीति की धूरी पर घूमती जिन्दगी इन स्थितियों को अपनी रचनाओं में उद्घाटित करने का प्रयास किया हैं।

इस सन्दर्भ में उन्होंने लिखा हैं कि "मेरा असली ताल्लुक तो उस राजनीति से हैं जो आदमी को मारती हैं.....और जहाँ हर दल की मार एक सी हैं।"[20]

मिश्र जी के कथा साहित्य में राजनैतिक परिप्रेक्ष्य का आकलन करे तो उनके उपन्यास 'हुजूर दरबार' 'लाल–पीली जमीन' और पाँच आँगनों वाला घर' 'फूल इमारतें और बन्दर' 'धाँसू' संग्रह की कहानियाँ राजनीतिक चेतना के प्रभावांतर्गत लिखी गयी। परन्तु इन्हें विशुद्ध राजनीतिक उपन्यास नहीं कहा जा सकता हैं। पर 'धाँसू' संग्रह की जनतंन्त्र ,'धाँसू' 'गोबर गनेस',बहुधंधीय कहानियों में ये विशुद्धता दिखाई देती हैं।

• हुजूर दरबार उपन्यास में राजनैतिक स्थितियाँ:–

स्वतन्त्रता के संकान्ति काल की पृष्ठभूमि में लिखे गये इस उपन्यास में व्यवस्था और व्यक्ति की द्वन्द्वात्मक स्थितियों को बड़ी सूक्ष्मतः उद्घाटित किया गया हैं। उपन्यास का प्रमुख पात्र बुद्धि जीवी और संवेदनशील होने के साथ–साथ व्यवस्था की समस्त स्थितियों का दृष्टा और भोक्ता हैं। इसलिये उसके संवेदनवृत में वे समस्त स्थितियाँ आती हैं जो गुजर रही हैं। देश को स्वतन्त्र कराने में आजादी आन्दोलन की पुरजोर कोशिश,रियासतों की समाप्ति पर सत्तापक्ष लोगों की मानसिकता,अंग्रजों द्वारा सामन्तों को फुसलाकर आन्दोलनों को दबाने की दुष्यनीति,सत्ताधीशों की अमानवीयता,जनता की

कारुणिक स्थितियॉ सभी समसमायिक राजनैतिक स्थितियों का परिदृश्य उपस्थित करती हैं।

उपन्यास कें दूसरे पात्र में रियासत के राजा महाराज रुद्र प्रताप सिंह हैं, जिन्हें अनेक स्तरों पर संघर्ष करना पड़ता हैं। राजाशाही की परम्परागत आदते उनकी कुछ ऐयाशी प्रवृतियॉ भी हैं। पर उनके अन्दंर मुक्ति की छटपटाहट भी दिखाई देती हैं। प्रजामण्डल के नेता खरे से उनका संधर्ष होता हें जो जनता की सरकार बनाने और फिरंगी शासन को समूलतः नष्ट करने के लिये प्रयासरत होते हैं। सत्ताकांक्षी रुद्र प्रताप भी उनके साथ मिलकर फिरंगी शासन के खात्मा के लिये तत्पर होते हैं। खरे के नेतृत्व में प्रजामण्डल का आन्दोजन चलता हैं। जो एक सच्चे देश भक्त के रुप मेंउपन्यास में उतरते हैं परन्तु रियासतों की समाप्ति पर स्वतन्त्रता के बाद जब सत्ता प्राप्ति की बात आती हैं। तो उन्हें प्रजामण्डल से त्याग पत्र देना पड़ता हैं। मुक्ति पथ उने साथ चलने वाले उनके ही साथी उनसे कन्नी काटने लगते हैं। जनतन्त्र का जो रुप सामने आता हैं वह भयानकता के साथ विद्रूपता लिये हुए था। खरे की हत्या,रुद्रप्रताप की रानी नेपाल सरकार का राजनीति में उतरना,हरीश का पी0एचडी0 रद्द कराना,तनेजा साहब द्वारा उसे सामाजिक तनावों पर कार्य करने का प्रोत्साहन,नेपाल सरकार द्वारा हरीश को रियासत लौट आने का प्रलोभन देना,तथा उसकी अस्वीकृति पर उसे कलकत्ता,दिल्ली, गॉव में संत्रास दिया जाना,म्युनिसिपल बोर्ड के मेम्बर द्वारा उसके मकान को हड़प लेना इत्यादि घटनाएँ स्वातन्त्र्योत्तर काल की राजनीतिक विद्रुपताओं का प्रमाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करती हैं। हरीश की कशमाकश में ये स्थितियॉ स्पष्ट होती हैं। "मेरा जीवन भी कुछ अजीब ही रहा। एक नहीं दो–दो युग मेरे ऊपर से गुजर गये और मैं शुरु ही न हो सका। सिर्फ पैदा होना बढ़ना पढ़ जाना ही तो चल पड़ना नहीं होता।मैं रियासत की गुलामी से भागा तो वे मेरे अवचेतन के पीछे पड़ गयें,मेरी'कंडी शनिंग'शुरु कर दी गयी।सोचा था कि स्वतन्त्र भारत की फिजा में हम सिर्फ चलेंगे ही नहीं दौड़ेगे.....लेकिन क्या पहले और क्या अब। वें अगर मेरे व्यक्तित्व,मेरी आत्मा को खत्मकर देना चाहते थे तो ये जैसे मुझे सशरीर ही खत्म कर देना चाहते थे...जैसे दोनों की कोई मिली भगत थी। मैंने अपनी मेहनत से,कैसी–कैसी तकलीफें उठाकर लियकत हासिल की। मुझे अपने खाने पीने का इन्तजाम करने में मदद देना तो दूर वे मुझे कहीं बैठने ही नहीं देना चाहते थें।[21] "

अतः मिश्र जी ने उपन्यास में स्वतन्त्रता के कुछ वर्ष पूर्व और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही राजनैतिक स्थितियों का प्रमाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किया हैं।

'पाँच आँगनों वाला घर'उपन्यास में राजनैतिक परिदृश्यः–

इस उपन्यास में 1940 में लेकर 1990 तक के कालखण्ड में परिवर्तित होने वाली सामाजिक,सांस्कृतिक,राजनैतिक और नैतिक स्थितियों का प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किया गया हैं। इस उपन्यास में यदि राजनैतिक सन्दर्भो का आकलन किया जाए तो उपन्यास का प्रथम भाग 'क्षेत्र' जिसमें 1940 से 1950 तक ही राजनैतिक घटनाओं में 'स्वतन्त्रता संग्राम' के प्रयास हेतु परिवारिक परिधि से निकल कर देश के प्रति सब कुछ अर्पित कर देने की जनभावना,अंग्रेजों का दमन चक्र, भारतीय नेताओं के संकल्प विकल्प,देश का विभाजन,स्वतन्त्रता प्राप्ति के जलसे,गांधी की हत्या, छात्रा संगठनों का गठन,राजनेताओं की पदलोलुपता का चित्रण हैं। ये घटनाएँ समसमाजिक राजनैतिक गतिविधियों की झाँकी उपस्थित करती हैं।

उपन्यास का दूसरा भाग जो 'दीवारे' नाम से अभिहित हैं इसमें 1960 से लेकर 1975 तक की जो राजनैतिक घटनाएँ समाहित हैं उनमें सबसे महत्वपूर्ण मोहभंग की स्थिति हैं जिसे उदाहरणार्थ 1967 के आम चुनाव में व्यापक स्तर पर देखा जा सका। नेताओं की कथनी और करनी में अन्तर आ गया था। यद्यपि औद्योगिक विकास,उननत कृषि पद्धति और विस्तृत व्यापार से आर्थिक स्थितियों में सुधार आया तथापि आम आदमी की स्थिति संकटापन्न ही रही। व्यवस्थापकों के आश्वासन पर जनसाधारण का विश्वास नहीं रहा। आए दिन नयी–नयी विकास योजनाएँ बनी पर वे वास्तविकता से परे रही। व्यवस्था के इन दोषों ने स्वतन्त्रता की संकल्पना को विवादास्पद बना दिया।इन स्थितियों को उपन्यास के पात्र सन्नी के प्रसंग द्वारा स्पष्ट किया गया– " देश के स्तर पर विकास–आर्थिक विकास इससे किसको इन्कार हो सकता हैं...लेकिन यह जरुर देखना होगा कि वह विकास साधारण व्यक्ति तक पहुँचता हैं या नहीं और उसका सर्वांगीण विकास करेगा या नहीं या उसे बाहर की चीजों पर और निर्भर बनाता चला जाएगा।अगर हम विकास के उस ढाँचें को पकड़ते जिसकी खोज गाँधी जी कर रहे थें.... उसे और आगे ढूढ़ सकते तो वह संसार के लिये एक मिशाल बन सकती थी।लेकिन हमने विकास का विदेशी फार्मूला उठाया जो आसान और अजमाया हुआ फार्मूला था। चीनी आक्रमण के बाद तो खैर कोई विकल्प ही नहीं रह गया था। काश कुछ ऐसा हो सकता जिसमें देश शक्तिशाली भी हो सकता और गाँधी जी वाले रास्ते पर भी हम चले होते! पंडित नेहरु देश की परम्परा की कद्र करते थें पर आधुनिकीकरण- उनके लिये सबसे बड़ा मूल्य था। अब देखिए कैसे असर फैलता हैं... कितनी जल्दी गर्वनर मंत्रियों की ठाठबाटी स्टाइल शुरु हो गयी।वे उस रास्ते चल पड़े जहाँ वे जनता के प्रतिनिधि नहीं, शासक बन गये। अंग्रेजों की जगह तो उन्होंने ली ही थीं,वे उन जैसे ही बनने चल पड़ें।जनता उनके लिये हेय या सिर्फ वोट के वक्त याद करने की चीज होती जा रही हैं।"[22]

सन् 1975 तक आते–आते राजनीतिक दलों और नेताओं के मतभेद गहरे होते चले गये। 24 जून 1975 में इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा इन्दिरा गॉधी के चुनाव को अवैध ठहराये जाने पर एक अजीब स्थिति उत्पन्न होगयी और उस पर काबू पाने के लिये आपात स्थिति लागू कर दी गयी,आपातकाल के बीस महीनों होने वाली घटनाएँ विश्व के बड़े जनतन्त्र का काला इतिहास लिखती हैं। सत्ता में बने रहने की लिप्सा,राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वियों का उत्पीड़न,अखबारों पर कड़ी सैंसरशिप,सूचना और प्रसारण साधनों का दुरुपयोग इत्यादि ने देश की राजनैतिक जीवन को ही नहीं, अपितु जनसाधारण को भी बुरी तरह प्रभावित किया। सन् 1977 के चुनाव में कॉग्रेस की भीषण पराजय इस बात को प्रमाणित करती हैंकि जनता में आक्रोश और विरोध की चेतना उद्दाम थी। उस समय केन्द्र में कई राजनीतिक दलों की सरकार बनी। पर इसमें मत वैभिन्य की स्थितियॉ आई। इन्दिरा गॉधी और उनका राजनीतिक दल पुनः सत्ता में आया। राजनीतिक दलों की उठा पटक,नेताओं की पद लोलुपता स्वार्थपरिता की स्थितियॉ सन्नी के सोच सन्दर्भ में उभारती हैं–"आपातकाल के बाद जिस जनता पार्टी को लोगों ने प्रचंड बहुमत से कांग्रेस की जगह भेजा तथा उसके नेता पदलोलुपता की वजह से आपस में लड़ मरे,पार्टी को तोड़ डाला। उसमें और कॉग्रेस में फर्क क्या रहा। पहले में पद लिप्सा के कारण इमर्जेन्सी लगायी जाती हैं। तो दूसरी में उसी कारण अपनी पार्टी की सरकार गिराई जाती हैं। जनमत से खिलवाड़ किया जाता हैं...यानी कि तुम मूर्ख हो जिसने हमें वोट दिया,हम तो वही करेगे जो हमारा स्वार्थ कहता हैं। चुनाव के बाद नेता सोचता हैं वह चाहे जो कर सकता हैं। अब नहीं चलेगा श्रीमान्! जनता,प्रकृति यह दिखा चुके हैं। जनता पार्टी चुनाव में पिटी इन्दिरा गॉधी वापस आ गयी"।[23]

तीसरा खण्ड "अन्धी गली' संज्ञा से अभिहित हैं, इसमे 1980 से लेकर 1990 तक की राजनैतिक अराजकता की तस्वीर प्रस्तुत की गयी हैं। 1984 में जब इन्दिरा गॉधी की हत्या कर दी गयी तब उसे चुनाव में भुनाया गया। 'तब सन्नी को लगा कि अब आगे नेता सुरक्षित नहीं रहेंगे। समय जब उन्हें तगड़ी सुरक्षा में कैद रखना पड़ता होगा... उसके बाद भी मार दिए जाते हैं। नेता तो कैसे भी रहेंगे... क्योंकि पद पर तो रहना हैं!इन्दिरा गॉधी की हत्या को चुनाव में मुजॉया जाता हैं.... फिर वही,बेवकूफ बनाओ जनता को!लेकिन जनता उदार ह्दया हैं,प्रकृति की तरह.....खुले मन से देती हैं। तुम उसके पात्र हो यह तुम्हें दिखाना होगा।[24]

अपने प्रिय नेता की इस उदासीनता से वे बौखला उठते हैं– विश्वनाथ प्रताप सिंह जैसे साफ सुथरे नेता का राजनीति द्वारा यो भ्रष्ट होते देखना देश के गले के नीचे नहीं उतर पाया (सिर्फ रुपया ही नही भ्रष्ट करता,राजनीति भी भ्रष्ट करती हैं) उन्हें छात्रों पर भी कोध आता यह किस किस्म को जुनून है जो आत्मघात करवा रहा हैं। अरे इससे

तो अच्छा हैं भ्रष्ट नेताओं को एक–एक करके समाज में जलील करने का अभियान चलाओं।ये लड़के खुद को खत्म कर रहे हैं और सन्नीका प्रिय नेता इन मौतों से उदासीन,एक कोनेमें बैठा तमाशा देख रहा हैं। चलो यह भी माना कि तुम्हें राजनीति खेलने के लिये कुछ घोषणा करनी पड़ी,कुछ अच्छा करने के लिये तुम्हारा पद पर रहना जरुरी था... लेकिन यह कैसी असंवेदना कि सामने बच्चे जल मर रहे हैंऔर तुम अपनी कोठी में बैठे हो,उसी लचीलेपन से कोई रास्ता निकालों कि निर्दोष जाने न जाएँ।"[25]

इस उपन्यास में 1940 से लेकर 1990 तक के वर्षो की राजनैतिक स्थितियों का यथाचित्र प्रस्तुत किया गया हैं। इस उपन्यास की विशिष्टता पर प्रकाश डालते हुए रामजी तिवारी ने लिखा हैं कि "हिन्दी में ऐसा कोई उपन्यास मेरे देखने में आया जिसमें राजनीतिक घटनाओं को बकायदा नाम लेकर स्पष्टता और यथातथ्यता से प्रस्तुत किया गया हो और एक सधे हुए कलात्मक संयम के साथ उन्हें हमारे सामाजिक पतन के साथ जोड़ा गया हो।"[26]

'फूल इमारतें और बन्दर उपन्यास में राजनैतिक परिदृश्यः

इस उपन्यास में लेखक ने प्रसासन तन्त्र की रहस्यमय दुनिया,नेताओं की स्वार्थपरिता, अफसरों की चापलूसी इत्यादि राजनैतिक स्थितियों को बेवाक,व्यग्यांत्मक भाषा के द्वारा प्रस्तुत किया गया हैं। साथ ही इस तन्त्र से जुड़े ईमानदार प्रशासनिक अधिकारी मनोदशा का चित्रण हैं जो अपने चेतना के बलबूते पर इस भ्रष्ट तन्त्र से उबारता हैं।

उपन्यास का प्रमुख पात्र मोहन्ती जो एक उच्च अधिकारी हैं। सीनियरिटी और ईमानदारी के कारण उसे नियमतः अध्यक्ष पद प्राप्त हो जाना चाहिए। परन्तु उसकी फाइल आगे बढ़े या उस पर हॉ या न हो,प्रधानमंत्री के पुत्र से लेकर,उघोगपति,स्टार ,नेता ,कैबिनेट सचिव,प्रधानमंत्राी का पार्टनर सभी उसे अपनी गिरफ्त में ले लेते हैं। ताकि उनके अध्यक्ष बनने पर वे अपना स्वार्थ साध सकें। सभी अपना पासा फेकते हैं और उन्हें अध्यक्ष पद दिलाने में अपनी अपनी भूमिका का आभास कराते हैंऔर उन्हें पद मिलते ही अपने प्रयास को भुनाना चाहते हैं।सभी अपना जाल फैलाते है और वे इस तन्त्र में फॅस जाते हैं और अपना पतन देखते हैं। "फूल इमारतें और बन्दर" उस अपसंस्कृतिक कहानी हैं जो हमारे समाज के उच्च वर्ग की दुनिया में फैली हुई हैं, जिसे राजनेता,बड़े अफसर व्यापारी,अभिनेता,पत्रकार आदि सब मिलकर फैलाते हैं....अपनेअपने फायदे के लिये।"[27] प्रशासनतन्त्र की स्थितियॉ तथा नेताओं की स्वार्थपरिता मोहन्ती के संवेदनवृत्त में उभारती हैं–थोड़ा पहले अंग्रेज थें,अब हमारे काले अंग्रेज हैं। शब्द किस तरह घिस गये–जब नेता कहे वह देश की सेवा करना चाहता है तो माने यह कि देश को लूटकर

घर भरना चाहता हैं। डायनैमिक अफसर वह है, जो मन्त्री की इच्छा पूर्ति के लिये हर कायदा–कानून तोड़कर अपने को बचाते और मातहत पर तोहमत या जिम्मेदारी लादते हुए काम करा ले जाए..... डी0वी0 जैसा। प्रजातन्त्र के मानें यह कि पूरनमल की तरह किसी को कुछ कह डालिए, संसद में, विधान सभाओं में गाली गलौज, हाथापाई पर उतर आइए प्रशासन में मनमानी, स्वच्छदतावाद चलाइए। प्रेस की स्वतन्त्रता के मानें यह कि जो तुम्हारा ख्याल करे, उसका तुम ख्याल करो...उसने कहा या उसने तुम्हारे अखबर के मालिक से कहा और मालिक ने तुम्हें इशारा किया तो तुमने किसी की भी पगड़ी उछाल दी।[28]

'धॉसू' संग्रह की कहानियों में राजनैतिक परिप्रेक्ष्यः–

'धॉसू' संग्रह की कुछ कहानियॉ 'गोबर गनेस' 'धॉसू','बहुधंधीय' जनतन्त्र इत्यादि विशुद्ध राजनैतिक स्थितियों को दर्शाती हैं। ये कहानियॉ राजनैतिक जीवन से जुड़े लोगों की बेवसी,राजनीतिक क्षेत्र में अपना प्रभुत्व बनाये रखने के लिये अवसरवादिता चापलूसी के क्रिया कलापों,वाक्चातुर्य,से राजनीति का पल्ला पकड़े समाज प्रतिष्ठित होने की चाहत, व्यक्ति के अंतस की पीड़ा और व्यवस्था में दबी यन्त्रणा को उद्घाटित करती हैं। कथाकार ने इन्हीं स्थितियों के माध्यम से समसामयिक राजनैतिक सन्दर्भो को विभिन्न आयामों से उठाया हैं।

'गोबर गनेस' कहानी का पात्र चुनाव क्षेत्र में अपनी औब्जर्वर की भूमिका बखूबी निभाता हैं और चुनाव परिणाम अपनी पार्टी के पक्ष में होने पर गर्वित हो अपनी बात अध्यक्ष के सामने रखता हैं–" लोकसभा के चुनाव आने वाले हैं,मुझे भी टिकट दिया जाए. .. अगर पार्टी ने मेरे लिये कोई और चीज सोच रखी हैं तो दूसरी बात... मैं अपना राजनैतिक कैरियर खत्म नही करना चाहता।[29]

अध्यक्ष उसे राजनीति का पाठ पढ़ाते हैं राजनीति में हवा का रुख पहचान कर काम करना पड़ता हैं।

कथाकार ने उन स्थितियों पर व्यंग्य किया हें जहॉ राजनैतिक क्षेत्र में युवाओं को कुछ प्रलोभन देकर उन्हें राजनीतिक कार्यो में लगा अपना उल्लू सीधा किया जाता हैं और फिर राजनीतिक क्षेत्र में उनकी समझ को अपरिपक्व सिद्ध कर उनकी हॅसी उड़ाई जाती है–"बात खत्म थी... यह वह हंसी थी जिसका मतलब राजनीति में सब–कुछ धो देना होता है– मेरा काम और मैं दोनों ही धो दिए गये.... एक क्षण में । मैं जहॉ–का तहॉ पहॅुच गया ...सिर्फ बेशरमाई से राज्यसभा के नये टर्म केलिये गिगयाते फिरन के अलावा और कुछ नहीं था सामने। इससे तो अच्छा था मैं अपने लिये कुछ रकम ही खींच लेता।"[30]

धाँसू:– आपातकाल के बाद प्रकाशित इस कहानी में उस समय के ऐतिहासिक मोहभंग की स्थितियों का राजनीतिक प्रतिद्विन्द्वयों के उत्पीड़न का,नेताओं की सिद्धान्त विहीनता,स्वार्थपरिता,अवसरवादिता इत्यादि का विश्वसनीय वर्णन किया गया हैं। इसके साथ ही राजनीतिक हस्तियोंऔर राजनैतिक घटनाओं को उभारा गया हैं। कहानी का चरित्र अपने मित्र मंत्री के आमन्त्रण पर दिल्ली आता हैं और राजनीतिक क्षेत्र में अपना सिक्का जमाना चाहता हैं,और इस दौड़ में आगे निकलकर अपनी कुर्सी पक्की करना चाहता हैं–"वह खुश था– जाल फैलाने का मौका पर्याप्त मिल चुका था। अब समय था जब राजनैतिक सम्पर्क मुंजाये जा सकते थें। मंत्री पद पर तकनीकी योग्यता के ढिंढोरे वाले टेढ़े–मेढ़े रास्ते से न सही तो सीधा चुनाव से होते हुए दौड़कर चढ़ा जा सकता था। चुनाव क्षेत्र भी पका पकाया था.... उसका पुराना कस्बा .... जहां राजनीति में न होते हुए भी वह लगातार आता जाता रहा था....हफ्तें में ढ़ाई दिन का अज्ञातवास तो वहां करता ही था।"[31]

कथाकार ने चुनाव के अंधड़ में नेताओं की अवसरवादिता ,स्वार्थपरिता, चापलूसी का विश्वासनीय वर्णन खुले पृष्ठ में किया हैं–"चुनाव के अंधड़ के फौरन बाद जैसे चंद्रबरदाई के पद के लिये मारामारी चालू थी···· बन्दे वही थें जो कल तक उधर का गुणगान करते थे···· एकाएक अब दूसरी तरफ को मुंह बायें भागे जा रहे थें···· जैसे कि वे कब के भूखे थे और तत्काल ही कोई मंत्री उनके मुंह में न गया तो वे पगलया जायेंगे... जैसे कि खाली मुंह उनकी सांस कहीं अटकती थी। तेजी से एक घेरा नये मंत्री और जनता के बीच उग रहा था... नये मन्त्रियों के चारों तरफ लपेट कस रही थी। जिससे कि वह तबका भूल जाए जहां से वे आए थे,फूल मालाओं से सर ही नहीं उठा सकें, कभी उठाएँ भी तो सिर्फ उन्हें ही देखें जिनसे वे घिरे थें....जनता से सम्पर्क बनाए रखने के नाम पर उन्हीं के आयोजनों में जा–जाकर सन्तुष्ट रहें,उन्हीं के घर भरने में व्यस्त रहें जो उनकी तारीफें गाते थें..... जनता की सेवा के लिये हमेशा की तरह भाषण पर्याप्त थें।"[32]

बहुर्घधीय:–

'बहुघंधीय' कहानी का चरित्र राजनीति का पल्ला पकड़े समाज में अपना रौव व प्रतिष्ठा बनाए रखना चाहता हैं। तिकड़मी चालें चलने वाला ये चरित्र हर क्षेत्र में अपनी गोटे बिटाता रहता हैं ताकि लोमों के बीच एक विशिष्ट व्यक्ति बना रहें–" दुनिया का सारा समय तब जैसे उनके पास था और वे समय के अनुसार समुद्र में सांस रोके उतरा रहे थे... मंगलसूत्र जानकी नाथ की पत्नी को कैसा रहेगा.....प्रधानमंत्री ...मैकूराम को आधा मंत्री से पूरा मंत्री ...... मैकूराम गिरधारी लाल को लाइसेंस ..... रेलमंत्री से

शर्मा को कैंटीन का ठेका" दावत घर में शनिवार...शर्मा का इन्तजाम.... सिर्फ मंत्री ही... अफसर–मंत्री घिचपिच हो जाता हैं.....शर्मा के लड़के से ब्याह..... किसकी लड़की का ..... कौन...... विदेश से सचिव लौट आए ....किस कागज को उनका इन्तजार था... वह आया नहीं.... आएगा ही,पीछे–पीछे....जैसे श्री....[33]

'जनतन्त्र':–

'जनतन्त्र' कहानी का चरित्र गॉव का स्कूल मास्टर हैं, कथाकार ने उसके माध्यम से व्यक्ति के अन्तस् की पीड़ा तथा व्यवस्था के द्वैत से उत्पन्न स्थितियों का विश्वसनीय चित्रण किया हैं गॉव के वातावरण में छोटी–छोटी संस्थाओं में राजनीति सुरसा के मुँह की तरह फैलाती जा रही हैं,दुर्बल और अकेला व्यक्ति प्रतिभा और कौशल होने के बावजूद भी सकुशल नही रह सकता हैं–" वे कहते हैं, "तुम मौका चूक गये,सालेको तीन चांस दिए ,किसी बार उंगली सेही इशारा कर देता। नत्थू कहता हैं–' मास्टर साहब',आप दिल्ली चले जाइए'....... मैं क्यों जाऊँ दिल्ली, जब दिल्ली से ही यहां लोग आते हैं!पिछले महीने ही जाने कितने मंत्री जाए। बड़ी–बड़ी मीटिंगे करते हैं, लाउडस्पीकर पर बोलते हैं। मंहगाई हटाने के लिये जनता का साथ चाहते हैं। मैं तो कितना चाहता हूँ कि मेरा कोई साथ ले। लेकिन पुलिस वाले रुल से एक तरफ कर देते हैं.....'रास्ता रोके क्यों खड़े हो ,जी? एक से एक नेता आते हैं। भई वे सब बुलाते है,उनकी सांठ–गांठ दिल्ली तक हैं। मुझे क्या,चलों अच्छा हैं। मेरी वजह से ही सही, इन बड़े–बड़े लोगों को यहां आने की फुर्सत तो मिली। घर बैठे मैं भी इन बड़ी–बड़ी हस्तियों को देख लेता हूँ।"[34]

'कचकौध':–

इस कहानी में बूढ़े मास्टर की स्थितियों को उभारकर उनकें माध्यम से समसामयिक भारतीय सामाजिक,राजनैतिक पारिवारिक स्थितियों की नब्ज टटोली गयी हैं तथा राजनीतिक विद्रूपताओं विड़म्बनाओं को उभारा गया हैं। कहानी का पात्र बदलते परिवेश में प्रदूषित प्रशासनिक व्यवस्था से क्षुब्ध है स्वतन्त्रता के पश्चात् हम जिस स्वच्द प्रशासन की आशा करते थें,वह स्वप्न मात्र था। मिश्र जी ने इन स्थितियों को पात्र विवशता,असहायता दयनीयता के माध्यम अभिव्यक्त किया गया हैं। इन सभी उपन्यासों और कहानियों में मिश्र जी ने समसमायिक राजनैतिक स्थितियों को अपनी सूक्ष्मअंकना शक्ति से देखा परखा और अपनी रचनाओं के पात्रों के माध्यम से उक्त परिवेश को उभारने में सफलता प्राप्त की तथा पात्रों और वास्तविक परिवेशको उभारकर रचनाओं को प्रसिद्धि की सोपानों तक पहुँचाया।

उपअध्याय–4 कथा साहित्य और प्राकृतिक चेतना

देशकाल के अर्न्तगत आचार–विचार,रीति–नीति,चाल ढाल,रहन–सहन,प्राकृतिक पृष्ठभूमि (Natural back ground) इत्यादि आ जाते है। इस आधार पर देशकाल के दो भेद किए गये हैं–(1)समाजगत
(2) भौतिक

भौतिक वर्णनों में व्यक्तियों और प्रकृति का वर्णन आता है। प्रकृति अनन्तकाल से ही मानव के सुख–दुख की चिर सह चरी रही है।प्रकृति–वातावरण का प्रभाव व्यक्ति के चरित्र और कार्यो पर भी पड़ता है। अतः एक सुधी कथाकार प्राकृतिक चित्रण के माध्यम से अपनी कृति को मार्मिकता प्रदान करने के साथ–साथ जीवन की व्यापकता को स्पष्टतर बनाने का प्रयास करता है। वह प्रकृति के संवेदनात्मक रुप के चित्रण से करुण अथवा हर्षपूर्ण वातावरण की उद्भावना करता है। परन्तु प्राकृतिक यह बाह्यहृदय– विधान यदि अनुपयुक्त स्थलों पर होता है तो कथा का प्रवाह बाधित होता है तथा उसका सौन्दर्य मलीन होता है अतः सुधीकथाकार का यह कर्तव्य –कर्म हो जाता है कि प्राकृतिक दृश्य विधान का सधा हुआ प्रयोग करे। ताकि कथा साहित्य का मूल उद्देश्य ही कथा साहित्य को अत्यन्त सशक्त् गम्भीर और सौन्दर्यशाली बनाना होता है।

मिश्र जी की शुरुआती दौर की कहानियों तथा उपन्यास. 'तुम्हारी रोशनी में' 'हुजूर दरबार' 'धीरे–समीरे' व 'लाल–पीली जमीन' में प्राकृतिक परिप्रेक्ष्य चित्राण द्वारा पात्रों की मनः भावना तथा चरित्र विश्लेषण का प्रत्यन हुआ है।जो परम्परागत–प्रकृति–चित्रण से भिन्न है। शुरुआती दौर की कुछ कहानियों प्रकृति के उपमान व्यक्ति के विशेषण रुप में स्थान–स्थान पर प्रयुक्त हुए है। कहीं–कहीं उपमानों की अधिकता के कारण कहानियों के सौन्दर्य पर आघात हुआ है। कहीं–कहीं आलंकारिक चित्रण भी उपलब्ध होता है जिसमें कुछ शिल्पगत सौन्दर्य तथा सूक्ष्म–निरीक्षण मौलिक अभिव्यक्ति का अभाव है।

"दूर क्षितिज में फैली 'लाल–पीली' चांद पर काली परत बिछती जाती है, जैसे पहले लाल रंग देकर चित्रकार उसे काले ब्रश से धीरे–धीरे पोंछ रहा हो। रात के बढ़ते हाथ शाम को दबोचने की फिकर में हैं। लाल रंग काले रंग की गोद में लुढक कर ऊंघने लगा है। पेड़ो की खिड़कियों से झांकती कुछ लाल, कुछ काली शाम, जैसे काली ऑख अभी–अभी बहुत रोकर उठी हो और झेंपकर उसने एक झीना चिलमन गिरा लिया हो। ऑखें सामने फैले मैदान से उठकर नीची बिछी सड़क पर फैलती है। एकाएक बिजली के बल्ब जल उठते है, जैसे किसी की किस्मत के बुझे चिराग एकाएक जल उठे हो। कुछ इसी अन्दाज से आज पराग का खत आया था।"[35]

" डरावना – उस परिचित कमरे की तरह जिसमें से प्रिय का वास उठा चुका हो,और सुहागरात के उस सेज की तरह, जिसके नीचे अरमानों की चिता दहकती है और जो आज पहली बार एक अनमान को उसके प्रिय के अतिरिक्त किसी पर पुरुष के साथ बांध देगी सदा–सदा के लिये.......

उदास–विरही के मुंह पर पड़ती जाड़े की पीली चांदनी की तरह या उस चूनरी की तरह जिसे उठाने वाला इस दुनिया में न रहा हो।

–यही रह गया है मेरा जीवन रत्ना के बिना........[36]

इन उदाहरणों में दृश्य–विधान अधिक लम्बे तथा निरर्थक विस्तार लिये हुए है जिससे पाठक सम्बन्ध मूल कथा से छूट जाता है।

उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' व 'हुजूर दरबार' में देशकाल अथवा प्रकृति का सजीव चित्रण हुआ हैं। इनका प्रस्तुतीकरण शिल्प अभिनव है। 'लाल–पीली जमीन' में भौगोलिक पृष्ठभूमि की यथावत् पहचान कराई गयी है। जो परिप्रेक्ष्य स्थानीयता की सही पहचान कराने में महत्वपूर्ण कार्य करता है। उपन्यास में वर्णित विशेष के पहाड़,किला,बुर्ज, काली चट्टानें, उनकों घेरने वाला कालापन ,पेड़,जमीन,मन्दिर,पीपल की सरहराहट, कुइयॉं आदि का स्पष्ट तथा सजीव चित्र चित्रित हुआ है। प्रकृति भयावहता इनमें भी दृष्टि गत होती है।

इसी प्रकार 'तुम्हारी रोशनी में' आंशिक रुप से प्रकृति चित्रण द्वारा उपन्यास में वर्णित पात्रों की बिखरी मानसिकता तनावों व अर्न्तव्यथा को उभारा गया है।

सुवर्णा की अन्तिम स्थिति उसकी वेदना तथा अर्न्तव्यथा को अधिक सघन व सशक्त बनाती हुई उभरती है– धने दरख्तों से लदी गहरी घाटी.... खामोश.....वीरान। एक आवाज ऊपर नीचे दौड़ रही है चक्करों में। कोई बैचेन चीख... एक पक्षी का अर्न्तनाद..... दरख्तों से टकराता, गिरता,उठता.......नीचे घाटी के तल तक जाता, फिर आसमान की ओर उठता हुआ"[37]

प्रकृति के संवेदनात्मक रुप के चित्रण से सुवर्णा की पीड़ा सबलतर होकर चित्रात्मक रुप में प्रस्तुत हुई हैं। राजेश जैन इस उपन्यास के बारे में टिप्पणी करते हुए लिखते है कि 'जहॉं –तहॉं वाक्य विन्यास में काव्यात्मकता की झलक मिलती है। विशेषकर जहॉं स्थितियों और प्रकृति के चित्रों को चित्रित किया गया है।

इस प्रकार मिश्र जी के कथा साहित्य में कहीं–कहीं प्रतीकात्मक रुप में प्रकृति चित्रण हुआ और कही–कही पात्र विशेष के चिन्तन के रुप में प्रकृति–चित्रण दृष्टिगत होता है।

उपाध्याय–5–कथा–साहित्य और बुन्देली संस्कृति

स्वतन्त्रता के पश्चात् साठोत्तरी दशक में साहित्य के अर्न्तगत 'आंचलिकता' रचना धर्मी विशिष्ट प्रवृत्ति के रुप में विकसित हुई तो कविता,कहानी,नाटक केअर्न्तगत बोध तथा तत्वरुप में विकास मान हुई। साहित्य के अर्न्तगत आंचलिकता का प्रवर्तन एक महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं।

वस्तुतः आंचलिकता वह लेखकीय दृष्टिकोण हैं जिसमें आंचलिक दृष्टि अपना कर वह किसी विशिष्ट अंचल या जनपद या भू–क्षेत्र या जाति (जन्मगत या व्यवसायगत) के समग्र जीवन का विशद और वैविध्यपूर्ण चित्रण करता हैं, उसमें आंचलिकता का स्वर परिवेश की सजीवता के मूल स्वर के रुप में मुखरित रहता है। 'इसके लिये वह उस जनपद या भू–भाग के भूगोल,सभ्यता–संस्कृति रहन–सहन वेशभूषा धार्मिक विश्वास, सामाजिक परम्पराएँ,त्यौहार पर्व नृत्य गीत,सामाजिक,आर्थिक स्तर,रीति–रिवाज,लोकभाषा,लोकमुहावरों,आर्थिक,सामाजिकचेतना आदि का सूक्ष्म निरीक्षण व प्रयोग करता हैं।[38] 'अतः कथा सृजन का यह विशिष्ट लेखकीय दृष्टिकोण एक प्रकार से सांस्कृतिक दृष्टिकोण हैं जिसमें कथाकार किसी विशिष्ट सांस्कृतिक ईकाई को उसकी अच्छाई–बुराई,शक्ति–अशक्ति को समग्रता से उद्घाटित करता हैं। जिसमें माटी की सोंधी गन्ध होती हैं। परन्तु सम्पूर्ण परिवेशिक प्रस्तुतीकरण में जन–संस्कृति ही प्रधान होती है और व्यक्तिगत चरित्रांकन के मूल रुप में सम्पूर्णजन संस्कृति के समष्टि बोध को परिपुष्ट और प्रतिच्छवित करते हैं।

प्रयोग धर्मी कथाकार मिश्र जी ने भी इस रचना धर्मी विशिष्ट प्रवृत्ति को अपनाया। और अपनी सूक्ष्म मर्मस्पर्शी राग–दृष्टि द्वारा बुन्देलखण्ड अंचल के सामुदायिक जीवन के नाना अछूते पहलुओं को अपने कथा–साहित्य में उद्घाटित किया और वहाँ की लोक संस्कृति अथवा जन जीवन की सबलताओं और दुर्बलताओं में उनके सांस्कृतिक व्यक्तित्व को चित्रित किया। इसे सजीव और संकार बनाने में मिश्र जी का कला लाघव प्रशसनीय हैं। उनके कथा साहित्य में बुन्देलखण्ड के त्यौहारो, लोकगीत भाषा के उच्चारण के ढंग मुहावरों, लोकोक्तियों, बुन्देली भाषा, बुन्देल खण्ड से सम्बन्धित व्यक्ति की स्वभावगत व व्यवहारगत विशेषताओं(लम्पटता, कर्कशता) नैतिक मान्यताओं आदि का उद्घाटन बड़ी ही सतर्कता व सावधानी से हुआ हैं। मिश्र जी ने पूरी प्राणवत्ता व तलस्पर्शी सूक्ष्म दृष्टि से इस सीमित क्षेत्र का चित्रण कर इस प्रवृत्ति को सार्वदेशिक बनाया हैं।

मिश्र जी के कथा साहित्य में बुन्देली संस्कृति के तत्वः–

मिश्र जी का कथा साहित्य केवल यथावत चित्रांकन की आकांक्षा से सृजित नही हैं, वह महत्तर सन्दर्भो से अनुप्राणित हैं। जो महत्तर उद्देश्य उनके समस्त कथा साहित्य में जीवन्त रेखा की तरह चित्र रुप में व्याप्त हैं। बुन्देली संस्कृति के कुछ तत्व उनके उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' 'हुजर दरबार', कहानी 'फॉस', 'कचकौंध', 'संध्यानाद', 'निरस्त' में खोजे जा सकते हैं।

बुन्देली भाषाः– आंचलिक कथा साहित्य में भाषा अपने आप में नवीन आंचलिक भाषा शैली का निर्माण करती हैं। जिसमें सामान्य जीवन में प्रयुक्त होने वाली सपाटवयानी नही होती अपितु आंचलिक वह सन्दर्भो व स्वरों द्वारा निर्मित होती हैं। मिश्र जी ने बुन्देलीखण्डी भाषा को नयी संचेतना प्रदान कर बुन्देलखण्ड अंचल की यथार्थ पहचान कराई हैं। बुन्देली कर्कशता लम्पटता और व रोगटें खड़े देने वाली भाषा 'लाल पीली जमीन' में प्रयुक्त हुई हैं। मिश्र इसके माध्यम से अंचल की कस्बाई मानसिकता की विभिन्न संश्लिष्ट पर्तो की पहचान कराते है। उनका प्रत्येक चरित्रा पात्रा उनके अनुभव संसार का कोई न कोई सूत्र पकड़कर अपनी सार्थकता प्रामाणित करता हैं। सुरेश गुंडा–गर्दी को अपना एक दर्शन बना लेता है–"अबे ओबेटी.... अगली बार जब पंड़ित का मूत पीने जाना तो उसे समझा देना, वह मुझे डोर–लोटे के साथ कुइयों में डूबाने वाला था न"। साले को बूढ़ा समझकर छोड़ दे रहा हूँ, वरना उसके लंगोट की नार को काट कर तुम तीनों नंगा बॉधता उससे..... कह देना अपने बाप से.....।[39]

मिश्र जी की भाषा में बुन्देली जन जीवन के यथार्थ से जुड़ने का प्रयास हैं। उनकी भाषा में मनुष्य के अन्वेषण की क्षमता हैं। बुन्देली भाषा की मिठास व ग्रामीण परिवेश सौंधी गन्ध 'फॉस' कहानी में मिलती हैं। "अरे.... तब तौ तुम साचऊ के भैया लगत। पहलै बना देते, अब देखो हम आय तुमाई जिज्जी और तुम भुज्जी–भुज्जी लगाय। पल्टू देखौ वे को आय बैठे। तुमाय मम्मा....।[40]

कथाकार ने ग्रामीण मानस की पैदाइशी, संस्कार शीलता के सुन्दर दर्शन कराये हैं। तथा पात्र के व्यक्तिगत और वर्गीय पहचान पर प्रकाश डालता हैं। 'निरस्त' 'संध्यानाद','कचकौंध' कहानियों में तीनों पात्रों की मनः स्थिति का फोटो ग्राफिक चित्र मिश्र जी ने खींचा हैं 'कचकौंच' के बूढ़े मास्टर के माध्यम से कथाकार ने सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक विडम्बना का प्रामाणिक दस्तावेज बुन्देली भाषा में उद्घाटित किया हैं।–" बस तनख्वाह लेते आओ और पड़े रहो। मुंह बन्द रखों। नहीं बन्द रख सकते, तो कहो, चाहो तो लिखा –पढ़ी भी कर डालो, पर यह आशा न रखो कि सुनवाई होगी ऐसा ही लड़कों का है कि खाना खाओं और पड़े रहो, तुम्हें क्या मतलत पड़ा है.....

बहुत हुआ, कुछ भी कह लो, उटल कर जबाव न देगें, पर यह न समझो कि हमारे आचरण बदल जायेंगे। पत्नी उन्हें देखते ही कहा करती है—आ गया अब खाने को! वह ही शायद सबको खाने आये है...... क्या पत्नी, क्या लड़के, सहायक डिप्टिया बी0डी0ओ और तनख्वाह बांटने वाला मुंशी। कलियुग बाहर नही, उन्हीं के अन्दर हैं, जो सबको लील जाना चाहता है और वे बेचारे त्राहिमाम्—त्राहिमाम् करते हुए उन्हें टोक रहे हैं..... ।[41]

हां,जान देव भाड़ में। तुम क्यों नही अपनी लुगाई भाड़ में झोंक आते? मस्त रहो? अरे, मस्तयाव तुम लोग अब, तुम्हारे दिन ठहरे। हमें तो बरबाद दओ। गम खाओ, तुम्हारीऊ समय आ हैं। जब तुम लोग न थे तो कैसी निभती चली आयी। वह जब तक नौकरी पै रही, तुम लोगन से दूर सो ठीक रही। गंगा मूड पैधरी थी कि एक साल और काट लेव, रिटायर हौके साथ रैहों। बुलाओखां....... सामना करा और पूछ। बिगाडवे खां तो तुम लोग आ गये, अब बनाओ भी.... अरे हे राम.... हे प्रभु.....ओखां बुलाव, नहीं तो अन्न जल छोड़ दें हो..... प्राण दै हों तुम्हारी देहरी पर..... ।''[42]

अतः कथाकार बुन्देली परिवेश के अनुरुप सार्थक भाषा का बुन्देली जन जीवन के यथार्थ को समर्थ रुप में उभारने के लिये पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया।

<u>लोकोक्तियों मुहावारें और बुन्देली शब्दाबली:—</u> मिश्र जी ने बुन्देलखण्ड के लोकजीवन में प्रयुक्त शब्दावली मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग बड़ी कुशलता के साथ किया हैं। परन्तु परिवेश को सजीवता प्रदान करने की कोशिश में शब्द चमत्कृति एवं उनकी तोड़ मरोड़ भी परिलक्षित होती हैं। परिवेश की संचेतना में उनकी शब्दावली अपनी पूरी प्राणवत्ता के साथ उपस्थित होती हैं। उपन्यास 'लाल—पीली जमीन' तथा कहानियॉ 'कचकौंध','फॉस','निरस्त','संध्यानाद' में प्रयुक्त शब्दावली,मुहावरों लोकोक्तियों का अप्रतिम संयोजन हुआ हैं इस सम्बन्ध में मिश्र जी का कलात्मक सौन्दर्य देखते बनता हैं।

<u>बुन्देली शब्दावली:—</u> अपने कथासाहित्य में मिश्र जी ने परिवेश तथा पात्र की मानसिकता की यथार्थ पहचान कराने के लिये अनेकाविध बुन्देली शब्दों का प्रयोग किया हैं। यथा— लव—तंडग,भुरकी,जटैल, चीप, थैंता, नार,टिपिर—टिपिर,दलुद्दर,झाड़े,घिनौची, कलथना,गोऊ,जंगल रपटव्वन, पासा, पड़ना, पछेलना, लौडा—पत्ती सेटना इत्यादि। ''यहॉ केवल आंचलिक' शब्दों से वातावरण की गंध निर्मित करने की कोशिश नहीं है बल्कि जाति,वर्ग, समाज, व्यक्ति संस्कार के रिश्तों को एक ऐसे मूल्यांध ढॉचे में पहचानने की कोशिश हैं जिसमें एक ह्रदय पतनोन्मुख आंतकवाद मनुष्यकी नियति को प्रभावित करने, विचलित करने में समर्थ हैं।''[43]

मुहावरें तथा लोकोक्तियॉः– जब भैसिया कहानी तो पडवै आयी, भवानी, झापड़ रसीद कर देना; तुरतदान महाकल्याण,बकरे की मॉ कब तक खैर मानएगी, पत्थरों का घूर–घूर कर देखना, लाल–पीला होना, दुनिया को चराना, उदयी वैसे मान न उनके चुदई प्रयोग से मिश्र जी ने परिवेश को सजीव करने की कोशिश की तथा बुन्देली मानसिकता को विभिन्न संश्लिष्ट पर्तो की पहचान करायी हैं।

बुन्देली,बिम्ब,प्रतीक,लोरियॉ तथा रंग की संयोजनाः– मिश्र जी ने नये–नये बिम्बों, प्रतीको,लोरियों ध्वनियों, के प्रयोग से बुन्देली संचेतना को लहराया हैं।जिसके फलस्वरुप इनके कथा साहित्य के कुछ अंश बुन्देली संस्कृति की पहचान स्थापित करते हैं। इनके कथा साहित्य में ध्वन्यात्मक,गत्यात्मक बिम्ब, सादृश्य मूलक बिम्ब,परिवेश चित्रण के बिम्ब, अमूर्त भावों के बिम्ब इत्यादि अनेक प्रकार के बिम्ब, प्रतीक, संकेत, बुन्देली परिवेश के अनेकाविध रंगों का कुशलता से समयोजन किया गया हैं। प्रतीकात्मक भाषा का एक उदाहरण दृष्टव्य हैं– बस्ती की गन्दीं नालियों में हर साल मच्छरों के झोरे आते थे..... कुछ मरते थे.....कुछ आपस में भन–भन करते जुझते रहते...... कुछ रह जाते, अगले साल मरने के लिये ये दो तीन सॉड भी छुट्टा घूमते रहते थे.... कुछ दिनों में वे भी झुराकर कहीं बैठे पगुराते होते। यह तो बस्ती का जीवन प्रवाह था.....[44] उपरोक्त उदाहरण का प्रतीकात्मक अर्थ संप्रेरित कर कथाकार ने उस बस्ती को सही परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत किया हैं। तथा बुन्देली जीवन के वर्गीय संस्कारों की गहन पहचान कराई हैं जो मिश्र जी की गहरी अर्न्तदृष्टि के परिचायक हैं।

उपन्यास 'हुजूर दरबार' में मिश्र जीने बुन्देली अंचल मे प्रयुक्त होने वाली लोरियों को भी सर्जनशील पुट देकर अंचल की वास्तविक रागात्मक तथा भावात्मक पहचान कराई हैं–

सो जा, सो,जा, बारे बीर
जमुना केतीर...... ।[45]

'लाल पीली जमीन' उपन्यास में मिश्र जी ने सांस्कृतिक दृष्टि से बस्ती की भूमि की भी पहचान कराई हैं। संस्कृति और तनाव पूरे उपन्यास में आघोपांत प्रतीकित करता हैं। और यह तनाव चरित्रों के माध्यम से भी दिखायी देता हैं।

बुन्देलखण्ड का यथार्थ परिवेश पर्व त्यौहार और रीतिरिवाजों का चित्रणः–

आंचलिक उपन्यास के केन्द्र में वातावरण उपस्थित रहता है। यह वातावरण समस्त स्थानगत तथा कालगत विशेषताओं को उनकी सूक्ष्मता के साथ समेटकर उभरता है और उसमें स्थानीयता प्रदान करने के लिये वहॉ के रीति रिवाज खान–पान,पर्व

त्यौहारों के द्वारा वातावरण की अचीन्ही और सघन अनुभूति दी जाती हैं। विशेषकर 'लाल–पीली जमीन' उपन्यास मिश्र जी ने ठोस· बुन्देलखण्ड के कस्बे के परिवेश का चित्रांकित किया हैं। कस्बे के यथार्थ का कलात्मक चित्रण मिश्र जी के अनुभव की मजबूत पकड़ का अहसास कराता हुआ समूचे स्वरुप के शब्दांकित करता हैं।

शहर में होली और दीपाली के प्रसंग के जीवन मूल्यों के क्षय की वास्तविकता का उद्घाटन करते हैं– "त्यौहार जो ठीक उसी जगह का लगता था, वह होली का था।"[46]

सुना जाता था "कि दशहरे की तरह होली में भी लोग अपने दुश्मनों के भी गले लगते हैं, पर जैसा कि दशहरे में वैसा ही होली में भी, सिर्फ छोटे थे जो बड़ों की घर जाते थें।"[47]

" वे ही त्यौहार या त्यौहारों के वे ही रुप उनके ज्यादा नजदीक थे जहॉं यह किट किटाहट थी, ओजस्वी हरकतें थी। जुआ, कीचड़ उछालना नकेल छेदना, काली मॉं के मन्दिर पर बलि देना ,इसलिये उनके खून मे था।"[48]

भारतीय जीवन के मूल्यात्मक संस्कार और आचरण कस्बे में नही थें। मिश्र जी में कई प्रसंगों के माध्यम से इस को उभारा हैं– "ऐंठ वाला वहॉं मर्द था, अधेड़ अपने लड़कों की जवानी की तरफ बेसब्री से ताकते रहते ..... कब वह बड़ा होकर अपमानों का हिसाब चुकाएगा।"[49]

मिश्र जी ने बुन्देल अंचल की लोक संस्कृति का गहरा पैना और प्रामाणिक(स्वानुभूत) चित्रण किया हैं। इस संस्कृति के सम्पूर्ण सांगचित्र कहीं खण्ड के रुप में (कहानियों) तथा कहीं पूर्ण रुप में (उपन्यास) में प्रतिबिम्बत होती हैं।

उपअध्याय 6– कथा साहित्य और युग–बोध

एक सुधी रचनाकार अपनी सर्जना में युग रक्त का संचरण करता है,तथा उसमें युग यथार्थ तथा ईमानदार अनुभूति के उस वास्तविक रुप को प्रस्तुत करता हैं,जिसका वह दृष्टा,भोक्ता होता हैं। आज रचनाकार की कृतियों की प्रासंगिकता की पड़ताल परिवेश के सन्दर्भ में रचनाओं में व्यक्त युगबोध से होती हैं, क्योंकि आधुनिक कृतियों में व्यक्ति बोध युगबोध,भावबोध और नयी संवेदनाओं को प्रस्तुत किया जाता हैं तथा अनुभव की प्रामणिकता और समकालीन प्रश्नों पर जोर दिया जाता हैं। देखना होता है कि लेखक के समसमायिक विषयक अनुभव उसकी रचनाओं में कितनी गहनता,प्रखरता तथा भाव से अभिव्यक्त होते हैं। तथा उसकी श्रेष्ठ रचना के मूल का निकष क्या हैं। यदि कोई कृति मौलिक होते हुए भी युग और जीवन के बुनियादी प्रश्नों से असंम्पृक्त रह जाती है, तो उसे श्रेष्ठ कृति नहीं माना जाता हैं।

कथाकार मिश्र जी वर्तमान के यथार्थ को सजग रुप से भोगने और उस भोग से जीवन और जगत के नये सन्दर्भो को देखने-परखने जीने व उसे व्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता रखते है यही कारण है कि उनका लेखन समकालीन समस्याओं और प्रश्नों को उभारता है तथा उनकी संवेदना समसमायिक सामाजिक ,राजनीतिक और आर्थिक सन्दर्भो से जुड़ती हैं वर्तमान स्थिति का यथार्थ ज्ञान,परिवेश और समाज की जटिलतम एवं गहनतम समस्याओं से उद्‌भूत होकर समकालीन जीवन संस्कारित होता हैं। वे वर्तमान मनुष्य की जटिल मानसिक अनुभूतियों, बौद्धिक चेता के सूक्ष्मतम आयामों को पूरी सश्लिष्टता से अभिव्यक्त करते हैं तथा वर्तमान परिवेश के भयावह यथार्थ के दबावों के फलस्वरुप व्यक्ति की घुटन,तनाव,संवेदन हीनता, जीवनगत विसगंतियों, विषमताओं के यथार्थ रुपायन के बीच मानवीय तत्वों को भी पुनः प्रतिष्ठित करते हैं। कथाकार अनुभव तथा नयी प्रयोग धर्मिता से युक्तायुक्त हैं।

इसलिये वे समाज के अनवरत परिर्वतनशील परिप्रेक्ष्यों एवं साहित्य के बदलते नव प्रवाहों के अनुरुप अपनी रचनाओं का प्रणयन करते हैं। स्वातंत्रयोत्तर काल के जिस परिवेश की घुटन तनाव संशय पीड़ा को कथाकार चित्रित करता हैं। वह मूलतः आधुनिक भारतीय परिवेश से बंधा हुआ हैं यह परिवेश व्यक्ति के व्यक्तित्व के बहुविध कोणों को उभार कर उसे नयी अर्थवत्ता प्रदान करने के लिये कियाशील रहता हैं। मिश्र जी परिवेश के वीभत्स, भयावह व मंगलमय आदि बहुविध कोणों के बीच वर्तमान मानव की स्थितियों का अहसास करा उसके जीवन को इन सब स्थितियों से उबार उसे नवीन दिशा व अर्थवता प्रदान करते हैं। मानव की मानव चेता पर प्रभाव डालने वाली ये स्थितियॉ युग बोध की परिचायक की परिचायक हैं।

"आज का उपन्यासकार ऐतिहासिक,सामाजिक या राजनीतिक उपन्यास नही लिखता, वह उनके माध्यम से आधुनिक व्यक्ति चेतना को परखता, प्रतिष्ठित करता और उनका मूल्यांकन करता हैं।" [50]

उनकी रचना प्रकिया में समसामायिक वर्तमान युग की चेता समस्याओं और निकायों के अनुरुप संवेदना, दृष्टिकोण,विचार,प्रतिकिया,अभिव्यंजना का कुशल संयोजन होता हैं। वे परिवेशीय परिस्थतियों द्वारा अनुभवित विश्व के अबाध,अथाह गतिशीलरुप को विशिष्ट दृष्टिकोण,लक्ष्य अथवा,उद्देश्य के अनुसार अभिव्यक्ति प्रदान करते है। यह निकष उनके कथा साहित्य की महत्वपूर्ण विशिष्टता हैं।

परिवेश और सामाजिक स्थितियों ने व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण की प्रकिया को किन रुपों में अवरुद्ध और विकसित किया, मिश्र जी के विशिष्ट दृष्टि कोण व्यक्तित्व निर्माण प्रकिया को बड़ी सूक्ष्मतः गहनता,सजीवता,स्वाभाविकता के साथ चित्रित करता हैं, तथा इन्हीं के बीच वे मानवीय मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठापना करते हैं। वर्तमान परिवेश की गहनतम तथा जटिलतम अनुभूतियों,संवेदनाओं के उद्देश्यों को सम्प्रेषित करने के लिये भाषा के जिस व्यंग्यात्मकता, प्रतीकात्कता बिम्बात्मकता, अभिव्यंजना अथवा विस्फोटन रुप की आश्यकता होती हैं उनकी भाषा परिवेश समय, परिस्थिति जीवनगत स्थिति के अनुरुप उन्हीं विशेषताओं का निर्वाह करती हैं।

वे परिवेश की यथार्थता को भोगकर कथ्य,उद्देश्य शिल्प तथा शैली बिम्बविधान एवं भाषा में नये प्रयोगकर ,अपने कथा साहित्य को युगबोध, भावबोध तथा नये संवेदना के अनुरुप ढालते हैं। इसके साथ ही स्वस्थ जीवन मूल्यों व आशावादी जीवन दर्शन के धरातल पर वर्तमान मानव के अन्दर वर्तमान तथा भविष्य के प्रति प्रगाढ़ आस्था की भावना को विकसित करते हैं और राष्ट्र उन्नति तथा सामाजिक विकास के प्रति अपनी निष्ठा में अपन महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

वे स्वातंन्त्रोत्तर कालीन नारी के सूक्ष्म भावबोधों जीवनगत आधुनिक चेता को व्यक्तिगत व सामाजिक धरातल पर सशक्त रुप अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। उनके नारी पात्रों में स्वाभिमान, युग बोध, दृढता, परम्परा का शोधन, आगे बढ़ने की ललक,जीवन के वैविध्य की स्पृहा के साथ मानवीयता इत्यादितत्व मिलते है उन्हें युगीन परिवर्तनशीलता के अनुकूल गहरी संवेदना प्राप्त हुई हैं। नारी स्वतंत्रता ,समानता,स्वालंबन आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों को मिश्र जी ने वर्तमान यथार्थ के धरातल पर उभारा हैं। पारिवारिक स्थितियॉ पुरुषों के व्यवहार से त्रस्त होकर भी उनमें प्रगतिशीलता परिलक्षित होती हैं।

अतः मिश्र जी ने अपने अनुभावित संसार तथा संवेदनाओं के माध्यम से स्वातंत्र्योत्तर काल में परिवर्तित मानव मानसिकता उसकी व्यथा जीवन के हर पहलू को

स्वयं भोगा और उसके नये संवेदनाओ, के माध्यम से प्रस्फुटित किया तथा नये मानव जीवन और नये आयामों की खोज की।

1. डॉ0 विजया, गोविन्द मिश्र के उपन्यास में 'नारी' गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम',(संपा) चन्द्रकांत वाडिवडेकर (वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली 1990) पृ0 56
2 गोविन्द मिश्र गिद्ध(कहानी) पृ0 117
3. राजेन्द्र यादव,उपन्यास स्वरुप और संवेदना,(वाणी प्रकाशन प्रथम संस्क 1997) पृ0 15
4 गोविन्द मिश्र 'तुम्हारी रोशनी में,(राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्क 1985)पृ0 86
5.(संपा) चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम चन्द्रकांत वादिवडेकर (वाणी प्रकाशन,नयी दिल्ली 1990) पृ0 281
6. राजेन्द्र यादव उपन्यास 'स्वरुप और संवेदना' पृ0 संस्क (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1997) पृ0 14
7. चन्द्रकांत गाडिवडेकर गोविन्द मिश्र का 'औपन्यासिक' संसार (भूमिका प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 86
8 वही पृ0 98
9. श्रीमद् भगवदगीता
10. एम0 हिरियन्ना 'भारतीय दर्शन की रुप रेखा' भूमिका पृ0 20
11. गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार किताब घर प्रकाशन दिल्ली प्रं0 संस्क 2000 पृ0 176
12. वही
13. वही वही
14. गोविन्द मिश्र धीरे समीरे(राधाकृष्ण दिल्ली प्र0 संस्क 1996 पृ0 162
15.वही पृ0 203
16.वही पृ0 204
17. सृजन परिप्रेक्ष्य–शिशिर बसन्त 2002 पृ0 95
18. गोविन्द मिश्र वल्लभ सिद्धांत 'संवाद अनायास' (राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 1993 पृ0 94,95
19. डॉ0 राजमल बोरा 'हुजूर दरबार बनाम कलम–कुर्सी दरबार गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम(संपा) चन्द्रकान्त वाडिवेडकर (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0145
20. वही पृ0 146
21. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार'(नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1981) पृ0 327
22. गोविन्द मिश्र 'पॉच ऑगनों वाला घर'(राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क–1995) पृ0 122
23.वही पृ0 225
24वही पृ0 225
25.वही पृ0 271

26. वही — वही

27. कथाक्रम जनवरी–मार्च 2003 — पृ0 11

28. गोविन्द मिश्र 'फूल......इमारतें और बन्दर' — पृ0 301

29. गोविन्द मिश्र 'गोबर गनेस' निर्झरिणी भाग 2 — पृ0 सं0 69

30 वही — पृ0 69

31 गोविन्द मिश्र 'धाँसू' — पृ0 87

32.वही — पृ0सं 90

33 गोविन्द मिश्र 'बहुधंधीय' निर्झरिणी–2 — पृ0सं 50

34 गोविन्द मिश्र जनतन्त्र निर्झरिणी–1 — पृ0 सं 300,301

35. गोविन्द मिश्र 'संगीत और बर्तनों की खनक' निर्झरिणी भाग1 — पृ0 सं0 27

36. गोविन्द मिश्र 'उड़ते पेज की बहकी बातें' निर्झरिणी भाग 1 — पृ0 55

37. गोविन्द मिश्र उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में' — पृ0 अन्तिम

38 (डॉ0) निरुपमा अशोक' 'नयी कहानी में आंचलिक तत्व' (सुलभ प्रकाशन) लखनऊ प्र0 संस्क 1996

39. गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' — पृ0 229

40 गोविन्द मिश्र 'फॉस' — पृ0 227

41. गोविन्द मिश्र 'कचकौंध' निर्झरिणी भाग 1 — पृ0 279

42. गोविन्द मिश्र 'संध्यानाद' निर्झरिणी भाग 2 — पृ0 187

43. डॉ0 परमानन्द श्रीवास्तव गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम',(संपा) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर — पृ0 104

44.गोविन्द मिश्र 'लाल–पीली जमीन'

45.गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' — पृ0 4

46.गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' — पृ0 63

47.वही — पृ0 64

48 .वही — पृ0 65

49. गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' — पृ0 65

50 (डॉ0) पुरुषोत्तम दुबे 'व्यक्ति चेतना और स्वांतत्र्योत्तर' हिन्दी उपन्यास — पृ0 170

पंचम अध्याय– मिश्र जी के उपन्यासों का शिल्प–सौष्ठव

हिन्दी में शिल्प शब्द का अर्थ बाजीगरी,कारीगरी तथा विधि का अभिप्राय प्रणाली। अतः शिल्प विधि के अर्न्तगत वे समस्त तथ्य आ जाते है जो उपन्यास के रुप का निर्माण करते हैं। उपन्यासकार का दर्शन, चिन्तन तथा विषय वस्तु शिल्प द्वारा ही व्यक्त होती हैं। जिस प्रकार वायु का आभास हर जगह होता हैं परन्तु उसका प्रत्यक्षीकरण नही हो पाता उसी प्रकार शिल्प का प्रत्क्षीकरण नही हो पाता। किसी भी कृति का श्रेष्ठतव उसके शैल्पिक गठन पर निर्भर करता हैं। मिश्र जी के उपन्यासों की कृतियों का शिल्प सौष्ठव उनकी रचनाओं को उल्लेखनीय बनाता हैं।

उपाध्याय 1–भाषा– सौष्ठव

मनुष्य के भावों और विचारों की अभिव्यिक्ति भाषा के रास्ते होती है।अतः भाषा भावों और विचारों की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम साधन है। प्रकृति में भी अभिव्यक्ति की यह प्रकिया निरन्तर चलती रहती है, बादल बिजली की तड़कन और बरखा से ,पेड़ पत्तों की सरसराहटों से , हवा अपनी गत के वेगों से नदी अपनी लहरतरंगों से , पक्षी चहचहाहटों से अपने भावों को व्यक्त करते है। यही कारण है कि साहित्कार प्रकृति के इन सूक्ष्म संकेतों को समझ इनसे अपनी संवेदनाओं,भावों, विचारों, स्थितियों, परिस्थितियों ,का मिलान कर प्रतीकात्मक, बिम्बात्मक शब्दों द्वारा रचना का श्रंगार करते हैं और उसे साहित्यक पुट देते है । भाषा मुनष्य की सामाजिकता को पुष्ट करती है साहित्यकार द्वारा जीवन्त अनुभव सन्दर्भ,जीवन के विभिन्न पक्ष,मूल्यों के नित बदलते सवरुप कलात्मक भाषा के रास्ते भिन्न भिन्न साहित्यक विधाओं में रुपबन्ध होते है ।उपन्यास तथा कहानी कथा साहित्य की दो लोकप्रिय विधाएँ है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा इनकी भाषा सहज और सरल होती है सहजता और सरलता उपन्यास और कहानी की भाषा की मुख्य कसौटियॉ है। कथा साहित्य की इनदो विघाओं ने समाज के अनवरत परिवर्तनशील परिप्रेक्षों एवं साहित्य के बदलते नव–नवीन प्रवाहों को सहजता और सरलता के साथ अपने अनुकूल रुपबन्ध करने का अथक प्रयास किया है । मिश्र जी ने अपने कथा साहित्य में अपने संवेदनाओं को स्नायु तन्तुओं में प्रवाहित युग रक्त को, तथा अपने

अनुभव से निकले विजन को, कलात्मक भाषा के माध्यम से तराशा है। उनकी सृजन यात्रा के विभिन्न दौरो को देखकर अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनकी सृजन प्रक्रिया विभिन्न आधुनिक बोध से सम्पृक्त हो निरन्तर विकासमान हुई है। बदलते साहित्य प्रवाहों में उनकी संवेदानाओं और भाषा के बदलाव देखे जा सकते है। मिश्र जी ने स्वयं लिखा है कि किसी भी लेखक की भाषा में उसकी संवेदना के ताप को महसूस किया जा सकता है,जैसे कि नाड़ी की चाल से हृदय की स्थिति का पता लगता है। रचना–यात्रा के विभिन्न दौरो में आए भाषायी बदलाव भी लेखक के संवदेनात्मक परिवर्तनों से जोड़कर रखे जा सकते है......... जैसे कि समुद्र के पानी का खारा रंग मौसम का अंदाजा देता है।[1]

मिश्र जी की भाषा के विविध रुपः–

मिश्र जी 1965 से लगातार अपने उत्तरोत्तर स्तरीय लेखन के लिये प्रसिद्ध रहे हैं। । अड़तीस वर्ष की इस दीर्घविधि में मिश्र जी ने "वह।अपना चेहरा"(1969),'उतरती हुई धूप'(1971),"लाल पीली जमीन"(1976),"हुजूर दरबार"(1981),"तुम्हारी रोशनी में"(1985),"धीरे समीरे"(1988),"पांच आंगनो वाला घर"(1995),और "फूल इमारते और बन्दर (नव प्रकाशित)। आठ उपन्यास तथा "नए पुराने मॉ–बाप"(1973), 'अन्तःपुर(01976), 'धॉसू'(1978), 'रगड़ खाती आत्महत्याये"(1978), 'अपाहिज"(1981), 'खुदके खिलाफ"(1982),- 'खाक् इतिहास"(1986), 'पगला बाबा"(1988), 'आसमान कितना नीला"(1992) दस कहानी संग्रहो की रचना की है। रचनाकाल की लम्बी कालावधि तथा अनुभव जगत की निरन्तर विकासशीलता के कारण उनकी रचनाओं में भाषा की विविधता स्पष्टतः झलकती हैं कथाकार का रचनात्मक संसार अपने व्यापक सन्दर्भ में जीवन और समाज से इतना जुड़ा हुआ हैं कि उसे अपने परिवेश से अलग देखना या परखना सम्भव नहीं हैं। मेरे लिये भाषा अलग से नहीं आती । वह परिवेश के उसे टुकडें से या फ़िर भाव वेग से इतनी जुडी होती है कि उसका अपना कोई अलग अस्तित्व नही दिखता।"[2] " किसी भी रचना में जो सही मायने में सृजनात्मक रचना है.... उसमें विषय,परिवेश ,भाषा उस समय की लेखकीय संवेदना आदि इतने गुंफित होते है कि उन्हें अलग–अलग करके नही देखा जा सकता और न ही उनसे अलग–अलग छेड़छाड़ की जानी चाहिए।[3] मेरी रचनाओं में निरन्तर नए–नए और परिवेश आते गए है। यह इसलिए कि जहॉ कही भी झलकते दुःखों,तक़लीफों मे स्वयं को डाल देना यह मेरी सृजनात्मकता की कोशिश थी। फिर अगर बात किसी जीवन खण्ड को पूरेपन में समझने उठाने की है तो फिर उसे उसके परिवेश और उसकी भाषा से अलग करके नही देखा जा सकता।[4] मिश्र जी के कथनों ओर कथा साहित्य के आकलनों से पता चलता है कि उनके कथा साहित्य की भाषा पात्रः और परिस्थितियों के निकट हैं कुछ उपन्यासों और

कहानियों मे बुन्देली तत्व और आंचलिकता की गंध है। कुछ की भाषा पात्रों की मनोवृत्तियों के अनुरुप हैं और यथा तत्व वादी तथा सजीव वातावरण उपस्थिति करने की क्षमता रखती है। मिश्र जी शब्दों की कलाबाजियों में विश्वास नही रखते, उनका मानना है कि शब्द जाल के नामपर साहित्य ज्यादा दिन नही टिक सकता। आत्मा की अभिव्यक्ति के लिये ही हम शब्दों को उठाऍं मस्तिष्कीय कला बाजी के लिये नहीं, आत्मा की आवाज टोहते हुए ही हम शब्दों तक पहुँचें। जो बात हमारे भीतर से नही उठ रही हो, उसके लिये शब्दों का इस्तेमाल न करें।[5]

मिश्र जी के उपन्यासों तथा कहानियों मे भाषा के मुख्यतः निम्नलिखित रुप मिलते है।

उपन्यासों की भाषाः–

मिश्र जी उपन्यासों में विषय के दोहराव से बचे हैं। उन्होने अपने प्रत्येक उपन्यास में नवीन परिवेश ,नवीन प्रकृति और स्वभाव के चरित्रों को चुना है। जिसके लिये इन्होंने खास परिवेश की खास शब्द–सम्पदा, माणिक मुहावरों का प्रयोग किया हैं। उनके प्रथम उपन्यास वह । 'अपना चेहरा' में महानगरीय परिवेश मे सरकारी दफतर मं कार्यरत एक छोटे अफसर के लिये जिस सहज भाषा का प्रयोग हैं उससे उनके भाषायी कौशलका पता चलता है।नायक के द्वन्द्व का एक उदाहरण दृष्टव्य है– इस बडे शहर में मैं कितना छोटा था, एक भुनगा भी उस वक्त मुझे खुद से बड़ा लगता। मैं ग़लत जगह पर था जहॉ के तौर तरीके फर्क थें, या मैं ही सब कुछ के नाकाबिल था...केशवदास की हमदर्दी हासिल करने के नाकाबिल और उससे भिड़ने के भी नाकाबिल....[6]

मिश्र जी के भाषायी कौशल पर टिप्णी करतेहए चन्द्रकान्त बांदिवडेकर जी ने लिखा है कि 'खुंरदरे यथार्थ को संवदेनात्मक स्तर पर सम्प्रेषित करते समय गोविन्द जिस सूक्ष्म भाषिक क्रीड़ा और कौशल का परिचय देते है और उसमे जो उत्स्फूर्तता होती है, उस प्रकार की तीव्र अनुभूति की प्रतीति देने वाली भाषा बंहुत कम गद्यकार लिख पाते है। कवि रवीन्द्र नाथ त्यागी लिखते है कि मैंने रात ही आपका उपन्यास वह।अपना चेहरा खत्म किया । बड़ी खूबसूरत किताब लगी । उसमे आपका स्वाभाविक उन्मुक्त व्यक्तित्व बेहद झलकता है। कथन और शिल्प में कसाव हैं उपमाऍं तो बेहद ताजी स्पौंटेनियस और इर्स्टिक्टिव हैं कहीं–कहीं तो कवि हो गए हैं।[7] उपन्यास में नौकरशाही परिवेश मे एक अफसर का भ्रष्टाचारी विद्रुपता में आना दिखाया गया हैं उनके दूसरे उपन्यास 'उतरती हुई धूप' पात्रों का आन्तरिक तनाव,धुटन भाषा और अनुभव दोनो स्तरों पर व्यक्त हुआ हैं पात्रों के आत्मालाप तनाव के प्रसंग दृष्टव्य हैं 'उतनी बड़ी काया मोम बरकर पिधली जा रही थी और पिधल पिधलकर इसके ऊपर चू रही थी... टप....टप यह साफ–साफ महसूस कर सकता था। इसे अपना सारा कुछ फिर तुच्छ लगने लगा था

इसके सामने वह कितनी बड़ी ...... कितनी ऊँची थी । उसके सामने यह सिर्फ सतह पर रेंगता हुआ एक कीड़ा था और वह ...समुद्र की भीतरी तह से डुबकी लगाकर निकलता हुआ एक बहुत बड़ा व्यक्तित्व ... देवलोक की कोई चीज। उसकी हर चीज कितनी पवित्र थी और उसकी पवित्रता वह खुद तो महसूस करती ही होगी उसने इसे भी महसूस करा दी थी पोर–दर–पोर..... अलग –अलग झटकों में तो सैकडों बार करायी होगी।[8]

'त्वदीयं वस्तु गोविन्दम्'....... वह जैसे नशे मे अस्फुट से स्वरों मे गुनगुना रही थी । यह कुछ नहीं समझ पा रहा था..... समझना और सोचना होता भी क्या है इसके आगे.....[9] 'मांफ कर दो " मेरे देवता'..... जीवन हमें भ्रष्ट करें उसके पहले यह पूजा हम कर लें.... यही अच्छा हैं..... यही अच्छा हैं ....[10] " भाषा पात्रों के द्वन्द्व और जटिलताओं मानसिकताओं की ओर संकेत करती हैं । 'भाषा के स्तर पर लेखक ने पुराने ढर्रे को काटा हैं, उपन्यास में बिखरी हुई स्थितयॉ एक विशेष प्रकार की मानसिकता की ओर संकेत करती है और भाषा आंतरिक तनाव और धुटन को केवल स्वागत कथन बनाकर छोड़ जाती है।[11]

"लाल पीली जमीन" उपन्यास में मिश्र जी बुन्देलखण्ड के क्षेत्र चरखारी और बांदा कस्बे के परिवेश के खुरदरे यथार्थ को महाभयानक अंधस्थिति को चित्रित करने के लिये जिस कस्बाई परिवेश की हिंसा निर्मम, रोंगटे खड़े कर देने वाली गुडई भाषा का प्रयोग करते हैं वह वहॉ के समाजिक जीवन की कर्कशता की जीती जागती तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। उपन्यास की प्रतीकात्मक ,लाक्षणिक अमिधात्मक भाषा कस्बे के समाज की स्थितियॉ परिस्थितियों ,दशाओं तथा वहां के मनुष्यों की हालत की पड़ताल कलात्मक ढंग से करती हैं लाक्षणिक तथा प्रतीकात्मक भाषा के उदाहरण दृष्टव्य हैं।"बस्ती की गन्दी नालियों में हर साल नये मच्छरों के झोर आते थे ....कुछ करते थें... कुछ आपस मे भन–भन करते जूझते रहते..... कुछ रह जाते, अगले साल मरने के लिये । यह दो तीन सॉड भी छुटटा धूमते रहते थें ..... कुछ दिनों में वे भी झुराकर कही बैठे पगु रांते होते। यह तो इस बस्ती का जीवन प्रवाह था... सतत जीवन प्रवाह ,"[12] उपन्यास में प्रयुक्त बुन्देली शब्द, मुहावरे कुछ सूक्तियॉ बुन्दली परिवेश चरित्र और रचना को स्वाभाविक बनाते है जैसे चीप,कुइयॉ,खरी दोपहरी, अधस्ता, सौकर, पाटी बोरका, लौंडा पत्ती, लौडे लपाड़ों, कलेवा, गरिया,झाड़ झॉखाड,नाटपरे,कीरा,सरग,ढिंगरा धिना,पथरौटे ,गोर ,नार, भिनसारे, लिडैयों, कुलिया,लतिया, धडौची,पौर,गहने–गुरिया डंडौत ,लौडियाबाजी टाहक–टैया धौस डंडपेल,पन्हैया, गड़ई अटारी इत्यादि। मुहावरें और कहावतें– चौकड़ी भरते बछड़े को हांकना, वक्त वेवक्त पित्त की तरह भटकना,सूधी गैल धरना तुरन्त दान महाकल्याण,ढिंगरा लगी गाय जाएगी कहॉ लौटकर धर औरंग्गी, चट मंगनी पट ब्याह,बरैया के छत्ते को छेड़ना,पत्थरों का धूरना,एक ही थाली के चट्टेबट्टे सॉस धौकनी

सी चलना इत्यादि प्रयोग रचना में स्थानीयता का रंग भरते है। भाषा की प्रयोगवादिता के लिये सुप्रसिद्ध लेखक अज्ञेय जी ने उपन्यास की भाषा पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि "इस उपन्यास की भाषा ने मुझे बहुत आकृष्ट किया । गोविन्द मिश्र के दूसरे उपन्यासों के बारे मे यह बात नहीं कहूँगा। इस उपन्यास ने बहुत से ऐसे शब्द हिन्दी को दिए है जो ज्यादा असानी से आज की साधु हिन्दी ग्रहण कर सकती है।[13] भाषा की दृष्टि से इस उपन्यास की यह महत्वपूर्ण दिन रहा। उपन्यास में प्रयुक्त सूक्तियों ने भाषा को कलात्मकता प्रदान की है जैसे– बदले के लिये किया गया हर काम एक नया वृत पैदा करता है।[14] क्या जिन्दगी निशानों के अलावा कुछ नही।[15]
संस्कृति तो सिर्फ उम्दा उम्दा चीजों का नाम है।[16]
हम मरने के बहुत पहले ही मर चुके होते है।[17]
उपन्यास 'हुजूर दरबार' में स्वतन्त्रता प्राप्ति काल की पृष्ठभूमि में ऐतिहासिक परिवर्तन राजतन्त्र का प्रजातन्त्र में विलीनीकरण, दोहरे भाव से जीती मानसिकता परिवेश की टकराहट से चूर व्यंक्ति की यातना को चित्रित करने के लिये मिश्र जी ने भाषा का प्रयोग जिस स्तर पर किया है। वह बडे ही था मार्मिक ढंग से पात्रों के संत्रास, राजनीतिक गतिविधियों का लेखा– जोखा प्रस्तुत करती है–"रियासतें छिनी तो कुर्सियॉ चलायमान हो गयी। जब चाहे जहां रोप दो और दरबार चालू। सबको भले ही न सुनाई दे पर उनहे तो जरुर सुनाई पड़ता है। जिनके लिये दरबार लगाया जाता है। भावना से बात हो जाती है। जो दरबार बोलता हैउसे भाव कहते हैंभावों को सुनने समझने के लिये आदमी को काफी पहले से पकड़ना पड़ता है उसे तैयार करंना होता है।...... धीरे –धीरे करके।पहले अवचेतन को वश में करने का सिलसिला शुरु किया जाता है जब व्यक्ति भाव पकडने लायक हो गया तब चाहे जहां कुर्सी रोप कर उसकी पेशी करा ली।"[18]

गोविन्द जी अप्रस्तुत विधानों का उपयोग करने मे बहुत ही कुशल है। भाषा न ये भाव बोध और पुराने भाव बोधें के बीच तैरती नूतन श्रंगार प्राप्त करती है और लेख का कथ्य प्रासंगिक, सशक्त और स्वाभाविक नये आयाम के साथ प्रस्तुत होता है। 'कथात्मकता गोविन्द मिश्र के लेखन का गुण हैं उस स्थूलता पर आ जाने पर उनके हथियार पैने हो जाते है। और भाषा उनकी गुलाम हो जाती है उनकी भाषा में एक अनगढ़ जीवतंता और भोलापन है। हिंसा और आतंक का सूक्ष्म प्रभाव उत्पन्न करते समय भी उनके शब्द कठोर और आक्रामक न होकर भोले और कोमल हैं परन्तु प्रभाव में अचूक। रोचकता,रवानी और ताजगी पूर्वद्धि के विवरणों में बहुत हैं ,और डिटेल्स के रचाव में एक गहरा इन्वाल्वमेंट । पात्रों की नियति में कथाकार की लेखनी एक संवदेनशील ऑख की तरह काम करती स्थितयों की विवेचक हो गयी लगती हैं।[19] इस उपन्यास में

अनेक कथन प्रणालियों तथा अनेक मुखाी अनुभव निवेदन प्रणालियों के प्रयोग से रचना के अनेक धटक व्यामिश्र और उलझन पूर्ण लगते है। परन्तु भोपाल में इस विषय पर बातचीत के दौरान उन्होने इस बात की टिप्पणी करते हुए मुझे बताया था कि भूतकालीन विवरणों के बावजूद रचना की वर्तमान स्थितियों को वजनदार बनाने के लिये अभिव्यक्ति इन माध्यमों की मॉग करती थी, इसलिये इनका प्रयोग आवश्यक था। 'हुजूर दरबार' उपन्यास में भी चरित्र और परिवेश के अनुसार यत्र–तंत्र बुन्देली शब्दावली प्रयुक्त हुई हैं जैसे जटैल, भुरकी,चेले–चपाडी, भैरों बाबा, रडीबाज, सुरसुरी,बर्राता, झरैया, किल्लत, भोडर,लानई,कऊ,खाबे जौई,आय,जैसन,नई,ढिरगने,धरै,फिरियों,लिवा इत्यादि। सूक्ति और प्रतीकात्मक भाषा का उदाहारण भी दृष्टव्य है– जहर जहर को काटता है।[20]
प्रतीकात्मक भाषा– उमा के गाल पुराइन के पत्तों जैसे चिकने थें मेरी उंगलियॉ उन पर से फिसली फिर होठों की कोमल–कोमल पखॅुडियों से झुलसकर वापस लौट आयी।[21] उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में' आधुनिक नारी के सोच के अनेक अनछुए पहलुओं ,प्रेम के नवीनतम रुपतथा पात्रों के मानसिक अर्न्तद्धन्द्ध भावनात्मक पहलुओं को चित्रित करने के लिये जिस भाषा का प्रयोग किया है। उसमें काव्यात्मकता और चित्रत्मकता झलकती है।प्रकृति चित्रण में प्रतीकात्मक भाषा प्रयोग है। और उपन्यास में प्रतीकों को पात्रों की सवंदेनाओ से जोड़ा गया हैं। उपन्यास की भाषा पर टिप्पणी करते हुए विष्णु प्रभाकर ने लिखा हैं क्रमशः आपने प्रकृति को जो प्रतीकों के रुप में इस्तेमाल किया है वह बहुत अच्छा लगा यद्यपि कही –कहीं सयासता आ गयी है।[22] 'धीरे समीरे' उपन्यास में मिश्र जी ने एक अलग फलक को उठाया हैं। अलग–अलग प्राप्त और अलग –अलग भाषा भाषी यात्री जो एक महीने 10 दिन की ब्रज चौरासी कोस की यात्रा में आए हैं उन यात्रा में आए चरित्रों के तक सुखों–दुखों, मनोवस्थाओं , आपसी सम्बन्धों की विविधिताओं उनकी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं को मूर्त रुप देने के लिये सशक्त और कलात्मक भाषा का प्रयोग किया हैं साथ ही ब्रजसंस्कृति के परिवेश से जुड़ी अनेक किवदंतियों, आख्यानों, मिथकों के प्रयोग से रचना के परिवेश कों जीवंतता प्रदान की है यही कारण हैं कि यात्रा पात्रों से अधिक प्रभावशाली बनकर पाठक में उतरी हैं उपन्यास की पात्रा सुनंदा के अन्तःव्यथा की कुछ पक्तियों का उदाहरण प्रस्तुत हैं "जीने की अनुभूति भी सीधी–सीधी नहीं.... जैसे किसी लम्बे स्वप्न के बीच हो वह,सरक रही हो ,और अपना सरकना भी देख रहीहो रोज सुबह जागना रात लुढक जाना। एक यही अनुभूति होती है इन दिनों। हर चीज गुजर रही है, बीत रही है... सामने का सब कुछ वह स्वयं भी ।कभी–कभी गुजरने की गति काफी तेज, जैसे सपने में हो जाती है । वह सचमुच जीवित है।– यह सोचने के लिये काफी जोर देना पड़ता है सुनंदा को ।अपना जीना यथार्थ नही लगता।"[23] इस उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए निर्मल वर्मा ने लिखा है कि "मुझे तुम्हारा यह उपन्यास

जगह जगह पर उद्वेलित करता रहा । एक तरह से यात्रा का चिरंतन प्रवाह उपन्यास की कथा धारा का पार्ट तैयार करता जाता है जिसमें हर पात्र का अतीत धीरे धीरे हर . पड़ाव पर उद्धाटित होता है तुमने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से विभिन्न नीतियों के जीवन सूत्र संयोजित किये है, जिसमें भारतीय संस्कृति के विम्ब ,स्मृति संकेत और पौराणिक गाथाएँ सहजरुप से अंतर्गुफित हो जाते है। उनके प्रति तुम्हारा लगाव यदि इतनी गहन संवेदना के साथ न अतंर्निहित होता तो सारीचीज काफी अर्मूत और वायवी –सी जान पड़ती ।लेकिन तुम इस छद्म बौद्धिक भारतीयता से बचकर सहज रुप से भारतीय मन यदि ऐसी कोई चीज है। के टैक्सचर के ताने बाने को रेखाकिंत करने में सफल हुए हो ....[24] उपन्यास में परिवेश ओर पात्रों के अनुसार कही–कहीं ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है।

पॉच ऑगनों वाला घर उपन्यास मिश्र जी की महानतम कृति है। इस उपन्यास में पचास वर्षो (1940–1990) तक बनारस के एक विशाल काय 'पॉच ऑगनों वाले घर' की तीन पीढियों की कथा के माध्यम से समाज मे निरन्तर होते मूल्यों के हास बदलती राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों को कलात्मक भाषा के माध्यम से वर्णित किया गया हैं। उपन्यास में बनारसी और भोजपुरी शब्दावली भी प्रयुक्त हुई हैं बचिया। दुख के कभी–कभी ये हवा में ही रखे के परी, इसे शिव की कंठ में विषको रोक ली है हैं। जब राधेशरीर धोड़ा रहा तो धर में सबके सब बेहाल, आपने काबू से बाहर रहें अगर हम भी खुद के बइसन ही बना लेती तो तोहनी के कौन सँभालत।"[25]

'फूल", 'इमारते और बन्दर" उपन्यास में कथाकार ने प्रशासन तन्त्र की रहस्यमय दुनिया नेताओं की स्वार्थपरिता बडे अफसरों की चापलूसी राजनैतिक स्थितियों तथा इस तन्त्र में निरन्तर पतनशील होते ईमानदार प्रशासनिक अधिकारी की मनोदशा, भ्रष्टाचारसे उबारने की स्थितियों को सहज,सरल, बेबाक तथा व्यंग्यात्मक भाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया। इस उपन्यास में मिश्र जी भाषा के चमत्कारिक प्रयोग से बचे है।और स्थितियों को सपाट बनयानी भाषा मे प्रस्तुत किया हैं उदाहरण प्रस्तुत हैं– "देश का दुर्भाग्य ही है यह कि हमारे नेता दिखाते और बोलते हैकि वे स्वच्छ हैं जबकि उनके कारनामें बिल्कुल उलट होते है। जैसे कि अफसर मदद करने को कहते– दिखाते भी है। पर करते उलटा हैं जिस देश मे प्रशासन की दोनो संस्थाएं ऐसी दिखावी और पांखडी हो .... उसका क्या होगा। मोहन्ती सोच रहे थें कि अगर नेता अपने कैरियर की खातिर पाखंडी हैं तो राजनीति में कैरियर होता ही क्या है जैसे खटाखट चढ़ गए फटाक से मंत्री .....बाद में कौन जाने कोई याद भी न करें।[26]

कहानियां की भाषाः–

मिश्र जी की सम्पूर्ण कहानियों निर्झरिणी भाग1 और निर्झरिणी भाग2 में संकलित है। सन् 1963 से लेकर 1975 तक के दौर की कहानियॉ भाग 1 में और 1976 से लेकर

1993 तक के दौर मे लिखी गयी कहानिया भाग 2 में संकलित है। निर्झरिणी भाग 1 की कहानियॉ लेखक की शुरुआती दौर की कहानयिॉ की कहानियॉ है। इन कहानियों के माध्यम से हम लेखक की रचनाशीलता में निरन्तर होते विकास को देख पाते है। इसलिये शुरु आत का एक अपना महत्व तो है।ये कहानियॉ लेखक के अनुभव का संसार हैं। सन् 1963 से लेकर 1965 तक की कहानियों में काव्यात्मकता का पुट झलकता हें प्रतीकात्मक भाषा,अमूर्त संकेतो कल्पनिक बिम्बों लयात्मकता,नाद सौन्दर्य वाली तथा सरस भाषा के माध्यम से हर दिन बदलते जीवन सन्दर्भो,बदलती परम्परागत सोच बदलती स्थितियों मूडो तथा युनीर्वसिटी के दिनों के प्रेम रोमांस को चित्रित किया गया है। पात्रों स्थितियों, परिवेश के अनुसार कहीं कहीं अंग्रेजी शब्दावली भी इन कहानियों में प्रस्तुत की गयी है।

सबसे पहली प्रतीकात्मक, लयात्मक,नाद सौन्दर्य वाली एवं सरस भाषा के उदाहरण प्रस्तुत है–

एक तारा जो रात भर चॉद को ढूढ़ता रहा सुबह बादलों की सफेदी में ढ़क गया हैं एक गोरिया डालियों पर,मुडेरों के सिरों पर कभी जमकर न बैढ पायी । हवा मे ही उडती रही। उसके पर थकान में दुखने लगे हैं । वे फूल,जिन्होने अपनी उम्र अपने कद्रदान की तलाश में गुजार दी मुरझाकर झरने लगे हैं और हवा का एक बवंडर एक भटकते तिनके को ऊपर उड़ाकर ले चला है। भटकाव की भूल– भूलैया की ओर।[27]

अगर मैं खयालों के एक पिंड को ही अपना देवता मान भाव के फल उस पर चढ़ाती रहूं और इसी बहाने जीवन को कुछ सार्थक समझू– जिस व्यक्ति से शरीर का सान्निध्य हो उसी मे तुम्हारे काल्पनिक स्वरुप की स्थापना कर आत्मा को भी डुबो दूॅ....[28]

इन कहानियों में मिश्र जी प्रतीकों, बिम्बों, संकेतों के माध्यम से न केवल चमत्कारिक शिल्प का प्रयोग किया है अपितु कलात्मक भाषा के माध्यम से समय सत्य के अनेक सूक्ष्म और उलझे रेशों को कई स्तरो पर पकड़ने का प्रयास किया है तथा प्रतीकों के माध्यम से कहानियों की अभिव्यंजना को सधनता सूक्ष्मता और संक्षिप्तता– प्रदान की गयी।

'नये –पुराने मॉ बाप' कहानी से उनकी भाषा परिष्कृत परिमार्जित और प्राजंल होती चली गयी। कथ्य के अनुसार भाषा को संवारा और सजाया गया मनुष्य की भीतरी तहों को ब्राह्रीय सचाइयों से जोड़ने और परिभाषित करने के प्रयास मे सारे परिवेश को आदमी के भीतर को समझने की कोशिश भाषा के माध्यम से की गयी ।कुछ कहानियों में सामाजिक यथार्थ अपनी नग्न और वीभसता के साथ उभरा है कहानियों की सांकेतिक भाषा और बिम्ब इन नग्नताओं को प्रभावशाली ढंग से उभारते हैं तथा कुछ कहानियों में राजनीतिक जीवन के खोखलेपन और प्रशासकीय तन्त्र की विदूपताओं को उभारने के

लिये व्यग्यांत्मक भाषा प्रयुक्त की गयी हैं।बिम्बों के माध्यम से भाषा की व्यग्यांत्मकता कहानियों को अधिक प्रभावशाली और सार्थक बनाती है। पात्रों की बदलती स्थितियों और मानसिकताओं को कलात्मकता के साथ उभारा गया है। व्यक्ति की विचार प्रकिया को वास्तविक रुप में उभारने में कही–कही भाषा में रुखापन तो दिखाई देता है। परन्तु वाक्य पूरी गहराई लिये होते है।

पात्रों के बाह्य यर्थाथ और आभ्यंतरिक यथार्थ तथ्य और अनुभूति को व्यक्त करने वाली भाषा के उदाहरण –

वह हर मुसीबत में उसकी खराब से खराब परिणति सोच कर चलता है.... निस्पृह होकर चीजो को देखता है....और इस तरह जो कुछ करना चाहिये वह नही कर पाता.... फिर एक उस बिन्दु पर जाकर जहां से वाकई चीजों को दूर से देखना चाहिये अपने को बहुत सटा हुआ महसूस करता है लगता है जैसे उस सन्दर्भ में उसकी निस्पृहता की बातें एक बहुत बड़ा आत्मभ्रम थी, वह हमेशा से ही उतना सटा हुआ हैं ... एक बाप से जो अपेक्षित है वह उससे नही हुआ।"[29]

मैंने चाहा कि कुछ बात करुँ लेकिन बनाया गया हर जुमला उसके चेहरे की नोक पर लग फट सा जाता सोचा शायद वह पान की दुकान पर रुके और उसका चेहरा वहां कुंछ ढ़ीला हो वह नहीं रुका शायद वह बहुत जल्दी मे था। मुझे ऐसा लगा,जैसे उसने मुझ जेब से निकालकर सड़क के एक बांस पर टांग दिया हो और अब आगे लाने लगा हो ।[30]

'सख्ती ठिलाई का सवाल नही...सवाल है..... क्या ,..... सवाल क्या, सारे बडे अफसर ड़रते हैं क्योकि वे भी खाते है और कभी–कभी क्लर्को के माध्यम से ही ... ऐसे लोग क्या शासन करेगे... हर वक्त अपनी गर्दन बचाने में लगे रहेगे... क्या सख्ती करेगे.... यहां तो पूरा सेटअप ही गंदा है......उफ

"हमारी बातचीत कम पड़ते पड़ते ठप्प होने को आ गयी। अब भी हम अकेले पडते वह काम या किसी और बहाने से खिसक जाता पहले तो वह हर काम मुझसे पूछकर या सलाह लेकर करता था, अब चुपचाप सब कुछ कर गुजरता था और मेरे पूछने ताछने पर दाब दूब जाता ... मैं ज्यादा कुरेदता तो मुझे अपने आप ही शक होने लगता था।"[31]

"टहलने के लिये निकलों तो इधर–उधर कही भी निकल जाओ।न याद आती हो तो आ जाये कि अब बस भटकना ही है भटकरने में फिर भी उम्मीद होती कि आखिर कही जा लगेगे....... लेकिन यहां कहां जा लगना है।....अब? सिर्फ कल्पना इधर से उधर.... .उधर से इधर,उतना ही बेकार जैसे नींद न आने पर इधर करवट फिर उधर करवट.....[32]"

सामाजिक यथार्थ को नग्नता और वीभत्सता के साथ उभारने वाली बिम्बात्मक और सांकेतिक भाषा के उदाहरण–

मैंने साहस बटोरने की गरज से इधर उधर देखा। मेरी निगाह झटके में उसके पिछले हिस्से पर चलीगयी जिसे जब यह और जकड़ने की कोशिश कर रहा था। मुझे उसका वह हिस्सा बेहद गदराया हुआ लगा और ताव कीएक झिल्ली –सी कुछ अन्दर महसूस हुई। हो सकता है, यदि मैने उस बात को जरा भी बढ़ावा दिया होता तो इसे हटाकर स्वयं उस हिससे से चिपक गया होता किसी कमजोर झठा।[33]

उसने कुछ हैरत से पहले अपने पति की ओर फिर मेरी ओर देखा फिर अपने ही अंदाज मे जैसे उस बात को कूड़ाखाने में फेंक दिया...जैसे बाजों की आवाज से कोई बाहर आया और मुर्दे को जाते देख कर बिना कुछ बोले ही वापस लौट गया हो.... कुछ देर को एक अजीब –सी खामोशी रही...फिर उसने सब कुछ उतार फेंका और अपने चुलबुल मूड में आ गयी (वह बड़ी जल्दी चीजों से मुक्त हो लेती है – मुझे रश्क हुआ)।[34]

विवाह के दिनों की तरह सिर्फ तुम्हीं में कैसे डूबा रहूँ हर चीज की उम्र होती है , हमे उम्र के साथ बदलते जाना चाहिए.... ।यह उसके लिये दर्शन था और उसके लिये मात्र बकवास...और उस रात आखिर उसे वही करना पड़ा था जिसका एकदम मूड नही था... उस सबके दरम्यान इसे बुझे हुक़्के गुड़गुड़ाने और कुत्ते की हड्डी चूसने वाले मुहावरे बार–बार याद आए थे।[(35)] रंगीन वातावरण पर जैसे अंधेरे के खून का एक काला धब्बा उछल आया था, ऊपर की खिड़की से हीं चेहरे का लटकाता मांस और उस पर छितरा कटे खेंत का खुरदरापन दिखायी दे गया था– बाद मे कुछ फुसफसाहट भी सुन रही थी...... सैतालीस साल का हैं..... यह तो मुझ भी मालूम था पर इतना ... साल-–भर में ही चिकनी उम्र का अहसास जेहन से उतर गया था...फिर आज क्यो के खरोचे....?[(36)]

लड़की के चेहरे पर कुछ नही था सिर्फ एक अकेलापन,उदासी...भी नही, बाहरी दुनिया के लिये एक खास किस्म की निरीहता,सूखापन। सात साल के बच्चे के चेहरे पर बाते अजीब थी।[37]

राजनीतिक जीवन के खोखलेपन और प्रशासकीय तन्त्र की विदूपताओं को बिम्बों के माध्यम से उभारने वाली व्यग्यांत्मक भाषा के उदाहरण–

"दूसरे दिन सुबह–सुबह लोगो ने अखर मे पढ़ा 'रंगे हाथ पकड़ा गया... पछत्तर रुपयें धूस लेते हुए .... ओवरसियर श्री...। हर महीने पछत्तर की किस्त बंधी थी जब तक उसे ठेकेदार की नयी इमारत पास नहीं कर देना थी तीसरी किस्त न देकर और सी0बी0 आई को खबर करके ठेकेदार ने देश का भला किया "।[38]

हर महीने की बारह को तहसीली तनख्वाह के लिये जाइए धर्मशाला , टेशन या फिर कही भी मरते रहो। मन आया तो दूसरे दिन साफ जबाब देते है– बी0डी0ओ0 साहब नही पहॅुच पाये। खजाने से तनख्वाह ही नही पहॅुची। फिर आइए फलां तरीख को जब तबीयत चली तनख्वाह से इस बीस काट लिये चंदा के है।यह नही कहेगे कि बोर्डवालों की जेब के लिये कटौती हो गयी।हलालियो को लाज भी नहीं आती कि सौ रुपये की तनख्वाह से भी चोरी करते हैं ये डिस्टिक बोर्ड अच्छे बने.... कहते हैं, जनता का शासन हैं पर भला ऐसा चला रखा है कि एक बार तनख्वाह लेने में चूक हुई कि ससुरी ऐसी बिलाजायेगी कि फिर नही निकल सकती....पता लगातें रहो.... लिखा–पढ़ी करते रहो ।[39]

इस कहानी की भाषा पर टिप्पणी करते हुए प्रियंवद जी ने लिखा हैं "कि गति ,भाषा चित्रात्मकता सब हैं। खासतौर से संग्रह की पहली कहानी 'कचकौध ' की भाषा पढ़ कर आनन्द आया।" [40]

लगा जैसे अन्तःपुरका मालिक असेंबली हाऊस की सबसे ऊॅची सीढ़ी पर खड़ा है और हंस रहा है शेरवानी दो– तीन सीढ़ी नीचे उसे कवच की तरह खड़ा है और गोर्डे वर्दी पहने गोली दाग रहा है धायं....धांय। शिवेन्द्र के शरीर पर सांप ही सांप फुसफुसा रहे हैं वे एक को झटकरकर फेकते है कि दूसरा कहीं बिललिता नजर आता है अन्तःपुर का मालिक पेट बना नीचे गिरे सांपो को खाता चला जाता हैं । उगलता है तो वे छोटे छोटे प्यादे उसके गिर्द एक सेना बनाते इकट्ठे होते जाते है। सेना जो बढती चली जाती ,बढती चली जाती है।....[41]

"इत्तफाक कि रोगी की पतली हड्डियां बच गयी। उधर चारपाई पर पड़े–पड़े वे सोच रहे थे कि प्रजातन्त्र कब तक जिन्दा रहेंगी।"[42]

निर्झरिणी भाग 2 की कहानियों को भाषा–

निर्झरिणी भाग दो की कहानियों के आकलन से ये दृश्य उभरकर सामने आता है कि मिश्र जी की कहानियो की भाषा में निरन्तर प्रौढता आती चली गयी है । शुरुआती कहानियॉ जो भावनात्मक उबाल और चमत्कारिक शब्दो के के जाले से बुनी गयी थी उनकी जगह आज की कहानियॉ जीवन के विशिष्ट प्रसंग धटना सन्दर्भ को केन्द्र में रख कर बुनी गयी। इन कहानियों में कथ्य अपनी पूरी संशिलष्टता और स्वाभाविकता के साथ उभरा है तथा कहानियों में गति कम स्फीति अधिक हैं पात्र अपने स्वाभाविक रुप में आए हैं मिश्र जी ने इन कहानियों में शब्द संयोजन के साथ–साथ सुनिश्चित सार्थक और साभ्रिप्राय शब्दों के चयन पर धयान दिया हैं तथा कथ्य और शिल्प के समयोजन से कहानियों को सोद्देश्य बनाया हैं। शब्दों से खिलवाड़ न कर शिल्प को आकर्षित बनाने का प्रयास किया है इन कहानियों में संवेदनाएं पूरी गहराई से उभरकर आई है। मिश्र जी लिखते है कि कहानी क्या होती है? यह मैं आज भी पूरा–पूरा न समझ पाया होऊं

लेकिन यह अब भी है कि वह चीख न बन सके तो कम से कम एक संवेदनात्मक टीस की तरह थरथराती तो जरुर हो और इसी रुप में पाठक के यहां छूट जाये। लेखकों के साथ अक्सर यह होता हैं कि सधनता को पाने के चक्कर मे खासा अलगाव कहानी पर जमा हो जाता है .... शिल्पगत, भाषागत,कथागत और कभी–कभी तो संवेदना ही उड़ गयी होती है । मेरे साथ जरुर यह कभी नही हुआ कि कहानी सिर्फ जुमलो का जमावड़ा दिखे।[43]

मिश्र जी ने अपनी कहानियों में मानवीय मूल्यों की संक्रमणता को भिन्न–भिन्न सन्दर्भो में व्यक्त करने के साथ–साथ मानवीय जीवन मूल्यों के प्रकाश को भी रुपायित किया हैं, तथा कुछ कहानियों में राजनीतिक स्थितियों सन्दर्भो का खुलासा किया और राजनीतिक क्षेत्र में होने वाले भ्रष्टाचार को उजागर किया । बदली जवीन स्थितियों में मानवीय रिश्तों और आत्मीय सम्बन्धों में आये बदलाव को भी ये कहानियॉ गहराई से चित्रित कर सकी है।

प्रस्तुत है मानवीय सम्बन्धों में हो रहे उत्तरोत्तर अवमूल्यन को चित्रित करने वाली कहानियों की कठोर व्यंग्यात्मक भाषा के उदाहरण–

.... प्रकृति के इतने पास अपनी जिन्दगी का बड़ा हिस्सा बिताने वाला इतना स्वार्थी तो नही हो सकता कि वह अपनी लड़की से ही दुराव करे। ज्यादा सही यह बात लगती थी कि सारी जिन्दगी ऊंचा सर करके जीने वाली वह बूढ़ी औरत , वैसे ही जीने के लिये जो हिफाजत बरतनी चाहिए , वह बरत नही थी। जरुर उजली लड़की और उसके आदमी ने उन्हें मात्रा बड़ा समझ लिया होगा। [44]

तो वह कोई आदमी ही था वे उसे पहचान नही सके थे.... और एक कुत्ते से उन्हें पहचान मिलनी थी। अब तक कुत्ते के मुँह में मांस की छुटपुट चीथें भी आ चुकी थी। कुत्ता पूरा चभा के टांग को खा पाता, उसकी थूथन अजीब जद्दोजहद में इधर–उधर होती। जब तब वह खीचकर कुछ अपनी तरफ निकालने की कोशिश करता.... . जैसे वह आदमी की नस नही कोई पुख्ता जड़ी हुई कील थी। कितना विकट होता है साबुत शरीर से कुछ खींच निकलना, भले ही शरीर में प्राण न बचे हो ।[45]

श्री.... वह एक ऐसी बस्ती मे था जहां आदमियों के होने जैसे निशान नदारत थे। सिर्फ आवाजें थीं....जो सडकपर मशीनी ढ़ंग से बहते हुए सोती रहती थी, बीच–बीच किसी खामोशी में धुसकर व्यापार करने के लिये जाग जाती थी। [46]

2 मूल्य– संक्रमणता को विभिन्न स्थितियों और सन्दर्भ में चित्रित वाली कहानियों की चुस्त–दुरस्त ,सशक्त और प्रभावशाली भाषा के उदाहरण–

लंदन के बाजार के उसे धर दबोचा। दस साल हो चुके थे हमें साथ रहते–रहते। उन दस सालों की हवा इगलैंड के एक साल ने निकाल दी। यहां हुजूर ,सिर्फ वे चीजे

हैं, जो सजी संवरी रहती है।,जिन्हे आप छू सकते है। जिन्हे छुआया देखा नही जा सकता, उनकी यहां कोई अहमियत नही। मै सोचता था, उसे मेरी मुहब्बत चाहिए , पर वह लंदन के बाजार चाहती थी।[(47)]

कहां रुकेगे ये लोग... या कि चीथते ही चले जायेगे...... जब तक कि उसमे मांस का एक कतरा भी शेष है ? लालच ने कैसा अंधा कर दिया है कि उन्हें मोटी –सी बात नही दिखायी देती– कुछ भी देने वालों को आज कीमत चाहिए..... कीमत।[(48)]

मानवीय जीवन मूल्यों के प्रवेश को रुपायित करने वाली कहानियों की स्थितियों और दृश्यों को प्रभवशाली ढंग से व्यक्त करने वाली भाषा जिसमे संवादों का पैनापन और तीक्ष्णता के साथ– साथ पात्रानुकल भाषा, अनुठा शब्द विन्यास, वाक्य तथा शब्द कौशल भी है–

"वह हंस रही थी। उदासी के चिन्ह तब उसके चेहरे पर दूर–दूर तक नही थें। समय दरियाई लहरो की तरह उसे पलट–पलटकर थपेड़े मारता रहा और वह नहाई चट्टान की तरह और भी चमकती हुयी मेरे सामन खड़ी थी। इतिहास , जो उसे झार–झार करने आया था, जैसे स्वयं खाक हो गया था और वह अब थी.....प्रेम से ओत प्रोत,कोमल,मानवीय......[(49)]"

"यह जो ब्रह्मांड में स्वयं –भू का विराट् यज्ञ चल रहा है ,इसके लिये हविषा रुप में मैं अपना जीवन अंश –प्रति –अंश स्वाहा करता चलू.. अपने सहयात्रियों के मुखों से विषाद –कण पोछने वाले मंत्रो का उच्चारण करते हुए। तुम्हारी भांति ही कर्म क्षेत्र की हर चेष्टा में अपनी सीमाओं को लाधने का सतत प्रत्यन ही मेरा जीवन बने।[(50)]"

"एक मुकाम पर पहुॅच कर कैसी निकल आती है जिन्दगी... फटेहाल– जिओ तो कुछ नही मर जाओ तो कुछ नही। किस तेजी से सब नीचे उसे एक साथ दगा दे गयी– बीवी, शराब,नीद,भूख–सभी । रह गया सिर्फ चोला –धज्जियों का पुलिंदा– इधर समेटो तो उधर पुल से खुल जायें।[(51)]"

एक व्यक्ति की कहानी तो समाप्त ही हो जायेगी –व्यक्ति गया तो यह भी खत्म। उस कहानी की सार्थकता इसी मे है कि वह दूसरी कहानी में प्रवाहित, र्प्यावसित हो जाए। बप्पा की कहानी, पार्वती से होते हुए रामधन में। पार्वती मौसी का दुख उससे बडा तो नही जो बाहर फैला है।, दर–दर पर टुकडों टुकडों में......। यह पहले दिख जाता तो छुआछूत और गरयिाने मे व्यर्थ न जाती जिन्दगी। लेकिन शायद यह आज ही दिख सकता था....[52]

डॉक्टर को अपना सारा बजूद बेहद छोटा लगा उस वक्त। अपनी तमाम प्राप्तियों के बाद वे बौन थें..... वेदना की उस मूर्ति के सामने एकदम बौने ।वे सामना नही कर पा

रहे थे उसका जिससे तब अलसायी–सी ज्वाला उठ रही थी........ बुझती चिता की ज्वाला।[53]

निष्कर्षः–

मिश्र जी के उपन्यासों एवं कहानियो का भाषा की दृष्टि यदि विश्लेषण करे तो ज्ञात होता है कि उनकी भाषा गठन में उत्तरोत्तर विकास होता गया। भाषा में अभिव्यक्ति की मिव्यता ,तीखापन व बोलचाल का लहाजा तो है परन्तु भाषा की प्रयोगशीलता का अतिरिक्त मोह कहीं–कहीं खटकता है। भाषा के व्यामोह के कारण कुछ स्थलों पर व्याकरण नियमों की अवहेलना की गयी है।

परन्तु अधिकाशतः उपन्यासों और कहानियों की भाषा सहज–सरल और संवेदनात्मक हैं जो अहसास और छटपटाहट के रुप में पाठक के मन मे उतरती चली जाती है। भाषा में नये विम्ब उभारे गये है तथा नये अलंकारो का प्रयोग किया गया हैं। भाषा को प्रसंगानुकूल और पात्रानुकूल बनाना उनका अभीष्ट रहा है। अभिव्यक्ति की स्पष्टता के कारण उनकी भाषा की अभिव्यजंना शक्ति में निखार आया है।

उपअध्याय 2 शैली सौष्ठव

शैली सौष्ठव

शैली प्रयास जन्य हैं।[54] इसका प्रयोग करके लेखक अपना इच्छित प्रभाव डालता हैं। शैली साहित्य की गौरवमयी उपलब्धि हैं। किसी भी लेखक की शैली लम्बी साधना,संयम,कौशल की देन हैं। ...... शैली लेखक की विचारधारा के प्रकटन का एवं उसके व्यक्तित्व के प्रकटन का माध्यम है,यह उसकी मानसिक सिद्वि की परिचायक है, कि वह अपने विचारों, भावनाओं,बिम्बों को किस रुप में प्रस्तुत करता हैं। [55]

अतः कहा जा सकता है कि लेखक की लेखन शैली में उसके व्यक्तित्व की झलकन का आभास होता है क्योंकि उसकी लेखन कला प्रकिया से उसकी भावनाओं,विचारों,अनुभूतियों,उसकी बोधन शक्ति का परिचय मिलता हैं।

मिश्र जी मानवीय संवेदनाओं से प्रेरित रहें। इनकी भाषा में लक्षणिकता,व्यंजना और सांकेतिकता के लक्षण विद्यमान हैं तथा शैली में संक्षेप को महत्व प्रदान कर संकेत अथवा सूक्ष्मतः पर बल दिया गया। इनके कथा साहित्य में सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्तरों को भी अभिव्यक्ति प्रदान की गयी,इन्होंने अर्न्तानुभूतियो का भी उपयोग किया तथा स्वाभाविकता और वैज्ञानिकता पर बल दिया इनके संकेत बड़े सार्थक तथा शब्द चयन, शब्द गठन शब्द निर्माण विशिष्ट सिद्व होते हैं। इन्होंने कथात्मक ,आत्मकथात्मक, पत्रात्मक, विवरणात्मक, स्वागत कथन,डायरी शैली संवादात्मक सभी शैलियों का प्रयोग किया। इनकी शैली में उत्तरोत्तर निखरापन आता चला गया, आज उन्हें अपनी बात कहने के लिये क्लिष्ट भाषा गूढ़ रहस्य, प्रतीक बिम्बों का सहारा नहीं लेना पड़ता है यदि वे किसी कृति में अप्रत्यक्ष का सहारा लेते हैं तो वह केवल अपनी अभिव्यक्ति को निरपेक्ष और ग्राह्य बनाने के लिये ही। वे अपने अनुभव जगत व अनुभूति सामर्थ्य के माध्यम से ही अपनी कृति को प्रामाणिकता प्रदान करते हैं।

चन्द्रकांत वादिवडेकर जी लिखते है कि गोविन्द मिश्र की श्रेष्ठ रचनाऍ 'लाल पीली जमीन' 'हूजूर दरबार' 'धीरे समीरे' 'पॉच ऑगनों वाला घर' मैंने पहले पढ़ी और उनकी आरम्भिक रचनाऍ 'वह/अपना चेहरा' 'उतरती हुई धूप' बाद में। लेकिन यह बहुत अच्छा हुआ। गोविन्द मिश्र जी की विशिष्ट शैली अभ्यास द्वारा परिमार्जित नही बनीं हैं वह उनकी खास देन है– पैदाइशी इसका प्रमाण मिला। मैं गोविन्द मिश्र के उपन्यासों की शैली का फैन हूँ,और मुझे लगता है खुरदरे यथार्थ को संवेनात्मक स्तर पर सम्प्रेषित करते समय गोविन्द जिस सूक्ष्मभाषिक कीड़ा और कौशल का परिचय देते है और उसमें जो उत्स्फुर्तता होती हैं, उस प्रकार की तीव्र अनुभूति की प्रतीतिदेने वाली भाषा बहुत कम

गद्यकार लिख पाते हैं।"[56] उन्होंने अपने कथा साहित्य में समाज के सभी वर्गो की समस्याओं को उठाया,इसके साथ ही अफसरों की लाल फीताशाही, आपातकाल का उत्पीड़न समाज एवं राष्ट्र और दायरों के विभिन्न प्रश्नों को अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाकर शिल्प और कथ्य के नवीन प्रयोग कियें। उपन्यास चेहरा में मैं' मैंने की शैली' अपनाई गयी।"परन्तु सधे कलाकार का वैशिष्ट्य यह होता है कि वह न केवल व्यक्तित्व और टाईप के बीच का तथा कथित विरोध तिरोहित कर देता है, अपितु व्यक्तित्व को तीक्ष्ण आकार देने के साथ उसे टाईप बनाकर व्यापकता भी देता हैं। विशिष्टता और सामान्यता के बीच का द्वन्द्व अच्छे कलाकार के हाथों दोनो को शक्ति प्रदान करता हैं। " गोविन्द मिश्र ऐसे ही एक कलाकार है इसीलिये उनका मैं व्यक्तिगत संवेदनात्मक तीव्रता का अहसास कराता हुआ भी कमशः नौकरशाही का एक चेहरा हीन व्यक्तित्व हीन; आकारहीन परन्तु असत शक्तिशाली रुप प्रस्तुत करता हैं।"[57] मिश्र जी ने बहुमुखी शैली गत प्रयोग किये। जिससे उनकी नयी प्रयोग धार्मिता युयुत्सावृत्ति का परिचय मिलता हैं।

उपन्यास 'उतरती हुई धूप' जिसमें उन्होंने प्रेम विवाह और सेक्स के विषय में परिवर्तित मानसिकता को उठाया हैं। संवादात्मक शैली का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता हैं क्योंकि "गोविन्द मिश्र का यह उपन्यास पढ़ते समय शैली की एक महत्वपूर्ण विशेषता संवादों के माध्यम से उभरती हैं। वह है शतरंज के खेल में दो स्पर्धियों का मुहरा पट पर रखने के पूर्व की मानसिक दॉव–पेंच वाली मनोवस्था का अंकन। खासकर भाई साहब और 'वह' के बीच संवादों में यह पूरे उत्कर्ष पर हैं। जीवन की बड़ी से बड़ी अवस्था,स्थितियॉ परिणति का कुछ थोड़े शब्दों में चित्रमय अंकन भी मिश्र की शैली का महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य हैं।" [58] उपन्यास में कुछ विखरी हुई स्थितियॉ भी हैं। परन्तु उन स्थितियों से एक विशेष प्रकार की मानसिकता का संकेत मिलता हैं। भाषा असफल प्रेम गाथा के तनाव और घुटन अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करने में सहायक होकर आती हैं उपन्यास की भाषा पुराने ढर्रे को काटती हैं।

उपन्यास ' लालपीली जमीन'में उपन्यास में प्रतीकों के माध्यम से चित्रित बस्ती के परिवेश की भयावहता और उस परिवेश से जुड़े पात्रों की क्रूर हिंसक,अमानवीय नियति के प्रश्न को उठाया गया हैं। उपन्यास में घटनाओं प्रसंगो के माध्यम से प्रमुख पात्र की संवेदना दर्द, यन्त्रणा अकेलेपन की विवशता को चित्रात्मक मूर्तता प्रदान की गयी हैं। जो मिश्र जी की कलात्मक पैनी अर्न्तदृष्टि का परिचायक हैं उपन्यास में न्यूनोक्तियों,एवं छोटे–छोटे चुस्त चौकन्द वाक्यों द्वारा व्यंजना,अमिधा लक्षणा के नये आयामों को उद्घाटित किया गया हैं नये भावबोधों को जागृत कर, नयी अनुभूतियों को उन्मुख किया गया हैं।"कथा की बुनावट बहुत सधी हुई और अनेक जगहों पर मार्मिकता से भरी हैं।

यह कस्बाई जीवन वर्णन में ही नहीं संवादों में संवादों की बेबाकी और स्वाभाविकता में भी हैं। ......पात्रों के पारस्परिक संबन्धों के भीतर अजीब द्वन्द्वात्मक संयोजन हैं। इस उपन्यास की भाषा को जगह– जगह सराहना पड़ता है।'' [59] वास्तव उपन्यास में पात्रों के मार्मिक गुंफन, और समसमायिक सामाजिक को यथार्थ की प्रस्तुतीकरण अनेक दृष्ट्रियों से सराहनीय कहा जा सकता हैं।

'हुजूर दरबार' उपन्यास में शैलीगत नये प्रयोग किए गए हैं। कथाकार ने राजतन्त्र के प्रजातन्त्र में विलीनीकरण के ऐतिहासिक परिवर्तन की घटनाओं स्थितियों पात्रों के द्वन्द्व मानसिकताओं, राजशाही प्रवृत्ति,अमानवीयता, यन्त्रणा को यथावत रुप में प्रस्तुत किया हैं, सम्पूर्ण कथा प्रमुख पात्र 'हरीश के मानसिक धरातल में चलती हैं,उपन्यास में प्रयोग की गयी कथन प्रणालियॉ निवेदन प्रणालियॉ उपन्यास की संरचना में एक संभ्रम पैदा करती हैं क्योंकि ये कथा में प्रासंगिक नहीं लगती है, और कथा में वर्णित काल और स्थितियों से इनका कोई तारतम्य नही बैठता है, फिर भी संप्रेषण क्षमता को बढ़ाने के लिये ये आधुनिक तकनीकी प्रयोग कहे जा सकते है, इसके साथ ही ''मनुष्य के मन का गहन प्रस्तुतीकरण मन की यथार्थ परन्तु दुर्लभ मनोवस्थाओं के तरल क्षण,उपन्यास के के अनुभव का फैलाव उसका कलात्मक सौष्ठव, मनुष्य जीवन की विविध भावनाओं का अन्तः संघर्ष,उसके व्यक्तित्व को अच्छा या बुरा आकार देने वाली घटनाओं की चित्रमय कल्पना मनुष्य के जीवन की करुणा को धीमी लय में व्यक्त करने की क्षमता और इन सबके साथ कलकार की प्रचंड हार्दिकता, सामान्य मनुष्य की असमान्यता को तथा असामान्य मनुष्य की समान्यता को टटोलने की दक्षता, अनुभवानुगामी शैली का बहुस्तरीय वैविध्य – इन सबका बहुत बड़े पैमाने पर अविष्कार 'हुजूर दरबार में' हाता हैं।'' [60] शैली तथा प्रस्तुतीकरण आदि अनेक दृष्टियों से यह उपन्यास एक महत्तम उपलब्धि हैं।

'तुम्हारी रोशनी' में उपन्यास में मिश्र जी ने नारीको महत्व प्रदान कर नारी जीवन की उच्च शिक्षा आर्थिक स्वावंबन, स्वतन्त्रता इत्यादि महत्वपूर्ण प्रश्नों का यथार्थ के धरातल पर उभारा है तथा उसके मन की सूक्ष्म भाव–वीथियों और वृत्तियों को प्रेम के परिप्रेक्ष्य में उजागर किया हैं। इस उपन्यास में उन्होंने शैलीगत बहुमुखी नवीन प्रयोग किये हैं तथा शिल्प और भाषा शैली के समस्त प्रतिमानों को तोडकर भाषा शैली के सर्जनात्मक प्रयोग के नवीन प्रतिमान स्थापित कियें। '' तुम्हारी रोशनी में'' की धारा प्रवाह शैली,जो किसी भी एक शैलीगत आधिपत्य को तोड़ती ही हैं, अपनी निष्कपटता की वजह से भी काफी आरामदेह व टिकाऊ सिद्व हो सकती हैं। अर्थमयता के स्तर पर चूँकि लेखक के पास कद्दावर भाषा हैं, इसलिये अभीष्ट का ऊँचा या अप्रिय भोंपू कही चिघाड़ता नहीं मिलता हैं।'' [61] पर इस कृति में कुछ खटकाव भी है जैसे ''बयान के दौरान लेखक का 'प्रवक्ता' अपनी पुरुष पटरी की तरह बदलता हैं–कहीं अनन्त प्रथम

पुरुष में मुखरित होते होते डायरी बन जाता हैं तो कहीं एकाएक लेखक उसे तृतीय पुरुष मे धकेलकर स्वयं कहानी कहने लगता है। यह शैली गत प्रयोग के तहत हुआ है या उपन्यास के सम्पूर्ण अध्यायों के समन्वय भूलचूक की वजह से– इसका खुलासा तो लेखक ही कर सकता हैं।[62] नये प्रयोग करते समय कुछ असफलता झलकती है पर उपन्यास में गत्यात्मक अवरोध नहीं हैं। लेखक ने सुवर्णा की ऑखों की रोशनी के माध्यम समाज और लेखक ने सुवर्णा की ऑखों की रोशनी के माध्यम समाज और लेखक ने सुवर्णा की ऑखों की रोशनी के माध्यम समाज और व्यक्ति के अन्धेरे पक्षों को स्वतः ही उजागर कर दिया हैं।

'धीरे समीरें' उपन्यास विषयगत गम्भीरता व उद्देश्य की गूढ़ता लिये आध्यात्मिक वृत्ति पर सृजित विशाल कैनवास पर विविध शैलियों को उभारता हुआ,भारतीय मानस में गहरी धसी आध्यात्मिक जड़ों के असंख्य पहलुओं, अनछुए आयामों को ब्रज यात्रा के माध्यम से उभारना हैं। उपन्यास की संरचना में कथा और चरित्र दोनो ही यात्रा के माध्यम से आगे बढ़ते हैं '' किसी खास यात्रा के माहौल को जीवत्तता देते हुए उसके इतिहास को , जो पुरातन और सनातन के आयामों से जुड़कर मिथकीय रुप धारण कर चुका हो और उसके भूगोल को समेटते हुए सामूहिक मानस के स्पन्दन का एहसास कराते हुए और व्यक्ति के दुःख दर्द और उसकी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं को उभारते हुए,औपन्यासिक रुप बन्ध में नानाविध शैलियों,कथा निवेदन की प्रणालियों और वाक् भंगिमाओं को कलात्मक कौशल से उपयोजित करते हुए 'धीरे समीरे' जैसा सफल उपन्यास प्रस्तुत करना गोविन्द जी की विकसित रचना सामर्थ्य का प्रमाण है।[63] उपन्यास की शैली में नवीनता और विविधता के तेवर के साथ गूढ़ दार्शनिक तथ्यों और तत्वों,बिम्ब,प्रतीक जटिल भावबोध के प्रचुर प्रयोग से उपन्यास की कलात्मक में श्री वृद्धि हुई हैं।

'पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास जैसी एक ही कृति में कथाकार ने 1940 से 1990 तक की परिवर्तन सामाजिक राजनीतिक ऐतिहासिक स्थितियों के साथ–साथ कुछ जीवन चरित्रों को समेटा हैं। पचास साल के विस्तृत विशाल काल खण्ड की घटनाओं को बरीकियों से प्रस्तुत करना आसान नही हैं इसके साथ ही कथाकार ने सभी चरित्रों की विशिष्टता की अलग–अलग पहचान को कलात्मक ढ़ग से प्रस्तुत करते हुए अपनी जीवन दृष्टि को जीवनानुभव के माध्यम से प्रस्तुत किया। उपन्यास में कथा सूत्रों को कलात्मक ढ़ग से जोड़ने के लिये पूर्वदीप्त शैली का सुन्दर उपयोग किया गया हैं। टिप्पणियों द्वारा विचार सूत्रों और प्रतिकियाओं को स्पष्ट करके प्रभावान्विति को पुष्ट किया गया हैं। इतने फलक को इतनी पूर्णता के साथ केवल दो सौ बयासी पृष्ठों में

समेटना केवल मिश्र जैसे सिद्धहस्त उपन्यासकार के लिये ही सम्भव था। सार्थक बिम्बों और प्रतीकों की अर्थ छटाएँ इसे और प्रभावी बनाती हैं। (64)

मिश्र जी की कहानियों में शैली सौष्ठवः–

शैली का आधार लेखक की भावात्मक स्थिति होती, जिसमें उसकी बौद्धिकक्षमता,विचार अनुभूतियों भी शामिल होती हैं। मिश्र जी ने जीवन को उसकी सम्रगता विविधता,जटिलता और सम्पूर्णता में देखा और परखा। और सामाजिक,राजनीतिक व मनोवैज्ञानिक जीवन के सहस्त्रों रुप विभिन्न शैलियों में अपने कथा साहित्य में उभारे। लेखक की शुरुआती दौर की कहानियॉ जो भावुकता वश लिखी गयी थी,उनमें आत्मकथात्मकता, पत्रात्मक, डायरी,कथात्मक शैलियों प्रभाव दृष्टिगोचर होती हैं और भाषा के चत्मकारिक प्रयोग,बिम्ब, प्रतीक इत्यादि का बाहुल्य दिखायी देता हैं। पर धीरे–धीरे कथाकार की शैली में निखार आता चला गया समकालीनता का आवरण जो उनकी कहानियों में झलकता था वह धीरे–धीरे झीना होने लगा, उनका मानना है कि सर्जनात्मक ऊर्जा एक बनावटी संघर्ष की बेजान ऊष्मा में तृप्ति पाकर बेजार हो जाती हैं।'' [65] मिश्र जी की कहानियों परम्परागत को स्थूल निकर्षो पर (कथानक, घटना, चरित्र–चित्रण, कथोपकथन, देशकाल वातावरण उद्देश्य भाषाशैली) में परीक्षित नहीं किया जा सकता हैं। मिश्र जी के विचार से ''जो चीजें हमें भावनात्मक रुप से ऊपर उठाती हैं। वे नीचे नीचे हमारी वैचारिक गहराई भी बढ़ाती चलती है..... इसलिये इनका प्रभाव दीर्घकालिक होता हैं यह जानते हुए भी मैं बहुत दिनों तक कहानी की उदात्तीकरण वाली शैली से चिपका न रख पाया खुद को जिस स्वाभाविकता से वह मेरे लेखन में विकसित हुई थी।

स्वाभाविकता से भीतर कहीं जज्ब होकर बैठ गयी।''[66] मिश्र जी अनुभूतियों के लेखक हैं उन्होंने पूरी तन्मयता से अनुभूति जन्य संवेदनाओं को अपनी कहानियों में उभारकर कहानियों को जीवंतता प्रदान की। लेखक की कहानियों में अपेक्षाकृत विविधता है, भावनाओं के प्रभाव निरुपण के साथ–साथ सांकेतिता सूक्ष्मतःबरीकियत, प्रतीकात्मकता, बिम्बात्मकता इनकी कहानियों की विशेषता है। ''सूक्ष्मता,बारीकियत सिर्फ कला के गुण नहीं,लेखन का यह सत्व है जो साहित्य बनता है। स्थूल काया के साथ–साथ स्थूली आयाम का भी जिक कर दूं– जब असली कहानी वह है जो घटनाओं के पीछे है तो प्रत्यक्ष,घटनात्मकता,स्थूलता पर ही क्यों नहीं पहुँचते हैं।'' [67]

मिश्र की शैली सौष्ठवपूर्ण हैं व कहानियों का रचनात्मक संघटन प्रशासनीय हैं। उन्होंने संकेतिक शैली में व्यक्ति की वेदनाओं को उभारा हैं। वे कठोरता को पूर्ण स्वीकार करते हुए भी कहानियों में आदर्श की सत्ता को नकारते नहीं है। उनके पात्र वर्तमान की

विसंगतियों से जूझते हुए आस्था,विश्वास और दृढ़संकल्प से जीवन को स्वर्णिम बनाते है तथा साधारण जीवन जीते हुए भी भव्यत्तर जीवन की कल्पना करते है और मानवीय मूल्यों को उभारते है 'खांक इतिहास' 'पगलाबाबा', आसपास कितना नीला,कहानी संग्रह की कहानियाँ जीवन की विराटता को उभारते हुए किसी न किसी मूल्यात्मक आदर्श की ओर संकेत करती हैं। 'पगला बाबा' संग्रह की " आकार में छोटी परन्तु प्रभाव में भारी पड़ने वाली इन हृदय स्पर्शी कहानियों में कथन शैली की सजीवता,सहजता भी नहीं हैं। फिर भी यह कहना अनिवार्य हो जाता है कि इन कहानियों का प्रभाव शिल्पगत कम और कथ्य की रोशनी का अधिक हैं। ....." पगला बाबा' के लेखक के पास वह दृष्टि है जो यथार्थ के नाम पर विद्रूपको नहीं देखती अपितु विद्रूपता में छिपे आस्था के क्षण ढूँढती हैं। कला का काम गिराना नहीं,उठाना होता हैं। अगर इसे मानतुला माना जाए तो 'पगला बाबा' की कहानियों को इधर की कुछ उत्कृष्ट कहानियों के रुप में अलग से रेखांकित करना होगा।" [68] मिश्र जी की कहानियों में सांकेतिकता,वातावरण की सूक्ष्मता संगीतम्यता और शैल्पिक सुगठता तो है ही, इसके अलावा उन्होंने प्रवाह शैली,पूर्वाभास शैली,पूर्वदीप्ति स्वप्न कथन शैली का प्रयोग किये व मानव जीवन की विसंगतियों को चितित करने के लिये अमूर्त रुपों कीपरिकल्पनाएँ की तथा प्रतीकों और बिम्बों का सहारा लिया। इसके अलावा वर्णनात्मक चित्रांकन शक्ति द्वारा मूर्तिकरण की कला के माध्यम से रचना को जीवन्त और कलात्मक रुप प्रदान किया। वस्तुमुखी वर्णन में उनकी तटस्थता देखते बनती हैं।

उपाध्याय 3–
कथोपकथन सौष्ठव

कथा–साहित्य में कथोपकथन शिल्प का विशेष महत्व हैं। कथोपकथन का एक प्रयोजन है कि वह कथावस्तु की प्रगति में सहायक हो, दूसरा प्रयोजन है कि वह चरित्र–चित्रण में सहायक हो। इसके अतिरिक्त,नाटकीय प्रभाव के लिये संवाद सर्वोत्तम साधन हैं।

अतः कथाकार कथोपकथन रुपी साधन से कथा को गतिमयता प्रदान करता है व पात्रों के चरित्र के विभिन्न पहलुओं को उद्घाटित करता है। तथा अपने जीवन दर्शन को संवाद और भाषा शैली के माध्यम से कलात्मक परिधि में व्यारव्यायित करता हैं। संवाद और भाषा शैली की समृद्दि पर लेखक के जीवन दर्शन के स्पष्टीकरण की प्रौढ़ता टिकी हुई हैं।

कथोपकथन शिल्प की दृष्टि से यदि मिश्र जी के कथा–साहित्य का आकंलन किया जाए तो उन्होंने कथोपकथन के क्षेत्र में विविध प्रयोग किए है और निरन्तर प्रयासरत भी है, उनके कथोपकथन में नवीनता, मौलिकता, स्वाभाविकता, लघुता, नाटकीयता, प्रतीकात्मकता, व्यग्यांत्मकता व पर्याप्त प्रौढ़ता दृष्टि गोचर होती हैं। उनके कथा–साहित्य ने नये विषयों को स्पर्श किया। इसलिये इनके संवाद प्रसंगानुकूल एवं स्वाभाविंक है। वे विषय वस्तु, व्यक्ति, वातावरण व स्थितियों के अनुरुप संवादों को रुप प्रदान करते है, और अपने विचारों को प्रेषणीयता के अनुरुप पात्रों को ढालते है, व उन विचारों के अनुसार ही संवादों को स्वरुप प्रदान करते हैं। अभिव्यक्ति को प्राजंल बनाने के लिये मिश्र जी बड़े चुस्त चौकन्द, सीधे धारा प्रभाह संवादों का प्रयोग करते हैं।

जहाँ मिश्र जी में बुन्देलखण्डी अंचल विशेष के परिप्रेक्ष्यों का चित्रण किया हैं। वहाँ कथोपकथन शिल्प लोकभाषा के प्रयोग से जीवन्त हो उठता है व अभिनव सौन्दर्य छोड़ता है। 'लाल–पीली–जमीन' उपन्यास में कथाकार ने बुन्देलखण्ड अंचल विशेष के परिवेश की जंगली, भयानक, पाश्वी, हिंसक शक्ति,वहाँ की मिट्टी में पनपने वाले निर्लज्ज शौर्य, मूल्यहीनता का चित्राण किया है। उपन्यास में वर्णित कस्बाई जीवन वर्णन के संवादों में संवादों की बेबाकी स्वाभाविकता दृष्टिगोचर होती है। संवादों में भड़कीलेपन व नाटयात्मकता का सहारा नही लिया गया है। व्यक्तियों ,स्थितियों, वस्तुओं के बीच एक अजीब किस्म की तनावी लयमयता हैं।

मिश्र जी ने उपन्यास में वर्णित कस्बाई जीवन की कूर वास्तविकताओं व कठोर यथार्थ, हिंसक घटनाओं को सशक्त चरित्र द्वारा रुपायित किया है? व उसी अनुरुप संवादों को ढाला है। कल्लू, सुरेश, केशव, कैलाश, शिवमंगल, हिंसक पशु जिन्दगी जी ने

के लिये बाध्य होते है। स्त्री जीवन की भयानक नियति को भी बडे सशक्त पूर्ण संवादों में व्यंजित किया गया हैं। यौवन की दहलीज पर पैर रखने से पहले लड़कियॉ घर की चाहर दीवारी में कैद कर दी जाती है। बड़े के साथ झूले में पेंग भरते समय यौवन की बूदों का कुछ मधुर अहसास शान्ति को होता है। वह बड़े का हाथ पकड़ कर मोहल्ले के लड़कों के मुँह पर पोतना चाहती है। बड़े से कहती है कि मैं कालिख पोतूँगी– इस मोहल्ले के मुँह पर देखना.......[69] परन्तु वह शिकार हो जाती है गन्दे, घिनौने लगोटधारी पंडित की वासना का।

पूरे उपन्यास में विवशता, लचारी, भय का दर्दनाक चित्रण पात्रों के स्तर के अनुरुप हुआ है पर स्वाभाविकता कहीं समाप्त नहीं हुई।

चेहरा उपन्यास के कथोपकथन पात्र की भावना व व्यक्तित्व से अनुप्राणित है। उपन्यास मनोवैज्ञानिकता का पुट लिये है व इसके द्वारा पात्र के चरित्र पर प्रकाश पड़ता हैं मानव के अभ्पान्तर तथा बाह्य रुप में अन्तर होता है। मिश्र जी ने उपन्यास में चित्रित पात्रों के बाहरी तथा मानसिक धरातल को बड़े ही सहज, स्वाभाविक सुगम ढ़ग से उभारा है। प्रमुख पात्र शुक्ला की खीज, छटपटाहट, द्वन्द्व, नपुसंकता संवादों के माध्यम से उजागर हुई है। केशवदास से बदला लेने के लिये वह उसकी लड़की से मेल–जोल बढ़ा लेता है। सोचता है कि कमबख्त जानेगा तो कि घुलना क्या होता है। और एक दिन उसे शहर से बाहर एक फार्म में ले जाने में सफल होता है, पर वहॉ कुछ नहीं कर पाता है। अपनी नाकामयाबी पर अपमानित और हीन महसूस करता हैं। मुझे लगा केशवदास ऊपर से सब कुछ देखकर हॅस रहा है– होशियार पर बहुत होशियार नहीं। उसकी खीज इस कदर बढ़ जाती हैं कि वो अन्ततः अपनी कॉलेज की दोस्त, केशवदास को खुश रखने वाली रचना को अपने कमरे में ले जाने में सफल होता है व आधा बालात्कार जैसा कर बैठता है। व कुछ राहत महसूस करता है। परन्तु उसकी छटपटाहट इधर–अधर घुमड़ती हैं और केशवदास उसके व्यक्तित्व लीलता चला जाता है। "मुह की लिपस्टिक साफ करने के लिये जब मैं बाश–बेसिन के शीशे पर झुका तो अगुलियॉ कुछ कॉपती सी लगी केशवदास की अगुलियॉ।"[70]

कथाकार ने चरित्र और परिवेश को संक्षिप्तता में उठाया हैं। यह संक्षिप्तता कहीं–कहीं अधूरेपन का अहसास कराती है।संवादों की संक्षिप्तता महत्वहीन हैं। परन्तु पात्रों के द्वन्द्व,खीज,छटपटाहट कर संवाद –पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालते-हैं।

प्रेम और सेक्स जैसे विषय में परिवर्तित मानसिकता को उजागर करने वाले उपन्यास उतरती हुई धूप में संवाद आधुनिक जीवन में बदलती मानसिकता तथा चरित्रों की यथार्थ प्रतीति में सहायक होते हैं। परन्तु कहीं–कहीं नायक–नायिका के प्रेम की

अभिव्यक्ति में ऐसे संवाद मिलते है जो स्वाभाविक मनोभावों को प्रकट नहीं कर पाते है। वे कुछ–कुछ सामान्य या आम उपन्यासों जैसे लगते हैं।

जिससे कथोपकथन की शिल्पगत दुर्बलता दृष्टिगोचर होती है। यह उपन्यास वैसे प्रेम की असफलता, तनाव, द्वन्द्व, जटिलताओं को उजागर न कर जीवन में प्रेम की अहमियत पर प्रकाश डालता है। लड़के को देवता मानने वाली लड़की विवाह दूसरी जगह होने के पूर्व होटल में अपने प्रेमी पर पूरी तरह समर्पित हो जाती और 'त्वदीयं वस्तु गोविन्दम्' बड़बड़ाती हैं वह एक तरह के नशेमें बड़बड़ाती चली जा रही थी " माफ कर दो" "मेरे देवता.........." जीवन हमें भ्रष्ट करे उससे पहले यह पूजा हम कर ले.....यही अच्छा है..... यही अच्छा हैं.....[71]

अपने वैवाहिक जीवन में वह उस घटना पर कभी पश्चाताप् नहीं करती। उपन्यास भावुकता भरे संवादों से भरा पड़ा है। जो कहीं–कहीं मूल बिन्दू को ग्रहण करने में बाधा पहुँचाते हैं। उपन्यास के पहले पक्ष जो भावुकता नायिका में है वहीं दूसरे पक्ष में नायक में उभरती है। विवाह के दस वर्ष बाद जब दोनों मिलते है तो प्रणय की पूर्व स्मृतियों में डूबा नायक सोचता हैं कि नायिका उसे सहज रुप से अब भी सुलभ होगी। परन्तु प्रणय में अवरोधक कुंठा के कारण वह अपनी प्रेमिका और भाई साहब के अन्यथा सम्बन्धों की बात सोचता है जिससे उसकी हलचल, आकोश,विद्रूपता बढ़ जाती हैं। एक रात जब वह प्रेमिका से एकान्त में मिलने की मधुरेन्छा से उसके घर जाता हैं। वहाँ ताला देखकर उसकी निराशा चरम तक पहुँच जाती है। उसकी संवेदनात्मक सघनता इन संवादों के माध्यम से उभरती हैं– " मुश्किल यही थी....भूत मर गया होता तो दफना देता. ...... वह सिर्फ अधमरा था कमबख्त।[72]

"गोविन्द मिश्र का यह उपन्यास पढ़ते समय शैली की एक महत्वपूर्ण विशेषता संवादों के माध्यम से उभरती है। वह है शतरंज के खेल में दो स्पर्धियों का मुहरा पट पर रखने के पूर्व की मानसिक दॉव पेच पेच वाली मनोवस्था का अंकन। खास कर भाई साहब और 'वह' के बीच के संवादों में यह पूरे उत्कर्ष पर है।[73]

'हुजूर दरबार' उपन्यास का ताना बाना ऐतिहासिक एवं राजनीतिक सूत्रों से बना है। स्वतन्त्रता के पूर्व एवं स्वन्यत्रोत्तर काल की झॉकी राजनीतिक आन्दोलनों के परिप्रेक्ष्य में चित्रित की गयी है, तथा रियासत के बदलते स्वरुप का ऐतिहासिक वर्णन हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की घटनाएँ अत्यन्त भयानक रुप में उभरती है। कथाकार ने उपन्यास में वर्णित पात्रों की स्वाभावगत विशेषताओं के अलग–अलग पहलुओं तथा उनके अर्न्तमन की तहों को खोलने के लिये छोटे–छोटे प्रसंगव संवादों का प्रयोग किया है। लेखक ने स्वतन्त्रता के पूर्व रियासत की जी–हजूरी करते वर्ग में प्रमुख पात्र हरीश के परिवार के सदस्य पिता व दादा तथा स्वयं हरीश के सम्बन्ध राजघराने से स्थापित होते

है। इन सम्बन्धों की सघनता उसमें कम्पन्न पैदा करती है। हरीश का सम्बन्ध प्रौढा रानी नेपाल सरकार से बनता है। वह अपने मानसिक तनावों को शिथिल करने के लिये हरीश का इस्तेमाल करती है। पर बाद में हरीश को उनकी उपेक्षा सहनी पड़ती है। जिस का प्रभाव उसकी मानसिक चेतना पर तीव्रगामी रुप से पड़ता है उसकी पीड़ा की गहराई इस संवाद द्वारा चित्रित होती है कि "मेरे सामने रखैल की जिन्दगी से भी गयी गुजरी चीज थी....एक लुंजपुज व्यक्तित्व ," अपना स्वत्व नहीं आप आदमी नहीं बल्कि सिर्फ एक चीज।[(74)]

स्वतन्त्रता के बाद भी उसकी पी0 एच0डी को नष्ट करवाया जाता है। उसे रियासत में वापस लौटने के लिये संत्रस्त किया जाता है व रियासत लौटने पर रियासत की ओर से मिली हुई जमीन को उससे छीन लिया जाता है। इन्हीं स्थितियों में उसके पिता की मृत्यु हो जाती है।

यह मिश्र जी के शिल्प की विशेषता है कि उपन्यास के परिप्रेक्ष्य को इस प्रकार चित्रित किया गया है कि उपन्यास में वर्णित स्थितियों, घटनाओं व पात्रों की मानसिक संवेदनाओं का अनुभव पाठक स्वयं करने लगता है। अतः उपन्यास के संवाद और भाषा लेखक की प्रौढ़ साहित्य साधना के परिचायक है तथा पृष्ठभूमिका की सृष्टि अत्यन्त व्यजंनात्मक तथा चित्रात्मक रुप में हुई हैं।

'धीरे समीरे' उपन्यास में ब्रजयात्रा में भिन्न–भिन्न प्रान्तों के भिन्न भाषा भाषी भिन्न–भिन्न धन्धे व्यापारी पेशा वाले लोगों की स्वाभाविक विशेषताएं उनके संवादों के माध्यम से उद्‌धाटित होती है। पात्र वार्तालाप द्वारा अपनी विद्रूपताओं विरुपताओं,दुर्बलताओं मन्तव्यों, कार्य विधियों को प्रकट कर देते है।

इसके साथ कुछ संक्षिप्त,परन्तु अर्थ गम्भीर वाक्यों से किसी चरित्र की विशिष्टता को सशक्त ढंग से रुपायित कर कथा– संसार में जीवतंता उत्पन्न की कला में गोविन्द मिश्र को महारत हासिल है। रघु भैया और ब्रह्मणी,नन्दन सुनन्दा, सत्येन्द्र, नरेन्द्र और उसकी पत्नी रत्ना, मंजुला बैन और उनका नौकर राधे शैला और उसके साथी रामप्रसाद कितने–कितने ही व्यक्तियों को लेखक न जीवन्तता प्रदान की है। कुछ चन्द वाक्यों से किसी व्यक्ति के पूरे जीवन के प्रारुप को चित्रमय बनाकर प्रस्तुत करने की कला भी गोविन्द मिश्र के पास है।[75]

उपन्यास'पॉच ऑगनों वाला घर' की कथा को जिसमें 1940 से 1990 के काल खण्ड में फैली तीन पीढ़ियों के उत्थान–पतन की कथा पचास वर्षो में धटित घटनाओं, परिवेशीय परिवर्तनों के साथ पीढ़ी की बदलती मानवीय सोच–दारुण परिणामों को गहन संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं।

मिश्र जी का वैशिष्ट्य यह है कि उन्होनें उपन्यास में वर्णित पॉच ऑगनों वाले भरे पूरे घर की तीन पीढ़ियों के इतिहास के चित्रण के साथ सयुंक्त परिवार, विभाजित एकल परिवार अन्त में आत्मकेन्द्रित परिवार उसका विघटन को बड़े कलात्मक संयम के साथ प्रस्तुत करते है तथा कालखण्ड के अनुसार व्यक्ति की बदलती सोच, स्थिति,गति स्वभाव वैचित्रय अवस्था, नैतिक, सॉस्कृतिक ह्यस, उनके कारणों और परिणामों को अद्भुत कलात्मक संयम के साथ प्रस्तुत करते है। कथाकार पहली पीढ़ी के त्याग,एकता,आदर्श,क्षमता शीलता धैर्य निष्ठा,संयम,परिवार के सदमस्यों के परम्परागत आचरण,अनुशासन,मूल्यनिष्ठा को पात्रों के परस्पर वार्तालाप द्वारा विवेचित करता है। इनमें प्राचारात्मक स्वर की अपेक्षा कलात्मक स्वर अधिक मुखरित होता है। कथाकार परिवार के सभी सदस्यों वैशिष्ट्यों की अलग–अलग पहचान संवादों के माध्यम से बड़े ही कलात्मक ढंग से कराता है।

इसी प्रकार इस काल राजनीतिक स्थितियॉ स्वतन्त्रता संग्राम का जन साधारण पर प्रभाव,अंग्रेजो की धूर्तता,दमननीति,परिवार के दायरे से निकलकर राष्ट्र की सुरक्षा हेतु बलिदान की भावना, भारतीय नेताओं के संकल्प विकल्प छात्र संगठन, देश विभाजन, गॉधी की हत्या, नेताओं का अधिकार लिप्सा इत्यादि का चित्रण पात्रों के वार्तालाप द्वारा व कथानायक के कथनों द्वारा होता है।

दूसरे भाग में परिवार के विभाजित होने और लोगों की भावनाओं में पडी गहरी दरारों को मिश्र जी ने राजन् और रम्मों की विपरीत जोड़ी के माध्यम से दर्शाया है। रम्मों की जीवेतृष्णा,महत्वाकांक्षा मनो–मनोग्रन्थियॉं, आनुवांशिक संस्कार, संवेदन शन्यता विचारों की टकराहट, अर्न्तद्वन्द्व मूल्य हीनता की प्रवत्ति सहज सटीक संवादों, वार्तालाप में व्यक्त हुई है। सम्मिलित परिवार के अच्छे संस्कारों को पाने वाला राजन् परिवार के विभाजित होंने की विवशता का शिकार बनता है। रम्मों के वर्चस्व के कारण वह परिवार को टूटने से नहीं बचा पाता हैं और टूटने की गहरी पीड़ा को झेलता है। परन्तु रम्मों का सम्मोहक मायाजाल उसे अपना गुलाम बना लेता है। और वह धीरे–धीरे बदलता चला जाता है। इसका बड़ा संश्लिष्ट चित्रण अनेक प्रसंगों व संवादों के माध्यम से कथाकार व्यक्त करता है। कथानायक ने संवादों के द्वारा चरित्र की विशेषताओं को ही नहीं उभारा है। अपितु उनके मानसिक का परिचय भी दिया है। राजन् की धीरे–धीरे बदलते जाने की स्थिति देखिए कि वह बीमार मॉ को अपने यहॉ लाना चाहता है पर रम्मों यह कह राजन् को उस प्रसंग काट देती है कि मैं अपने घर में मनहूसियत नहीं चाहती...... चार दिन जिन्दगी के है और उन्हें आ हे–कराहें सुनने में काट दो, उँह! [76] और यह प्रसंग धीरे–धीरे उसके दिमाग उतरता चला जाता है राजन् महसूस करता है कि उसमें तेजी आती है तो सिर्फ उन कामों के लिये जिसका सीधा ताल्लुक रम्मों और उसके बच्चों से

है। बाकी क लिये पता नहीं कहाँ से ढीलापन आ जाता है। टलता रहता है,टलता चला जाता है।........शायद इसलिये कि इन कामों के लिये पीछे से धकियाने वाली रम्मों नहीं होती।[77]

इस कालखण्ड की तत्कालीन राजनीतिक हलचलों, उसके कारणों,व्यवस्था के भ्रष्ट स्वरुप भावी परिणामों को मिश्र जी ने सन्नी चाचा की संवेदना में व्यक्त किया है। कथाकार उनके वार्तालाप संवादों के माध्यम से उनके भावावेग,मनः स्थिति,बौद्विक विचारों को बड़े सन्तुलित व कलात्मक ढंग से मुखरित करता है।

तीसरे कालखण्ड में 1980–90 तक की स्थितियाँ तीसरी पीढ़ी के विश्रृंखलित होने का चित्रण है जो पश्चिमी भोगवादी लबादे को पूरी तरह ओढ़ चुकी है। मिश्रजी ने इस तीसरी आत्मकेन्द्रित पीढ़ी की धूरी हीनता व विकृत मानसिकता को राजन् रम्मों के बच्चों के माध्यम से दर्शाया है। इस पीढ़ी के मनोवैज्ञानिक कारणों की खोज के साथ–साथ विभिन्न सन्दर्भो में इस विकृति के कारणों का संकेत भी देते है। रम्मों का निंरकुश स्वाभीत्व के कारण राजन् को धन अर्जन की बढ़ती प्रवृति व परिवार से दूर जाना ही राजन् के बच्चों की मूल्यहीन उच्छृंखलता को प्रश्रय देता है। परिणाम यह होता है कि राजन् को परिवार से काटकर रम्मों ने जो जमीन अपने लिये खोजी थी जिस पर अपने स्वामित्व को टिकाया थी उसी जमीन पर उसके बच्चे अकेले छोड़ जाते है। रोक म्यूजिक रेस्तारॉ, बियर, सिगरेट की यह पीढ़ी अपने पिता के हार्ट अटैक पर राजन् की व्यथा से उदासीन रहते है।

इस कालखण्ड की पतनशील और अराजक राजनीतिक तस्वीर भी कथा कार बड़े कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करते है। औपन्यासिक दृष्टि से इस उपन्यास के संवाद पात्रानुकूल सहज, निर्दोष, पात्रों की मनः स्थिति, मानसिक स्तर, भावावेश,बौद्विक विचारों को कलात्मक ढंग से मुखरित करने वाले है। इन संवादों में नाटकीयता व संवादगत सभी विशेषताएँ देखी जा सकती है। प्रस्तुत कृति में संकेतात्मक रुप में बहुत कुछ व्यंजित हुआ है कृति का वैशिष्टय व महत्व इसी कौशल में है।

<u>मिश्र जी कहानियों में कथोपकथन सौष्ठवः–</u> संवाद उपन्यासों की तरह कहानी का अनिवार्य तत्व है। मिश्र जी की कहानियों के संवाद स्वाभाविक,लघु,बाग्वैदग्धापूर्ण आर्कषित व सुसंगठित हैं। पात्र देशकाल, परिस्थितियों के अनुरुप हैं। संवादों के माध्यम से पात्रों की मनः स्थिति,किया–प्रतिकिया, इच्छा,विचार,योजना,आदि का प्रकटन भली भाँति हुआ है। पात्रों के अर्न्तद्वन्द्व,संस्कारो का मोह, मानसिक ऊहापोह वैचारिक,भावुकता,आधुनिकता और परम्परा का अर्न्तद्वन्द्व, संवादों के माध्यम से व्यक्त होता है। संवादों में स्वाभाविकता व वैज्ञानिकता की ओर मिश्र जी ने पूरा ध्यान दिया है। उनकी कहानियों में उनका अपना निजीपन है। ये निजत्व प्रस्तुतीकरण भाषा, संवादों, विषय–साम्रगी, स्थितियों इत्यादि में

पूर्णरुपेण दिखायी देता है। साथ ही वर्तमान कहानियों में पात्र, परिस्थिति, देशकाल के अनुरुप सांकेतिकता, प्रतीकात्कता, आंचलिकता दिखायी देती है। जिससे कहानियों में अमूर्तता को प्रश्रय मिला है अतः उनके संवादो की व्यवहारिकता और औचित्य उनकी स्वाभाविकता में निहित है।

"यह कैसी सिनग्धता हैं, जिसने उन्हें लपेट दिया हैं। छोटा बड़ा ब्याहता सौता, मित्र शत्रु.... वे सवाल पता नही कहॉ डूब गये। भीतर केवल शान्ति का सागर है... अलोकित"[78]

कैसा अद्‌भुत था वह प्रकाश.... एक छोटी सी जगना में ही। जगना जहॉ बड़ी होगी वहॉ?

ज्यों–ज्यों वह रोशनी उसके पहुँच के बाहर होती गयीं लोबों का मन ग्लानी से भरता गया। हीनता बोध जीवन में पहली बार उभरा और वह भी कि लोबो उसके बोझ से दबा जा रहा था।"[79]

अतः कहा जा सकता है कि मिश्र जी एक कुशल संवाद शिल्पी है। कथा साहित्य कला की दृष्टि इनके संवाद निर्दोष,लघु व पात्रानुकूल है वे कहीं भी अस्वाभाविक प्रतीत नहीं होते है कहीं–कहीं इनमें नाटकीय तत्व के दर्शन भी होते है। अतः स्थिति–परिस्थिति, पात्रानुकूल संवादों के विभिन्न प्रयोग इनके संवाद लेखन क्षमता, प्रौढ़ता के प्रतीक हैं।

उप अध्याय–4 शिल्प सौष्ठव का वैशिष्ट्य

स्वतंत्रता के बाद मानव जीवन और उसके जगत परिवेश में द्रुतगामी परिवर्तन की स्थितियाँ आई। अतः रचनाकारों में अपने अनुभव विश्व तथा संवेदनाओं की माध्यम से इन परिवर्तित स्थितियों को देखा, परखा, भोगा और नये जीवन और उसके नये आयामों की खोज की।

नये कथ्य और नवशिल्प के आधार पर अनेक नवप्रयोग करते हुए समाज के विभिन्न वर्गो की नानाविध समस्याओं को उद्घाटित किया। शिल्प के क्षेत्र में नये प्रयोगों ने कथा साहित्य की क्षमता को विस्तार दिया, जिसे उपलब्धि की दिशा में नया कदम माना जा सकता हैं।

प्रयोग धर्मी गोविन्द मिश्र जी ने भी अपने कथा साहित्य में बहुविध शैल्पिक प्रयोग कर रचनाओं में शिल्प को सँवारा, सजाया और उसमें आर्कषण भरा परन्तु वे शब्दोंके चमत्कारिक प्रयोगों से बचते रहे, वे चमत्कार धर्मी नहीं लोकधर्मी हैं, प्रयोग धर्मी है और इस निर्वाहन में शिल्प उनका सहयोगी बना, शिल्प और कथ्य द्वारा उन्होंनें अपनी रचनाओं को सोद्देश्य बनाया। यद्यपि वे लेखन के शुरुआती दौर में अपने को शब्दों में चमत्कारिक मोह से नही बचा सकें (जैसा कि अधिकतर लेखकों के साथ होता हैं)पर धीरे–धीरे उनकी रचना प्रकिया में निखारा पन आता चला गया, और चमत्कारिक शब्दों की धुन्ध छटने लगी।"जहाँ तक शिल्प का सवाल है, गोविन्द मिश्र ने उन तमाम कलात्मक युक्तियों का उपयोजन किया है जो साहित्यिक व्यापार में व्यवहत हैं। मसलन स्मृत्यावलोकन काल के साथ कीड़ा अतीत को वर्तमान में लाना,विभिन्न पात्रों की मानसिकता के बिन्दुओं से अनुभव का कथन,नाट्यात्मक निवेदन। कभी चरित्र के बाहर से वर्णन तो कभी दूसरे चरित्रों की दृष्टि से घटना, प्रसंग व्यक्ति बयान, कभी प्रसंग की चित्रपट की तरह दृक्– प्रतीति देते हुए प्रस्तुत करना, तो कभी अपनी ओर से नेरेशन करना कभी आत्मगत अनुभव का कथन तो कभी दूसरों द्वारा निवेदन। कहीं मानसिक विघटन के बिन्दु पर वाक्यों में बिखराव,व्याकरण की दृष्टि से कहीं स्खलन भी परन्तु कलात्मक दृष्टि से सोद्देश्यता..... ये सारे शिल्पगत कौशल हिन्दी उपन्यास विद्या में रुढ़ हो गये हैं। गोविन्द मिश्र उनका उपयोग अनुभव की शक्तिशाली अभिव्यक्ति के कोण से करते है। समन्वय के समर्थक है अतिरेक,अविवेक और प्रदर्शनी के खिलाफ है... तो वे शिल्प को कथ्य पर हावी नहीं होने देते। आत्मपरक लेखन में भी एक तरह की "कलात्मक तटस्थता वे बरतते हैं।" [80] परन्तु मिश्र जी स्वयं बताते है कि "कलात्मक तराश पर मैं बहुत नहीं जाता हूँ,सहज होने का संकल्प लेकर ही रचनाकर्म में प्रवृत होता हूँ। व्यक्तिगत बात को यदि निवैयक्तिक ढंग से नहीं कह पाता हूँ तो अपने पर खीजता

हूँ। इसलिये मेरी रचना में अन्य को बहुत स्थान मिलता है। मेरा मै 'आड़े भी नहीं आता।[81]

गोविन्द मिश्र जी के उपन्यासों का शिल्प विधानः–

मिश्र जी ने उपन्यासों में मानव जीवन की विविध समस्याओं,मानव मन के अनेक भंगिभाओं परिवेश तथा आधुनिक भावबोध को पहचान कर उन्हें बौद्विक कौशल के बल पर रुपायित किया। तथा शिल्प के क्षेत्र बहुमुखी प्रयोग कियें। उनके उपन्यासों में कही वर्णनात्मक शिल्प कही मनोविश्लेषात्मक शिल्प आंचलिक शिल्प विधान प्रयोगपरक शिल्प विधान इत्यादि के दर्शन होते हैं। परन्तु उनके उपन्यासों और कहानियों ने जो शिल्प ग्रहण किये हैं उससे उपन्यासों और कहानियों की आत्माको कोई क्षति नही हुई हैं " मैं सोचता हूँ कि शिल्प एक बाधा न बने मेरे उपन्यास को मेरी रचना को आप तक पहुँचाने में। यह मेरी बाध्यता है कि मुझे किसी न किसी शिल्प में उसे बाधना हैं। लेकिन गौर से आप देखें तो शिल्प पाठक और साहित्यकार के बीच में सबसे बड़ी दीवार भी हैं और हम कुछेक लेखक उस दीवार को पुख्ता बना देते हैं। .....तो मेरा उद्देश्य हमेशा यह रहा है अपने उपन्यासों और कहानियों के बारे में कि मेरी चीज पाठकों को हिलाए न कि जैसे एक चाकू जो आप नदी के पानी में फेके और वह यू ही तिरता हुआ जाए बल्कि कुछ खलबली भी पैदा करें। इसके लिये मैं हर रचना को उसका शिल्प खुद ढूढने देता हूँ। मेरे आलोचक भी अलग से मेरे शिल्प को उठाकर उसकी विवेचना मुश्किल से कर पाएंगे क्योंकि वह इतना ज्यादा घुला मिला रहता है मेरे कथ्य मेरी कथावस्तु और रचनाओं में।"[82] मिश्र जी शिल्प के लिये सायास प्रयास नही करते अभिव्यक्ति स्वयं ही अपना माध्यम चुन लेती हैं। उनकी रचनाएँ नूतन आयाम बदलते हुए मानव मूल्यों,नये भावबोधों परिस्थितियों की संवेदनाओं के अनुरुप ढालकर अपना श्रृंगार करती हैं। प्रबुद्ध कला शिल्पी मिश्र जी के मानस मथन में समकालीन युग की व्यापक घटनाओं के विशाल परिवेश तथा विस्तृत जीवन के यथार्थ उभरे। अतः जहाँ एक ओर उन्होंने अपनी रचनाओं में अस्वस्थ वृत्तियों कुठांवादी व्यक्तिगत एब्सर्ड जीवन दर्शन, आतंकित प्रवृतियों का अनुसंधान किया वहीं दूसरी ओर अत्यन्त सशक्त आशावादी जीवन दर्शन व स्वस्थ जीवन मूल्यों को भी उजागर किय़ा।अपने प्रथम उपन्यास चेहरा मे मिश्र जी ने सरकारी संस्था में कार्यरत एक छोटे से अफसर 'मैं' के चोट खाए अहम् के मनोवैज्ञानिक पहलुओं को खोज कुंठा तथा उसके मानसिक प्रवाहों, संघर्षो और बाह्म रुपों को अपने शैल्पिक कौशलक्षमता से बड़े ही सहज स्वाभाविक और बरीकी से उभारा है साथ ही अन्य पात्रों की स्थितियो के चित्रण में कम से कम शब्दों का इस्तेमाल किया हैं।

" मानसिकता और स्थितियॉ प्रसंगो का यह ताना बाना सर्वत्र उपन्यास को एक ऊँचा स्तर प्रदान करता हैं।"[83] लगता है कि जैसे उपन्यास में भोगे हुए यथार्थ की यथावत् तस्वीर पेश की गयी हो।

'लाल पीली जमीन' उपन्यास में मिश्र जी ने बुन्देलखण्ड अंचल की छोटी सी बस्ती का चित्रण किया हैं तथा परिवेश,समय अंचल विशेष के माध्यम से सारे समाज की पहचान कराई हैं। ये उपन्यास की विशिष्टता है जो उसे अन्य आंचलिक उपन्यासों की श्रेणी से अलगाती है। वैसे अन्य आंचलिक उपन्यासों की भॉति इसमें क्षेत्र विशेष को नायक बनाकर वहॉ की भौगोलिक सामाजिक स्थिति वहॉ की भयावह हिंसक मूल्यहीन,अमानवीय संस्कृति को उभारा गया हैं। उपन्यास में बहुविध पात्रा है हर पात्र अपने अभावों,भावों में उपस्थित हुआ,परन्तु ये पात्र अपने व्यक्तित्व का प्रकाशन न कर अंचल को उजागर करते हैं। केशव की अन्य पात्रों को अपेक्षा अतिरिक्त संवेदन क्षमता प्रदान की गयी हैं। जो अपने संवेदना को विखेरता हैं परन्तु अन्ततः उसकी संवेदना भी क्षेत्र चरित्र नायक की संवेदना बन जाती हैं। उपन्यास में पात्रों के माध्यम से बुन्देलखण्डी मानसिकता की विभिन्न संशलिष्ट पर्तो को उघाड़ा गया हैं। रचना में फैलाव अधिक हैं। आंचलिक भाषा के साथ–साथ ध्वन्यात्मक,गत्यात्मक,सादृश्य मूलक बिम्ब,प्रतीकों संकेतों ध्वनियों के माध्यम अंचल के यथार्थ को उभारा गया हैं। "सारा उपन्यास बड़ी दक्षता से लिखा गया हैं। और एक बहुत बड़े पैमाने पर विचारों को झकझोरता और ललकारता हैं। कहीं–कहीं प्रतीकों का आग्रह हैं, वह पूरे विन्यास में फिट नही बैठता हैं।'[84] परन्तु कलात्मक दृष्टि से उपन्यास अत्यन्त सराहनीय हैं।

'हुजूर दरबार ' उपन्यास में रियासत के परिवर्तित ऐतिहासिक रुप को वर्णनात्मक शिल्प में उभारा गया हैं वैसेइस में घटने वाली घटनाऍं अन्य रियासतों में भी थोड़े बहुत अन्तर के साथ घट सकती हैं। इतिवृत प्रधान इस उपन्यास में राजतन्त्रा के प्रजातन्त्र में विलीनीकरण के ऐतिहासिक परिवर्तन को सत्ता स्थानांतरण की जटिलताओं को घटनाओं और विवरणों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हैं। प्रारम्भिक दौर में उपन्यास की संरचना कृत्रिक और लम्बे–लम्बे स्वगत खण्डों के कारण बोझिल लगती हैं। परन्तु लेखक व्यापक परिप्रेक्ष्य में अपनी भाववस्तु कों प्रस्तुत करने में समक्षम हुआ हैं। एक ओर वह सत्ता परिवर्तन के समय दोहरे भाव से जीती रियासती मानसिकता, विभाजन की विभीषकाऍं राजदरबारों,मन्दिरों,मठों,राजमहलों, राजबाड़ों को वर्णन प्रभावपूर्ण ढंग से चित्रित कर सका हैं वही दूसरे और राजदरबार से जुड़े उपन्यास के प्रमुख पात्र के संत्रास को मूर्त्त कर सका हैं। ये संत्रास सत्ता परिवर्तन पर और मूर्त होकर उपस्थित होता है। 'हुजूर दरबार में' इतने लम्बे संघर्ष का रुपायन बहुत साफ और रोचक ढंग से हुआ हैं,तथा जीवन प्रसंगों का वर्णन भी दृक बिम्ब की तरह प्रस्तुत हुआ हैं। सत्ता परिवर्तन के व्यापक

और बहुआयामी चित्रण में उपन्यास का वातावरण विन्यास अत्यन्त सघन और विस्तृत हैं, वातावरण कही विवरणात्मक सपाट और कहीं सीधा चित्रित है तो कही संकेतों से काम लिया गया हैं। पात्रों के संस्कार वातावरण एवं परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में चरित्रा के यथार्थ प्रस्तुत करने के लिये कहीं स्मृत्यवलोकन का सहारा लिया गया हैं। गोविन्द मिश्र के कलात्मक कौशल्य का एक वैशिष्ट्य यह है कि उपन्यास की घटनाएँ और व्यक्ति तत्कालीन परिस्थिति के वैविध्यपूर्ण सांकेतिक दर्शनों से सघन होते हैं। एवं अधिक अर्थवान भी होते हैं। दूसरे शब्दों में ये घटनाएँ और व्यक्ति अनेक अर्थो के दबाव से वजनदार हो जाते हैं।"[85]

उपन्यास घटनाओं और विवरणों की योजना से समसामायिक राजनीतिक गतिविधियों का ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत कर सका हैं।

'तुम्हारी रोशनी में' उपन्यास को यदि शिल्प की दृष्टि से ऑका जाए तो कम है परन्तु अनुभूति की सघनता ज्यादा हैं। उपन्यास की भाषा में काव्यात्मकता झलकती हैं। मिश्र जी साक्षात्कारों में बताते है "कि व्यक्तिगत रुप से मेरे लिये रचना में जो अन्तर ध्वनियॉ होती हैं......वे चीजें जो लेखक अनकहे कह गया वे जितनी ज्यादा होगी उतनी ही सशक्त रचना होगी।"तुम्हारी रोशनी' में की बाात उठी तो उसमें जो अनुभूति हैं वही महत्वपूर्ण हैं यही नहीं कि अन्त में सुवर्णा इसके पास जाती हैं। या उसके पास जाती हैं,महत्वपूर्ण है उसकी छटपटाहट जिसमें एक नया जीवन,एक नया व्यक्ति जन्म लेगा।'[86]

'धीरे समीरे' जैसा श्रेष्ठ उपन्यास मिश्र जी के कलात्मक संयोजन का एक अनूठा उदाहरण हैं। उपन्यास में भारतीय मानस में गहरे धॅसी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं की जड़ों को उकेरा गया हैं। उपन्यास में ब्रज यात्रा की प्रमुखता झलकती है,अतः यात्रा ही प्रमख पात्र के रुप में उभरकर अपने अस्तित्व का प्रभाव पाठक के ह्रदय में छोड़ती हैं। और ब्रजजभूमि के प्रमुख स्थानों के महामत्य पड़ावों को अनेकानेक किवंदन्तियों, अख्यानों मिथकों के माध्यम से उभारती हैं। उपन्यास की सरंचना में कथा व चरित्र दोनों ही यात्रा के माध्यम से ही गतिशीलता पाते हैं। वैसे चरित्र अपनी पूरी विशिष्टता के साथ उभरे व यात्रा के दौरान बनते-बिगड़ते मानवीय रिस्ते सशक्त ढंग से रुपाथित हुए हैं ब्रजयात्रा को आधार बनाकर लिखाजाने वाले इस उपन्यास में मिश्र जी शिल्प के प्रति बड़ी सुरुचि बड़े धैर्य से काम लेते हैं। शब्द बल्कि अक्षर तक की यहॉ पैनी तराश नही, एक सुथर-सॅवार है-"शिल्प का अभिजात्य का अर्थ यहॉ सिर्फ सुथरपने स है,वरना अभिजात्य के नाम पर शब्दों,वाक्यों की ऐसी घुमावदार स्परोटी परोसी जाती हैंकि पूरा-पूरा पैरा पढ़ने के बाद भी पढ़ने वाला हतबुद्धि सिरा तलाशता रह जाता है। इसके बिल्कुल विपरीत 'धीरेसमीरे' में शब्दों की डलिया के फूलों की तरह चुना गया हैं। एक-एक शब्द को यत्न से उठाकर सही जगह पिरो दिया गया हैं- सुगन्ध और ताजगी से भरपूर।

ढेर–के–ढेर पुष्प–गुच्छों को ठुँसा नहीं गया।"[87] शिल्प ने कथा को एक नया आयाम देकर रचना को प्रौढ़ता प्रदान की।

<u>मिश्र जी की कहानियों का शिल्प सौष्ठवः–</u>

" कहानी की सही जमीन उसका कहानी पन' ही हैं, शिल्प की सार्थकता इसी कहानी पन को उभारने में हैं"हालांकि ये नामुकिन है कि सही शिल्प के अभाव में कहानीपन सार्थक हो पाए, यदि शिल्प कथा को कोई आयाम नहीं दे पाता,तब निश्चय ही वह कहानी को कमजोर बनाता हैं"[87] अतः कहा जा सकता है कि कथात्मकता कहानी का प्रमुख गुण हैं अगर किसी कहानी का शिल्प इस तत्व को क्षति पहुँचाता हैं तो कहानी पर प्रश्नचिन्ह लगाया जा सकताहैं। वैसे मिश्र जी भी शिल्प के चेष्टित प्रयास का विरोध करते हैं, वे साहित्कारों में बताते है कि " एक सीमा के आगे शिल्प के प्रति सजगता और सतर्कता को मैं बहुत अच्छा नहीं मानता। कहानी में यदि शिल्प का आग्रह बहुत ज्यादा होता हैं तो वह हमें कहानी और जीवन...... दोनों से ही दूर ले जाता हैं.....जैसे हर कहानी अपने लिये एक शिल्प को तलाश करती है उसे ढूँढा जाए,उस शिल्प को आने दिया तो जीवन स्थिति और कहानी में स्वाभाविक लयमयता आएगी। मैं यही कोशिश करता हूँ,पहले से तय नहीं करता कि मुझे इस तरह के शिल्प में कहानी लिखनी चाहिए। मेरी प्राथमिकता यह होती हैं कि जो अनुभूति कहानी मे प्रकट हो रही हैं, वह खूब तीव्रता से उतर कर आए पाठकों को झिंझोड कर रख दे.... सिर्फ मस्तिष्क के स्तर पर उसे चमत्कृत न करें। "[88] लेखक का यह दृष्टिकोण उनकी कहानियों में शैल्पिक सन्तुलन और संयम के रुप मे उभारता हैं इसलिये उनकी कहानियॉ कभी रेखाचित्र दिखाई देती हैं परन्तु कभी वह रेखाचित्र भिन्न और विशेष दिखायी देती हैं,कभी कहानियों की व्याख्या व विशलेषण जन्य आधार इतना पुष्ट लगता है कि कहानी निबन्ध का प्रभाव झलकाती परन्तु वह अपना कथात्मक आधा नहीं छोड़ती, कभी कहानियों मैं कविता की तरह भावुकता का पुट रहता हैं परन्तु कहानी का शिल्प जीवन की स्थितियों को सूक्ष्मतः से उभारता दिखायी देता है,कभी उसमें विवरणात्मकता तो कभी फोटोग्राफिक गतिमयता दिखायी देती हैं। परन्तु इन सबके बावजूद वह कहानी अपना मुख्य तत्व कथात्मकता को नहीं खोती और कहानी के वस्तु चयन में लेखक शिल्प कोण हमेशा काम करता रहता हैं।

मिश्र जी की शुरुआती दौर की कहानियोंमें शिल्प के स्तर पर अंलकृति और बुनावट का प्रयोग था कहानियों की शुरुआत मनः स्थितियों बिम्बों,प्रतीकों तथा संकेतों के माध्यम से होती या कहीं–कहीं भाषा को ध्वनि व चित्रों से इनके अर्थ को सार्थक किया जाता था, परन्तु धीरे–धीरे वे इन इन्द्रधनुषी रंगों के जालों से मुक्त हुए। परन्तु अपने समकालीन लेखकों की कहानियों के प्रयोगत्मक प्रभाव की तुलना में वे अपने शुरुआती

कहानियाँ श्रेष्ठ बताते हुए कहते है कि " लेखकों के साथ अक्सर यह होता है कि सघनता को पाने के चक्कर में खासा आलवाल कहानी पर जमा हो जाता है......शिल्प गत भाषागत,कथागत और कभी–कभी तो संवेदना ही उड़ गयी होती हैं। मेरे साथ जरुर यह कभी नहीं हुआ कि कहानी सिर्फ जुमलों का जमवाड़ा दिखे (लेखक हिन्दी लिखना जानता है तो बस इसलिये कहानी भी लिख सकता हैं) उन जुमलों से रत्ती भर रस टपकता.... सूखा–सूखा कोई अर्थ निकलता हैं। कभी वह भी नहीं। आज जो कहानियाँ लिखी जा रही हैं, उनमें दुर्भाग्य से अधिक संख्या ऐसी ही हैं। मेरी दृष्टि में इन सूखी–सूखी कहानियों से अच्छी वे कहानियाँ है जो बुक्काफाड़ कर रोती हैं..... जहां लेखक जरुरत से ज्यादा भावुक हो गया, उस भावुकता से जब मैं काफीफूट सरक आया, थोड़ा परिपक्क कहानियाँ लिखने लगा तो मेरे साथ उद्वेग उठना कुछ और था उठा कुछ और .....या कहानी पैनी तो बनी नही, बरीक कुछ ज्यादा हो गयी"।[89] अतः कहा जा सकता है कि मिश्र जी की शुरुआती कहानियों में भावुकता की अतिशयता व व्यक्तिगत चित्रण प्रतीक,बिम्बों के प्रयोग की अधिकता अमूर्त का प्रयोग होने के बावजूद भी ये कहानियाँ शिल्प सन्तुलन संयम के आश्चर्य जनक नमूने पेश करती हैं।

परन्तु धीरे–धीरे वे व्यक्तिगत बात को निर्वैयक्ति ढ़ंग से प्रस्तुत करने में सफल हुए और कहानियों मे आने वाले 'मैं' से मुक्त हुए हैं। "नये पुराने माँ बाप" संग्रह की कहानियाँ सीधे सहज ढंग से व्यक्ति आन्तरिक व सामाजिक यथार्थ को रुपायित करती हैं। अन्तःपुर कहानीसंग्रह की कहानियाँ में पात्रों की मनः स्थिति को बड़े ही सार्थक ढंग से मुखरित किया गया हैं। इस संग्रह की विशेष कहानी कचकौंच शिल्प,शैली और कथ्य की दृष्टि एक अलग तरह का प्रभाव छोड़ती हैं। जिसमें एक बूढें ग्रामीण स्कूल मास्टर की मनोदशा के माध्यम से तत्कालीन भारतीय जीवन वैयक्तिक पारिवारिक सामाजिक राजनैतिक यथार्थ को चित्रित किया गया हैं। "जहाँ–जहाँ लेखक ने तटस्थ भाव से मानसिकता का चित्रण किया हैं, विवादों और उपदेशों में अपनी ओर से दिये गये विश्लेषणो में नहीं उलझा हैं, वहाँ वह बहुत सफल रहा हैं।"[90]

'धाँसू संग्रह की सभी कहानियों का शिल्प अत्यन्त सशक्त संश्लिष्ट हैं,और राजनैतिक परिप्रेक्ष्य को उभारने में सफल हुआ हैं, इतना ही इन कहानियों में युग से जुड़ी मानसिकता के उलझावों को लेखक ने बड़े ही तटस्थ भाव से उभारा हैं। तथा राजनीति से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों की प्रतिकियाओं, आम आदमी यन्त्रणा को मुखरित किया हैं। इस संग्रह की कहानी 'धाँसू' भारतीय जीवन के हर क्षेत्रा में उपस्थित उन बिचौलियों को लेकर लिखी गयी हैं,जो सत्ता और सामाजिक अन्याय, अनाचार और उत्पीडन दृष्टि से अनोखा प्रभाव उत्पन्न करने वाली कहानी अपने आपमें एक मुकाम है हिन्दी सैटायर में।" [91]

इतना ही नहीं कहानी में समकालीन राजनैतिक स्थितियों का यर्थाथ अंकन हुआ हैं।

'खुद के खिलाफ' कहानी संग्रह में समर्थ कथाकार मिश्र जी ने अपने अनुभव जगत को अपनी सर्जनात्मक प्रतिमा बल सशक्त और स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया हैं, इसमें घटनाओं और स्थितियों के साथ–साथ जीवन मूल्यों की सार्थक तलाश की हैं। इन कहानियों का शैल्पिक गठन अत्यन्त ही जानादार, सशक्त है और आधुनिक जीवन के दबावों के प्रवाहों,जीवन की विसंगतियों से उपजे मानवीय संकट को रेखांकित करता है,जिसे शिल्प का एक नया आयाम माना जा सकता हैं 'शापग्रस्त' कहानी में शिल्प का एक उदाहरण देखिए–"यह मुल्क रहने लायक नहीं हुजूर...... जहॉ जाइए अपमान..... क्योंकि चमड़ी काली है,आप वहीं लोग है जो अपने ही देश में सिर्फ तीसरे दर्जे में चलने लायक थे...... ये कमीने कभी नहीं भूल सकते कि इन्होंने हिन्दुस्तान में सौ साल से भी ज्यादा हुकूमत की हैं......"(92) इन सभी कहानियों में लेखक ने किसी न किसी सांमाजिक विसंगतियों को पूरी संवेदनशीलता के साथ उभारा। लेखक का कहना है कि "मैं सोचता हूँ यथार्थ को अपनी पेचीदगियों में उभार देना अपने आप में बड़ी चीज हैं। समाज की बड़ी–बड़ी विसंगतियों या सम्बन्धों की चीजे..... ऐसी स्थितियॉ अपने आपमें कितना कह देती हैं? लेखक अगर अपनी दृष्टि को थोड़ा सा दाबकर रखें और चीजों को भले ही थोडी देर के कह लीजिए फोटोग्राफिक तरीके से सिर्फ पेश कर दे तो वह भी अपने आपमे बिना कुछ कहें नहीं रह सकता ।'(93) "खुद के खिलाफ की कहानियॉ कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर प्रभावित करती हुई अपने समय और परिवेश पर जागरुक लेखकीय प्रतिकियाएँ हैं।"(94)

'खाक इतिहास' संग्रह की दसों कहानियॉ शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त ही नवीन संश्लिष्ट और ताजगी से भरपूर है, इन कहानियों में इतिहास के काल प्रवाह को आधुनिक जीवन की संगतियों,विसंगतियों के साथ ठेठ जीवन के प्रवाह को शिल्प में उभारने की कलात्मक कोशिश की गयी हैं,कहानियों मे पीढ़ियों के द्वन्द्व,बाल मनोविज्ञान आंचलिकता,मध्यवर्गीय परिवारों के अर्न्तविरोधों के मध्य नारी की स्थिति अतीत परम्परा धरती भावात्मक रुप से जुड़े पात्र की मनः स्थिति इतिहास के कूरतम प्रवाह से जार–जार निखरी पात्रा की प्रौढ़ता पुत्र शोक की मृत्यु पर दुख की अनुभूति के मध्य उभारते जीवन मृत्यु के आध्यात्मिक दर्शन का कलात्मक संयोजन,जातीय अर्न्तविरोधों के बीच पनपती मानवता इत्यादि विषय को, शिल्पगत सतर्कता के साथ उभारा गया हैं। कहानियों को कथ्य शैल्पिक संवार के कारण अधिक संघनता से उभारा हैं। "इन कहानियों के विषय में यह और कहा जा सकता हैं कि लेखक आग्रह भाषा, शिल्प या रुप तोड़ने विजिट या अनुभव खण्ड से गुजरी किसी भी घटना को कहानी बना देने या इतिहास के लकड़ों में फॅस जाने जैसी किसी भी स्थिति को लेखक कहानी के लिये पलायन ही मानता हैं"(95)

तत्कालीन अतीत के इतिहास के बीच से टोही गयी ये कहानियॉ अपने अर्थगम्भीर्य के कारण विशिष्ट मानी जा सकती हैं।

'पगला बाबा' की समस्त कहानियों में मूल्यात्मक आदर्शो को उठाया गया हैं, ये कहानियॉ शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट जमीन तलाशती हैं, सभी कहानियॉ मूल्यविषयक रोशनी के बीच समकालीन जीवन के

यथार्थ चित्र उकेरती हैं,चरित्र संघर्षो को झेल अपनी व्यक्तिगत पहचान स्थापित कर उस मानवीयता से जुड़ते चलें जाते हैं जो भारतीयता से अनुप्राणित हैं। इन कहानियों में मूल्यों के पुनः स्थापन के कारण मिश्र पर प्रतिकियावादी होने की चिप्पी लगायी जाती हैं पर कहानियों में "मूल्यों की पुनर्स्थापना कोई अलग से सोची हुई कार्रवाई नहीं होती,वरना रचना प्रकिया की एक स्वाभाविक मॉग होती हैं। उनकी रचनाएँ इसी कारण शायद फिनिश्ड और पूर्ण लगती हैं रिवाइवल और कर्न्वशन का सही ताल मेल उन्हें प्रतिकियावाद से बचा ले जाता हैं। "[96] ये समस्त कहानियॉ भारतीय मानस मे बसे उन मूल्यों और आदर्शो को रेखांकित करती हैं, जिन पर परिस्थति समय और काल की धुन्ध पड़ गयी थी।" इन कहानियों का प्रभाव शिल्पगत कम और कथ्य की रोशनी का अधिक हैं। यह रोशनी घृणा आकोश कोध निराशा उदासीनता,उपेक्षा,ईर्ष्या, लोभ के गहन अंधकार में से प्रेम, स्नेह, त्याग, दया, करुणा के रुप में प्रस्फुटित होती हैं। मूल्यों के प्रति मन्द पड़ती आस्था इस रोशनी के आधार से ही पुष्ट होने लगता हैं। निराशा में भी आशा जगने लगती हैं"[97]

शिल्पगत प्रयोग के दौरान मिश्र जी ने कुछ सहज कहानियॉ लिखी क्योंकि वे उन लेखकीय आवरण को उतार फेंकना चाहते थे जिनकी चिप्पी उन पर लगा दी गयी थी हज्जाम मन सुखराम''सुखी क्यारी' 'गुरुजी ' 'भगवान ने चाहा तो', 'आदेश'..... ऐसी ही कहानियॉ हैं। लगेगा नही कि में 1980 के बाद लिखी गयी हैं मैंने देखा कि सरल होकर भी बात कितने सटीक ढंग से कहा जा सकती हैं। लेकिन फिर इन कहानियों में जो बात कही गयी वही सबसे ज्यादा महत्व की चीज बन गयी। वह थरथराहट नहीं जो मैं सोचता हूँ होना चाहिए...... बरसात में कांपती पत्ती की तरह से । येसहज भले ही कुछ न रही हो ,पर इनके लिखने से एक फायदा मुझे हुआ दुरुहता से अब मैं बिना मेहनत किए बच सकता हूं। उसी तरह 'पगला बाबा' संग्रह की अंधिकांश कहानियों का अन्त किसी सुन्दर या सात्विक में होता है जिसके लिये आलोचकों की किताब में एक ही शब्द था...... आदर्शवाद उन कहानियों से भी एक फायदा हुआ कि अब सुन्दर मुझसे ओट नही हो सकता।"[98]

अतः कहा जा सकता है कि मिश्र जी के कथा साहित्य में हमें अनुभूति की तीव्रता संवेदना की व्यापकता कथ्य की गहनता,शैल्पिक गतिमयता,जीवन यथार्थ

की वास्तविकता जटिलता बहुमुखी प्रयोगत्मकता हैं। तथा शिल्प और वस्तु की नव्यता दिखायी देती हैं। कथाकार की प्रत्येक रचना क्षमता वस्तु बोध और शिल्पबोध की हर चुनौती को स्वीकार कर कथात्मकता का वरण करती हुई जीवन के नये आयामो, सन्दर्भो को खोलती हैं।

1.गोविन्द मिश्र 'समय और सर्जना' (राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0संस्क 2000) पृ0 97
2 गोविन्द मिश्र मेरी प्रतिनिधि कहानियाँ, भूमिका
3 गोवन्दि मिश्र 'समय और सर्जना' (राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2002)पृ0 98
4 वही पृ095
5 वही पृ093
6 गोविन्द मिश्र 'वह /अपना चेहरा' (राधा कृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली, नया संस्क 1989) पृ078
7 पत्रं समीक्षाः—
(चन्द्रकान्त वांदिवडेरक (संपा0), गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' में संग्रहित पत्र) (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 329
8 गोविन्द मिश्र 'उतरती हुई धूप' (राजकमल प्रकाशन पेपर बैक सं दिल्ली) पृ052
9 वही पृ054
10 वही वही
11 से0रा0 यात्री 'उतरती हुई धूप', 'साफ—सुथरी' रचना गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (सं) चन्द्रकान्त वांदिवडेकर वाणी प्रकाशन दिल्ली ,1990 पृ0 82,83
12. गोविन्द मिश्र 'लाला पीली जमीन' (राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्र0संस्क 1998) पृ0106,107
13 चन्द्रकान्त वाडिवडेकर (संपा0) गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' में संगहित पत्र—(वाणी प्रकाशन दिल्ली,1990) पृ0 364
14 गोविन्द मिश्र 'लाल पीली जमीन' (राजकमल एण्ड संस दिल्ली 1976)पृ014
15वही पृ015
16 वही पृ016
17 वही पृ015,16
18. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1981) पृ0 258
19. राजी सेठ 'हुजूर दरबार' पराभव का उत्सव,गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम', चन्द्रकान्त बांदिवडेकर(संपा0) (वाणी प्रकाशन,दिल्ली1990) पृ0119
20 गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1981)
21 वही पृ0 117
22 पत्र समीक्षा चन्द्रकान्त बाडिवडेकर (संपा0) गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' में संग्रहीत पत्र पृ0336
23 गोविन्द मिश्र धीर समीरे (राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली दूसरी अवृति 2002) पृ0 178

24 पत्र समीक्षाः—चन्द्रकान्त वाडिवेकर (संपा0) गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम में संकलित पत्र पृ0 341,342

25. 'पॉच ऑगनों वाला धर' (राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली 1995) पृ0 87

26. गोविन्द मिश्र फूल " इमारते और बन्दर" (राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 100

27. गोविन्द मिश्र भटकता तिनका' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 20

28. गोविन्द मिश्र 'यक्षिणी का पत्रःयक्ष के नाम' निर्झरिणी भाग 1 पृ0 78

29 गोविन्द मिश्र 'साजिश' पृ0 122

30 गोविन्द मिश्र 'अवमूल्यन' पृ0 131

31. 'जिहाद' पृ0 189

32 गोविन्द मिश्र 'घेरे' पृ0 331

33 अजीवीकरण पृ0 135

34 उपेक्षित पृ0 144

35 गोविन्द मिश्र 'कुत्ते' पृ0 151

36 गोविन्द मिश्र फर्क पृ0 154

37 गोविन्द मिश्र शुरुआत पृ0 168

38 गोविन्द मिश्र 'ऑकडे' पृ0 239

39गोविन्द मिश्र कचचौंध पृ0 268

40 पत्र समीक्षा, चन्द्रकान्त वाविडेकर (संपा0) गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पुस्तक में संगृहीत पत्र पृ0 149

41 गोविन्द मिश्र अन्तःपुर पृ0 325

42 अपाहिज पृ0 290

43 गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 भूमिका से (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली 1996) पृ0 8

44 गोविन्द मिश्र खंड़ित निर्झरिणी भाग 2 पृ0 18

45. गोविन्द मिश्र सिलसिला पृ0 28

46 गोविन्द मिश्र बहुधंधीय पृ0 45

47 गोविन्द मिश्रशापग्रस्त पृ0 103

48 गोविन्द मिश्र गिद्ध पृ0 116

49 गोविन्द मिश्र 'खाक –इतिहास' पृ0 225

50 गोविन्द मिश्र 'वरणांजलि' पृ0 245

51 गोविन्द मिश्र 'एक बूंद उलझी' पृ0 253
52 गोविन्द मिश्र 'यों ही खत्म' पृ0 366
53 गोविन्द मिश्र 'उपचार' पृ0 410
54 I all style is artificial in this sense that all good style are achieved by artifisice the problem of style ,Jmiddleton murry.
55 (डा0) मंगल मेहता हिन्दी कहानी वस्तु विकास एंव शिल्प विधान पृ0 170
56. चन्द्रकांत वाडिवडेकर,गोविन्द मिश्र का 'औपन्यासिक संसार' राधा कृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली–2 पृ0 10
57 चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपचारिक संसार पृ0 11
58 चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपचारिक संसार पृ0 21
59 प्रभाकर श्रोत्रिय 'लाल पीली–जमीन' हाथों की छटपटाहट गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' चन्द्रकान्त बादिवडेकर (संपा0) वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1990 पृ0 112
60. चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपान्यासिक संसार पृ0 34
61. राजकुमार गौतम,'तुम्हारी रोशनी में' आधुनिक नारी की सम्पूर्ण अस्मिता, गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (संपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर पृ0 163
62. राजेश जैन तुम्हारी 'रोशनी में' शहर कस्बे के सांस्कृतिक टकराव गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (संपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर पृ0 166
63. गोविन्द मिश्र का उपन्यासिक संसार पृ0 78
64(डॉ0) रामजी तिवारी छटपटाती नैतिकता की कथा 'पॉच ऑगनों वाला घर' पृ0 75 गोविन्द मिश्र सृजन यात्रा संपा0 (डॉ0) उर्मिला शिरीष म0प्र0 राष्ट्र भाषा प्रचार समिति भोपाल
65. गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 भूमिका
66. गोविन्द मिश्र मेरी प्रिय कहानियॉ 1979 से 1994 तक की कहानी यात्रा (राजपाल एण्ड सन्स प्रकाशक दिल्ली) प्र0संस्क 1996 भूमिका से
67 गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 भूमिका से
68 गजानन चौहान,पगला बाबा मूल्य विषयक रोशनी सें भरपूर कहानियॉ गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (संपा0) चन्द्रकांत वाडिवडेकर (वाणी प्रकाशन 1990 दिल्ली) पृ0 291
69 गोविन्द मिश्र 'लाल–पीली–जमीन' पृ0 124
70. गोविन्द मिश्र 'वह/अपना चेहरा' पृ0 अन्तिम
71. गोविन्द मिश्र 'उतरती हुई धूप' पृ0 54
72. गोविन्द मिश्र 'उतरती हुई धूप' पृ0 116

73. (डॉ0) चन्द्रकान्त वादिवडेकर ''गोविन्द मिश्र'' का औपन्यासिक संसार भूमिका प्रकाशन प्र0 संस्क 2000 दिल्ली पृ0 21
74. गोविन्द मिश्र 'हुजूर दरबार' पृ0 219
75. चन्द्रकान्त वाडिवडेकर, गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 199
76. गोविन्द मिश्र 'पॉच आंगनों वाला घर' पृ0 144
77. गोविन्द मिश्र 'पॉच आंगनों वाला घर' पृ0 145
78. गोविन्द मिश्र 'अर्द्धवत्त' पृ0 257
79. 'माइकल लोबो' पृ0 275
80. चन्द्रकांत बादिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपान्यासिक संसार (भूमिाका प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 97
81.गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार पृ0 19
82.आजकल अगस्त 2002 पृ0 33
83 चन्द्रकांत वादिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपन्यासिक संसार भूमिका प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000) पृ0 16
84. गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम,(सं) चन्द्रकांत वाडिवडेकर पृ0 88
85 चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 128
86 गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार (किताब घर प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क 2000)पृ0 137
87. सुरेन्द्र शर्मा नयी कहानी प्रकृति और पाठ,(परिवेश प्रकाशन जयपुर,प्रथम संस्क 1968)पृ0 76
88 गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार (किताब घर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्क 2000)पृ0 25,26
89. गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2 नेशनल पब्लिशिंग दिल्ली, 1996 भूमिका से
90. (संपा0)गोविन्द मिश्र चन्द्रकांत वाडिवडेकर 'सृजन के आयाम',संपा0 पृ0 248
91 वही पृ0 258
92. गोविन्द मिश्र 'शापग्रस्त' निर्झरिणी भाग 2 पृ0101
93. गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार पृ0 89
94 चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 262
95. वही पृ0 275
96 (डॉ0) भगवान दास वर्मा गोविन्द मिश्र की रचनाशीलता पृ0 30,31
97 गजानन चौहान 'पगला बाबा': मूलय विषयक रोशनी से भरपूर कहानी गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम, चन्द्रकांत वाडिवडेकर पृ0 291

षष्ठ अध्याय— मिश्र जी के कथा साहित्य का उद्देश्य
उपअध्याय—1 कथा—साहित्य की मूल संवेदना

किसी भी कथाकार की मूल संवेदना की सूक्ष्मतम तहों तक जाने के लिये उसके लेखकीय विजन को पकड़ना आवयक होता हैं, जिस विजन का निर्माण उसके अनुभवों से गुजरकर होता हैं वह निरा काल्पनिक नहीं होता हैं,उसका सम्बन्ध अपने युगीन परिवेश से होता हैं। कथाकार अपने अनुभव विश्व के भीतर किसी सामान्य सत्य या अपनी संवेदना को खोजता हैं। इसी खोज प्रकिया से गुजरते वक्त उसका विजन सृजित होता है और फिर इस विजन की अभिव्यक्ति कथाकार अपने पात्रों द्वारा स्पष्ट रुप में या संकेतों के माध्यम से करवाता हैं अतः कथा साहित्य की मूल संवेदना तक पहुँचने के लिये हमें लेखक की संवेदना और उसके अनुभवों के तालमेली प्रकिया तूहों को टटोलना पड़ता हैं। इस बात का स्पष्टीकरण लेखक साक्षात्कारों में देते हुए कहता है कि "पहचान होती है वो लेखकीय संवेदना की होती हैं किस लेखक में किस हद तक की संवेदना हैं वो छिपाये नही छिपती— वो पात्र में भी प्रकट होगी भाषा में भी प्रकट होगी जो बिम्ब आप लेगे उसमें भी प्रकट होगी और जो परिवेश जीवन का आप उठायेंगे उस भी। कितना ताप होगा उसमें,बाकी चीजें तो उसके हिसाब से आती हैं।"[1] अतः एक कथाकार अपने निजी जीवन अनुभवों का सामान्यीकरण कर एक कथा के माध्यम से उसे संश्लिष्टता से प्रस्तुत करता है। मिश्र जी के कथा साहित्य की संवेदनाएँ समसमायिक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विखण्डित होते मानवीय मूल्यों के सन्दर्भो से जुड़ती हैं। वे समकालीन प्रश्नों,बदलते जीवन मूल्यों सामाजिक राजनीतिक विंसगतियों की वास्तविकता को पहचान उन्हें कथा—साहित्य में उठाते हैं। शुरुआती दौर की कुछ कहानियों में भावात्मक उबाल ज्यादा दिखायी देता हैं कहीं—कहीं व्यक्तिगत टीस—चुभन को भी कथात्मकता प्रदान की गयी।

इस सन्दर्भ में लेखक का मानना हैं कि लेखक की शुरु की कहानियाँ उसकी लेखकीय यात्रा का मजेदार अध्ययन पेश कर सकती है, रचनाशीलता किन—किन टूहों, गड्ढों, पत्थरों से टकराती हुई कहाँ—कहाँ मुँह मारती हुई कहाँ निकलती है, बिल्कुल एक आवारा धारा की तरह।"[2] उनके कथा साहित्य में रचनात्मक ईमानदारी दिखायी देती हैं क्योंकि वे अपने निजी अनुभवों को ठोस और व्यवहारिक दृष्टिकोण के माध्यम से अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय बनाकर प्रस्तुत करते हैं। वे इस सन्दर्भ में लिखते है कि मैं विचारों के उन घोड़ों को जहां तक सम्भव है खीचे रहता हूँ..... विचार बेशक,लेकिन वे संवेदना से ही उद्भूत हो..... संवेदना जो उस स्थिति को लपेटे हुई थी, वही धीरे—धीरे मेरी विक्षिप्ति को साफ कर रही हैं। तरतीब की तलाश में मुझे सिर्फ उस स्थिति से सटे

रहना है,इधर उधर हो जाऊ तो वापस यही लाना हैं, खुद को,संवेदना की पगड्डी को ही पकड़े रहना है। कहीं न कहीं पहुँच ही जाऊँगा। विचार गलत तरह पहुँचा सकते हैं संवेदना धोखा नहीं दे सकती क्योंकि ईमानदारी इसमें निहित है उससे अलग नही हैं। "[3]
मिश्र जी नये जीवन बोध,जीवन सन्दर्भो में जन्में सत्य को पहचान उसे अभिव्यक्त करने में पूरी सजगता,जागरुकता तथा कलात्कता का परिचय देते हैं। यही कारण है कि यथार्थ उनकी रचनाओं में अपने व्यापक और बहुमुखी रुप में उभरता हैं। यथार्थ की विभिन्न वास्तविकाताओं तथा विभिन्न आयामों को उकेरने के लिये उन्होने जन साधारण की मानसिकता में आए बदलाव सम्बन्धों में कम होती आत्मीयता,पारिवारिक सम्बन्धों में बढ़ती जटिलता नारी की अस्मिता प्रतिष्ठा, राजनीतिक चक्र–दुष्चक्र से पीड़ित आम आदमी की पीड़ात्मक स्थितियों को पूरी संश्लिष्टता दिखाई हैं। उपन्यास 'लाल पीली जमीन' 'हुजूर दरबार' 'धाँस' संकलन में उनकी संवेदना राजनीतिक सन्दर्भो से जुड़ती हैं और वे राजनीतिक प्रश्नों, संगतियो–विसंगतियों उभारकर सम्पूर्ण देश के राजनीतिक माहौल की नब्ज टटोलते है तथा राजनीतिक कैरियर में सफलता प्राप्त करने वाले नेताओं के पीछे सक्रिय आकस्मिताओं योजनाबद्ध घटनाओं साजिशों का उद्घाटन करते हैं और इन राजनीतिक स्थितियों से प्रभावित आम आदमी के अन्तस्की पीड़ा यन्त्रणा, विवशता, संत्रास, आक्रोश विद्रोह, अनुभूति को पूरी संश्लिष्टता से उभारते है। इन उपन्यासो और कहानियों में उद्घाटित स्थितियों में उनके अनुभव की गहराई और विश्वसनीयता का बोध झलकता हैं। इतना ही नहीं वह समकालीन राजनीति के प्रामाणिक दस्तावेज भी प्रस्तुत करते हैं। खुद के खिलाफ "अपाहिज" संग्रह की कहानियों और "तुम्हारी रोशनी में" उपन्यास में सामाजिक,पारिवारिक जीवन में आधुनिकता के वरण से उत्पन्न स्थितियों विसंगतियों का व्यक्ति सम्बन्धों में बढती जटिलता,दाम्पत्य शोषण का मानसिक बिखराव, वीभत्सता का उद्घाटन हैं तथा मध्यवर्गीय नारी के विभिन्न विकारों,मनोविकारों संस्कारों,क्लेशो ,संघर्षो इत्यादि को युगीन जीवन की परिवर्तनशीलता के परिप्रेक्ष्य में गहरी संवेदना प्राप्त हुई हैं। इन कहानियों और उपन्यास में युगीन यथार्थ अपनी पूरी वास्तविकता और नियति के साथ उभरा हैं परन्तु अपने समकालीन साहित्कारों की तरह यथार्थ वाद के हटाग्रह को वे नकारते है धीरे–धीरे लेखक की लेखकीय संवेदना में बदलाव आता हैं उसकी संचेतना के विषय बदल जाते है, उसकी लेखन में पारदर्शिता आती है और सम्भावनाएँ झलकती हैं। वह मानवीय मूल्यों,प्रकृति प्रेम, सौन्दर्य और आस्था की बातें करता हैं। यह आध्यात्मिक बोध प्रक्रिया और अनुभव विश्व उसकी रचना प्रक्रिया के नये दरवाजे खोलता है। आध्यात्मिक के झरोखों से विकीर्ण होती मानवीय मूल्यों की रोशनी कथा साहित्य में नयी संभावनाओं और क्षितिजों के पार जाती हैं जिससे उसकी महिमा, गरिमा परिलक्षित होती हैं।

लेखकीय संवेदना के बदलाव वैज्ञानिक और उपभोक्ता संस्कृति से उत्पन्न जटिलता, तनाव के फलस्वरुप टूटे हुए जीवन मूल्यों,आस्था,विश्वासों तथा मानवीय गुणों के कुहासे से ही संश्लिष्ट रुप में मनुष्य और उसके व्यक्तित्व की खोज,आस्था, रिश्ता, विश्वास व मानवीयता के पुर्नस्थापन का प्रयास करते हैं। ''खाक इतिहास'' ''पगला बाबा'' कहानी संग्रह व ''धीरे समीरे'' (उपन्यास) लेखक की उच्च श्रेणी की रचनाएँ हैं, ये रचनाएँ विधा को सार्थकता प्रदान करने के साथ–साथ लेखकीय संवेदना की ऊष्मा के व्यास को भी स्पष्ट करती हैं "लेखक की पहचान में वह रचना सबसे महत्वपूर्ण भूमिका रखती हैं। जो उसकी संवेदना पर ही बताती है क्योंकि लेखक का सारा दारोमदार उसके संवेदना पर ही टिका होता हैं। वह नियति से ही तुलाराशि है और संवेदना ही वह तुला है। जिस पर वह राई से लेकर पर्वत तक को तौलता हैं। जाहिर है तौल वहीं सकता जो पहले झेल सकें''।[4] यह स्थिति कथा यात्रा में बढ़ती धनीभूत संवदेनात्मकता के स्तर को स्पष्ट करती हैं। उपन्यास 'धीरे समीरे' में लेखक संवेदना मानवीयता तथा भारतीय मानस की भीतरी पर्तो में धँसी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं से जुड़ती हुई 'पगलाबाबा' तथा 'खाक इतिहास'कहानी संग्रहो में समकालीन यथार्थ, सामाजिक राजनीतिक सत्ता की शक्तियों से ऊपर उठकर इतिहास धर्म ईश्वर व्यक्ति के अन्तस में उपस्थित शक्ति स्त्रोत्र के निर्झरों के गतिमयता प्रदान कर साहित्य और कला की सरहदों तक पहुँच जाती हैं।

'पगला बाबा' संग्रह की कहानियाँ धनीभूत संवेदनात्मक स्थिति में लिखी गयी हैं। मानवीयता के उत्कर्ष को छूती हुई ये कहानियाँ समकालीन धरातल को मार्तण्ड प्रखर के ज्योति पुँज के समान मानवीय मूल्यों से आलौकिक करती हैं। इन कहानियों के पात्र 'पगला बाबा' मास्टरदीन दयाल माइकल लोबो,'अर्धवृत' की पत्नी, 'सिर्फ इतनी रोशनी' के पापा आधुनिक आधीनता से परे अपने आन्तरिक स्व की प्रेरणा से अर्न्तमन की जटिल पर्तो को हटा रिश्तों के यथार्थ को लांध जाते हैं। 'खांक इतिहास' संग्रह की कहानियाँ परिवेश की भयावहता इतिहासिक कूरताओं भीषणता, जटिलता, वीभत्सता के बीच व्यक्ति के नये जीवन व्यक्तित्व की प्रदीप्त को उजागर करती हैं, वे इन कूरताओं क बीच व्यक्तित्व के निर्माण प्रकिया को अवरुद्ध न कर उसे नवीन व्यक्तित्व में परिवर्तित करती हैं। 'खाक इतिहास' की मारिया 'आलहाखण्ड' की स्वतंन्त्रता सेनानी, संडाध की पत्नी ऐसे ही नये व्यक्तित्व के प्रस्तुतीकरण हैं। इन नये व्यक्तित्व के रुपायन में कथाकार का विशिष्ट दृष्टिकोण उसकी सजगता,सजीवता मनुष्य के प्रति आस्था को उजागर करता हैं। इन्हें पढ़कर ऐसा लगता है कि गोविन्द मिश्र का लक्ष्य मनुष्य की उस संवेदना को पकड़ना और रेखांकित करना है जो प्रकृति ने मनुष्य को दी थी पर जिसे आज के आदमी ने धुँधला डाला हैं। ''विशुद्ध मनुष्य की संवेदना, भौतिक सुविधाओं से दूर विपन्न पगला बाबा मुट्ठी भर हड्डियों का एक ढाँचा एक मानव शरीर उसका समाज व परिवार

तो दूर, लेखक ने उसके कपड़े भी उतार लिये हैं। शरीर में एक ही चेतना, एक ही संवेदना स्पंदित होती रहती हैं। कर्म अपने हिस्से का कर्म''।[5] इसी प्रकार 'वरणांजलि' कहानी हमारा ध्यान आर्कषित ही नहीं करती अपितु चकित भी करती हैं। 'वरणांजलि' के न जाने कितने अंश हैं जिनमें संवेदना को सुई और भाषा को तागा बनाकर प्राणों की विदीर्णता को टॉके लगाये होने की सी मर्मस्पर्शिता पढ़ने वाले को जड़ीभूत कर दे सकती हैं।''[6] 'वरणांजंलि' की संवेदनात्मक सघनता अति तीव्र हैं। इस प्रकार मिश्र जी की संचेतना तथा संवेदनाओ ने जीवन के अवसाद एवं जगुप्साजनक अनुभवों से सग्रस्त होकर प्रतिकियात्मक यथार्थ का चित्रण किया हैं। परन्तु धीरे–धीरे उनकी संवेदना जीवन एवं मनुष्य के प्रति आस्थामूलक हुई और उन्होंने अपनी कृतियों में मानवीय मूल्यों की पुर्नप्रतिष्ठापना के प्रयास किये तथा मनुष्य और उसके जीवन की आस्था को प्रदीप्त किया।

उपाध्याय– 2– कथा–साहित्य में निहित विचार

मिश्र जी का कथा साहित्य सृजन के चिर परिवर्तनशील ऐसे धरातल पर प्रतिष्ठत है, जिन पर हर बार रचना के स्वीकृत माध्यमों के पूर्व निर्मित प्रारुप मंद पढते नजर आते हैं, और विचार गत सीमाएँ, विषयगत सीमाएँ अनुभूति भाषागत और रुप गत सीमाएँ टूटती नजर आती हैं, उनकी सृजन प्रकिया में वैचारिक भूमिका के अर्न्तगत लेखकीय सोच, दृष्टि, बोध संवेदना में बदलाव की उपस्थिति दिखाई देती हैं अनवरत रुप से चलने वाली उनकी सूक्ष्म अंकना दृष्टि एक–एक तन्तु का भेदन करती हुई उन्हें नया रुप प्रदान करती चलती हैं। कथाकार अपने जीवन सत्य के माध्यम से सम्पूर्ण जीवन के साक्षात्कार का प्रत्यन करता हैं। लेखक का मानना है कि लेखन है ही एक चलता हुआ आत्मसाक्षात्कार। रचनाएँ इसके पड़ाव है–''हम उस साक्षात्कार को ज्यादा सही बनाना चाहते हैं और यही है जो लेखन को सर्जनात्मक बनाता है।लेखक तो जीवन का एक शोधकर्ता है जिसकी शोध उसकी अन्तिम रचना से भी शायद पूरी नहीं होती। जीवन कम बैठता हैं। इस शोध के लिये।''[7] शुरुआती दौर में लेखक समकालीन लेखकों की तरह यथार्थ अन्वेषण,यथार्थ को स्वीकृत करता हुआ यथार्थ चित्रण में लगता है पर दूसरे दौर में उनका कथा साहित्य सामाजिक यथार्थ के साथ मानवीय नियति से जुड़ने का उपकम करता हैं।

मिश्र जी के कथा साहित्य में समाज, राजनीति,धर्म यातना, कला,साहित्य समकालीन साहित्य मूल्यों जैसे विषय पर उनकी वैचारिकता और चिन्ता के विभिन्न आयाम उभरतेहैं। जिसमें हम लेखकीय आंकांक्षा के आधार को जान सकते हैं। रचनाकार की वेदना,अनुभव अनुभूति, विचार चिन्तन की क्षमता उसकी रचना का निर्माण करने वाले अनिवार्य तत्व होते हैं:–

मिश्र जी की समाज सम्बन्धी वैचारिकता और चिन्ता:–

'अपाहिज' कहानी संग्रह के संकलन तक मिश्र जी की कहानियों का स्तर अन्य समकालीन साहित्यकारों की तरह समाज की विसंगतियों विकृतियों वीभत्साओं अर्न्तद्वन्द्व मानव की हताशा निराशा, विवशता राजनीति की भ्रष्टताओं के प्रति व्यक्ति के आकोश,घृणा के उद्घाटन का ही रहा । परन्तु कुछ समय के अन्तराल पर लेखकीय चिन्ता के विषय बदल गये और उन्होंने कथा साहित्य के रुप में एक स्वतन्त्र अवधारणा निर्मित की। उन्होंने समकालीन लेखकों की तरह साहित्य को समाज के कान्तिकारी परिवर्तन का शक्तिशाली हथियार घोषित नही किया वे कहते है

कि मुझे लगता है साहित्य का असली स्वर तात्कालिकता का नहीं शाश्वतता का है और तुरन्त समाज परिवर्तन आदि के प्रलोभन में पड़कर साहित्य को अपनी विशिष्टता नहीं खोनी चाहिए।[8]

जीवन यथार्थ में विकसित विकृतियों विसंगतियों, अर्न्तविरोधों के चित्रण से समकालीन रचनात्मक दायित्व का दम भरने वाले कथा कारों के लिये मिश्र जी का कहना है कि चीजों का नकाब उतारने क नाम पर समकालीन समाज के दुर्गुणों को गिनाते रहने तक ही अगर हम साहित्य को सीमित कर देना चाहते है तो हम समकालीनता के केवल उस तत्व को हाथ में उठाए हुए है जो कुछ हैं,वह जाने वाला हैं इसमें ही अपना जुझारुपन देखना कुछ–कुछ वैसा ही दयनीय है जैसे कोई शराब पीने में अपनी मर्दागिनी देखता हैं। जो साहित्यकार अपनी संवेदना चिन्ता के अथक आवेगों की आग्रहशीलता से अपने विषय के प्रति तटस्थ नहीं रह पाये या जिसका लेखन सामाजिक सन्दर्भो से कटने लगा उन कथाकारों अपनी टिप्पणी करते हुए मिश्र जी लिखते है कि "सामाजिक विंसगतियों का पर्दाफाश लेखक नहीं करेगा तो कौन करेगा? पर मुझे यह जोर देकर कहने की जरुरत है कि जिन मूल्यों के लिये हम अंततः उन विसंगतियों को उभार रहे हैं, उन मूल्यो की ओट न होने दे। गढे हुए प्रतिमानों के प्रचार से नये लेखक के लिये ऐसी स्थिति पैदा न करें कि वह अपनी तलाश ही छोड़ बैठे।"[9] मिश्र जी ने आम आदमी की जिन्दगी की पहचान को पुनस्सर्जित करने में अनुभव,अनुभूति और संवेदना के नव्यतम आयामों का अन्वेषण किया तथा वर्तमान जीवन की विसंगतियों के बीच उनकी भीतरी और बाहरी अर्थवत्ता को उद्घाटित कर अपनी तीव्र संवेदना,चिन्ता तथा प्रखर वैचारिकता का परिचय दिया। सामाजिक यथार्थ के बीच व्यक्ति को प्रतिष्ठित करने को उनकी ये कोशिश उनके बोध और दृष्टि के बदलाव को उपस्थित करती हैं तथा उनका लेखन सम्भावना पूर्ण दिशा की ओर गमन करता दिखाई देता है वे लिखते है कि "मेरा अपना लेखन भी'मैं' से शुरु हुआ, समाज तक उठा...... और यहॉ भी इन दिनों की तकलीफों का अफसाना....... कि कुछ समय पहले मुझे लगा कि जो 'तोड़ता' है,उसकी बजाय उसकी बात क्यों नही जो 'जोड़ता' है– मुझे बाहर के व्यक्ति से,समाज से प्रकृति से ..... और प्रेम,सौन्दर्य, आस्था जैसी चीजें मुझे फिर से मिल गयी। वे मुझे चिरंतन महत्व की लगी। वहॉ पहुॅचकर लगा कि लिखना तो दरअसल अब शुरु हुआ है।"[10] लेखक भूमिका देकर अपनी बात का स्पष्टीकरण करता है कि ईश्वर.......जीवन....... मनुष्य की तरह साहित्य का विस्तार भी अनन्त है ...... थोड़ा कुछ वह जो हम समझ पाते हैं, पर बहुत कुछ वह जो समझ से परे है जिसका आभास हो जाता है कभी–कभी। हमारी अनुभूति कही–कहीं उसे छू लेती हैं और फिर हम उसे व्याख्यायित करने की कोशिश करते हैं।

मिश्र जी की वर्तमान राजनीति सम्बन्धी वैचारिकता और चिन्ताः—

मिश्र के उपन्यास 'हुजूर दरबार' 'फूल इमारतें' और 'बन्दर' 'धॉसू' की कहानियॉ राजनीति प्रभाव अर्न्तगत लिखे गये हैं। जहॉ मिश्र जी कुछ प्रतिनिधि पात्रों द्वारा राजनीति की बखिया उघाड़ते हैं वहीं दूसरी ओर वे प्रजातन्त्रिक व्यवस्था और जनता को पहुँची ठेस,क्षति,तन्त्र में फैले भ्रष्टाचारियों के जाल का आकलन पूरी तटस्थता के साथ करते हैं। राजनीतिक स्थितियों के अहम् सवालों, सरोकारों को सदर्भित करने वाले साहित्यकारों की प्रतिबद्धता के विषय में लेखकीय सोच इस प्रकार उभारती हैं—"लेखक हमेशा खुद को कष्ट झेलते,पिसते,दुख सहते वर्ग के साथ ही पायेगा। यह उसकी नियति हैं, जैसे कि सत्य,न्याय, ईमानदारी का पक्षधर होने के अलावा कोई और चारा नहीं हैं।"[11]
अपनी कहानियों के राजनीतिक होने के कारणों का स्पष्टीकरण करते हुए वे लिखते है कि "..... थोड़ा सही यह हो सकता है कि यह जमाना वह रहा जब राजनीति दूसरी सभी चीजों पर रोदती हुई चढ़ बैठी थी। शायद असल और बुनियादी बात वह आक्रोश है, हर स्थिति में जिसकी टकराहट कहीं न उस चीज से हुई जो 'राजनीति' शब्द में रुढ़िबद्ध हो चुकी हैं।" 1[2] राजनीतिक आर्थिक दबावों के कारण पिसते हुए आदमी की यातना को समझ और महसूस करके मिश्र जी निर्मम ऐतिहासिक प्रकिया में पैदा हुए दबावों के मुकाबले आम आदमी की सामर्थ्य हीनता के अहसास को व्यवस्था के दबाव मे दबे मानवीय अन्तस् की पीड़ा को असंगतियों

अर्न्तविरोधों की मार से आहत,और दारुण यातना से त्रस्त सन्दर्भो को रेखाकित करते है। देशकाल के परिवेश की गहन यन्त्रणा भोगने वाले व्यक्ति के आक्रोश विवशता को लेखकीय सोच इस प्रकार उभरती है कि "मेरा असली ताल्लुक तो उस राजनीति से है जो आदमी को मारती हैं..... और वहॉ हर दल की मार एक सी हैं।"[13]

मिश्र जी की धर्म सम्बन्धी वैचारिकता और चिन्ताः—

मिश्र जी की संवेदना चिन्ता धार्मिक सन्दर्भो से भी जुड़ती है। उनका धार्मिक दृष्टिकोण भारतीय चिन्तन से अनुप्राणित आस्थामूलक तथा आदर्शमूलक है वे मानव धर्म को प्रतिष्ठित करना चाहते है। सत्य सौन्दर्य आस्था, दया पीड़ितों के प्रति सहानुभूति ये सभी उनकी आस्था के चरण है पगला बाबा कहानी संग्रह और 'धीरे समीरे' उपन्यास में लेखकीय संवेदना आत्मिक आयामों के नये सन्दर्भो को खोलती है जो सन्दर्भ आधुनिक साहित्यकार की पकड़ से पीछे छूट रहे है मिश्र का मानना है कि यह "आत्मिक आयाम' निश्चित ही एक ऐसा तत्व हैं जो आधुनिक साहित्यकारों की पकड़ से छूटता चला गया हैं। मानवीय तो ठीक....... वह तो साहित्यकार में होगा ही पर मानवीय को

उठते–उठते आत्मिक को छू लेना भी। माने कि करीब करीब वहाँ पहुँचने का प्रयत्न करता है। कितना बड़ा आयाम मिल जाता है साहित्य को। यह जरुर है कि आत्मिक वह धरातल है जहाँ सम्भतः साहित्यकार की क्षमता की सबसे बड़ी परीक्षा होती हैं। जरा असावधानी....... कि बात फूहड़ हो जायेगी, घिसी पिटी भी।''[14] मिश्र जी का मानना है कि धर्म वह है जो संकीर्णताओं से आबद्ध ह्रदय को उजास की ओर ले जाएँ ह्रदय को विशाल व विस्तृत बनाएँ विस्फोटन की जगह मानव ह्रदयको जोड़े धर्म वह जो आपके पूरे जीव को अनुप्राणित करे, आपकी संवेदना,सहानुभूति को विस्तृत कर दे और मानवीय बनाए....लेकिन धर्म को मानवता से अलग आप देखेंगे तो वह धर्म नहीं हैं। आप पूजा–पाठ करते है तो आपके अन्दर करुणा इतनी बढ़ जानी चाहिए कि आप सबसे प्रति दयावान हो जाएँ, नहीं तो बेकार। अगर धर्म आपको संकुचित बनाए, संकीर्ण बनाए तो वह धर्म नहीं है। धर्म आपको निश्चित ही बहुत उदार, बहुत विस्तृत, बहुत बड़ा बनाता है। मैं इस तरह के धर्म का हिमायती होना चाहता हूँ।''[15] मिश्र जी का मानना है साहित्यकार के सरोकार उसकी चिन्ता मानव जीवन संघर्षो के प्रति होनी चाहिए। इन्हीं संघर्षो के बीच वे रचनात्मक कर्म में लिप्त रहना चाहते है– ''साहित्यकार पहले मनुष्य है, इसलिये जो दूसरे मनुष्यों के संघर्ष और सरोकार है, वे उसके भी होने चाहिए। मैं इस संघर्ष में और खपूँ या कि इससे बचते हुए जीवन, जो कम बचा है उसे लिखने में ही लगाऊँ? लेकिन क्या साहित्कार का ऐसा कोई धर्म है जो अपने सीमित जीवन वृत में संघर्ष करने,लिखने से भी आगे जाता हैं।''[16] मिश्र जी लेखन को ईश्वरीय साधना के समतुल्य देखते हैं– मेरे लिये लिखना प्रार्थना पर बैठना हैं। प्रार्थना तक उठने का सतत प्रयास ही है जो मैं कर सकता हूँ। लेखन होता है जब ईश्वर उतरते है, तब अक्षर फूलों से बरसते हैं मैं बटोरता चला जाता हूँ और फिर अपनी डलिया सजाकर बैठ जाता हूँ।वे अपने जीवन को समाज और प्रकृति की संपत्ति मानते हुए इतिहास की धारा में समर्पित होते हुए अपने लेखन के माध्यम से आस्था के दीप को जलाएँ रखना चाहते हैं। ''जो यह एक विराट यज्ञ चल रहा है, जिसे हर व्यक्ति अपने हिस्से की समिधा डालकर पूर्णकर रहा हैं...... उसमें मेरी भी यह छोटी सी आहुति...... मेरा लेखन।''[17]

मिश्र जी के चिन्तन में यातना सम्बन्धी विचारों के महत्वपूर्ण मुद्दे–

मिश्र जी के अनुसार ''मनुष्य जीवन के कष्ट के साथ जुड़े होने का सिलसिला अनवरत है। यदि एक तरह की तकलीफें खत्म भी हो जायेगी तो दूसरी तरह की उग आएँगी। साहित्य समाप्त करने का शस्त्र नहीं बल्कि तकलीफों में भी अपने आपको बचाए रखने की मानवीय शक्ति के उद्घाटन में साहित्य का लक्ष्य निहित हैं।''[18] दुख सम्बन्धी चिन्तन में मिश्र जी सोल्जेनित्सिन के चिन्तन से प्रभावित दिखायी देते हैं

यातना पीड़ा साहित्य को अधिक मानवीय बनाते हैं तथा उसके अन्दर के कलात्मक उजास को गहराते हैं। इससे जीवन के प्रति उसका रवैया सकारात्मक हो जाता हैं "यातना व पीड़ा" के क्षणों में साहित्यकार के भीतर यह रोशनी चमक उठती है इस रोशनी की उपस्थिति में लेखक अपने–आपको मनुष्य की संकुचित मनोवृति के दायरे से कुछ ऊपर उठा हुआ महसूस करता है। उसकी संवेदना अधिक आर्द्र होती जाती है। यानी कष्टों से घिरे व्यक्ति से सहानुभूति ही नहीं, प्रेम भी होने लगता है। व जीवन के नकारात्मक स्वर में परिवर्तन आता है। रोशनी का एक अंश यानी एक दृष्टि जो सामने दिखायी देती है,उसके भी पार देखने की शक्ति ऐसा आ जाती है। कला ऑखों को कि पहाड़ के सपाटपन पत्थर, कालेपन् के पार, उसके भीतर क्या मणियॉ, क्या रत्न छिपे हुए हैं, ये भी दिखने लगे। शायद यही हैं कला का प्रकाश ।"[19] मिश्र जी का मानना है कि साहित्य और कला का सरोकार दुख से होता है"दुःख मे जो सृजन निहित है उसे अनुभव करने के बाद यह साफ दिखायी देता है कि बाहर से यह चाहे जितना तोड़ता,विध्वंस करता, समाप्त करता नजर आये, दरअसल वह प्रकृति के केन्द्रीय कार्य–जन्मने–में मुख्य भूमिका निभाता हैं।"[20]

<u>मिश्र गोविन्द मिश्र के कला और साहित्य सम्बन्धी चिन्तन के कुछ मुद्दे:–</u>

वे मानते है कि साहित्य का लक्ष्य ठोस नजीजों पर पहॅुचने में नहीं है, वे इसे सूक्ष्म स्तर पर स्वीकार करते हैं हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि साहित्य के कोई ठोस लक्ष्य नहीं हो सकते....... लेकिन सूक्ष्म लक्ष्य भी कम अहम् नहीं है, क्योंकि ये जीवन को विस्तार देते हैं, उसे भौतिक तक ही सीमित नहीं रह जाने देते। [21]

वे यथार्थवाद के नाम पर साहित्य में वीभत्सता,नकारात्मकता को समर्थन न कर जीवन के स्वीकारात्मक मूल्यों प्रेम,आस्था सौन्दर्य के प्रकाशन पर बल देते हैं तथा समकालीन साहित्य पर अपनी चिन्ताव्यक्त करते हैं– अनीश्वरवाद को आत्मा में भरकर अपने फेफड़ों को आक्रोश से फुलाकर रचनाओं में जहर घोलना और उसे क्रान्ति वादिता के नाम से प्रचारित प्रसारित करना साहित्य का रास्ता कतई–कतई नहीं है, मैं जानना चाहता हूँ कि मेरा ठीक रास्ता क्यों हो क्या अपनी आस्था को,आधी आस्था स्वीकार करते हुए उसे गहराना या उसमें आस्था इतर कोई चीज–जैसे कोई कर्म जोड़कर उसे समाज के लिये उपयोगी बनाना। उस वक्त जब जो सही अर्थो में धर्म और साहित्य है...... उनकी आवाज ही खत्म की जा रही हो तब मेरी आस्था मेरा ईश्वर मेरा साहित्यकार .... क्या करेंगे यें।"[(22)]आधुनिक व साहित्य और परिवेश पर भी लेखकीय चिन्ता का एक पहलू हमारे सामने उभरता है। आदमी का सर्वांगीण अप्रतिम विकास होने के बावजूद साहित्य

के क्षेत्र में हम छोटे ही होते जा रहे हैं। जटिलता,गहराई आदि के तमाम दावों के बावजूद आधुनिक साहित्य महाभारत,कालिदास,शेक्सपीयर आदि के समक्ष छोटा क्यों लगता हैं।"[23] मिश्र जी की चिन्ता उन साहित्यकारों के प्रति है जो विभिन्न प्रचार–प्रसार मंचों और प्रतिष्ठानों के माध्यम से साहित्य जगत पर हावी हो रहे हैं। और जो साहित्य लेखन को पीछे ठकेलने के लिये षडयन्त्र में लगे हुए है। "आज के समय में जब साहित्य एक तरफा तो व्यासायिकता की चपेट में आ गया है(कैसे भी लेखन को साहित्य कहने की जिद हैं) दूसरी तरफ उसे सामाजिकता या किसी आग्रह के बहाने कोई भी पार्टी अपना प्रचार साधन बना लेती हैं। .....तब कहॉ है वह भीतरी प्रकाश ?हिन्दी का ही परिवेश देखता हूँ तो आज जितनी पत्रिकाएँ हैं, उतनी पहले कभी नहीं थी। सबके अपने अलग साहित्यकार है, अपनी अलग फेहरिस्त हैं। इन लेखकों के नाम के लिये ही आपा धापी हैं, लेखन के उस स्तर पर पहुँचने की बैचेनी नहीं जहॉं साहित्य कला के मर्म या उस भीतरी प्रकाश की तलाश शुरु हो सकें।"[24] कला के सन्दर्भ में मिश्र जी का विचार है कि कला का संवाहन पीढ़ी– दर–पीढ़ी होता है–" सुन्दरता की पहचान कराने वाली उसे संप्रेषित करने वाली और उसे पीढ़ी–दर–पीढ़ी के लिये सहेजकर रखने वाली जो चीज है,वह है कला(साहित्य जैसे अन्य माध्यम भी इसी के अर्न्तगत)।कला इसीलिये अपरोक्ष रुप से संसार को बचाने का काम करती है......पर यह तभी जब उसका सरोकार सुन्दर से हो।'[25] मिश्र जी लेखन को व्यवसाय या यश प्राप्ति का साधन नहीं मानते वरनच् समर्पण भाव से लेखन में तल्लीन रहना चाहते है। वे साहित्य और कला में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित करते हुए लिखते है कि साहित्य न तो सिर्फ जीवन है न विचार मात्र और न ही भावनाओं का निरंकुश उद्घोष बल्कि इन सभी का कलात्मक गुंफन है। साहित्य से कला को हटा लेना एक तरह से साहित्य की जरुरत ही खत्म कर देना हैं। साहित्य में कलात्मकता की सर्वोच्च्य परिणति उस कला में होती हैं जो कला की प्रतीति ही खत्म कर देती हैं।[26] कला के चमत्कारिक प्रभाव की टिप्पणी करते हुए मिश्र जी लिखते है 'कि ऐसा ऑजती है कला ऑखों कि पहाड़ के सपाटपन ,पत्थर कालेपन के पार,उसके भीतर क्या मणियॉ क्या रत्न छिपे हुए है.....ये भी दिखने लगे। शायद यही है कला का प्रकाश संसार उसके भी आगे ब्रह्मा से समूचे रिश्ते का ही बदल जाना। फिर साहित्कार कलाकार इस नये रिश्ते की पहचान पाठकों को कराता है.....तो प्रकाश की किरणें उन तक भी पहुँचती हैं।'[27]

समकालीन लेखन के प्रति मिश्र जी के विचार बिन्दु व चिन्ता

मिश्र जी में समकालीन लेखन के प्रति असन्तोष उभरता दिखायी देता है। उनके विचार से वर्तमान साहित्य में जीवन की वीभत्सताओं कुरुपताओं को ज्यादा उभारा जाता हैं। लेखन के मूल बिन्दु को यदि दलगत या निश्चित विचार

धारा में बद्ध किया जायेगा तो लेखन के लक्ष्य संकुचित हो जाएगें। साहित्य को सीमाओं बद्ध नहीं करना चाहिए। वे लिखते है कि "इधर यथार्थवाद की लकीर पर ही पर्दाफशी लेखन को तूल दिया जाने लगा हैं, वह चाहे किसी विचार धारा के तहत हो या न हो,मैंने भी कुछ ऐसी कहानियाँ लिखी लेकिन फिर मुझे लगा कि अगर हम यथार्थ वाद की लगाम खींचकर नहीं रखते तो लेखन नाराजगी और घृणा की अभिव्यक्ति मात्र रह जाएगा।"[28] लेखक की सजगता चिन्ता उन्हें समकालीन मानसिकता के दायरे से ऊपर उठाती है यही कारण है लेखक किसी विचार धारा के खेमे में बद्ध न हे ,स्वतन्त्र चिन्तन में लीन रचनाकर्म में प्रवृत्त होता हैं। वे लिखते है कि आज साहित्यपूर्ण सार्थकता को प्रतीत नहीं करा पाता हैं। क्योंकि हम कलम धारियों को इन दिनों विचार बहुत पीड़ित रखता है। कोई भी अभिव्यक्ति विचार से शून्य नहीं होती, पर विचार जहाँ तक स्वाभाविक अनायास किसी अनुभूति, अनुभव या संवेदना से आकार पाए उतना ही तो! हम तो बहुत–बहुत आगे.... विचार के भी आगे आज विचार धारा को साहित्य में उतारने के आग्रही हो गयें हैं।"[29]

शाश्वत मानवीय मूल्यों के प्रति लेखकीय चिन्ता और विचारः–

गोविन्द जी का लेखन मूलरुप से आस्था से जुड़ा हुआ लेखन हैं,उनके सरोकार उनकी चिन्ता टूटते विखंण्डित होते जीवन मूल्यों और विड़म्बनाओं पर हैं। आज मूल्य हीनता और अविश्वास की स्थितियाँ समाज पर हावी हो रही हैं। इस स्थितियों पर चिन्ता व्यक्त करते हुए मिश्र जी लिखते है कि"आज के समय में जब आस्था और मूल्यों के अभाव में मनुष्य–मनुष्य का विनाश बड़े ही मशीनी ढंग से करने पर उतारु दिखता हैं...... तब कोई भी जो अपने मस्तिष्क पर छायी विचारवादी प्रचारवादी धुन्ध को हटाकर देखगा तो उसे एक ही सत्ता नजर आएगी। साहित्यकार इसके इतर अगर कुछ करता या सोचता है तो उसकी मनुष्य में भी आस्था नही यह माना जा सकता है जैसे हर युग में ही कुछ जर्बदस्ती साहित्यकार रहे होगें,वैसे आज ये बन्दे भी हैं– मिलावट के युग में मिलावटी साहित्यकार।"[30] मिश्र जी इस युग में मानवीय मूल्यों प्रति आस्था बनाए रखना चाहते है उनका कथा साहित्य आस्था का निर्माण करने वाला है वे लिखते है कि "हमे कुछ नहीं दिया तो जलाए ही रखना है, ऑधी के बीच दीये की रक्षा और सजगता से करनी हैं। जीवन, मनुष्यता, सौन्दर्य, सर्वचलिक मूल्य– इनमें हम अपनी आस्था तो बचाए रखें। अपने लेखन द्वारा पाठक की आस्था भी बचाए रखें।....... चिन्तन मूल्यों पर जो धूल जम गयी है,अगर उसे साफ करना जरुरी है तो नए मूल्यों की सृष्टि भी और यह काम साहित्यकार के अलावा कोई नहीं कर सकता। आज के जो दबाव है नए मूल्य उसके भीतर से ही निकलेंगे। हमें इन दबावों को सकारात्मक

दृष्टि से खखोरना होगा। कचरे में दबे पड़े पत्थर के उन टुकडों को पहचानना होगा जो साफ किए जाने और तराशे जाने पर कदाचित रत्न बन सकें।

एक साहित्यकार वस्तुतः एक साथ ही रचनाकार,विचारक युग दृष्टा, तत्वदर्शी तथा दार्शनिक होता है। उसका सम्पूर्ण चिन्तन तथा दर्शन विचार उसकी रचना के अवयय होते हैं। चिन्तन ,दर्शन, विचार, लेखक को रचनात्मक कौशल,तथा रचना दृष्टिप्रदान करते हैं।

उपअध्यायः– 3 कथा साहित्य में निहित समस्यायें–समाधान

हिन्दी कथा जगत का अत्याधुनिक स्वरुप समस्या मूलक हैं। क्योंकि आधुनिक कथाकार जिस समस्या विशेष को लेकर कथा साहित्य का सृजन करते हैं। ये समस्यायें समाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक, नैतिक, पारलौकिक किसी भी प्रकार के सन्दर्भो से जुड़ी हो सकती है। इस प्रकार रचना कर्म में कथाकार का सम्पूर्ण ध्यान समस्याओं पर ही केन्द्रित रहता है। वह इन समस्याओं अपने विशिष्ट लक्ष्य के प्रकाश वृत्त में प्रकाशित करता हैं। सम्पूर्ण वस्तुओं को अपने नजरिये से देखता है उसका जीवन दर्शन समस्याओं को देखे न उनके हल ढूढ़ने में सतत् प्रत्यनशील होता है। इन रचनाओं के कथा तत्वों में सबसे अधिक महत्व समस्याओं को दिया जाता है। कथाकार समस्या रखता है,विश्लेषण करता हैं, कारणों को प्रकाशित करता हैं। पर हल व्यक्त नही करता, संकेत के माध्यम से हल सुलझा भले दे,वह पाठकों की विचार शक्ति को समस्या का हल सोचने को बाध्य करता हैं। समस्याओं के हल के सम्बन्ध में कथाकार मिश्र जी का कथन है सवालों के हल इतने आसान नहीं होते...हल देकर हम रचना को कमजोर बनाते है। मेरे ख्याल से रचना सशक्त होती हैं, तब जब वह बहुत तरह के सवाल उठा सके, सवालों के कई आयाम आ सके।[31]

मिश्र जी का कथा– साहित्य समकालीन युग, उसके परिवेश के समस्त सामाजिक,राजनीतिक, आर्थिक,धार्मिक,नैतिक सन्दर्भो और जीवन जगत की अनगिनत समस्या से जुड़ा हैं।

एक ओर जहॉ वे उच्चवर्ग की मानसिकता को टटोलते हैं। वही दूसरी ओर निम्न मध्य वर्ग की समस्याओं को उद्घाटित करते हैं। कस्बे, गॉव,शहर के विभिन्न परिवेश से सम्बन्धित पात्रों स्थिति,परिस्थिति,समस्याओं के उलझाव,सुलझाव,मानसिकतायें दफ्तरों में कार्यरत विभिन्न वर्ग के कर्मचारियों की मनोवृत्तियॉ संत्रास,पीड़ा, अर्न्तद्वन्द्व, बाह्यद्वन्द्व, टकराहट,यातनाऍ,आम आदमी की त्रासद स्थितियॉ आधुनिक नारी की मनःस्थिति समस्यायें शोषित पीड़ित नारी की विभिन्न स्थितियॉ पारिवारिक राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक विभिन्न समस्यायें मिश्र जी के कथा–साहित्य में उद्घाटित होती हैं→

कथा साहित्य में निहित युवा वर्ग की विभिन्न समस्यायें व निदान→ मिश्र जी के कथा साहित्य में युवा–वर्ग की विभिन्न स्थितियॉ व समस्यायें उद्घाटित होती है।

उपन्यास वह/ अपना चेहना→ दफ्तरी माहोल से जुड़ने वाले नोंजवान अधिकारी शुक्ला को अपने उच्चाधिकारी केशवदास द्वारा किए गये नीति मूल्यों के हनन व उसकी अधिकारी वृत्ति से चोट पहुॅचती हैं। अपमानित शुक्ला का चोट खाया अहम् प्रतिशोध की ज्वाला में सुलगता एकबार केशवदास की बेटा रेशमा से फ्लर्ट कर बैठता है। परन्तु

उसके प्रतिशोध का तुष्टिकरण नही हो पाता हैं उसे मजसूस होता है, कि वह अनजाने में केशवदास की गुलामी करने लगा है उसकी बेटी के लिय पाला गया खानसामानुमा बन गया हैं। वह विरोध छोड़ अपने तरक्की के उपाय सोचता है व दूसरे माध्यम से अपनी सिफारिश भेजता है जब यहाँ भी केशवदास उसकी तरक्की के लिये पैसे ऐंठ लेता है तब वह अपने को और अधिक ही न और अपमानित महसूस करता है इस बार उसका प्रतिशोध मिसेज आजवानी को अपने दोस्त के कमरे में ले जाने में सफल होता है और उससे आधे बालात्कार जैसा कुछ कर राहत महसूस करता है। पर बाश–बेसिन के शीशे में झुका नायक जब मुंह की लिपिस्टिक साफ करने जाता है तब उसे अपनी अँगुलियाँ केशवदास की तरह काँपती नजर आती है। उसे महसूस होता है कि नीति मूल्यों का हनन करने वाले केशवदास का विरोध करने वाला वह खुद जाने–अनजाने अमानवीयता से लैंस हो नीतिमूल्यों की दहलीज स्वयं पार कर गया।

"इस उपन्यास में सेक्स वाले पक्ष से इतना उलझाव हैं कि व्यक्ति, स्थिति या समस्या के सामाजिक या अन्य किसी भी प्रकार के व्यापक आयामों की कोई चेतना नहीं दिखती।"[32] केशवदास से प्रतिशोध,अपने अपमान,अपनी घुटन का समाधान या फिर अपनी वासना की पूर्ति। इन गुत्थियों से टकराहट आज आम समस्या बन गयी है और उपन्यास में सारे पात्र इससे टकराते–टकराते अपनी –अपनी सामर्थ्य एवं सीमा में इसका समाधान पाने की चेष्टा करते है या कभी इसे अनदेखा करते हैं। मिश्र जी ने इन सभी मानसिक प्रवाहों को उतनी ही सहजता से अंकित किया हैं।[33] उपन्यास मं चित्रित गुत्थियों की भावात्मक सघनता दिन प्रति दिन जटिल हो रहें। परिवेश के प्रति पाठक के मन में अनेक सवालों को खड़ा करती हैं। ये उपन्यास स्वातंत्र्योत्तर काल में व्यक्तित्व के विभाजन व उसकी टूटन से उपजी त्रासद स्थितियों व समस्याओं के अनेक आयामों को विभिन्न कोणों से उभरता है।

<u>उतरती हुई धूपः–</u> यह उपन्यास स्वतन्त्र्योत्तर काल में बदलती युवा मानसिकता के ऊहापोहों से उपजी स्थितियों व समस्या को उभारता है। इसमें युवतियों के बीच पनपने वाले प्रेम,प्रणयोत्सकता,समीप्य की आकांक्षा,शारीरिक आर्कषण वर्णन, विवाहोत्तर नायिका के बदलाव, बदलाव से उत्पन्न नायक की खीज, कोध, ईर्ष्या संशय को सशक्त रुप में उभारा गया है। पर उपन्यास में सामाजिकता के गहरे सन्दर्भो को नहीं खोजा जा सकता हैं। सहन प्रकिया से चलने वाले इस उपन्यास में प्रेम में मानवीय मूल्यों की दहलीज को लोंध जाने वाले प्रश्नों को रेखांकित किया गया है।

<u>लाल–पीली जमीनः–</u> यद्यपि यह उपन्यास किसी विशेष प्रकार की समस्या को 'एक्सपोज' नहीं करता हैं पर व्यक्ति और सामाजिक परिवेश की भयानक नियति के

क्रूरतम प्रभाव से प्रभावित व्यक्ति के व्यक्तित्व के गठन को, आचरण व्यवहारों, वृत्ति–प्रवृत्तियों को उभारता है।

बुन्देलखण्ड अंचल के छात्र समुदाय में व्याप्त हिंसा, कामकुंठा भटकाव, दिशा हीनता को चित्रित कर कथाकार सम्पूर्ण समकालीन समाज में व्यापक रुप में व्याप्त युवा वर्ग की हिंसक मनोवृत्ति की नब्ज को टटोलता है। साथ ही उन सामन्तवादी ताकतों की बखिया उधेड़ता है जो निर्ममता राजनीति में अपनी धाक जमाने के लिये इन युवाओं को बड़ी चालाकी और निर्ममता हिंसा की अग्नि में झोंक देती हैं। परिवेशीय हिसा के प्रभुंत्व में आवर्त्त इन अर्थहीन युवा जीवन के पास अपनी छवि स्थापित कने का मात्र साधन हिंसा ही रह जाती हैं। इनमें कोई नैतिक मूल्य और मानसिक संस्कार नहीं उभर पाते हैं। उपन्यास बुन्देली अंचल के युवा वर्ग के अमानवीय कृत्यों की यथावत् तस्वीर खींचता है। इन स्थितियों को दिखाकर लेखक मौन साध लेता हैं। इन स्थितियों के प्रतिशोध का मार्ग नहीं दिखाता। वह मूल्यात्मक आदर्शो के संवाहक पात्र मास्टर कंठी की हत्या कराके, मास्टर कौशल की लड़की का बलात्कार दिखाकर व केशव के माँ–बाप का पुनः गाँव की ओर पलायन दिखाकर और उन्हें मानसिक यातना के कगार में पहुँचा परिवेश नैतिक मूल्यों की इतिश्री करा देता है। जिससे हिंसात्मक प्रवृत्तियों को बल मिल सकता है। इन स्थितियों में लेखक पर लेखकीय दायित्व के नकार व साहित्य के उद्देशों को लक्षित न करने के आरोप लगाये जा सकते है। "क्या लेखक इन प्रतिरोधी शक्तियों को नष्ट करके या तोड़कर समाज के प्रति लेखकीय उत्तरदायित्व से इन्कार कर रहा है? क्या निषेघामूलक यह कृति यथार्थ की पैरोडी हैं? अत्युक्ति हैं? इसके उत्तर में कुछ प्रश्न किये जा सकते है? क्या हम अपने समाज में आए दिन सच्चाई और ईमानदारी की शवयात्रा नहीं देखते? क्या अन्याय और अत्याचार से लड़ने वाला व्यक्ति अकेला नहीं पड़ जाता? क्या चिन्तन विचार और लोक संवेदन से रहित आवारा लड़के राजनीति में आकर मूर्खता पूर्ण अत्याचार और आतंकपूर्ण अंहकार का नंगा नाच नही करते? राजनीति लोकनीति नहीं, गुंडा गर्दी में बदलती नजर नही आती? अगर ये वह लोकहित की दृष्टि पर आधारित नही हैं।"[३४] वैसे मिश्र के इस प्रयास को अनुचित नही कहा जाना चाहिए। क्योंकि यदि कथाकार सामाजिक स्थितियों की वास्तविकताओं को न उघाड़कर उन पर आदर्शवाद का परदा डालता है तो वह सामाजिक स्थितियों से परे करना होगा। वैसे उपन्यास की कथा सम समायिक समाज में अर्न्तनिहित गहनतम सूत्रों को संकेतिक रुप में उभार कर विराट सन्दर्भों से जुड़ती चली जाती है और समय की व्यापकता, गहनता के आयामों को अपने आगोश में लिये अपने प्रभाव को बनाये रखती हैं।

हुजूर दरबारः– उपन्यास राजतन्त्र के प्रजातन्त्र में विलीनीकरण जैसी राजनीतिक और ऐतिहासिक स्थितियों के पार्श्व में दोनों तन्त्रों के बीच पिसते विघटित मानव की कारुणिक कथा को उभारता हैं। उपन्यास में सत्तान्तर को समय के अनेक राजनीतिक सामाजिक घटकों, रियासत की घटनाओं, नियति, प्रजामण्डल के साथ रियासत के संघर्ष, राष्ट्रीय स्वतंत्र हरीश के जीवन संघर्ष को उभारा गया है। कुल मिलाकर उपन्यास सामयिक राजनीतिक गति विधियों का ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत कर आधुनिक युग के संत्रास, समस्याओं को मूर्त रुप में प्रस्तुत करता हैं। इस उपन्यास के सम्बन्ध में मिश्र जी बताते हैं कि हुजूर दरबार मैंने किसी समस्या को एक्सपोज करने के लिये नहीं लिखा बल्कि मेरे मन में एक बोझ या......कुछ हद तक जो आज के आदमी का बोझ है......

कि जिस तन्त्र से उसे इतनी आशाएँ थी उसने आखिर क्या दिया? अगर थोड़े से शब्दों में कहूँ तो जो भी हमारी 'डिसइल्यूजनमेन्ट हैं, अपनी स्वंतन्त्रता से या अपने प्रजातन्त्र से,अगर वह व्यथा और भावना के स्तर पर व्यक्ति हो तो वह 'हुजूर दरबार' का उद्देश्य था। जैसे गाँवों और कस्बों में लोग अकसर करते सुने जाते हैं कि इस जमाने से बेहतर तो राजाओं का जमाना था। यह एक मुहवरा हैं अपनी पीड़ा को व्यक्त करने का।...... 'हुजूर दरबार' सिर्फ आज के संत्रास को व्यक्त करता हैं। समस्या के हल के विषय में मिश्र बताते है कि समस्या के हल आसान नहीं होते, हल देकर अगर समस्या के हल देना रचना को कमजोर बनाना है। ''समस्या का हल भले ही प्रस्तुत न हो, मैं सवाल खड़े करुँ,आज के यथार्थ को लेकर अपने राजनैतिक–सामाजिक विकास और परम्परा के परिप्रेक्ष्य में। 'हुजूर दरबार' उपन्यास में पुराने राजाओं और नेताओं को आमने–सामने करके कुछ सवाल खड़े करे, उन सवालों के रुबरु हो शायद कुछ रास्ता निकले यह आया। मेरे किसी उपन्यास में सीधे–सीधे हल नही सुझाया गया है।''[35] वैसे मसीहाई अन्दाज में लेखक का यह कहना कि यह गलत हैं यह सही । ये लेखक और साहित्य के लिये श्रेयस्कर नहीं हैं।

इसी प्रकार मिश्र जी की विभिन्न कहानियों में भी वर्तमान युवा–वर्ग की भिन्न मानसिकता,स्थिति,भटकाव,दिशाहीनता,समस्याओं को उद्घाटित किया गया हैं।

संगीत और बर्तनों की खनकः– कहानी में आर्थिक विवैचना से ग्रसित परिवार के उत्तरादायित्व का बोझ उठाने युवती जो इन जिम्मेदारियों के बोझ तले अपने निज के जीवन को पूर्ण रुप में नहीं जी पाती हैं की समस्या को उभारा गया है। वह अपनी स्थितियों को जीने के लिये विवश होती है। 'भटकता तिनका' कहानी में पढ़ी लिखी आधुनिका युवती की स्थितियों को रेखांकित किया गया है। जिसे पढ़ी–लिखी नौकरी करने के कारण अपना जीवन साथी चुनने की स्वतंन्त्रता मिलती हैं परन्तु अपने लिये उपयुक्त वर की तलाश में वह प्रौढ़ा की दहलीज पर आ जाती है। कथाकार ने उसकी

मनोस्थितियां बड़ा ही सटीक चित्रण किया हैं। "माध्यम का सुख" कहानी में एक ब्याहता युवती के अर्न्तमन में उठने वाली भावतरंगों का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया हैं। जो अपने पड़ोस में आने वाले स्टूडेन्ट में अपने प्रेमी की झलक देखती है। 'भटकता अंधियारा' कहानी एक कुरुप युवती के अर्न्तमन में उठने वाली भावतरंगों की स्थितियों को उभारती हैं। 'यक्षिणी का पत्र यक्ष के नाम' कहानी में एक सौन्दर्य शालिनी युवती की मनोस्थिति का चित्रण है जो फिल्मी कैरियर तक पहुँचकर अनेक पुरुषों का हम बिस्तर बनती हैं। ' चिलमन और धुंआ' कहानी में युवा प्रेमी के मन की हताशा,निराशाजन्य स्थितियों को दर्शाया गया। 'अलग–अलग समय' कहानी में मध्यवर्गीय जीवन की मूल चेतना युवक युवतियों के प्रणय भावना को संवेदन शीलता प्रदान की गयी हैं। युवक प्रेमिल सम्बन्ध को भावात्मक स्तर पर जीना चाहता है,परन्तु मगर युवती इसमे जीवनगत 'थ्रिल' का अनुभव करना चाहती है। परिणाम सम्बन्धों में दूरिया जहाँ युवती के लिये किसी एक पर टिकना मुमकिन नहीं होता। ' हमदर्दी ' कहानी में एक गरीब बेरोजगार यवुक की समस्या को उभारकर सम्पूर्ण देश में फैली बेरोजगार की समस्या को मुखरित किया गया है।

इस प्रकार ये विभिन्न उपन्यास कहानियों में बेरोजगार युवकों की समस्या, उनकी सोच, उनके आक्रोश, अनिर्णय के बीच झूलते अनिश्चित भविष्य से सन्दर्भित समस्याओं का चित्रण है तथा आक्रोश विध्वसंक, विनाशात्मक स्थितियों से उत्पन्न समस्याओं को भी बड़े कलात्मक ढंग से उद्घाटित किया गया है।

कहानियाँ व उपन्यास स्थितियों पर प्रकाश डालते हैं समस्याओं को उद्घाटित करते हैं व स्थितियों पर प्रश्न चिन्ह भी लगाते हैं पर निदान का रास्ता नहीं सुझाते हैं।

<u>मध्यवर्गीय की विभिन्न पारिवारिक समस्याओं का चित्रण एवं आधुनिक नारी की विभिन्न समस्याओं का उदघाटनः–</u> मिश्र जी के कथा साहित्य में मध्यवर्ग की विभिन्न पारिवारिक समस्याओं, स्त्री–पुरुषों के विविध सम्बन्धों, मानसिकता के विविध आयामों व इन। इस कारण उसके पुरुष मित्रों का अलग दायरा है। इन मित्रों में अनन्त के साथ उसका भावात्मक सम्बन्ध बनता है। प्रेम भावात्मक ऊँचाई तक पहुँचा देता है। परन्तु अपनी पत्नी को स्वतंन्त्रता पर समानता देने वाला उसका पति रमेश का जब पुरुष अपने संस्कार ग्रस्त लबादे को ओढ़ता है। तब वह सुवर्णा को उसके बॉस के सामने अपमानित ही नहीं करता बल्कि मित्रों से मिलने की पाबन्दियाँ भी लगाता है। उसकी क्रूरताओं से सुवर्णा अन्दर तक टूट जाती है। यद्यपि उसके पति के सम्बन्ध भी अपनी सहकर्मी उर्वशी के साथ है। सुवर्णा इन स्थितियों को अपने

स्वतन्त्र प्रवृत्तियों से जूझकर आत्मसम्मान प्राप्त करना चाहती है। अन्त में जब उसे अपने निर्णय की स्वतन्त्रता मिलने पर भी वह अपने पति को तलाक नहीं दे पाती हैं न अनन्त को पूर्णतया अपना पाती है। विघटित व्यक्तित्व के अभिशाप को ढोते रहना क्या यही संवेदनशील व्यक्तित्व की मजबूरी है? क्या इससे निजात सम्भव नहीं हैं। शायद यही है जिसे इस उपन्यास में उठाया गया है और इस मुख्य सवाल के ईद–गिर्द उठने वाली पीड़ाओं को ढोती हुई उपन्यास की प्रमुख पात्र सुवर्णा इस सवाल के उत्तर तक पहुँचने की कोशिश करती हैं। अन्त में वह एक ऐसे सन्दर्भ को पा लेती है जिसकी रोशनी में सवाल का उत्तर नुमायॉं होता है। यही वह सन्दर्भ है कि जिसकी उपस्थिति में खुद की खंडित तस्वीर को खुलकर पेश किया जाना होगा ताकि विघटित होने के अभाव को पूरी उत्कतता से जिया जा सके,और पूरे साक्षी भाव से अपनी व्यवथाओं को तटस्थ होकर गुजरता हुआ देखा जा सके। उसकी रोशनी को आलबंन समझकर अपनी खंडित प्रतिभा को उसके सम्मुख समर्पित किया जा सके। खंडित व्यक्तित्व के गहरे में छिपी अखंडता को पालेने का शायद यही एक रास्ता है। अनन्त की रोशनी में सुवर्णा के तमाम प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं। यह सिर्फ रोशनी है, एक सन्दर्भ जिसके सामने सुवर्णा अपनी तमाम टूटन को समर्पित करके उससे मुक्ति पा लेने का अनुभव करती है।''[36] अतः स्त्री पुरुष आधुनिक समस्या को परम्परा के प्रकाश –वृत में सुलझाने का प्रयास किया गया है। ''समस्या की शुरुआत सुवर्णा की छटपटाहट से होती है और समाधान अनन्त के भीतर से उपजता है।''[37]

<u>उपन्यास उतरती हुई धूपः–</u> में मध्यवर्गीय युवा–युवतियों के बीच पनपी संवेदनशीलता को वाणी प्रदान की गयी है तथा 'प्रेम और काम' सम्बन्धों के बीच नारी स्वातन्त्र को एक संचेतना प्रदान की गयी है। पर इन स्थितियों के बीच उभरकर आता है कथाकार का चिन्तन वह इन स्थितियों में सामाजिक दायित्व के बोध के स्वीकार्य को ही प्रश्रय देता है।

उपन्यास लाल–पीली जमीनः– में उभरती है नारी जीवन की भयानक नियति। परिवेशीय आमनवीयता, हिंसा नारी को किशोरी होने से पहले कपाटों के बीच बन्द रहने को विवश करती हैं। पर इस परिवेश में मालती जैसी युवती परिवेश से मुक्त होने का प्रयास करती है पर उसे भी घिनौने लगोटधारी पंडित का शिकार बनना पड़ता है।

धीरे समीरेः– उपन्यास में जीवन संघर्षो,घटित घटनाओं से जझूती सशक्त,सर्तक नारी का मौलिक अन्वेषण किया गया है। नारी मुक्ति की कथा को उद्‌घाटित करने वाला ये उपन्यास एक ओर कथा यात्राा में आए विभिन्न पात्रों के माध्यम से मध्य वर्ग की बदलती तस्वीर पेश करता है तथा दूसरी ओर धर्म, दर्शन, अर्थ व्यवहार के आपसी सम्बन्धों तथा जिन्दगी के गहरे सवालों को उकेरता है। अपने पुत्रा की खोज में आयी सुनन्दा की

कहानी,सुनन्दा नन्दन और सुनन्दा सत्येन्द्र के मिलने बिछुड़ने के क्रम में पारिवारिक वारदातों को चित्रित करती है परन्तु उपन्यास इसके साथ–साथ भारतीय मानस में गहरे पैठीं आध्यात्मिक जिज्ञाआसों को उद्घाटित करता है। लेखक सुनन्दा के जीवन घटित घटनाओं, अनुभूतियों का सामंजस्य भागवत भक्ति के प्रतीकों के साथ बिठाने का प्रयास करता है। परन्तु भक्ति और जीवन की संगति के प्रतीक बनावटी रंग भरते से प्रतीत होते हैं। सुनन्दा सत्येन्द्र के माध्यम अपनी लड़ाई स्वयं लड़ने में सफल होती हैं। लेखक बच्चे को ससुर के चंगुल छुडाने का उसका प्रयास तथा पति को तलाक मंजूरी दिखाकर "मुक्त प्रेम के माध्यम से वह विवाह की सीमा को अस्वीकार तो करता है किन्तु व्यक्ति को उसके अहम् से मुक्ति नहीं दिला सकता। जब स्त्री स्वतन्त्र होकर और घर के दीवारों के पीछे छिपकर दोनों परिस्थितियों में असुरक्षित ही हैं, फिर उसका प्रेम मुक्त कैसे कहलायेगा? इसलिये मिश्र जी को जीवन कौन सा रास्ता दिखलाता है, यह उत्सुकता अभी भी बनी रहती हैं। मिश्र जी ने उपन्यास में सुनन्दा के माध्यम से उन सारी समस्या को उभारा है जो समस्याएँ हमारे पुरुष प्रभुत्व वाले समाज में उभरकर आती है। और अन्त में आध्यात्मिक को,पश्चिम पर भारतीय को तरहीज देकर समस्या के समाधान का संकेत किया गया है।

<u>उपन्यास पॉच ऑगनों वाला घरः–</u> यघपि इस उपन्यास में मिश्र जी ने 1940 से लेकर 1990 के काल में सामाजिक ,राष्ट्रीय,नैतिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारणों और परिणामों की पड़ताल बडे ही कलात्मक ढंग से की है कथाकार ने कथावस्तु को उस बिन्दु वस्तु को उस बिन्दु से उठाया है जब मूल्यधर्मी संस्कृति के विश्रृंखलन के संकेत मिलने लगे थे। 1950 से 1960 तक कालखण्ड को लेखक दीवारें नाम से अभिहित किया है। जिसमें देश के विभाजन के साथ–साथ परिवार, व्यक्ति के ह्रदय के विभाजन को दिखाया है। परिवार रम्मों राजन की विपरीत जोड़ी के माध्यम से मध्यवर्ग प्रवृति अतृप्त जी वेदणा महत्वाकांक्षाएँ, विचारों व भिन्न सांस्कृतियों की टकराहट आत्म केन्द्रित किया गया है। रम्मों की यही प्रवृतियॉ उसके दुख का कारण बनती है संयुक्त परिवार में भिन्न तरह की समस्या उत्पन्न करती है। राजन् को परिवार से काट देने की उसकी चतुराई उसे भारी पड़ती है। उसके बच्चे उसे अकेले छोड़कर चले जाते है।

इसके अतिरिक्त मिश्र जी की कहानियों में भी मध्यवर्गीय परिवार के दाम्पत्य जीवन व नारी जीवन की अनेकानेक समस्याएँ विभिन्न स्थितियॉ उद्घाटित होती है।

'खुद के खिलाफ' कहानी की पात्र विमला प्रेम में असफल होने पर नारकीय जीवन का वरण स्वेच्छा से कर लेती हैं उत्तरदायित्व हीन पति द्वारा लाये गये मेहमानों का वह हम बिस्तर बनना स्वीकार करती है मन में एक ही क्षोभ कि जब वह उस पति के साथ सो सकती है जिसे वह चाहती नहीं तो वह किसी के साथ सो सकती है। परन्तु प्रेमी से

मुलाकात होने पर वह पति, बच्चे अपना सब कुछ छोड़कर उसके साथ जाने को तैयार हो जाती है परन्तु इन स्थितियों में प्रेमी की मानसिकता उसे स्वीकार्य नही कर पाती है। कथाकार प्रेमी की स्वार्थ की नयी विंसगति, एकाधिकार की क्रूर मानसिकता, पति द्वारा पत्नी के शोषण का चित्रण तो करता है। परन्तु स्थितियों से उबरने का संकेत मात्र भी नहीं दिया गया। 'गिद्व' कहानी मॉ–बाप के उत्तरदायित्व के बोझ तले दबी नौकरी पेशा युवती की जीवन स्थिति व समस्याओं को उद्घाटित करती है। 'ज्वालामुखी':– की नायिका सावित्री पति द्वारा किए गये निर्मय अत्याचारों के विरोध में तनकर खड़ी हो जाती है। उसकी ये प्रतिक्रिया शोषण के खिलाफ नारी के प्रतिकार को दर्शाती हैं। '' आसमान कितना नीला' की नायिका श्वेता शादी और कैरियर में पहले कैरियर को चुनती है। मंगेतर द्वारा शादी के बाद आक्सफोर्ड जाने की बात करने पर वह दृढ़ता पूर्वक उससे कहती है देखो सुधीर दो साल का समय कम नही होता। हमें एक दूसरे को बॉधकर नहीं रखना चाहिए । आक्सफोर्ड से मेरे लौटने पर हम विवाह करेगे पर ऐसी कोई बंदिश नहीं है। इसके पहले अगर तुम्हें कोई बेहतर मिले, तो तुम कर सकते हो। मुझे कोई बेहतर मिला तो...... श्वेता चली जाती है नायक के पास रह जाती है स्थितियां, या तो वह श्वेता के लौटने का इन्तजार करें या बेहतर की तलाश, नायक की समस्या इन्हीं स्थितियों के बीच गुजरते खड़ी होगी, जिसे लेखक ने कहानी के अन्तिम बिन्दु में संकेत देकर छोड़ देता है। 'किस कीमत पर' कहानी में मध्यवर्गीय नौकरी पेशा नवयुवती की समस्यॉ को उभरा है। 'उल्कापात और संडाध' कहानियॉ मध्यवर्गीय परिवार के दाम्पत्य जीवन में उभरने वाले समस्याओं को उद्घाटित करती हैं। उल्कापात की पत्नी पति के जीवन में आने वाली पर–स्त्री के कारण अपना घर, पति बच्चे सब कुछ छोड़कर चली जाती है।पर इसके विपरीत संडाध की पत्नी पति द्वारा सौता के साथ रहने के प्रस्ताव को ठुकरा देती है और अपने तथा अपने बच्चों की समस्याओं को अकेले ही सुलझाने के लिये तत्पर होती है। दोनो ही कहानियों की स्त्रियॉ पति के जीवन में आने वाली पर स्त्री के दर्द से पीड़ित हैं परन्तु 'उल्कापात' की पत्नी का बच्चे और घर छोड़कर चले जाना व संडाध की पत्नी की आत्मनिर्भरता पुरुष की परम्परागत विचार पद्वति को जबर्दस्त धक्का देती है। संडाध की पत्नी स्वयं आत्मनिर्भर हो अपने बच्चों का भरण पोषण करने को तैयार हो जाती है। जिसमें समस्या उसकी आत्मनिर्भरता में समाधान की ओर अग्रसर होती है। 'इन्द्रलोक व दौड़' कहानियों में आधुनिकता की कचकौंध से भ्रमित नारियों की मनोदशा व स्थितियों से उत्पन्न समस्या को दर्शाया गया है। इन्द्रलोक की नायिका विवाह के बाद दो पर– पुरुषों के सान्निध्य में आती हैं, परन्तु पति की उदारता इन स्थितियों में भी उसे स्वीकार्य करती हैं। पश्चाताप की अग्नि में सुलगती पत्नी की मानसिकता स्वेच्छा से वरण करने वाले पति के पास जाने की हिम्मत

नही जुटा पाती है। 'यो ही खत्म' की पार्वती मौसी को पति का अत्याचार और उसके साथ बिताया गया नारकीय जीवन बेलौस बना देता है, किसी को भी गरियाना व छुआछूत मानना उनका स्वभाव बन गया था। परन्तु प्रसव वेदना को झेलती एक अछूत रामघन की पत्नी की मदद के आग्रह को वे ठुकरा नही पाती है तभी उनके अन्दर मानवीय भावना सोता फूट पड़ता है वे समझ पाती है कि किसी कहानी की सार्थकता इसी में है कि वह दूसरी कहानी में प्रवाहित पर्यवसित हो जाए।[1] इस तरह जीवन की स्थितियों से हताश भटकती पार्वती मौसी को जीवन का एक व्यापक लक्ष्य मिल जाता है और कथाकार उनकी जिन्दगी को एक नये आयाम से जोड़कर समस्या और स्थितियों से उबरने का एक रास्ता दिखाता हैं। 'साजिश' कहानी मध्यवर्ग के दाम्पत्य जीवन का एक और रुप उभरता है। अपनी मनपसन्द युवती से विवाह न होने पर युवक भावात्मक रुप से अपनी पत्नी से नही जुड़ पाता है। परिणामः दोनों के बीच दूरियॉ बढ़ना स्वाभाविक हैं, परन्तु बच्ची की मौत का हादसा दोनो के बीच इस दूरी को पाट देता है। 'एक बूँद उलझी' एक मध्यवर्ग के इंस्पेक्टर की दर्दनाक दस्तान हैं जो पैसों को जीवन की सार्थकता मान गलत सही तरीके से पैसा इक्कठा करता है व अपनी बीवी बच्चों को मार्डन बना उच्च्वर्ग समाज में अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करना चाहता है। परन्तु बीवी बच्चों का उसे छोड़कर चले जाना उसे मर्मान्तक पीड़ा देता हैं। मरते वक्त बीवी और बच्चों के इन्तजार में उसकी कोर में उलझी ऑसू की एक बूँद उसके पश्चाताप का संकेत देती है। 'अर्द्धवृत्त' कहानी पारिवारिक होते हुए भी एक नवीन अनुभूति प्रदान करती है। दाम्पत्य जीवन में पर स्त्री प्रवेश से बौखलायी पत्नी जब बीमार सौता को अपमानित करने अस्पताल जाती है तब सौता की सहजता व व्याहता के पुत्र के नाम मकान व जमा राशि कर देने की स्थिति ब्याहता के ह्रदय में मानवीयता को भावना जागृत कर देती है और इस मानवीय स्निग्घता में ब्याहता सौता बड़े छोटे सभी भेद धुल जाते है। इस कहानी को निदान तक पहुँचा दिया है। ' मायकल लोबो' एक मध्यवर्गीय परिवार के वकील की कहानी है जो शराब की लत में अपनी नौकरी सम्मान सब कुछ गवॉ बैठता है पर एक दिन बेटी के प्रेम,खीज,टीस,आक्रोश मिश्रित ये शब्द "पापा मैं आखिर कब तक आपको इस तरह उठाती रहूँगी"। लोबो की अन्तरात्मा को झकझोर देते है। वह शराब छोड़ देता है उसका ये परिवर्तन यही तक सीमित नही रहता है वह चर्च में जाकर शराब पीड़ितों को घृणित जिल्लत,अपमानित जीवन से उबारने का प्रयास करता है। यह कहानी समकालीन जीवन का चित्र उपस्थित का समस्या को नवीन रुप प्रदान करती है। 'वरणाजंलि' सन्तति विछोह की इस श्रेष्ठतम कहानी का एक सिरा मध्यवर्गीय परिवार की मूल चेतना महानगरीय जीवन पद्धति को अपनाकर आधुनिकता की अन्धी दौड़ में शामिल होने से उभरी समस्या से जुड़ता हैं।पिता अपने सॉचे में ढालने के लिये पुत्र को महानगर

में लाता है और उस पर अपनी हर इच्छा को थोपता है। इसी प्रयास में नये व्यक्तित्व की मृत्यु हो जाती है। दु:ख की पराकाष्ठा में पिता अपने मन में पुत्र के भीतर से नये चैतन्य,नये ईश्वर को स्थापित करने की कामना को जगाता है। पिता के व्यैयक्तिक दु:ख अनुभूति को कथाकार ने बड़े ही कलात्मक ढंग से रुपान्तरित किया है।

'सिर्फ इतनी सी रोशनी':- मध्यवर्गीय दाम्पत्य जीवन को चित्रित करती है। सौतेले पिता के स्नेह वृत को उजागर करने वाली ये कहानी तलाक शुदा स्त्री (जो ब्राह्मणी थी) लड़की का सौतेला–पिता एक मुसलमान था लड़की को अनुपम स्नेह देता है। वह अनुपम स्नेह वृत धर्मग्रत जातिगत, सगा–सौतेले की सभी सीमा रेखा को समाप्त कर देता है।

मध्यवर्गीय पारिवारिक दाम्पत्य जीवन की सफलताओं– असफलताओं, विषमताओं, कटुताओं तथा आधुनिक नारी क विविध समस्याओं को उभारने वाले कथाकार मिश्र जी की संवेदनाएँ निम्न वर्ग तथा निम्न मध्यवर्ग की समस्याओं से भी जुड़ती हैं।'हाजिरी और मुझे घर ले चलो' कहानियों में वे निम्नवर्ग क्रमशः कोयले की खदान मेंकाम करने वाले मजदूरों की स्थिति तथा कम्पनी में काम करने वाले लिफ्ट की समस्याओं को उभारते हैं। इसी तरह 'प्रतिमोह' कहानी बम्बई की झोपड़ पट्टी में रहने वाले गरीब कबाड़ियों की जीवन स्थिति समस्याओं को उभारती है। 'सुनन्दो की खोली' बम्बई में 'चाल' में रहने परिवार के जीवन की बारीकियों को उभारती हैं।

इस प्रकार इन कहानियों में दाम्पत्य जीवन, पारिवारिक जीवन की विभिन्न समस्याये, आपसी रिश्तों के टूटने की व्यथा, दाम्पत्य जीवन का अलगाव आधुनिकता यांत्रिकता औघोगीकरण,शहरी करण के कारण पति–पत्नी दोनो द्वारा अर्थाजन के उत्पन्न समस्याएँ,पति–पत्नी के विभेद से उत्पन्न समस्यायें मध्यवर्गीय व्यक्ति की विडम्बनाएं व उसके जीवन से जुड़ी सभी समस्याएं साकार हो उठी हैं। इन्हीं स्थितियों से जूझते–जूझते पात्रों को कहीं–कहीं जीवन के सार्थक सन्दर्भ भी मिले है और कहीं–कहीं वे अपनी स्थितियों और समस्याओं को झेलने,उलझने सुलझने के लिये विवश दिखायी देता है। और कहीं–कहीं इन समस्याओं के निदान के संकेत भी लेखक ने दिये हैं।

<u>पीढ़ी गत संघर्ष से उत्पन्न समस्याओं का चित्रण</u>:– स्वतन्त्रता के पश्चात् के कथा साहित्य में भारतीय परिवार का परम्परागत ढांचा बिखरता नजर आता है। इस बिखराव का कारण सांस्कृतिक परिवर्तन की द्रुतगामी प्रकिया हैं इस प्रकिया के फलस्वरुप पारिवारिक सम्बन्धों में भी अनेक स्तरों पर परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। परिवार के बिखराव के साथ–साथ पिता और पुत्र में, मॉ और पुत्रा में,पिता और पुत्री में,मॉ और पुत्री के बीच नये सम्बन्धों की स्थिति निर्मित होना प्रारम्भ हो गयी। इस नये सम्बन्धों में परम्परा का तिरस्कार,रुढ़ियों की अवज्ञा और विद्रोह के दर्शन होने लगे।

मिश्र जी ने इन सम्बन्धों को देखा,परखा, अनुभव किया तथा इनके बीच उठते अन्तर, आक्रोश,व्यथा चिन्तन को व्यक्त किया तथा परिस्थिति का विश्लेषण कर इनमें उभरने वाली समस्या को उद्घाटित किया।

संध्यानादः— कहानी पीढ़ीगत संघर्ष को एक नये दृष्टिकोण से उभारती हैं। पुत्र पीढ़ी बड़ी धूर्तता से पिता पीढ़ी का इस्तेमाल करना चाहती हैं। कहानी वृद्धों की समस्याओं को पीडा को, कामकुंठा को बखूबी चित्रित करती हैं।

निरस्तः— कहानी के पिता को जीवन मूल्यों के बदलाव का अहसास परेशान करता है। पिता की विडम्बना यह है कि वह सरलता से इस बदलाव को स्वीकार नहीं कर पाता है और पुत्र उनकी परवाह नहीं करता। उनकी हैसियत नहीं समझता है। लेखक उनकी मनःस्थिति को बड़ा ही सटीक चित्रण किया है। कहानी में कथाकार ने वृद्व की समस्याओं व मनः स्थिति का बड़ा ही सटीक चित्राण किया है। 'जंग' कहानी मॉ–पुत्री के सम्बन्ध को नये दृष्टिकोण से उभारती है। मॉ का व्यक्तित्व अतीत से चिपका हुआ। बेटी के प्रति उसकी बेरुखाई इसलिये कि उसका लगाव अपने पिता से हमेशा था जिसे वह हिराकत की नजरो से देखती है। मॉ की बेरुखी प्रतिक्रियायें सभी बेटी की परेशानी का कारण बनते है। भारतीय परिवेश में मॉ का यह चरित्र बिरला ही नजर आता हैं। परन्तु कहानी के अन्तिम बिन्दु में मॉ का हश्र वृद्वा वस्था की बेवसी को ही दर्शाता हैं 'खंडित'— पहाड़ी परिवेश पर लिखी इस कहानी में प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच पनपने वाले दो पीढ़ियों के अर्न्तद्वन्द्व को बड़े ही कलात्मक ढंग से उभारा गया हैं। वृद्धा मॉ अपनी बीती दुनिया अथवा पति द्वारा बनाये गये आर्चर्ड से जीवन भर जुड़ी रहना चाहती है। परन्तु बेटी पहाड़ी परिवेश से दूर शहर के एक आदमी से अपना विवाह करती है और उन्हें शहर ले जाना चाहती है परन्तु वृद्वा की जिद दोनो के बीच द्वन्द्व,अर्न्तद्वन्द्व,संघर्ष को जन्म देती है।वृद्वा बेटी को आर्चर्ड से जोड़े रखने के खेल अपने ढंग से खेलने में सफल होती हैं।

'झूला'— कहानी बेटो के विदेश जाने पर मॉ के जीवन में आए ठहराव व खालीपन को दर्शाती है।

कहानी दो पीढ़ियों के बीच पनपे वैचारिक द्वन्द्व, पाश्चात्य मूल्यों की चकाचौंध में बदलती नवीन पीढ़ी की सोच, मॉ–बाप की बेबसी। भावनाओं पर हुए कुठाराघात, असमर्थता का अंकन अत्यन्त सूक्ष्म स्तर पर करती है और इन स्थितियों के बीच उत्पन्न समस्याओं को उभारती है।

'युद्व'— कहानी में तीन पीढ़ियों का अर्न्तद्वन्द्व पिता के संवेदन वृत में चित्रित होती है। पुत्र पीढ़ी जो पश्चिम के प्रभाव के कारण अपने को अत्यन्त बौद्विक समझती है। विवाह जैसे मामलों में जल्दबाजी नहीं करना चाहती हैं। लड़की के साथ कुछ दिन रहकर उसे

परखकर विवाह करना चाहती है। भारतीय संस्कृति मूल्यों की लीक पर चलने वाला ये पिता परम्पराओं से मुक्त नहीं हो पाता है। उसकी जंग किससे है अपने पिता से या अपने बेटे से बेटे को विवाह के बन्धन में बॉधने का हर प्रयास जब अफसल होता है तब वे परिस्थितियों के आगे हार मान लेते है– वह क्या करें। यह उसकी पीढ़ी की त्रासदी है किअपने मॉ–बाप की मर्जी से विवाह करने में खुद्दारी पर चोट आती है और पश्चिम की डेटिंग जैसी सुविधाएँ हमारे समाज में अभी तक उतरी नहीं कि जिसके रास्ते–लड़के लड़कियाँ अपने मन के साथी ढूंढ सके। बीच कहीं फंसे है बेचारेः उसकी पीढ़ी बौद्विक ज्यादा है, हर चीज को पहल ही खूब परख तौल लो, ताकि रिस्क न रहे। वे कुछ भी 'चांस' पर नहीं छोड़ना चाहते। बुद्वि पर ज्यादा भरोसा तो बुद्वि फिर बचाती है, जैसे वह मेरे इस लड़के को नचा रही है।[38]

कहानी में आधुनिक युग में पारिवारिक रिश्तों में आए परिर्वन,मूल्य संक्रमण, पीढ़ियों के संघर्ष से उभारती समस्याओं का सूक्ष्म चित्रांकन करती है।

'इजाजत नहीं' कहानी के पिता को वृद्वावस्था में भी कार्य करने के लिये कमर कसनी पड़ती है। हैसियत ज्यादा खर्च करके वे बडे बेटे को डॉक्टर बनाते है ताकि वह अपने छोटे भाईयों की उन्नति का जरिया बन सकें। परन्तु बेटे की अनुत्तरदायी भावना उनके इरादों पर पानी फेर देती है। लाचार पिता मझले बेटे को नौकरी के लिये दिल्ली भेजते है परन्तु वह छोटी नौकरी होने के कारण उसे छोड़कर चला आता है पिता वर्तमान पीढ़ी के स्वभाव को नहीं समझ पाता है– अपनी खीज व्यक्त करता है– कैसी है यह पीढ़ी– अपनी मर्जी से चलना गर्व की बात समझती है,साथ ही निकम्मी इतनी कि खुद कुछ कर नहीं सकती। कैलाश बाबू का समय था तो कोई भी काम करने को तैयार रहते थे। इस पैंट कमीजी पीढ़ी को शुरु से ही सब कुछ इज्जतदार चाहिए, साहब ही बनेंगे।''[39]

कहानी पिता की छटपटाहट मानसिक तनाव के साथ–साथ वर्तमान पीढ़ी की निष्क्रियता अनुत्तरदायी भावना का सूक्ष्मांकन कर पिता के समक्ष उभरी समस्याओं को उद्घाटित करती है।

'आने वाली सुबह'– कहानी का आधुनिक शिक्षा–दीक्षा प्राप्त पिता अपने संस्कारों से मुक्त नहीं हो पाता है। धर्मगत सीमाओं में बध्य ये पिता अपने बेटे के मुसलमान मित्र आलम के घर में आने पर आपत्ति जाहिर करता है, परन्तु उसके घर में आने पर रोक नही लगा पाता है। बेटे की सौलह वर्ष की उम्र की नजाकत को देखकर ये पिता उसे समझाने के लिये दफ्तरी पैंतरा अपनाता है परन्तु जब आलम का आना जाना कम नहीं होता है तब वे विवश हो उस दिन का इन्तजार करने लगते है जब दोनों के बीच खटपट हो। परन्तु उनकी बीमारी में उनकी तमीरदारी करने वाला ये मुसलमान लड़का उनके हृदय के द्वारो

को खोल देता है। जिसमें धर्मगत सीमाएँ ढह जाती है, और उनके बीच इन्सानी रिश्ता पनपने लगता है।

कहानी पीढ़ीगत अन्तर्द्वन्द्व व खीज से उत्पन्न समस्या को सार्थक मोड़ व नया आयाम देती है।

'घेरे'— कहानी वृद्वावस्था की बेवसी, समस्याओं को उभारती है।

कहानी मानव अन्दर पनपने वाले द्वेष,ईर्ष्या स्पर्धा भाव को दर्शाती है जो मानव की समस्याओं का कारण है। इसी प्रवृत्ति के कारण वह एक इन्सान से भी अच्छे से नहीं जुड़ पाता है। और अपना अकेलापन झेलने को विवश होता है।

इस प्रकार ये विभिन्न कहानियाँ नयी पीढ़ी और पुरानी की विभिन्न मानसिकता से उपजी समस्याओं, उनके द्वन्द्व अन्तर्द्वन्द्व संघर्षो को उभारती है। स्वातंत्र्योत्तर कहानी में परम्परागत परिवार के ढांचा का विखरना व सांस्कृतिक परिवर्तन की तीव्र प्रकिया से उत्पन्न मानसिकता के अन्तर सम्पता के उपकरणों की अंगीकृति व स्वीकृति विभिन्न समस्याओं की जड़ है। कथाकार परिवेशीय बदलाव में बदलती मानसिकता,स्थितियां समस्याओं को उभारता हैं। पर समस्याओं के निदान की ओर संकेत नहीं देता है।

<u>बाल मानसिकता से सम्बन्धित कुछ समस्याएँ—</u> वर्तमान औद्योगिक, यांत्रिक,आधुनिक परिवेश में आज का व्यक्ति अत्याधिक व्यस्त हो गया है सिर्फ, व्यस्त ही नहीं पैसों की अन्धी दौड़ कहीं—कहीं उन्हें अपने दायित्वों से वंचित करती है। अत्याधिक व्यक्तिवादिता, अपने ढंग से अर्थाजन करने की भाग—दौड़ दाम्पत्य सम्बन्धों में अलगाव, पारिवारिक जीवन की विसंगतियॉं,कहीं न कहीं बालको,किशोरों के जीवन को प्रभावित करती है। बच्चें इन्हीं स्थितियों के कारण सही अर्थो में सुखी सन्तुष्ट, परिपूर्ण व्यक्तित्व के धनी नहीं बन पाते है। मिश्र जी ने अपने कुछ कहानियों में बाल्य जीवन की कुछ विडम्बनाओं बाल मानसिकता से उभरी समस्याओं को उद्घाटित किया है। इनमें सबसे प्रमुख समस्या है पिता या माता के नाजायज सम्बन्धों के कारण बच्चों की बिखरी मानसिकता की 'संडाध'— कहानी में इसी तरह की समस्या को चित्रित किया गया है। रामलीला देखने की जिद करते बच्चों की जिज्ञासा रहती है कि सबसे पापा तो शाम को घर आ जाते है हमारे पापा क्यों देर से आते है। दाम्पत्य जीवन के अलगाव से उपेक्षित बाल मानस को 'उल्कापात' कहानी में देखा जा सकता हैं पिता के जीवन में पर स्त्री के आने पर मॉं का मैंके में जाकर नौकरी करना घर वापस न आना, बच्चों के प्रति दादा—दादी की उपेक्षाएँ पिता की झिड़कियॉं, बच्चों को असमय ही प्रौढ़ बना देती है। छोटी बहन के फेल होने पर दादा—दादी झिडकियों पर दु:खी बहन के प्रति बड़ी बहन के मन में सहानुभूति और वात्सल्य भाव उभरता है।

और माँ बाप के स्नेह वंचित,दादा–दादी द्वारा उपेक्षित ये बच्चियाँ अपनी समस्याओं को अपने स्तर पर सुलझाने के प्रयास में उतर आती है।

' नये पुराने माँ बाप'– कहानी की बच्ची घर में अपनी दीदी की उम्र की नयी माँ के आने से परेशान होती है। परन्तु उसकी सहानुभूति अपनी दीदी और सामने रहने वाले किशोर दा के प्रति उभरती है। बच्ची नहीं समझ पाती है दीदी और किशोर दा एक–दूसरे की ओर देखकर खोये रहने को, पिता के समक्ष दीदी के बुलाने किशोर दा के आने वाली बात कहने पर पिता की नाराजगी को, दीदी की नाराजगी,उदासी और किवाड़ बन्द किए पड़े रहने की स्थिति को। पिता द्वारा नयी माँ के लिये लायी रबड़ी खाने पर पिता द्वारा उसे मारने पर जब दीदी उसे रोते हुए चिपकाकर यह कहती है कि आज से तू मेरे पास सोया कर और मैं तेरे लिये जिन्दा रहूँगी।..... वह मुझे मां की तरह प्यार करेगी।

तो बच्चों के मन में भाव उत्पन्न होते है कि दीदी मेरी पुरानी मां है और किशोर दा मेरा पुराना बापू।

कहानी बच्चों की भावनाओं पर हुए कुठाराघात और बड़ी बहन के प्रति सहानुभूति को दर्शाती हैं।

'दौड़'– कहानी आर्थिक विवंचना से ग्रसित परिवार की विडम्बना को एवं आधुनिकता की अन्धी दौड़ में पैसे कमाने की हवस वे शिकार परिवार की बच्ची की मनोदशा को दर्शाती है। माँ का देर रात घर आना व दिन में सोना बच्ची को दूसरे के घरों में डोलने और खाने क चीजें माँग कर खाने को विवश करती है।

इस प्रकार कहानी माँ–बाप द्वारा बच्ची को समय न दिये जाने से उभरी समस्या को चित्रित करती है, महानगरीय परिवेश में इस प्रकार समस्याएँ निरन्तर बढ़ती जा रही है।

'बोझ'– कहानी में माँ द्वारा आत्महत्या करना और घर में दूसरी युवती के आने पर छः साल के लड़के और चार साल की बच्ची की आहत मानसिकता को नये दृष्टिकोण से उभरती हैं कथा नायक के परिवार में आने वाले ये बच्चे परिवार के बीच हिल मिल जाते है जहाँ लड़के खेल खिलौने में व्यस्त हो जाता है। वहीं लड़की प्रसाधनों के वस्तुओं की जानकारी कथानायक की पत्नी से लेती है। कथानायक की पत्नी बच्ची को जिज्ञासाओं को शान्त करने व चीजों के टूटने के भय से एक–एक चीज के बारे में उसे बताती है तभी अचानक बच्ची औरतों जैसा श्रंगार करके आ जाती है और जब कथानायक बातों–बातों में उससे पूछता है कि वह बड़े होकर क्या बनना चाहती है। चार साल की बच्ची की चेहरे पर बुजुर्गो वाली व्यावहारिक मुस्कान देखकर प्रभावित कथानायक को बच्ची को ये जबाव झकझोर देता है कि मैं अपनी माँ बनूगी। [40] उसे लगता है कि

परिवार मेंआयी दूसरी युवती से अपने वजूद को बचाए रखने के लिये " उस छोटी सी बच्ची ने अपनी मृत माँ का कवच ओढ़ रखा था, माँ नहीं दिखती तो वह अपने में से ही मां को निकाल अपने लिये खड़ा कर लेना चाहती थी।[41]

कहानी परिवार में घटित घटनाओं से प्रभावित बच्चों की मनः स्थिति व समस्याओं को उभारती है। जहाँ परिस्थितियों की मार झेलते मायूस बच्चे असमय प्रौढ़ हो जाते हैं।

कस्बे से गये महानगरीय परिवेश में बच्चों के पुनस्थापन की समस्या— 'आवाज खुलती हुई' शुरुआत, प्रतिमोह 'चुगल खोर' कहानियाँ इस प्रकार की समस्याओं को उद्घाटित करती है।

पिता के आततायी रुप से भयभीत बच्चों की समस्याएँ— 'पड़ाव' अपने पिता के साथ शहरी परिवेश में आने वाला ये बच्चा परिवार के बच्चों के साथ कभी खेल में शामिल कभी उनसे अलग थलग पड़ता परिवार के मुखिया की सहानुभूति का पात्र बनता है। केयर टेकरः— कहानी का बालक पिता के बदले गेस्ट हाउस की देखरेख करता है और गेस्ट हाउस में आने वाले कथानायक की सुख— सुविधाओं पूरा ख्याल रखता है। पिता की आततायी यातना किशोर बच्चे को असमय प्रौढ़ बना लेती है।

स्मार्ट, अंग्रेजी बोलने वाला ये पिता जीवन में सिर्फ केयर टेकर बनकर रह जाता है। इस लिये अपने नाकाबिलियत का सम्पूर्ण गुस्सा बच्चे पर उतराता है। शराब पीकर वह बच्चे को दानव की तरह पीटता है परन्तु कथानायक उसे यह कर रोकता है क्यों मारते हो इसे, उसके भीतर ईश्वर है..........(42) कथानायक इस अर्न्तद्वन्द्व में उलझ जाता है "मैंने उसे जिन्दगी का बोझ ढोते, संघर्ष करते मनुष्य के बच्चे को ईश्वर बना दिया ...... क्या यह निदान है? निदान है लड़के को किसी और वातावरण में डालना, जहाँ वह पढ़ सके, बढ़ सके। निदान है रामसिंह को कोई परिवर्तन देना जहां वह अपनी,अपने परिवार की जिन्दगी नये ढंग से शुरुकर सके....... मैंने किस आसानी से छुट्टी पा ली।[2] कथानायक उस परिवेशीय स्थितियों के बीच से जाने पर बच्चे के रुप में थमाते है। तब वह पिता की ओर इशारा करके कहता है कि उसे दे दो केयर—टेकर को। कथानायक को लगता है कि बच्चे की अजीब नजरें कई सवाल खड़ा करती है जैसे कह रही हो बीस रुपल्ली थमा कर तुम जाओ..... बख्यीस देने के अलावा तुम कुछ नहीं कर सकते।[43] और बच्चा रह जाता है अपनी समस्याओं के बीच जूझता हुआ।

मिश्र जी की इन कहानियों में बाल मानसिकता का विभिन्न ढंग से चित्रण हुआ है। इन कहानियों में उद्घाटित बालकों की यह विशेषता है कि सिर्फ समस्यायें ही प्रस्तुत नहीं करते अपितु निदान भी देते है। इनमें कुछ बालक प्रतिताड़नाओं से मुरझाये हुए

मायूस दिखायी देते है कुछ में संघर्षो को झेलने की शक्ति व जीवन को जीने की जिजीविषा दिखायी देती है। कुछ बच्चों में परिस्थिति की समझ उनसे समझौता करने की शक्ति दिखायी देती है।

राजनीति सत्ता वर्ग के शोषण से प्रभावित शोषित वर्ग की समस्याऍ:— मिश्र जी के कथा साहित्य में राजनीति व सत्ता वर्ग के शोषण से शोषित वर्ग की समस्याऍ भी उभर कर आती है। राजनीति किस प्रकार व्यक्तियों को आकान्त करमी है,इसका चित्रण उपन्यास 'लाल–पीली जमीन' में हुआ है। कि किस प्रकार राजनीतिक शक्तियों युवा वर्ग का उपयोग करती है और अपना स्वार्थ सिद्व करने के लिये उन्हें हिंसा की अग्नि में झांक देती हैं, उन्हें इनसे उभरने का रास्ता भी नहीं मिलता है।

इसी प्रकार 'हुजूर दरबार' उपन्यास का प्रमुख पात्र केशव के शोषण का उद्‌गम राजदरबार है। जहॉ उसे सरंक्षण के एवज में उसे अपनी इच्छा और आंकाक्षा की दिशा में पनपने का अवसर न देकर राजदरबार के उपयोग का हथियार बनाया जाता है। उसकी समस्या यह है कि संरक्षण की स्वीकार्य और अस्वीकार्य दोनों ही अवस्था में स्थितियों क दोहरी मार पड़ती है। जिसका प्रभाव उसके चेतन और अवचेतन दोनों पर पड़ता है।

इसी प्रकार की समस्यायें विभिन्न कहानियों में भी उभरती है– कहानी 'कचकौंध' में आज के भारतीय जीवन की पैयक्तिक पारिवारिक,सामाजिक एवं राजनैतिक यथार्थ स्थितियों व समस्याओं बूढ़े मास्टर के संवेदनवृत में चित्रिात किया गया है। ये बूढ़ा मास्टर जिन समस्याओं से गुजरता है वह वास्तव में आज के आम आदमी की त्रासद स्थितियॉ हैं।

इसी प्रकार 'जनतन्त्र' कहानी में ग्रामीण बूढ़े मास्टर की व्यथा को सामाजिक, राजनीतिक,ऐतिहासिक सन्दर्भ में व्यक्त किया गया है। व्यवस्था द्वारा व्यक्ति की उपेक्षा,निर्मम व्यवस्था द्वारा व्यक्ति को सताया जाना, व्यवस्था के फलस्वरुप फैला आतंक, मृत्युबोध, अन्याय के खिलाफ मानसिक धरातल पर उभरा विद्रोह तथा परिवेश की गहन यन्त्रणा कहानी में चित्रित हैं। इस कहानी में आज की सच्चाई तथा आम आदमी की समस्याओं को गहराई से बेनकाब करने की पुरजोर कोशिश की गयी हैं। कहानी में मानवीय अतंस की पीड़ा और व्यवस्था के शोषण को पकड़ने की दृष्टि हैं। इसलिये कहानी अर्थवता लिये हुए जिन्दगी का प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करती हैं।

'ऑकड़े'– कहानी षडयन्त्र में फॅसे एक ईमानदार ओवरसियर की समस्या को चित्रित करती है। जिसे एक स्वार्थी और धूर्त ठेकेदार घूसखोरी के षडयन्त्र में फॅसा कर जेल की

सजा काटने को विवश होता हैंविंशुद्ध राजनीति से जुड़े व्यक्ति की पीड़ा समस्याये 'गोबर गनेस' में उभरी है।

अपनी पीड़ा व समस्याओं को समाज के हित से जोड़कर निदान खोज लेने वाला वर्गः–

मिश्र जी की कहानियों के कुछ ऐसे पात्र है जो तकलीफों के बीच अपने आपको बचाए रखते है और अपने आपको मानवीयता से जोड़ लेते हैं। मिश्र जी इन कहानियों में निदान तक पहुँचे हैं। ये पात्रों को व्यापक सन्दर्भो से जोड़कर उनमें कर्म की चेतना व संवेदना स्पंदित करते हैं। जीवन में वंचित,विपन्न ये पात्र अपनी जीवन स्थितियों,समस्याओं में बेबसी की चादर नही ओढ़ते हैं। अपितु इन्हीं स्थितियों में उनका व्यक्तित्व व्यापक सन्दर्भो से जुड़ता हैं।

'अर्थ ओझल'– कहानी के पंडित दीनदयाल अपने पात्रों के बौद्विक विकास में अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समर्पित कर देते हैं,परन्तु वे अपने कर्म से विचलित नहीं होते है,और इन्हीं उपेक्षाओं के बीच उनकी मृत्यु हो जाती हैं। उनके व्यक्तित्व उज्जवल पक्ष कई वर्षो बाद उनके एक छात्र के माध्यम से पुत्र के सामने उजागर होता है।

अपने गॉव से एक धनिक के साथ काशी अपने वाले 'पगला बाबा' मणिकार्णिका घाट पर पड़ी लावारिस बुढ़िया के लाश का दाहसंस्कार करते वक्त अपने जीवन की अर्थवत्ता पा जाते हैं और वे फिर लावारिस लाशों का दाह संस्कार के कर्म को अपना लेते हैं। उनका निकृष्ट कर्म धर्म से व्यापक कर्म समाजोपयोगी सिद्व होता है। जीवन में विपन्न वंचित 'पगला बाबा' का जीवन अत्यन्त अर्थपूर्ण हो उठता है।

इसी तरह 'मायकल लोबो' पतन के निम्नतर स्तर तक पहुँचने के बाद,फिर उर्ध्वमुखी विकास उसकी बेटी के एकवाक्य की वेदनामयी गूँज से होता है। वह अनगूँज उसकी आत्मा को प्रकाशित कर देती है। और वह फिर शराब की लत छोड़कर, शराबियों की शराब की लत छुड़ाकर उन्हें ईश्वर की तरफ मोड़ने काकाम अपने हाथ में लेता है।

यह सच है मानव जीवन मुख्य लक्ष्य अर्थ प्राप्ति व दैहिक भौतिक सुखों की प्राप्ति हैं और इन्हीं सुखों की प्राप्ति के संघर्ष समस्याओं का कारण बनते है जैसे तुलसी दास जी रामचरित मानस में लिखते हैं।

"दैहिक दैविक भौतिक तापा"[44]

परन्तु यहाँ प्रश्न उठता है कि अर्थ प्राप्ति व दैहिक भौतिक सुख ही मनुष्य जीवन का मुख्य लक्ष्य हैतो उस बैचेनी क्या जबाव हैजो पेर भर जाने व दैहिक भौतिक सुखों की अति के बाद भी बची रह जाती है? पगला बाबा आल्ह खण्ड के स्वतन्त्रता सेनानी मायकल लोबो, पंडित दीनदयाल ये सब भौतिक समस्याओं के विरोधी नहीं हैं। न वे किन्हीं संगठनों के साथ हैं। समस्याओं के सह अस्तित्व में ये चरित्र अपना मुक्ति मार्ग जिस शक्ति में ढूढ़ते हैं, वह शक्ति है कर्म की शक्ति। ये सब कर्म से जीवन के लक्ष्य को साघते हैं यानी कि जिन्दगी का लक्ष्य दुःखों के दूर होने में नहीं, कहीं और उसकी खोज। अपनी शक्ति को जीवन की विरोधी स्थितियों से जूझने में गँवाने की वजाय किसी और के लिये विसर्जित करने में लगा देना।[45]

अतः मिश्र जी की कृतियाँ सामाजिक, राजनैतिक,नैतिक,आर्थिक समस्यापूर्ण रोचक है। तथा वर्तमान समस्याओं का विश्लेषण करती है। कुछ रचनाएँ रचनात्मक सामर्थ्य और परिस्थितियों के सुलझाव के प्रत्यनों के परिचय से वर्तमान और भविष्य के सुलझाव के निर्देश देती हैं।

उपअध्याय 4
उद्देश्य और आधुनिक–बोध

हिन्दी साहित्य में बीसवीं शती के साहित्यिक उन्मेष को 'आधुनिक' संज्ञा दी गयी। सामाजिक पुनरुत्थान राजनीतिक जागरण व साहित्य की परिवर्तनशीलता और गतिशीलता जिन मूल्यों,मान्यताओं और विचारों से प्रभावित हुई, वह परिवर्तित काल चेतना की देन थी। विज्ञान का उदय व विस्तार तकनीकी प्रौद्योगिक उन्नति के व्यापार स्तर के प्रसार ने समाज की संरचना का आमूल चूल परिवर्तन कर डाला। विचार के क्षेत्र में अस्तित्ववादी नवमनावतावादी दृष्टिकोण ने चिन्ता के नये आयाम दिए,दृष्टि का सर्वथा नवीन भाव बोध दिया। इस भावबोध से अनुप्राणित जिस साहित्य की रचना हुई, उसे आधुनिक कहा गया। बीसवीं शताब्दी के साहित्य उन्मेष काल को जिस आधुनिक की संज्ञा दी गयी काल क्रम में वह भी पुराना पड़ गया क्योंकि विश्व राजनीति के परिवर्तन, विज्ञान की निरन्तर प्रगतिशीलता, बदलते हुए सामाजिक मूल्यों ने विगत आधुनिक दृष्टि का कुछ और भी संस्कार किया। नयी वैचारिक उद्भावनाओं ने मूल्यों की आन्तरिक चेतना प्रामणिकता पर बल दिया गया परिणाम हुआ आधुनिकता के कुछ और इतर मूल्य हुए और स्वतन्त्रता के बाद तक आते जाते साहित्यिक आधुनिक बोध पूर्ववर्ती साहित्य के भावबोध से नवीन हो उठा। आधुनिकता के स्थान पर 'नया' शब्द आधुनिक के भीतर अत्याधुनिक भाव की संवेदना का वाहक हुआ। " स्वातन्त्र्योत्तर सृजित साहित्य का भाव बोध इस नवीन साहित्य संचेतना से आवेष्ठित हैं। आज का आधुनिक बोध बीसवीं शती के प्रारम्भिक आधुनिक बोध से पृथक हैं। सुधारवाद पुरुत्थानवाद, सॉस्कृतिक संघटनवाद,शुद्धिवाद,सौन्दर्यवाद और पवित्रातावाद के उस आधुनिक युग से आज के नये साहित्य की कोई संगति नहीं बैठती। इसलिये स्वातंत्रयोत्तर आधुनिक दृष्टि को नये सन्दर्भ में देखा जा सकता हैं।[46]

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या परम्परा का विरोध आधुनिकता है या आधुनिकता के विकास के लिये सम्पूर्ण परम्परा को झुठलाने के आवश्यकता हैं, दूसरी बात साहित्यिक कृतियों के सन्दर्भ में उठती है कि किसे आधुनिक कृति माना जाए? इस सन्दर्भ में विश्वनाथ तिवारी ने लिखा है " कि परम्परा बिल्कुल निरर्थक है और परम्परा के संचित अनुभवों की मनुष्य के लिये कोई उपयोगिता नहीं रह गयी,ऐसा तो किसी भी दशा में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

उन्होंने आगे लिखा है कि परम्परा और आधुनिकता में कोई विरोध नहीं होता। न तो परम्परा स्वीकार का अर्थ आधुनिकता विरोध हैं। शिल्प गत चमत्कार या पाश्चात्य अनुकरण भी आधुनिकता के लक्षण नहीं हैं।"[47]

अतः आधुनिकता को परम्परा के विरोध में नहीं लिया जा सकता हैं,इसे एक स्वाभाविक परिर्णित माना जा सकता है जो कल नया था, आज पुराना है,और जो आज नया हैं वह कल पुराना होगा।

आधुनिकता के कई अर्थ वैचारिकों ने अपने–अपने तरीके से लगाये है कुछ इसे एक विचार पद्वति मानते है,तथा कुछ मूल्य, कुछ लोग इसे पश्चिमी करण और औद्योगीकरण रुप में लेते हैं–

डॉ0 धर्मवीर भारती ने आधुनिक बोध को संकट बोध माना हैं। डॉ0 रघुवंश ने इसे असंम्पृक्त यथार्थ की दृष्टि रुप में आंका हैं। डॉ नामवर सिंह कभी इसे एक प्रकिया के रुप में तो कभी एक मूल्य के रुप में खोज निकालते हैं।
अज्ञेय इसे 'सापेक्षवाद' में ऑकते हैं।

केदारनाथ अग्रवाल ने "आधुनिकता को खंडित मानव मन की खंडित मनोदशा की खंडित अभिव्यक्ति बताया हैं।"

वस्तुतः ऐसा माना जा सकता है कि समय की चुनौतियों का स्वीकार्य और बदलते परिप्रेक्ष्य के प्रति सम्पृक्ति ही आधुनिकता का पर्याय हैं।

और "सच्चा साहित्यकार वही हैं जो जीवन से सम्पृक्त होता है परिवेश के प्रति सचेत होता है और समय की चुनौतियों को निर्भीकता के साथ स्वीकार करता हैं।"[48]

मिश्र जी के कथा साहित्यक यदि आंकलन किया जाए तो उसमें एक ओर तो बदलते परिप्रेक्ष्य का चित्राण है समयबोध और युग बोध दिखायी देता है वही दूसरी ओर भारतीय परम्परा के श्रेष्ठतम रुप का स्वीकार्य भी मिलता है जहॉ उन्हें गलत, दकियानूसी अप्रगतिशील, स्थापनाओं और मूल्यों को अस्वीकार है वहीं वे आधुनिकता के बोध को निजीपरिवेश और निजीस्तर पर आत्मसात कर बदलते परिप्रेक्ष्य में समय बोध अपनी रचनाओं में उभारते हैं।

'मिश्र जी की रचना यात्रा पर अगर सरसरी निगाह डाले तो एक बात साफ नजर आयेगी "उनकी रचना दृष्टि वर्तमान को परम्परा से जोड़ती हुई भविष्य की थाह लेती हैं। इसलिये उनका गंतव्य न तो सम–सामयिकता से बद्व रहता है न इतिहास के बीत चुके सन्दर्भो में खो जाता और न ही कटे भविष्य के अनदेखे सपनों में दौड़ लगाता हैं। समय की निरंतरता का अहसास उनकी रचना प्रकिया का अहम् पहलू हैं। वे शायद उस क्षण को हासिल करना चाहते हैं। जिसमें अतीतत्व और उसका वर्तमानतत्व इस तरह एक साथ सम्मिलित होते हैं जो निरंतरता में नयी उद्भावनाएँ प्रकट करता हैं।"[49]

'वह/अपना चेहरा' उपन्यास में मिश्र जी ने कुछ चुने हुए पात्रों के माध्यम से भारत के नगर और महानगरों में अपने अस्तित्व को बनाए रखने की प्रक्रिया में जुटे हुए लोगों की मानसिक पहलूओं को उभारा हैं। "गोविन्द मिश्र के उपन्यास 'वह/अपना चेहरे' की तलाश के पहले मैं को एक मुखौटा चढ़ाना पड़ता हैं,इस तलाश में आधुनिकता का बोध उजागर होने लगता हैं। नगर में या महानगर में इन्सान मुखौटा पहनने के लिये विवश हैं"[50]

मिश्र जी ने उपन्यास के नायक के मानसिक प्रवाहों को अत्यन्त ही सहजता ससे अंकित किया है और सरकारी दफ्तर का वातावरण वहाँ के कर्मचारियों की छिछली मानसिकता,अफसर केशवदास का लाल फीताशाहीं वृत्ति इत्यादि सब स्थितियों को नायक के मानस पटल पर चलते दिखाया गया हैं। वह अपने अधीनस्थ अफसर केशवदास से नफरत करताहैं,क्योंकि ट्रेनिंग स्कूल में उसके साथी रचना से उसके अनैतिक सम्बन्ध हैं,तथा केशवदास अफसर होने के नाते हमेशा उसे नीचा दिखाने की कोशिश में लगा रहता हैं,उसकी घुटन,उसका प्रतिशोध सामाधन पाने की गुत्थियों में उलझता सुलझता रहता हैं, पर स्पेशल ये की लालच में वह उसके पीछे लगा रहता है,अन्ततः रचना से आधे बलात्कार की स्थितियों में जब वह अपना चेहरा वाश बेशन के आइने में देखता है तो उसे लगता है कि जैसे उसकी शक्ल केशवदास की शक्ल अख्तियार करती जा रही है और उसकी उगलियाँ केशवदास की तरह काँप रही हैं।
दूसरी तरह रचना अपने अफसर को हर तरह से खुश रखती है जिसे आज के महानगरीय परिवेश में एक कौशल का परिचायक माना जाता हैं।

"उपन्यास में नायक के आधेपन का बोध उसके मानसिक संघर्ष को जन्म देता है और वह स्थितियों के नीचे सुलगता रहा हैं। इस मानसिकता और संवेदना में आधुनिकबोध उजागर होता है जो उस पहलू से जुड़ा हुआ हैं। जिसमे नगर बोध के अजनवीपन अकेलेपन और अस्तित्व के लोप हो जाने की गवाही मिलती हैं।"[51]

मिश्र के दूसरे उपन्यास 'उतरती हुई धूप' जो निजी प्रकार के किशोर सम्बन्धों की कहानी है–में आधुनिकता का स्वीकार्य भी है और निषेध भी उसमें आधुनिकता की प्रक्रिया दुविधा ग्रस्त होकर कभी स्थिर है और कभी गतिशील,इस उपन्यास की मूल समस्या प्रेम और विवाह की है,जिसमें आधुनिकता की प्रक्रिया का चित्रण और निरुपण नारी के माध्यम से किया गया है, इस प्रेम सम्बन्ध में उपन्यास की पात्रा अपने प्रेमी को देवता मानने वाली,विवाह के पहले उसके साथ एक रात होटल में बिताती है और समर्पित होते समय त्वदीय वस्तु गोविन्दम् बडबड़ाती है। पर विवाहोपरान्त पति को इस बात का पता चलने

'वह/अपना चेहरा' उपन्यास में मिश्र जी ने कुछ चुने हुए पात्रों के माध्यम से भारत के नगर और महानगरों में अपने अस्तित्व को बनाए रखने की प्रक्रिया में जुटे हुए लोगों की मानसिक पहलूओं को उभारा हैं। "गोविन्द मिश्र के उपन्यास 'वह/अपना चेहरे' की तलाश के पहले मैं को एक मुखौटा चढ़ाना पड़ता हैं,इस तलाश में आधुनिकता का बोध उजागर होने लगता हैं। नगर में या महानगर में इन्सान मुखौटा पहनने के लिये विवश हैं"[50]

मिश्र जी ने उपन्यास के नायक के मानसिक प्रवाहों को अत्यन्त ही सहजता ससे अंकित किया है और सरकारी दफ्तर का वातावरण वहॉ के कर्मचारियों की छिछली मानसिकता,अफसर केशवदास का लाल फीताशाहीं वृत्ति इत्यादि सब स्थितियों को नायक के मानस पटल पर चलते दिखाया गया हैं। वह अपने अधीनस्थ अफसर केशवदास से नफरत करताहैं,क्योंकि ट्रेनिंग स्कूल में उसके साथी रचना से उसके अनैतिक सम्बन्ध हैं,तथा केशवदास अफसर होने के नाते हमेशा उसे नीचा दिखाने की कोशिश में लगा रहता हैं,उसकी घुटन,उसका प्रतिशोध सामाधन पाने की गुत्थियों में उलझता सुलझता रहता हैं, पर स्पेशल ये की लालच में वह उसके पीछे लगा रहता है,अन्ततः रचना से आधे बलात्कार की स्थितियों में जब वह अपना चेहरा वाश बेशन के आइने में देखता है तो उसे लगता है कि जैसे उसकी शक्ल केशवदास की शक्ल अख्तियार करती जा रही है और उसकी उगलियॉ केशवदास की तरह कॉप रही हैं। दूसरी तरह रचना अपने अफसर को हर तरह से खुश रखती है जिसे आज के महानगरीय परिवेश में एक कौशल का परिचायक माना जाता हैं।

"उपन्यास में नायक के आधेपन का बोध उसके मानसिक संघर्ष को जन्म देता है और वह स्थितियों के नीचे सुलगता रहा हैं। इस मानसिकता और संवेदना में आधुनिकबोध उजागर होता है जो उस पहलू से जुड़ा हुआ हैं। जिसमे नगर बोध के अजनवीपन अकेलेपन और अस्तित्व के लोप हो जाने की गवाही मिलती हैं।"[(51)]

मिश्र के दूसरे उपन्यास 'उतरती हुई धूप' जो निजी प्रकार के किशोर सम्बन्धों की कहानी है--में आधुनिकता का स्वीकार्य भी है और निषेध भी उसमें आधुनिकता की प्रक्रिया दुविधा ग्रस्त होकर कभी स्थिर है और कभी गतिशील,इस उपन्यास की मूल समस्या प्रेम और विवाह की है,जिसमें आधुनिकता की प्रक्रिया का चित्रण और निरुपण नारी के माध्यम से किया गया है, इस प्रेम सम्बन्ध में उपन्यास की पात्रा अपने प्रेमी को देवता मानने वाली,विवाह के पहले उसके साथ एक रात होटल में बिताती है और समर्पित होते समय त्वदीय वस्तु गोविन्दम् बडबड़ाती है। पर विवाहोपरान्त पति को इस बात का पता चलने

पर वह अलग रहकर भाई साहब कहलाने वाले एक पात्रा की सहायता से पी0एच0डी0 करती है नायक जब दस साल पुराने सम्बन्धों का अहसास लेकर उससे मिलने आता है तब उसकी बदली स्थिति और मानसिकता के कारण हताश हो जाता है प्रेम और विवाह सम्बन्धों को लेकर लिखे जाने वाले इस उपन्यास में आधुनिक बोध की झीनी झलक हैं।

" दरअसल इस उपन्यास की मुख्या समस्या इसके सहज ट्रीटमेन्ट की कला की समस्या है आधोपांत भावुकता से भरे संवाद उस मूल बिन्दू को ग्रहण करने में बाधा पहुँचाते है जो आधुनिकता एप्रोच से जोड़कर प्रेम के आधुनिकी करण की ओर ले जाता हैं। अपने सहज रुप में लगता है कि यह एक असफल गाथा हैं।"[52]

उपन्यास कला जहाँ एक ओर आधुनिकता का वरण करती दिखायी देती है वही दूसरी ओर वह परम्परा की लीक पर चलती,या यू भी कहा जा सकता है कि वे संवेदना के स्तर पर आधुनिकता को स्वीकारते हैं परन्तु चिन्तन के स्तर पर उसे नकारते हैं।

'लाल पीली जमीन' उपन्यास में कथाकार ने बुन्देलखण्ड के कस्बे की एक बस्ती का चित्राण किया है जिसमें उन्होंने वहाँ के गरीब अशिक्षित बच्चों की निरुद्देश्य जीवन,उनके खेल लड़ना,झगड़ना वहाँ का वातावरण मैदान, गली, मुहल्ला, कुइयाँ, मन्दिर, भयावह पहाड़ी का भुतहा भाग, खोह मिट्टी वहाँ रहने वाली सभी पात्रों के किया कलापों,उनके आन्तरिक उद्वेलन और उनकी मानसिक हलचलों को बड़े ही जीवन्त ढ़ंग से उभारा हैं। इस उपन्यास को आंचलिक उपन्यास कहा जा सकता है। हिन्दी साहित्य में आंचलिक उपन्यास नवचेतना लेकर आए, परन्तु बीसवीं शताब्दी के नौवी शताब्दी तक आते आते इस नवचेतना में बिखराव आ गया। आधुनिक बोध शहरों से गाँवों में भी गहराया है। उपन्यास में भी अंचल विशेष का परिवेश समय और उद्देश्य से जुड़ा हैं,उपन्यास का कथानक अभावग्रस्त,मूल्यहीन भयावह पाशविक बुन्देलीजन जीवन के समग्र चित्रण के उद्देश्य से जुड़ा हैं।

उपन्यास में समग्रता से वर्णित स्थितियाँ कथानक में विविधता बिखराव, व विसंगतियाँ,पैदा करती है पर ये दोष न होकर अपनी अलग विविष्टता प्रदर्शित करते हैं। उपन्यास समसामायिक सामाजिक यथार्थ पर प्रकाश डालता हैं।

'हुजूर दरबार' उपन्यास में कथन प्रणालियों तथा अनेक मुखी अनुभव निवेदन प्रणालियों जैसे आधुनिकतकनीको का प्रयोग किया जाता हैं। जिनका प्रयोग आधुनिक बोध को दर्शाने के लिये नहीं अपितु साहित्यिक सम्प्रेषण को बढ़ाने के लिये किया जाता हैं।

'तुम्हारी रोशनी में' उपन्यास में मिश्र जी ने एक ऐसी आधुनिक युवती का चित्रण किया हैं जो अपने पति से गुलामी का नहीं सहधर्मिणी का रिश्ता चाहती है जो अपने परिवार तथा उसकी सभ्यता की बागडोर अपने हाथों ले विश्व के प्रागंण में विचरण करने

की इच्छा अपने मन में संजोए हैं। उच्च पद पर अधिष्ठित यह युवती बेहद आत्म सजग और व्यक्ति सम्पन्न होने पर भी आधुनिक नारी या मुक्ति के नाम पर किसी किस्म की उच्छृंखलता को प्रश्रय नहीं देती।" उसके चरित्र का यह सन्तुलन,पारंपरिक अर्थ में वर्जना का तिरस्कार करते हुए भी उसमें एक प्रकार की मर्यादा की सृष्टि करता हैं।"[53]

प्रेम की नैसर्गिक धारा कोअपने अनुसार प्रवाहित करने वाली नायिका उससे उत्पन्न तनाव, पीड़ा का सामना करने के लिये प्रस्तुत दिखायी देती हैं।इस अनूठी प्रगतिशील सुवर्णा पात्राा से उपन्यास के अन्य पुरुष पात्र जिनसे वह मित्रता का सम्बन्ध रखती है उसमें भावनात्मक रुप से जुड़े हुए होते हैं। सुवर्णा के अभाव में मानों उनका व्यक्तित्व ही संदिग्ध हैं। लेखक ने इस कृति में आधुनिकता के रंग भरें हैं। प्रेम रोमांस को नये आयामों में व्यक्त किया हैं। सामाजिक संस्थाओं सिन्द्वातों और प्रवृत्तियों पर व्यंग्य भी इसमें हैं पर प्रेम को सामाजिक परिवेश में ही उभारा हैं। सुवर्णा अपने मित्रवत सम्बन्धों से जीवन की पूर्णता चाहती है इसमें यदि थोड़ा बहुत शरीर भी आ जाता है तो उसे अपत्ति नहींहोती हैं। लेखक सुवर्णा की ऑखों के माध्यम से व्यक्ति और समाज के अर्न्तसम्बन्धों, उसके अन्धेरे पक्षों को देखता—परखता हैं। "तुम्हारी रोशनी में' यही लेखक सुवर्णा और अंनत के सम्बन्धों को लेकर बतलाना चाहता है कि व्यक्तित्व के प्रति जागरुक नर—नारी अपने विकास में यदि विवाह के बन्धनों को बाधक पाते हैं। तो उन बन्धनों को अस्वीकार करें, मानवीय स्नेह भाव से रहे तो कोई अनर्थ न होगा। अतः मिश्र जी अपने इस उपन्यास के अन्त में केवल पवित्र स्नेह भाव से साथ रहने वाले स्त्री पुरुषों को समाज कलंकित न समझे, ऐसा संकेत करते हैं। अकेली स्त्री (सुवर्णा) की रक्षा और वृद्धावस्था में भी अकेलेपन का संकट इन सबसे उवरने के लिये मिश्र द्वारा सूचित स्नेह भाव का मार्ग अपनाने का साहस कोई विरला ही करेगा। अतः भारतीय परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता व्यक्ति को किस दिशा की ओर ले जाएगी यह आज निश्चित रुप से कह पाना कठिन ही जान पड़ता हैं। यही आज के उपन्यासकारों के सामने महत्वपूर्ण प्रश्न हैं।"[(54)]

'धीरे समीरे' उपन्यास में मिश्र जी ने एक नये फलक को उठाया हैं। जिसमें उन्होंने ब्रजयात्राा के माध्यम से भारतीयों के भावात्मक संस्कारो को यात्रा के बीच बनते बिगड़ते मानवीय रिस्तों को तथा भारतीय जनमानस की आध्यात्मिक जिज्ञासाओं को उभारा हैं। आधुनिक युग की क्रोड़ में रचित यह उपन्यास भारतीय संस्कृति के बिम्बों, अनछुए प्रतीकों, पौराणिक गाथाओं के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक पृष्ठभूमि का रुपायन करता है। आज जहाँ उपन्यासकार परम्परागत पुराने रुपों को स्वीकार कर उसे प्रतिष्ठित नहीं करना चाहते हैं वहीं मिश्र जी के सन्दर्भ में निर्मल वर्मा जी का कथन है

कि "आधुनिकता का अपने देश और काल के अनुकूल संस्कार ग्रहण करते हुए भी वे भारतीय मिट्टी के प्रति संम्पूर्णतः निष्ठावान हैं।"[(55)]

उपन्यास की नायिका अपने बेटे किशोर की तलाश हेतु यात्रा में आती है,और यात्राा में आने वाला अलीगढ़ का वकील उसकी तलाश में उसका सहभागी बनता हैं,जिसकी सहायता से वह अपने बेटे को अपने ससुर से छुड़ाने हेतु संघर्षरत होती हैं।

समूचे उपन्यास में सत्येन्द्र ही ऐसा है जो लेखक की आधुनिक चिंतना और परम्परा सम्बन्धी विचारों का प्रतिनिधि है "आधुनिक मन की कचोट और शंका को व्यक्त किया गया है......... इसलिये यह उपन्यास आधुनिकता की चुनौतियों को झेलते हुए भी भारतीयता जो उससे बड़ा तत्व है,से आलोकित हैं।"[(56)]

इसके साथ ही यात्रा में आयी युवती शैलजा आधुनिका का प्रतिनिधत्व करती हैं। वह मौज मस्ती आनन्द के क्षणों को ही जीवन मानती हैं। यात्रा के प्रभाव से वह आलौकिक आनन्द के अदभुत क्षणों को भी भोगती हैं। क्षण भर की वह प्रतीति शैलजा में मिठास की अमृत बूँदे बरसा जाती हैं। इसलिये भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता टोह लेने वाला यह उपन्यास आधुनिकता के सन्दर्भो से भी जुड़ा हैं। यह उपन्यास की विशिष्टिता कही जा सकती हैं।

'पॉच ऑगनों वाला घर' उपन्यास के पहले भाग में कथाकार में संयुक्त परिवार की परम्परा के माध्यम से पारस्परिक सद्भावनाओं,सहिष्णुता,सौहार्द, सहचर्य और सन्तोष को उकेरा है,तथा दूसरे भाग में परिवेश को गहराते हुए मूल्यों को परिवेश की प्रांसगकिता में ऑककर मूल्यों की संक्रमण शीलता में नये जीवन बोध को गहराया हैं।

यह एक विडम्बना है कि सम्पन्नता,सुविधा और सुख के लिये संघर्षशील राजन् अपनी उपलब्धियों के बीच अधिक आत्मकेंन्द्रित और अनुदार हो जाता हैं।

कथाकार में राजन् जो सयुंक्त परिवार के मूल्यों का समर्थक कहा जा सकता है उस पर उसकी बहुमुखी व्यक्तित्व की धनी पत्नी का आधिपत्य इतना अधिक हो जाता हैं कि वह अपने आचरण में आधुनिक और एकल परिवार की सुख सुविधा में सिमटकर रह जाता हैं।

तीसरे खण्ड में नयी पीढ़ी का नैतिक पतन भौतिक और ऐन्द्रिक सुखों की खोज में उनके भटकाव को दर्शाया है। अन्ततः लेखक ने राजन् की व्यथा, को दर्शाया हैं कि जिन बच्चों की सुख–सुविधा में वह परिवार के सदस्यों से दूर होता चला गया वे भी उसके न हुए राजन् की व्यथा, संवेदनाएं सूक्ष्मतः में उभर सकी हैं। कथाकार ने उपन्यास में परम्पराओं और आधुनिक बोध को परिवेश की प्रासांगिकता में परखकर जीवन सत्य को व्यक्ति की उसकी अपनी अनुभूतियों,अनुभवों और निश्चयों में आंकाया हैं। इस उपन्यास में लेखक ने वर्तमान की प्रस्तुति सम्पूर्ण गरिमा, सन्दर्भ, सापेक्षता,अर्थवत्ता में की हैं,और

अतीत को वर्तमान में रचा–पचा कर भविष्य के स्वरुप को प्रतिविम्वत किया हैं। ''भारतीय परम्पराओं, संस्कारों,मूल्यों के संशक्त और कालजयी तत्व को स्पर्श करता हुआ वह मध्य वर्गीय समाज की पचास वर्षो की बदलती मानसिकता का प्रभावपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है,और पाठक में मूल्यों आचरण धर्मो और जीवन विषयक अर्थो को तलाशने, परखने और स्वीकार करने की मानसिक ऊर्जा उत्पन्न करता है, उसे संवेदनात्मक चिन्तन की भूमिका में ले जाता है। यहीं उपन्यास की उत्कृष्टता है, और सफलता भी ।''[57]

अतः मिश्र जी ने मूल्यों जीवन के निरन्तर प्रवाह में विचरते हुए शाश्वत के स्थान पर सम्पृक्ति को अधिक महत्व दिया हैं।

आधुनिकता की चुनौती कहानीकारों के भी सामने आयी तो हर कहानीकार अपने–अपने सन्दर्भ में आधुनिक संवेदना को व्यक्त करने लगा क्योंकि आज उसकी राह से ही गुजर कर उसे पहचाना जाता हैं। गोविन्द मिश्र की सूक्ष्म आंकना शक्ति बदलती हुयी स्थितियों पकड़ती हैं व उन स्थितियों को संवेदना में ढालकर उन्हें प्रस्तुत करती हैं।'' रचनाकर कितना आधुनिक और समकालीन हैं,यह उसके समसमायिक इतिहास को संवेदना में रुपान्तरित करने के कौशल पर निर्भर करता हैं''[58] तथा जिन्दगी के वास्तविक सन्दर्भो की,सामाजिक और ऐतिहासिक शक्तियों और प्रक्रिग्राओं की उसे जितनी गहरी समझ और पहचान होगी, उसका आधुनिक बोध उतना ही खरा और प्रासंगिक होगा।

आधुनिकता जो हमारी बदलती सामाजिक और ऐतिहासिक स्थितियों की देन मानी हाती है,उन स्थितियों का बदलाव प्रभाव साहित्यकारों की रचनाओं में भी दृष्टिगोचर हुआ। आधुनिक–बोध से कहानी की संरचना में भी बदलाव आया और कहानियों के वस्तुविन्यास और वस्तु संगठन में भी बुनियादी परिवर्तन आयज्ञं मिश्र जी की यदि सम्पूर्ण कहानियों का आंकलन किया जाए तो उनकी पहले दौर की कहानियों में यानी 1963 से लेकर 1965 की कहानियों में आधुनिक–बोध को सामाजिक औचित्य की कसौटी पर परखा गया। स्त्री पुरुष पति–पत्नी,प्रेमी–प्रेमिका के सम्बन्धों में आए बदलाव को कथाकार ने पूरी संवेदना के साथ चित्रित किया तथा प्रेम,काम वासना,रोमांस,वियोग प्रेम की असफलता इत्यादि को नये आयामों में उकेरा। पात्रों की तकलीफों,पीड़ाओं और विसंगतियों का समर्थ रुप में उकेरने के लिये स्वपात्रों की मनोवृत्तियों के अनुरुप भाषा का प्रयोग किया तथा प्रतीकों का चुनाव भी बदलते समय के परिप्रेक्ष्य में कर वस्तु स्थिति को स्पष्ट और सही ढंग से प्रस्तुत किया साथ ही जीवन की जटिलताओं और मनकी गुत्थियों के उकेरने के लिये बिम्बात्मकता और सांकेतिकता का सहारा लिया। परन्तु इस दौर की कहानियों में कथाकार काव्यात्मकता,भावुकता वर्णनात्मकता अलंकार प्रयोग भाषा की जड़ता तथा कृत्रिमता जैसे बन्धनों से मुक्त नहीं हो पाया।

सन् 1965 से 1975 के दौर की कहानियों मे कथाकार ने सम्बन्धों में आए तनावों विघटन, जटिलताओं बाहय और आंतरिक परिस्थितियों का सन्दर्भ देकर अत्यन्त प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया हैं। क्योंकि कथाकार ने सम्बन्धों में आए बदलाव को अत्यन्त गहराई से देखा और परखा है तथा पात्रों की मनः स्थिति और व्यवहारों द्वारा उसे दर्शाया हैं। दोस्त, 'अवमूल्यन','घाव','आजीवीकरण','उपेक्षित','साजिश कुते' 'जिहाद','बांध' 'झपट्टा''ऑकड़े' 'चीढ़ियां' 'अपरिचय' 'गलत नम्बर' 'कचकौंध' 'शुरुआत' 'चुगलखोर' 'जनतन्त्र' 'अन्तःपुर' 'पड़ाव','धेरे' खंडित इत्यादि कहानियों में व्यक्ति का निरन्तर ह्रास वृद्धों की मनः स्थिति प्रवृति दवी कुठाओं नर–नारी के सम्बन्धों में आए बदलाव परस्पर आर्कषण,वर्जनाओं के कारण उपजी प्रतिकिया शरीरी भूल मित्रवत सम्बन्धों में भावना के स्थान पर बढती औपचारिकताओं पति–पत्नी के सम्बन्धों के बीच टूटते भावनात्मक तन्तु इत्यादि उलझाव को विभिन्न स्तरों में व्यक्त किया हैं। अन्तःपुर कहानी संग्रह की भूमिका में उन्होंनें स्वयं लिखा है कि "कहानी लेखन के इस दौर में उनका उद्देश्य कहीं से युग से जुड़ी हुई मानसिकता को,उसके सारे उलझाव के साथ प्रस्तुत करने का रहा हैं।"[59]

कथाकार पुराने परम्परागत मूल्यों के विघटन से दुखी है जिसे उसने पात्रों के व्यवहारों द्वारा सूचित करवाया हैं। "आधुनिक सभ्यता में व्यक्ति का निरन्तर अवमूल्यन और अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिये किये जाने वाले इसके प्रत्यनों की लगभग निश्चित पराजय किसी न किसी रुप में गोविन्द मिश्र की कहानियों में उभारती हैं।"[60] 'साजिश' 'कुत्ते','कोशिश' कहानियों में पति–पत्नी के सम्बन्धों आए बदलाव को,सीधा दूर तक सीधा 'घेरे खंडित' कहानिय़ों में वृद्धों की मानसिकता,अवमूल्यन कहानी में मित्रगत सम्बन्धोंमें बढ़ती औपचारिकताओं 'झपट्टा' 'गलत नम्बर' 'दोस्त' कहानियों महानगरीय परिवेश व्यक्ति के निस्तर ह्रास को दर्शाती हैं।

जिहाद कहानी में एक ऐसे युवा अफीसर की व्यथा का चित्रण हैं, जो समाज की गन्दगी से समझौता न करके उसे समूल नष्ट करनेका संकल्प लेता है,पर आदर्श वाद पर जिहाद का भ्रम पाले इस युवा को पराजय पग–पग पर खींचती हैं।

'कचकौध में बूढ़े मास्टर के माध्यम से समकालीन भारतीय जीवन की सामाजिक राजनीतिक वैयक्तिक परिवारिक स्थितियों को उभारा गया हैं। अन्तःपुर में गोर्ड नामक पात्र माध्यम से राजनैतिक छदम कान्तिकारी का चित्रण हैं जो एक ओर तो कान्तिकारी गरिमा और दूसरी ओर जीवन की भौतिक समपन्नता का सुख दोनों एक साथ उठाना चाहता हैं।

इसके बाद उनकी आठवें नौंवे,दशवें दशक की कहानियॉ धॉसू खुद के खिलाफ,खांक इतिहास,और पगला बाबा इत्यादि कहानी संग्रह की कहानियॉ में उनकी उत्तरोत्तर विकसित होने वाली सर्जनात्मकता का परिचय मिलता हैं।

'धॉसू' संग्रह की कहानियों मे आधुनिक बोध को समसमायिक राजनीतिक स्थितियों और सन्दर्भो में उभरा है। जिसमें व्यवस्था में दबे आग आदमी के पिसते चले जाने की यन्त्रणा विवशता का चित्रण है।

'जनतन्त्र' कहानी में व्यवस्था–तन्त्र में दबें असहाय व्यक्ति की यन्त्रणा का चित्रण है, तथा उसकी चेतना को तार–तार होते दिखाया गया है जो आज के आदमी की त्रासदी हैं।

धॉसू कहानी में राजनीतिक दॉव पेच,इधर उधर मोहरे फिट करने वाले पात्र की मानसिकता का चित्रण किया गया हैं। जो बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक लगातार ऊँची कूद हैं लगाता रहता हैं,तथा राजनीति में अपना प्रभुत्व स्थापित्य करने के लिये हाथ पैर मारता रहता है। पात्रा की मानसिकता को चिंत्रित करना लेखक का प्रमुख उद्देश्य रहा हैं। "गोविन्द मिश्र जी ने इसका रेखाकंन बड़ी कुशलता से किया हैं। भ्रष्ट परिस्थिति और भ्रष्ट चरित्र का यह समीकरण कोई गुंजाइश नही छोड़ता और अन्धी गली में ला पटकता हैं। परिस्थिति में निहित अनन्त संभावनाओं और अन्तर्विरोधों को लेखक ने ताना नहीं है, उन्हें एक चरित्र में खपा दिया हैं। "[61]

'सिलसिला' पैंतालीस अंश का कोण 'झूला' कहानी मानवीय सम्बन्धों में उत्तरोत्तर बढ़ते अवमूल्यन को दर्शाती हैं।

'खुद के खिलाफ' कहानी संग्रह में मिश्र जी ने अपनी सूक्ष्म अर्न्तदृष्टि द्वारा मूल्यों के विघटन के तात्कालिक सन्दर्भो को उसकी हर संभावित सूक्ष्मतः में समझकर उसे अत्यन्त सशक्त रचनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की। कहानियों में वर्णित आज के जटिल आधुनिकोंन्मुख समाज के आधुनिक चेता सभी पात्रा मूल्यों के टूटने की व्यथा झेल रहें हैं। इस संग्रह की कहानियॉ, 'जंग' 'निरस्त' 'गिद्व' इत्यादि में युवा और वृद्ध पीढ़ी के बीच बढ़ते वैचारिक अन्तर तथा पीढ़ियों के द्वन्द्व को दर्शाया गया हैं। 'खुद के खिलाफ','शापग्रस्त' 'ज्वालामुखी' कहानियो में आधुनिक जीवन की जटिलताओं के बीच पति पत्नी के संवेदनात्मक भावात्मक सम्बन्धों में आए बदलाव को दर्शाया गया हैं। किस कीमत पर 'अलग–अलग समय कहानियों में प्रेमी–प्रेमिका के सम्बन्धों में आए बदलाव का वर्णन हैं। 'खुद के खिलाफ' इस संग्रह की सबसे सशक्त कहानी हैं जिसमें नायिका विमला की व्यथा तथा सामाजिक विसंगति को पूरी संवेदनाशीलता के साथ उभारा गया हैं। वह प्रेम की असफलता के कारण नारकीय स्थितियों में जीने के लिये अभिशप होती हैं वह सारी विसंगतियों और निर्ममता को झेलती है और विवाह के कुछ अन्तराल बाद

प्रेमी से मिलने पर उसके साथ सब छोड़कर जाने के लिये तत्पर होती हैं। पर उसकी पुरुष मानसिकता अपना निर्णय उस पर थोप देती हैं। "इस हालत मं तो तुमसे कोई आदर्शवादी समाज सुधारक ही प्यार करेगा....मैं वही नहीं हूं।"[62] वह विवाह ओर प्रेम जैसें परम्परागत आदर्शों को चुनौती देती हैं। कथा अपनी चरम बिन्दु पर पहुँचती हैं जब उसका पति उसे निवस्त्र होने को कहता है तब विमला का तीव्र प्रतिशोध पुरुष वर्ग के लिये उभरता हैं। " चौंप साले भंडुए..... नंगा हो जा तू.....यह कहां का राजा महाराजा है कि मैं इसके सामने नाचूंगी।"[63]

'शापग्रस्त' कहानी का नायक जीवन मूल्यों के टूटने से दुखी हैं। जिसकी पत्नी परम्परिक भारतीय समाज से अलग लन्दन के बाजार की चमक–धमक आर्कषण में बाध्य हो अपने पति को छोड़ देती हैं, नायक सोचता है कि उसे उसकी मुहब्बत चाहिए थी, पर वो लन्दन का बाजार चाहती थी।

'गिद्ध' की पात्री माँ–बाप के उत्तरादायित्व के बोझ तले दबी एक नेता की हवस का शिकार बनती हैं। माँ बाप की बढ़ती फरमाइशों पर वह सोचती है–"कि कहां रुकेंगे यो लोग...... या कि चीथते ही चले जाएँगे..... जब तक कि उसमें मास का एक कतरा भी शेष है? लालच ने कैसा अंधा कर दिया है कि उन्हें एक मोटी सी बात नही दिखायी देती– कुछ भी देने वाले को आज कीमत चाहिए.....कीमत।"[63] 'खुद के खिलाफ' की कहानियॉं,ज्यादातर पीढ़ियों के द्वन्द्व की कहानियां हैं। वर्तमान में अतीत के ;आधुनिक जीवन में फैशन और कृत्रिम आधुनिकता के हस्तक्षेप की कहानियॉं हैं; ये परिवार,पति–पत्नी के परस्पर शोषण और कहीं कहीं व्यक्ति के रागात्मक अस्वीकारों की कहानियॉं हैं, लेकिन अपने पूरे पैटर्न में वे इनके प्रति निषेध की, व्यंग्य की, वीभत्सता उभारती कहानियां हैं।"[64]

'खांक इतिहास' कहानी संग्रह में इतिहास बोध गहराया हैं, इसमें कुछ पूर्व गुजरे इतिहास की टोह ली गयी हैं। इस संग्रह की कुछ कहानियों में आदर्शवाद और वरणांजलि में आध्यात्मिक का पुट झलकता हैं। खांक इतिहास कहानीमें चैकोस्लावोकिया की राजधानी प्राहा पात्रा की व्यथा द्वारा मानवीय स्वतन्त्रता के प्रश्नों को उठाया गया हैं। 'संडाध' 'उल्कापात' कहानियॉं आधुनिक समाज में बदलती जीवन स्थितियों के बीच बदलते मानवीय रिस्तों और पारिवारिक सम्बन्धों में आए बदलाव को उभारती हैं। 'मुझे घर ले चलों' कहानी में व्यवस्था मं व्याप्त भ्रष्टाचार को उभारा गया हैं जिसका प्रभाव कम्पनी के लिफ्टमैन नायक की चेतना पर इतना गहरा पड़ता कि वह मृत्यु को प्राप्त करता है, रह जाती है उसकी पत्नी परिवार के सारे उत्तरादायित्व का वहन अकेले करने को।

'वरणांजलि' संतति विछोह पर लिखी एक संशक्त रचना है जिसमें पुत्र की मृत्यु की पीड़ा को अत्यन्त गहनता से उभारा गया हैं। महानगरीय परिवेश में यान्त्रिकी सम्यता के दबावों के बीच जब पिता पुत्र का सम्पूर्ण विकास करना चाहता है, तब पुत्र की मृत्यु हो जाती है जिसका कारण पिता स्वयं को समझता हैं और अपराध बोध के दंश से छटपटाता रहता है,"मैं तुम्हें बड़ा करने इस महानगर में ले आया था.....बच्चों को पालने,बड़ा करने किसी महानगरसे भयानक और कोन सा स्थान हो सकता है।"[66] इन कहानियों में इतिहास–बोध और आधुनिक बोध के सम्बन्ध में राजकुमार गौतम जी लिखते है कि यदि इतिहास से मानवीय पक्षों के विरुद्ध जाने वाली असहमतियों को उजागर करना सजग प्रगतिशील समझी जा सकती है,तो ये कहानियॉ निश्चित ही समकालीन साहित्य की उपलब्धि हैं, नहीं तो तथाकथित आधुनिकता वादी रचनाओं के सन्दर्भ में,जहॉ चिन्तन की बॉहे कच्ची–पक्की विचार धाराओं के कारण स्वयं में कहीं सन्देहा स्पद हो चुकी है,ये कहानियॉ'समय से हटी होने के कारण' महज 'प्रतिकिया वादी भी लग सकती हैं। मिश्र जी ने अपनी समय सापेक्ष अन्तदृष्टि द्वारा समसामयिक स्थिति को ऐतिहासिक सन्दर्भों से जोड़कर अपनी लेखकीय क्षमता का परिचय दिया हैं।

'पगला बाबा' कहानी संग्रह की कहानियों में आधुनिक–सामाजिक जीवन चित्र तो उभरे है पर कहानियॉ मूल्यात्मक आदर्श व मानवीय रागात्मक सम्पृक्ति के भाव का ज्यादा प्रस्तुती करण करती हैं। मानवीय पीड़ा और अन्तर्वेदना के बीच बनते आत्मीय रिंस्ते मानवीय करुणा के विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस संग्रह की कहानियों में 'सुनन्दों की खोली' और 'एक बूँद उलझी' का इंस्पेक्टर भौतिक सम्पन्नता को जीवन का लक्ष्य मानकर चलता है वही सम्पन्नता और मार्डन जिन्दगी उसे पत्नी और बच्चों से अलग कर देती हैं जिसकी यन्त्रणा में वह मृत्यु को प्राप्त होता है। उसका हश्र अत्यन्त ही कारुणिक चित्र उपस्थित करता हैं। यह कहानी आधुनिक सभ्यता में बदलता मानसिकता के परिणामों पर करारा व्यंग्य करती हैं। सुनन्दों की खोली कहानी में चाल में रहने वालो की जीवन स्थितियों पर प्रकाश डाला गया,जिसमें आर्थिक विवेचना से ग्रस्त परिवार के सभी पात्र विवाह से वंचित रह जाते हैं। पगला बाबा कहानी मानवीय करुणा का एक अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। जिसमें कहानी का पात्र अनाथों,अहसहायों, तथा निराश्रित लोगो के दाह संस्कारों को अपना धर्म मान लेता हैं।इसके अलावा 'अर्द्धवृत' 'प्रतिमोह' 'अर्थ ओझल' सभी कहानियां मानवीय करुणा से ओत प्रोत हैं। जहॉ आधुनिकता की चुनौती के आधार पर कहानी को कहानीकला में आधुनिक संवेदना को ऑका जाता है वहॉ मिश्र जी की 'पगला बाबा' संग्रह और 'खांक इतिहास' की कुछ कहानियॉ अपना अलग रास्ता तय करती हैं। जिसमें मूल्य विषयक प्रकाश झलकता है,पर उनकी कहानियों में मूल्यों की पुर्नस्थापना कोई सोची हुई कारवाई नहीं हैं अपितु रचना

प्रक्रिया की स्वाभाविक मॉग हैं क्योंकि सृजन को सिद्धांतों में नही बाधा जा सकता हैं,सृजन असीम नहीं हैं।"अदव की हर कहानी असीम की प्रक्रिया की नयी दस्तान कहती है जहॉ प्रयोग हैरान व भाषा गूंगी रह जाती है। अदव का काम निर्धारित मूल्यों की निगरानी हर कलाकृति किसी नयी सच्चाई का प्रमाण हैं। इस तरह अदव ऐसी दृष्टि और ऐसी प्रतिभा है जो निर्धारित ज्ञान की सीमाओं से आगे जाती हैं। अदव विचारधारा भी वही सच्ची और खरी है जो निर्धारित और संभावित को न दुहराए बल्कि असंभावित को अनजाने,अनदेखे को दिखा सकें।"[67]

" आज जहॉ उत्तर आधुनिककता वाद, भूमंण्डली करण,उत्तर संरचनावाद पर वहसें हो रही हैं और नव सांस्कृतिक सम्राज्यवाद को संकट भारत पर गहराता नजर आ रहा है ऐसे दौर में "भारतीय चिन्तन परम्पराओं को तपाकर आज यह देखने की जरुरत हैं कि वे कितनी खरी या खोटी है, अपनी जड़ों की ओर लौटने का ये सबसे अच्छा कदम हो सकता है।"[68] मिश्र जी के लेखन का यही उद्‌देश्य रहा है हमारी परम्पराओं के चिरतंन तत्वों को उभारना उन्होंने स्वयं लिखा है कि "मेरा अपना लेखन भी मैं से शुरु हुआ,समाज तक उठा..... और यहॉ भी इन दिनों की तकलीफों का अफसाना....कि कुछ समय पहले मुझे लगा कि जो तोड़ता है,उसकी बजाय उसकी बात क्यों नहीं जो जोड़ता हैं–मुझे बाहर के व्यक्ति से,समाज से प्रकृति से....और प्रेम,सौन्दर्य आस्था जैसी चीजें मुझे फिर से मिल गयी। वें मुझें चिरंतन महत्व की लगी। वहॉ पहॅुचकर लगा कि लिखना तो दरअसल अब शुरु हुआ हैं"[69]

उन्होनें अपने साक्षात्कारों में इस बात को स्वीकारा है कि "मैं पारंपरिक ढंग का भारतीय हूॅ.....मै भारतीयता को समर्पित हूॅ।"[70]

1 (डॉ0) उर्मिला शिरीष सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र (मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल प्र0 संस्क 2000) पृ0 103

2. निर्झरिणी भाग 1 (नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली) भूमिका से

3. वही भूमिका से

4.शैलेश मटियानी कहानी लिखने के सिद्धान्त और गोविन्द मिश्र की कहानियां(सपा.) चन्द्रकांत बांडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' पृ0 219

5. (डॉ0) माधुरी छेडा 'गोविन्द मिश्र की कहानियों में ऊर्ध्वगामी चेतना' (संपा) चन्द्रकांत वांडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 229

6. शैलेश मटियानी 'कहानी लिखने का सिद्धान्त' और गोविन्द मिश्र की कहानियां (संपा) चन्द्रकांत वांडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 209

7. गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार पृ0 129

8. गोविन्द मिश्र,लेखकीय सोचः 'धाँसू' (कहानी संकलन) पृ07–8

9. गोविन्द मिश्र समकालीन कथा साहित्य और आज का आदमी,'अपाहिज'(कहानी संग्रह) पृ0 13–14

10. गोविन्द मिश्र मुझे घर ले चलो भूमिका से

11. गोविन्द मिश्र लेखकीय सोच धाँसू (कहानी संकलन) पृ0 7–8

12.वही वही

13. सुधीर चन्द्र 'घाँसू': मानवीय सम्बन्धों के अवमूल्यन की कहानियाँ (संपा0) चन्द्रकान्त बांदिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 259

14.गोविन्द मिश्र संवाद अनायास पृ0 29,30

15.गोविन्द मिश्र मेरे साक्षात्कार पृ0 176

16. गोविन्द मिश्र 'समय और सर्जना' (राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली 2000) पृ0 91

17.वही पृ0 90

18 वही पृ0 89

19. गोविन्द मिश्र 'सुन्दरता संसार को बचाएगी; विमर्श भारत किरण मार्च 1988पृ0 7

20.गोविन्द मिश्र संवाद अनायास पृ0 52

21. गोविन्द मिश्र ,लेखन से समाज परिवर्तन,'मुझे घर ले चलो,(कहानी संकलन)पृ0 187

22. गोविन्द मिश्र संवाद अनायास ,(राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्र0 संस्क,1993 पृ0 22,23

23. वही पृ0 28

24. गोविन्द मिश्र 'संवाद अनायास' (राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्र0संस्क 1993) पृ0 34

2.5 वही पृ0 33

26.गोविन्द मिश्र निर्झरिणी भाग 2नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली 1996 भूमिका से
27 वही पृ0 35
28. गोविन्द मिश्र 'लेखन से समाज परिवर्तन 'मुझे घर ले चलो' (कहानी संकलन)पृ0 187
29.गोविन्द मिश्र संवाद अनायास पृ0 65
30. गोविन्द मिश्र 'समय और सर्जना' पृ0 94
31. गोविन्द मिश्र 'मेरे साक्षात्कार' पृ0 99
32. नेमिचन्द्र जैन छोटी दुनिया और भाषा की तीखी तराश (संपा0)चन्द्रकान्त वादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम पृ0 75
33. पद्मजा धोर पड़े चेहरा टूटन की समस्यां (संपा0) चन्द्रकान्त वादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम पृ0 69
34. प्रभाकर श्रोत्रिय 'लाल पीली जमीन': साथों की छटपटाहट (सपा0)चन्द्रकांत वादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 112
35. कथाक्रम जनवरी मार्च 2003 पृ0 8
36. (डॉ0) भगवान दास गोविन्द मिश्र के रचनाशीलता (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 21,22
37 . (डा0) मधुरी झेड़ा ' तुम्हारी रोशनी में': सार्थकता की तलाश (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 168
38.गोविन्द मिश्र 'युद्व' निर्झरिणी भाग–2 पृ0 422
39. गोविन्द मिश्र 'इजाजत नहीं' निर्झरिणी भाग–2 पृ0 338
40. गोविंन्द मिश्र बोझ निर्झरिणी भाग 2 पृ0 395
41. गोविन्द मिश्र 'बोझ' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 395
42. गोविन्द मिश्र 'केयर टेकर' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 428
43. गोविन्द मिश्र 'केयर टेकर' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 429
44. राम चरित मानस 'उत्तरकाण्ड' चौपाई 20/1
45.(डा0) माधुरी छेड़ा 'गोविन्द मिश्र की कहानियों में उर्ध्वगामी चेतना(संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम पृ0 228
46. कमलेश्वर,'नयी कहानी की भूमिका'(अक्षर प्रकाशन दिल्ली 1969) पृ0 सं 154
47. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, 'साठोत्तरी पीढ़ी' के नाम ज्ञानोदय फरवरी 1969 पृ0 10
48. वही पृ0 19
49. (डा0) भगवान दास वर्मा,गोविन्द मिश्र की रचनाशीलता, गोविन्द मिश्र'(संपा0)'सृजन के आयाम' चन्द्रकांत वाडिवडेकर (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 18

50 इन्द्रनाथ मदान,आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास(राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1980) पृ0 92,93

51. इन्द्रनाथ मदान,'आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास'(राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 93

52. (डॉ0) विजया 'उतरती हुई धूप' स्वप्न भंग का यथार्थ गोविन्द मिश्र (संपा0)' चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 85

53. मधुरेश 'तुम्हारी रोशनी में': रोशनी की सम्पन्न यात्रा, (संपा0) चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 150

54 (डॉ0) विजया गोविन्द मिश्र के उपन्यास में नारी '(संपा0) चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 60

55.निर्मल वर्मा, (संपा0) सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र उर्मिला शिरीष म0प्र0 राष्ट्र भाषा प्रचार समिति हिन्दी भवन श्यामला हिल्स भोपाल प्र0 संस्क 2000) पृ0 42

56 चन्द्रकांत वाडिवडेकर,गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम'(वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990)पृ0 200

57. चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र का औपन्यिासिक संसार पृ0 86

58 डॉ. नरेन्द्र मोहन बीसवी शताब्दी का उतरार्द्व पृ0 42

59.गोविन्द मिश्र,अंतः पुर की भूमिका से

60 सुधीर चन्द्र नये पुराने मॉ बाप अन्तरंगता की झलक और नियति (संपा0)चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 244

61.. (डॉ0) नरेन्द्र मोहन,बीसवीं शताब्दी का उतरार्द्ध (कादम्बरी प्रकाशन दिल्ली, प्र0 संस्क 1996) पृ0 132

62 दृ गोविन्द मिश्र 'खुद के खिलाफ' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 99

63. वही पृ0 100

64. गोविन्द मिश्र 'गिद्ध' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 116

65 डॉ प्रभाकर श्रोत्रिय,'खुद के खिलाफ' ; अतीत का हस्तक्षेप (संपा)0 चन्द्रकांत वाडिवडेकर गोविन्दमिश्र 'सृजन के आयाम', (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 267

66. गोविन्द मिश्र 'वरणाजंलि' निर्झरिणी भाग 2 पृ0 240

67. गोपीचन्द्र नारंग'आधुनिकता की लुप्त होती हुई पहचान के बाद, (वागार्थ, नवम्बर 2000) पृ0 20,21

68 (डॉ0) कृष्ण दत्त पालीवाल नव सांस्कृतिक साम्राजयवाद का गहराता संकट (वागार्थ जनवरी 2003) पृ0 18,19

69. (डा0) माधुरी छेड़ा गोविन्द मिश्र की कहानियों में उर्ध्वगामी चेतना (संपा0) चन्द्रकांत वांडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990) पृ0 सं 224
70 गोविन्द मिश्र 'मेरे साक्षात्कार' पृ0 20

सप्तम अध्याय– उपसंहार– विशिष्ट उपलब्धियाँ और उनका मूल्यांकन

उपघ्याय –1– कथा साहित्य की सारभूत आलोचना

प्रयोगधर्मी मिश्र जी के कथा–साहित्य की प्रासंगिक समीक्षा उनकी आन्तरिक रचना धर्मिता और वस्तुगत तत्वों के आधार पर सर्वथा नये युगीन दृष्टि कोण से करना ही तर्क संगत व न्याय संगत होगा। मिश्र जी के पास अद्‌भुत स्मृति क्षमता, संवेदनक्षमता, विलक्षण रचना–कौशल बौद्विक जिज्ञासा हैं। अतः उनके कथा–साहित्य में वैचारिक संघर्ष चिन्तन के साथर्क सन्दर्भ तथा विशुद्व बौद्विक चेतना के बहुमुखी रुप उभरे हैं। कथ्य भाषा की सर्जनात्मकता, कथ्य की गहनता, बौद्विकता, अनुभूति की मांसलता शिल्पगत गतिमानता,जटिलता, बहुमुखी प्रयोगात्मक रुपों को उनके कथा साहित्य की समीक्षा का एक अनिवार्य परिणाम माना जा सकता हैं।

देश स्वतन्त्र होने के पश्चात् भारतीय परिवेश के भीषण यथार्थ के बीच कथाकार की संभावनाएँ इन स्थितियों के भीतर से निर्मित हुई। महायुद्व,वैज्ञानिक उपलब्धियों तथा यान्त्रिक जीवन की संगतियों विडम्बनाओं व विशेषताओं ने मानवीय संवेदनाओं को आहत किया। अतः इसकी तीखी प्रकिया मिश्र ज़ी के कथा साहित्य में दिखायी देती हैं। परिवेश की भयावहता जीवन की निरर्थकता तथा मूल्य हीनता से आहत रचनाकार में अपनी संवेदनाओं, अनुभूतियों तथा संचेतना को यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिये परम्परागत मानों, रुढ़ियों को अस्वीकार नयी प्रयोगधर्मिता के स्वर बुलन्द कियें। मिश्र जी ने बदलते परिप्रेक्ष्यों के अनुसार साहित्य के बदलते नव–नवीन प्रवाहों के अनुकूल अपने कथा साहित्य का प्रणयन किया। अतः इनकी कृतियों की समीक्षा समलोचन के बदले हुए सन्दर्भों में परिवेश आधुनिक बोध, भाषिक सरंचना के आधार पर करनी होगी।

<u>मिश्र जी के उपन्यासों की सारभूत आलोचनाः–</u> उपन्यास "वह /<u>अपना चेहरा</u> उपन्यास में भ्रष्ट नौकरशाही को विषय वस्तु बनाकर इस उपन्यास में अफसरी संस्था की स्थितियों और साजिशों का पर्दाफाश किया गया हैं। पर अफसरी साजिशों का पर्दाफाश करने वाला ये पात्र नीति मूल्यों के रक्षा के प्रयास में,स्वयं ही प्रतिशोध की ज्वाला में सुलगता हुआ नीति मूल्यों की दहलीज पार कर जाता है। उपन्यास में कुछ चुने हुए पात्रों को प्रतीकात्मक रुप में चित्रित कर स्थितियों को पिरोया गया हैं। हर पात्र अपनी स्थितियों के बीच स्वाभाविक प्रतीत होता हैं। पर नायक की मनोस्थिति, उसके विचार कर्मों के उलझाव में कहीं–कहीं पुनरावृत्ति जैसा दोष दिखायी देता हैं। फिर भी मिश्र जी ने अनावश्यक सन्दर्भों की काट छॉट कर पात्रों की स्थितियों को उभारने के लिये सन्तुलित शब्दों का प्रयोग किया हैं। सरकारी दफ्तरों में वर्गगत स्वार्थो की टकराहट

सामाजिक,राजनीतिक अर्न्तविरोधों से उत्पन्न कशमाकश के बीच पात्र की खीज,कुंठा तथा 'भोगे हुए यथार्थ'' का यथावत् चित्र प्रस्तुत करने वाले इस उपन्यास में पात्रों के बाह्य और मानसिक जगत् की हलचल के जो चित्र उपस्थित किये गये हैं। उसमें शिल्पगत कुशलता देखते बनती हैं। भाषा में भी गहनता, व्यंजना के स्थान पर करारी तीखी चोट हैं। भावुकता के स्थान पर तीखी तराशी निर्लिप्ता हैं। अतः '' जिस मनोवैज्ञानिक बरीकी और गहनता के साथ लेखक ने कथ्य को उभारा है वह इस उपन्यास को हिन्दी साहित्य में एक बेजोड़ कोशिश के रुप में प्रतिष्ठापित करता हैं।''[1]

'उतरती हुई धूप' मिश्र जी का दूसरा उपन्यास हैं। इस असफल प्रेम कहानी का पहला सिरा नायक–नायिका के कालेज जीवन के रोमांस प्रणय की तीव्रता, सघनता स्वप्न और शंकाओं से जुड़ा हैं। विवाह से पूर्ण नायिका प्रेमी को अपना स्वत्व समर्पित कर देती हैं और उसके बाद उस घटना का पश्चाताप् नहीं करती हैं। उपन्यास का दूसरा सिरा नायक के तनाव, आक्रोश विद्रूप हलचल और कन्दन से जुड़ता है। कहीं संवादों में अतिशय भावुकता सामान्य उपन्यास की तरह प्रतीत होती हैं जो मूल्य लक्ष्य बिन्दु को बाधित करती हैं। पूरा का पूरा उपन्यास 'रोमान्यित की धुन्ध में आच्छादित दिखायी देता हैं। पर अन्ततः कथाकार सामाजिकताके प्रश्नों की स्वीकृति पर जोर देता हैं। उपन्यास में संवेदनात्मक तीव्रता भावात्मकता को महत्वपूर्ण विशिष्टता संवादों के माध्यम से उद्घाटित हुई हैं। आधुनिकता बोध के अनिवार्य दृष्टिकोण का निर्वाहन हेतु मिश्र जी ने इस उपन्यास में समसमायिक वर्तमान युग चेतना के अनुरुप संवेदना, की अभिव्यजंना की हैं। ''यह उपन्यास हमारे सामाजिक ढॉचे में काफी दूर तक पड़ने वाली रेखाओं को स्पष्ट करता हैं। प्रेम के सम्बन्ध में आज का आदमी जिन मूल्यों से मुक्त हो रहा है, उस दिशा में यह एक और कड़ी हैं।[2]

मिश्र जी के तीसरे उपन्यास में एक छोटी सी बस्ती जो न शहर की है न गॉव की,कस्बाई मानसिकता से जुड़ी हुई हैं,के परिवेश को समग्रता से चित्रित करने का प्रयास किया है। उपन्यास का मकसद केवल अंचल विशेष का यथावत चित्रांकन नहीं हैं। बल्कि यह महत्तर उद्देश्य से अनुप्राणित हैं और वह उद्देश्य समस्त औपन्यासिक चित्र में जीवन्त रेखा की तरह व्याप्त हैं। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने उन सामन्तवादी, जातिवादी ताकतों की चालों का पर्दाफाश किया हैं। जो युवाओं को अपनी स्वार्थपरिता, प्रतिष्ठा के स्थापन हेतु उन्हें निर्ममता से हिंसा के अग्निकुण्ड में ढकेल देती हैं। इन अधकचरे युवाओं की विडम्बना यह है कि इन्हें अपनी अर्थहीन जिन्दगी में अपनी पहचान बनाने के लिये हिंसा को छोड़ और कोई दूसरा रास्ता उनके पास नही हैं। ''हिंसा ही उनका मनोरंजन हैं, हिंसा ही उन्हें आर्थिक सुरक्षा देती हैं। हिंसा से ही उन्हें सामाजिक प्रतिष्ठा मिलती हैं।''[3] परिवेशीय हिंसा सुरक्षा की मुँख की तरह सभी को अपना ग्रास

बनाती हैं। उपन्यास में घटनाओं चरित्रों,स्थितियों के माध्यम सेइसी केन्द्रवर्ती अवधारणा को जीवन्त व्यापारों द्वारा मूर्त किया गया हैं। परिवेश का कठोर यथार्थ कूर वास्तविकताएँ सशक्त चित्र द्वारा रुपायित हुई हैं। युवा निर्लज्ज, शौर्य प्रर्दशन लड़कियों को बेइज्जत करना,फबतियॉ, कसने,छिछले बल प्रर्दशन को अपना पौरुष समझते है और इस भयानक अंधस्थिति के परिणाम स्वरुप लड़कियों को जवानी के पहले ही बन्द कपाटों के बीच कैद कर दिया जाता है या फिर वैवाहिक बन्धनों की बेडियों में जकड़ दिया जाता है। यह भयानक स्थिति सम्पूर्ण उपन्यास में व्याप्त रहती हैं। अंचल मानस की पैदाइशी संस्कारहीनता का वास्तविक चित्र लेखक समग्रता से उभार सका हैं। पर औपन्यासिक गठन में यह सन्तुलन गड़बड़ा गया हैं। भारतीय जीवन के कोई मूल्यात्मक संस्कार यहॉं नहीं दिखायी देते हैं। अन्य पात्रों की अपेक्षा केशव को अतिरिक्त संवेदनशीलता देकर लेखक ने उसकी पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। और इस जटिल और भयावह परिवेश के फलस्वरुप टूटे हुए मूल्यों के बीच लेखक मास्टर कौशल और मास्टर कंठी जैसे आदर्श व्यक्तित्व को खड़ा करता हैं।पर मास्टर की कंठी की हत्या और कौशल की लड़की के साथ बलात्कार करवाकर वह बचे खुचे मूल्यों की इतिश्री कर देता हैं। कथाकार को अपने अनुभवों, कथनों, तथा विचारों को रचनात्मक अर्थवत्ता देने में सहजता, प्रतीकात्मकता, विम्बात्मकता व्यजंनात्मकता जैसे सर्जनात्मक भाषा के सशक्त रुपों का सहारा लेना पड़ा हैं। एक ओर यथावतता को, यथार्थ को चित्रांकित करने वाली घटनाओं और दृश्यों की बिम्बमालिका 'लाल–पीली जमीन' में आधोपांत व्याप्त है, तो दूसरी ओर वह सहजता से प्रतीकात्मक बनकर आशय को विराटता से संम्पृक्त भी करती हैं। [4] अतः भाषिक सरंचना में उपन्यास की सर्जनात्मकता और कलात्मकता समसमायिक समाज में उलझे और गूथें सूत्रों का संकेत दे उसे सामाजिक,राजनीतिक ठोस सन्दर्भो से जोड़ती हैं।'' बुन्देखण्ड जैसे सीमित अंचल के सपाट, खुरदरे चरित्र सम्बन्धों की पहचान के बहाने यहॉं स्वतन्त्र भारत की समाज–सरंचना ही अपनी भदेस तनाव ग्रस्त संकीर्णताओं सहत उजागर हुई हैं।''[5]

स्वतन्त्रता के पूर्व और एवं स्वतन्त्रता के बाद राजनीतिक आन्दोलनों की झॉंकी प्रस्तुत करने वाले 'हुजूर दरबार' उपन्यास में व्यवस्था के बीच दबे नायक पीड़ा का चित्रण हैं। पात्र को स्वतन्त्रता से पूर्व राजदरबार का संरक्षण प्राप्त हैं, अपनी इच्छाओं आकांक्षाओं की स्वतन्त्रता न होने की लचारी उसमें हैं, वह हर तरफ राजदरबार का दबाव महसूस करता हैं,और स्वांत्रयोत्तर परिवेश में भी वह इस बोझ को ढोने को मजबूर दिखायी देता हैं। कथाकार की संवेदना ने पात्र की खण्ड–खण्ड होती मानसिकता को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। परन्तु उपन्यास के पूर्वाद्व में वो राजदरबार के वैभव शानों शौकत के विवरणों में इतना उलझ गया है कि इनकी अतिरेकी लक्ष्य को बाधित

करती हैं। सत्ता विर्सजन की घटनाओं और स्थितियों के विवरणों में भी लेखक की समझ बौनी दिखायी देती हैं। व्यवस्था के बीच फॅसे नायक के व्यक्तित्व के टूटन और घटनाओं के माध्यम से लेखक सत्ता व्यवस्था की विद्रूपता को प्रदर्शित करना चाहता है, और इस सत्य को प्रकाशित करना चाहता है कि तन्त्र का प्रारुप चाहे जो हो,सत्ताधारी का रुप हर व्यवस्था में एक सा रहता हैं चाहे वो कुर्सी पर आधीन व्यक्ति हो, चाहे राज्य सिंहासन पर अधिष्ठित व्यक्ति, उसकी मानसिकता शोषक की ही रहती हैं। जो हावी रहती हैं। उस वर्ग पर जो हुजूरी करता हैं। यद्यपि परिस्थितियों के माध्यम से नायक की पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है पर चुभन का दर्द और वह तत्व गायब हैं। जो दर्द व्यक्तित्व को नया आयाम दे सके रचनात्मक क्षमता को जाग्रत कर सके। व्यवस्था उसके व्यक्तित्व के टुकड़े–टुकड़े कर देती हैं,उसकी आय के स्त्रोत्र छिन जाते हैं, उसका आश्रय छिन भिन्न हो जाता है, परन्तु उसका आक्रोश उग्र रुप धारण नही करता, हर वक्त परम्परा से मिला दब्बूपन उसे दबोच लेता है। देश की स्वतन्त्रता के बाद ये दब्बूपन कम होना चाहिए था।

कथाकार मिश्र जी ने 'तुम्हारी रोशनी उपन्यास में नारी के केन्द्र में रखकर उसके मन की जटिलताओं, विविध मानसिकता का सूक्ष्म विश्लेषणों को नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया हैं अपने इस यशस्वी प्रयास में उन्होंने सुवर्णा को रुप में आधुनिक नारी की जिजीविषा,सूक्ष्म मनोविकारों के अनेकाविध पहलुओं को आधुनिक नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व को नवीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया हैं। जो अपनी अस्मिता जाग्रत करने के लिये पुरुष की गुलामी नहीं, मित्रता,समानता,स्वतन्त्रता चाहती हैं। उसके पति के रुप में उसने पुरुष वर्ग की अंहकारी वृत्ति को प्रस्तुत किया जो अपनी पत्नी को शिक्षित होने के नाते कुछ उपादान तो प्रदान करता है,फिर भी वह चाहता है कि उसकी पत्नी एक निष्ठ रहें। परन्तु साथ में उसमें यह विसंगति दिखायी देती है कि पर स्त्री से सम्बन्ध रखने की छूट उसे रहे। शायद पुरुष के इस अहं को प्रस्तुत करने के लिये मिश्र जी ने उसके उर्वशी से शारीरिक सम्बन्ध प्रसंग को सांकेतिक रुप में जोड़ा हैं। जो उपन्यास में सत्य नहीं लगता है और उपन्यास के लक्ष्य को बाधित करता हैं। कहीं–कहीं उसकी हरकतें। जैसे पिस्तौल उठाकर सुवर्णा को धमकाना। साधारण स्तर की लगती हैं। सुवर्णा के पुरुष मित्रों में अनन्त उसकी मन की छटपटाहट व जटिलताओं को पहचान लेता है और भौतिकवादी यान्त्रिक सभ्यता की तह में दबी फड़फड़ाहट को अपनी भावात्मकता से उसे प्रेम की सरहदों तक ले जाना चाहता है, जिसमें देवत्व की ऊँचाइयों का सा अहसास होता हैं। आधुनिक सभ्यता में जहॉ प्रेम की भावात्मक रसमयता को नष्ट करने का प्रयास चल रहा हैं। वही अनन्त का प्रयास आदर्श प्रेम के उस तत्वों को सामने रखता है,जिसमें त्याग और समर्पण का भाव हो । दोनों के रागात्मक सम्बन्धों के माध्यम लेखक ने नर

नारी के लिये प्रेम और विवाह की अनिवार्यता का अंकन किया हैं। जहां अनन्त में भावात्मकता और गम्भीरता का मिला जुला रुप दिखायी देता है वहीं सुवर्णा के व्यक्तित्व में भी किसी प्रकार उच्छृंखलता नहीं दिखायी देती है वह घर और नौकरी दोनों को अपनी कौशल से सफलता पूर्वक संभालना चाहती हैं। पर दुःख की बात यह हैं कि वह अपनी ममता, वेदना करुणा भावना से पति और बच्चे घर के लिय मंगलमयी कामना करती है पर पति कर अहं उसे वो आत्मसम्मान,समानता,स्वतन्त्रता तथा अस्तित्व आदि की मौलिकता को जीवन के में उचित स्थान देने में हिचकिचाता है। यही कारण है कि पति द्वारा उसकी स्वतन्त्राता पर बंदिशें लगायी जाती है और अपनी स्वतन्त्रता को हशिये पर रखने की लड़ाई में पति से दूर मॉ के पास चली जाती हैं। पर उपन्यास के अन्त में उसकी निराशा जनक स्थिति, पति को तलाक न दे पाना व प्रेमी से न जुड़ पाना तथा भविष्य के लिये निर्णय न ले पाना, उसके चरित्र में युक्ति संगत नही लगती हैं। मिश्र जी ने चरित्रों की मानसिकता हलचल को उनकी तहों में जाकर पहचाना है और उनके तमाम अर्न्तविरोधों को उनके पास भाषा के प्रयोग की विलक्षण क्षमता हैं। इस कौशल मे उन्होंने गहन तथा जटिल अनुभूति,संवेदना और उद्देश्य के तीव्र संप्रेषण के लिये प्रतीकात्मकता, बिम्बात्मकता वानस्पतिकता जैसी अत्याधुनिक भाषा का संयोजन किया हैं। कुल मिलाकर 'तुम्हारी रोशनी में' इस तथ्य को साग्रह रेखांकित करता है कि नारी मुक्ति की सार्थकता हार्दिक पारस्परिक और आत्मीय प्रेम में है, आधुनिकता के छद्म और उच्छखलता में नहीं।[6] रचनाकार इस उपन्यास में अपनी सोच को सार्थक आयाम दे सका है। यद्यपि मिश्र जी ने सुवर्णा के माध्यम से आधुनिकता के कुछ अनछुए पहलुओं को उजागर किया हैं। पर नारी के पास कुछ अजस्त्र शक्तियॉ हैं। जिसे वे उभार नही पाये। नारी अपनी संवेदनाओं के दायरे में आने वाले समस्त व्यक्तित्व को अपनी उन अजस्त्र शक्तियों से बिखारना चाहती हैं। चाहे वो उसकी प्रेमी हो,पति बच्चें या अन्य मानवीय सम्बन्ध हो पर इन पहलुओं को वो अपनी कुछ कहानियों में उभार सकें।

'धीरे समीरे' उपन्यास में ब्रजयात्रा में विभिन्न प्रान्तों से आए विभिन्न वर्ग के व्यापारी, व्यवसायी विभिन्न पेशे–धन्धे से जुड़े विभिन्न आर्थिक स्तरों के यात्रियों जो भौतिकवादी दर्शन में तन्मय भोगविलास सुख सुविधाओं से थके उबे भटक रहे है मिश्र जीने इन पात्रों की भटकनों में भारतीय मानस के मूल में छिपी आस्थाओं, जिज्ञासाओं को उभारा हैं। कथा की केन्द्र बिन्दू सुनन्दा है जो अपने इस यात्रा में अपने पुत्र को तलाशती दोबारा यहॉ आती है, पहली बार की यात्रा की अतीत स्मृतियॉ उसके पास है जब वह नन्दन से यहॉ जुड़ी थी और फिर विवाह बन्धन में बधने के बाद की कटु स्मृतियों को पुलन्दा उसके पास हैं। उसके जीवन से सन्दर्भित घटनाओं के माध्यम से स्थान–स्थान पर कथा गतिमयता पाती हैं। कथा का एक सिरा यात्रा में पड़ने वाले

अनेकानेक पड़ावों स्थलों, पौराणिक आख्यानों मिथकों को पूरे प्रामाणिक रुप में उकेरता चलता है। इस यात्रा के माध्यम से मिश्र जी ने सामूहिक रुप से भारतीय मानस को टटोला हैं। तथा उनके स्वभाव और चरित्रों के वैयक्तिक सुख दुःखों,मनोवस्थाओ, आपसी सम्बन्धों की विविधता मानवीय जीवनगत गहनगूढ़ता को मूर्त किया हैं। इस सामूहिकता में कुछ ऐसे अन्त तक अलग–अलग पहचाने जा सकते हैं। यात्रा के माध्यम से कथा व चरित्र दोनों गतिशीलता पाते है व चरित्र मानवीय रिस्तों की डोर से जुड़कर मानवीयता को उद्घाटित करते चलते है। यात्रियों के बीच स्नेह, सौहार्द्रता, सहानुभूति के बीजो के शोषण के पीछे मानवीय मूल्यों के स्थापन की प्रवृति लेखक की रही होगी। यान्त्रिक सभ्यता के बीच इन मूल्यों का निरन्तर ह्मस होता चला जा रहा हैं। सभी पात्र अपनी अपनी स्थितियों में पीड़ित विक्षिप्त, तनाव ग्रस्त व आधुनिकता की विकृति धारणाओं को ढोते नजर आते हैं। पर यात्रा उन्हें अपनी सुधामयी सरिता में भिगों उनके मन के बिखरे तन्तुओं को समेटकर उन पर अपनी झीनी चादर डाल देती हैं। जिनके महीन रेशों के बीच वे देख पाते है जीवन के सार्थक सन्दर्भो को जुड़ पाते है नये आयामों से। पुत्रा की खोज में भटकती केवल अपने खोये पुत्र को ही प्राप्त नहीं करती, अपितु उसकी आत्मा पर उजास की दस्तक भी होती हैं। यह दस्तक अलग–अलग दायरों में हर पात्र अलग–अलग तरीके से सुन पाला हैं। और सभी चरित्रों में कुछ विशिष्ट्य पहले जुड़ते चले जाते है।अतः "इस अर्न्तयात्रा को बखूबी और सूक्ष्मतः के साथ चित्रित कर लेखक ने अपने मानवीय गहरे लगाव का परिचय दिया हैं। वस्तुतः रुप और बाहरी चाकचिक्य गोविन्द भाई के लिये केवल अंतस्तत्व का मानवीय अनुभव के सशक्त प्रकटीकरन का एक साधन होता हैं। उसका सही ध्यान रहता है। मनुष्यों की स्वभावगत विशिष्टता को पकड़ने में और कुल मानवीय जीवन से सम्प्रक्ति में।"[7] चरित्रों की मानसिकता के वैविध्य चरित्रिक वैशिष्ट्यों, मानवीय चेतना के कलात्मक सम्मिश्रण का गंझिन रुप कथा यात्रा में मिलता हैं। उपन्यास में वैविध्य पूर्ण भाषा प्रयोग मिलते हैं कहीं कथावाचक के रुप में पूरे कथा विवरणों को पुरातन पारम्परिक शैली में बयान किया गया हैं तो और कहीं गूढ़ दार्शनिक तथ्यों और तत्वों को कलात्मक ढंग स सहेजा गया हैं। तथा कहीं पात्रों की मनः स्थिति को संकेत पूर्ण वाक्यों में उभारा गया हैं। इसके साथ ही औपन्यासिक रुप बन्ध में अनेक शैलियों,कथा निवेदन प्राणलियां का कलात्मक संयोजन किया गया हैं। इस उपन्यास पर सटीक टिप्पणी देते हुए नन्दकिशोर मित्तल ने लिखा है कि "धीरे समीरे' का संसार हमारे पूर्ण होने के अहंकार की यांजिकता पर आघात पर अनुभूतियों की गहराइयों के अनेक मानवीय प्रसंगों से हमें साक्षात् कराता हैं।"[8]

उपन्यास 'हुजूर दरबार में' 1940 से लेकर 1990 तक के कालखण्डों में घटित सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक नैतिक परिवर्तनों को उभारता हुआ, इस काल खण्डों में निरन्तर होने वाले नैतिक और सांस्कृतिक ह्रास,उसके कारणों, परिणामों की बारीकियों को विशिष्ट संयोजना के साथ चित्रित करता हैं। तीन भागों में विभाजित यह उपन्यास पहले भाग में 1940 से लेकर 1950 तक के कालखण्ड के सामयिक जीवन की सामाजिक,राजनीतिक सांस्कृतिक,नैतिक गतिविधियों की दशा–दिशा को तटस्थता पूर्वक उभारता हैं । तीन पीढ़ियों के वैचारिक, भावनात्मक, आचणात्मक अन्तर को स्वाभाविकता में उभारते हुए मिश्र जी राजनीतिक परिस्थितियों के आवश्यक सन्दर्भो का ही चित्रण करते हैं। उपन्यास भारतीय परम्पराओं, संस्कारों,मूल्यों के सशक्त और कालजयी तत्व को स्पर्श करता हुआ मध्यवर्गीय समाज की पचास वर्षो की बदलती मानसिकता का प्रभावपूर्ण चित्र उपस्थित करता हैं। पहली पीढ़ी के माध्यम से कथाकार ने सामाजिक परम्पराओं,नीतियों,मर्यादाओं का दिग्दर्शन कराया हैं, और देश में राजनीतिक घटनाचक्रों को उभारते हुए पारिवारिक जीवन के संघटन, विघटन की स्थितियों को उभारा हैं। राजनीतिक परिस्थितियों और असलियत को प्रस्तुत करते हुए लेखक उन सामाजिक स्थितियों के रेखांकरण तक पहुँच जाता हैं जहाँ से परम्परागत सामाजिक संस्कृति का विघटन शुरु हो जाता है।

इसी प्रकार दूसरे भाग में कथाकार राजनीतिक घटना चक्रों को इतिहास का विषय न बनाते हुए उसके प्रभाव के फलस्वरुप ,दूसरी पीढ़ी की बदलती मानसिकता के माध्यम से समाज में आए परिवर्तनों को लक्षित करता हैं इस लक्ष्य की पूर्ति में उन्होंने विपरीत स्वभाव वाले चरित्रा रम्मों और राजन् के माध्यम से की हैं। वे मध्यवर्ग की भोगवादी प्रकृति आत्म केन्द्रिता, संवेदन शून्यता, विचारों की टकराहट से उत्पन्न द्वन्द्व, अर्न्तद्वन्द्व मूल्यहीनता , के माध्यमसे सामाजिक जीवन की जटिलताओं में बढ़ती मूल्य संक्रमणता को कलात्मक ढंग से उभारते है। पाश्चात्य उपयोक्तावादी संस्कृति के कुहारे में सामूहिक संस्कृति वाले परिवार में आत्मकेन्द्रिता,व्यक्ति निष्ठता का संकुचन होने लगता है और इस संकुचन के फलस्वरुप संयुक्त परिवार की विशालता भव्यता, भावनात्मकता खण्डों में विभाजित हो जाती हैं।

तीसरे भाग में भी मिश्र जी सामाजिक, राजनीति, नैतिक सॉस्कृतिक स्थितियों को एक दूसरे से विलगाया नहीं है, अपितु उनके गुम्फित रुप में पारिवेशिक बदलाव और समसमायिक यथार्थ को उभारा हैं।राजनीतिक क्षेत्र में चरित्र राजनेताओं की सत्ता लोलुपता मूल्यहीनता,स्वार्थ सिद्वि संकीर्णता, बिखराव, अनैतिकता से प्रभावित तीसरी पीढ़ी की धुरीहीनता ,कुरुपता,पतनशीलता,विकृतियों को परिवेश में गहराते हुए मिश्र जी समाज में मूल्यों की पतनशीलता व पीढ़ी की आत्म केन्द्रिता की तस्वीर को अधिक संयत और

सन्तुलित रुप में उभारते हैं इतना ही नहीं वे पीढ़ी की विकृतियों की खोज मनोवैज्ञानिक कारणों में करते हैं।

संरचनात्मक दृष्टि से उपन्यास अपने विस्तार संयोजन और आवयविक संघटन से विशिष्ट हैं पारिवेशिक निरुपण में भी विशिष्टता दिखायी देती हैं। सभी पीढ़ी के पात्र अपनी अपनी स्थितियों स्वाभाविक हैं व अपने समय का प्रतिनिधित्व करते हैं। उपन्यास अपनी समग्रता में प्रभाव छोड़ता हैं यह प्रभाव समसमायिक अथवा अतीत को घटना चक्रों के गुम्फन में दिखायी देता है।चरित्रों की व्यक्ति चेतना, स्वत्व बोध अस्मिता निरुपण परिवेश के चित्रण में ही उभरते हैं। उपन्यासकार केवल दो सौ बयालीस पृष्ठों की काया को वरीयता दे इतने विशाल फलक सफल संयोजन करता हैं। ये मिश्र जी का वैशिष्ट्य हैं। "कथा सूत्रों को कलात्मक ढंग से जोड़ने पूर्व दीप्ति शैली का सुन्दर उपयोग किया गया हैं। टिप्पणियों द्वारा विचार सूत्रों और प्रतिक्रियाओं को स्पष्ट करके प्रभावान्विति को पुष्ट किया गया हैं।"
कथ्य में भाषा की समरसता दिखायी देती हैं। कुल मिलाकर उपन्यास कलापक्ष की दृष्टि से अपनी प्रौढ़ता का परिचय देता हैं। मूल्य अन्वेषण की प्रक्रिया में यथार्थ की विविधांगी अभिव्यक्ति सराहनीय कही जा सकती हैं।

कहानियों की सारभूत आलोचना

जैसा कि पूर्व स्पष्ट किया गया हैं,कि मिश्र जी की कहानियों को कहानी के परम्परागत स्थूल निकषो में नहीं,अपितु स्वातंत्र्योतर काल में आए कहानीकारों के बदलते दृष्टिकोण में परीक्षित करना होगा। स्वातंत्र्योतर कला में भारत में सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर व्यापक परिवर्तन हुए । इस परिवर्तन के परिणाम स्वरुप कहानीकारों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन आया। एक ओर उन्होंने व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थितियों के यथार्थ को उद्घाटित किया तो दूसरी ओर कहानी के रुप बन्ध को यथार्थ के अनुरुप नया आकार दिया। सन् पचास के करीब हिन्दी कहानी में जा उन्मेष आया। उसने कहानी के प्रारुप को बदल दिया। ये प्रारुप आधुनिकता की पूर्व प्रचलित धारणा से अपने तेवर में थोड़ा भिन्न और टेम्पर में समकालीन था। लेखकों ने समसमायिक सन्दर्भों और स्थितियों के दबाव को तथ्यों और धारणाओं के रुप नहीं, अपितु संवेदना के स्तर पर महसूस किया। ये समकालीन कहानी का पहला दौर था । इस दौर की कहानियों को दो स्तरों पर देखा जा सकता था। पहले में केन्द्र व्यक्ति और सम्बन्ध था और उन्हीं से जुड़ा आत्मबोध तथा मूल्यबोध था। और दूसरे स्तर पर व्यक्ति और समाज के तनावों और विसंगतियों को उभारा गया था और स्थितियों से जुझते पात्रों का

चित्रण किया गया था। साथ ही व्यक्ति सम्बन्धों में आए बदलाव को विभिन्न स्तरों पर उकेरा गया था। इन कहानियों में पूर्व निर्धारित कथात्मक विन्यास के स्थान पर नयी घटनाओं, प्रसंगों तथा स्थितियों को संयोजित किया गया। इनसे नये कथ्य, तेवर और नयी अभिरुचियों का पता चलता था।

समकालीन के दूसरे दौर में कहानीकारों ने महानगरीय परिवेश में हो रहे द्रुतगामी परिवर्तनों को यान्त्रिकी सभ्यता और दबावों में अनुभव किया। और परिवेश की भयावहता और आततायी स्थितियों को अपने अन्दर रुपान्तरित होते दिखाया। जिसे यथार्थ के अभ्यन्तरीकरण के रुप में उद्घाटित कहानी की एक प्रवृत्ति का नाम दिया जा सकता हैं। इसके साथ कथाकारों ने मानव स्थिति मे छिपे जटिल और अर्मूत आशयों को उभारा। इस दौर की कहानियों में मानवीय अस्तित्व की यातना का एक महत्वपूर्ण सन्दर्भ उभरता हैं। जो राजनीतिक हैं ज्यादातर कहानियों में राजनीतिक क्रोध और व्यवस्था विरोध की अभिव्यक्ति व निजी तात्कालिकता और भावनात्मक रुखों को कथात्मक विधान का बनाया गया ।कथाकारों ने स्थितियों मनःस्थितियों और घटनाओं को सन्तुलित और नये विन्यास में उभारा कथा संरचना केन्द्र में बौरों की अहमियत दी गयी।

अगर हम देखे तो समकालीन बोध की कथात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से दूसरे दौर की कहानियॉ अपना अलग वैशिष्ट्य रखती हैं। यद्यपि इन कहानियों में पहले दौर की कथा प्रवृतियों और दृष्टिकोणों का विकसित रुप दिखायी देता हैं। पर संवेदना,सोच,भाषा और संरचना के स्तर पर ये कहानियॉ अपनी अलग पहचान निर्मित करती हैं।

उपर्युक्त प्रवृतियों का विस्तृत जायजा इसलिये लिया गया है कि मिश्र जी पर इन दोनों दौर की कथा प्रवृतियों का कितना असर है और उनकी कहानियों में क्या मिलता हैं। इन प्रवृतियों के प्रभाव के बावजूद भी मिश्र जी की कहानियॉ इन दोनों प्रवृतियों से भिन्न अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। उनका सर्जक व्यक्तित्व स्वतन्त्र रुप से विकसित हुआ, तथा उनकी कहानियों के मिजाज भिन्न रहें। कथा चेतना के प्रारम्भिक दौर में अवश्य ही मिश्र जी की कथा मुद्रा समकालीन कथाकारों के समान विद्रोह, नकार तथा स्थितियों के वास्तविक उद्घाटन की ओर रही पर धीरे–धीरे उनकी लेखकीय संवेदना में परिर्वन आया और यथार्थवाद के नाम पर मनुष्य के बदसूरत नाकारात्मक व विद्रोही चेहरे को प्रस्तुत करने का समर्थन न करके उसके स्थान पर जीवन के स्वीकारात्मक मूल्यों प्रेम,सौन्दर्य,प्रकृति व आस्था को कथात्मक चेतना का विधान बनाया ।

अपने प्रथम कहानी संग्रह 'नये पुराने मॉ बाप' की लगभग सभी कहानियों में मिश्र जी ने मानवीय सम्बन्धों में आए उत्तरोतर बदलाव को उद्घाटित किया हैं। यद्यपि व्यक्ति के अन्दर सम्बन्धों की चाह अब भी बन हुई हैं, पर परिवेशीय स्थितियों में सम्बन्धों

की निरन्तरता को बनाये रखने की अयोग्यता बढ़ती चली जा रही हैं। ये वर्तमान मानव की नियति हैं। संग्रह की दो कहानियॉ 'शुरुआत' तथा 'चुगल खोर' बाल मनःस्थिति में महानगरीय परिवेश में मानवीय पुनः स्थापन की समस्या को बड़ी तटस्थता से उद्घाटित करती हैं। कस्बे से आये ये दोनों बाल पात्रों की मानसिकता महानगरीय परिवेश से नही जुड़ पाती हैं। पर शुरुआत कहानी का पात्र अंततोगत्वा मैत्राी स्थापित कर लेता हैं। पात्र 'चुगलखोर' कहानी का नौकर अपनी तमाम को शिशो के बावजूद अपना पेस नहीं ढूढ़ पाता हैं। महानगरीय पृष्ठभूमि से सन्दर्भित ये कहानियॉ यथार्थ के समय –सत्य को उद्घाटित करती हुई बच्चों की व्यथा को सांकेतिक रुप में उभारती हैं। इसके अलावा संग्रह की अन्य कहानियॉ 'दोस्त', 'अवमूल्यन', 'बॉध','ढलान','घाव','सीधा दूर तक सीधा'.... . वर्तमान परिवेश में सिकुड़ते सिमटते मानवीय सम्बन्धों को सूक्ष्मतः से उभारती हैं। महानगरीय जीवन की आपाधापी के कारण सामाजिकता संकुचित हुई तथा बढ़ती व्यवस्तताओं के कारण मानवीय सम्बन्धों में भी अन्तर आया। ये कहानियॉ इस तथ्य को उद्घाटित करती हैं कि व्यक्ति का दृष्टिकोण परिवेश से बनता हैं। जीवन सत्य को अनुभवों से गहराती हुई ये कहानियॉ परिवेश को उभारकर आधुनिकता को स्पष्टतर करती चलती हैं। संग्रह की कहानी 'नये पुराने मॉ बाप असफल प्रेम की अभिव्यक्ति को बाल पात्राा की मनः स्थिति में उद्घाटित करती हैं। ये कहानी पारिवारिक सम्बन्धों में आए बदलाव को एक भिन्न दृष्टि कोण से उभारती हैं। संग्रह की एक अन्य कहानी 'जिहाद' की विषय वस्तु संस्था में होने वाले भ्रष्टाचार को उभारती हैं। सरकारी दफ्तर से जुड़ने वाला युवा अफीसर सोचता है कि वह व्यवस्था के दोषों को अनदेखा न करके संस्था में पलने वाले भ्रष्टाचारियों और रिश्वतखोरियों का पर्दाफाश करेगा, पर तन्त्र के चक्रव्यूह को तोड़ने की उसकी ये आक्रमकता धीरे–धीरे बुझने लगती हैं। उसकी चेतना का प्रवाह विलुप्त होने लगता है। और वमन के रुप में उसका विद्रोह बाहर निकलता हैं। कहानी इस तथ्य की ओर संकेत करती हैं। पात्र की निराशा, असफलता,पराभव के पीछे व्यवस्था की जकड़न हैं। कथाकार से संस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार व रिश्वतखोरी को सांकेतिक रुप में उभारता हैं। कहानी का युवा पात्र पग–पग पर पराजय की ओर खिचता है पर अपने अन्दर जिहाद का भ्रम पाले रहता हैं। ''आजीवीकरण कहानी उस मनः स्थिति को उभारती हैं। जो समस्त भयावह मानसिक प्रतिबन्ध के बावजूद भी आदमी में बनी रहती हैं।

कहानियों के समस्त पात्र अपनी स्थितियों में विश्वसनीय व स्वाभाविक लगते हैं। सहज स्वाभाविक स्थितियां पात्रों की मनोवृत्तियों को दर्शाता हैं। कहानियों के संवाद कहानी को गतिमान रखते हुए स्थितियों को स्पष्टतर करते हैं। कहानियों का रचनात्मक संघटन प्रशसंनीय हैं।

'अन्तःपुर' कहानी संग्रह मे मिश्र जी ने युग से जुड़ी विभिन्न वर्ग, अवस्था, की मानसिकता के विभिन्न पहलुओं को विभिन्न स्तरों पर उद्घाटित किया हैं।लेखक ने कहानी संग्रह की भूमिका में इस बात को स्वीकार किया हैं। कि वे युग से जुड़ी के उलझाव को विभिन्न स्तरों में उद्घाटित करने में सफल रहे हैं। मिश्र जी ने यथार्थ से जटिलतर होते हुए सम्बन्धों को , सघन मनःस्थितियों के माध्यम से व्यक्त किया हैं। विभिन्न परिस्थितियों और मनः स्थितियों की कमिक टकराहट में रचनाकार अपने दृष्टिकोण को व्यंजित करता हैं। कथाकार व्यक्तियों ,घटनाओं और परिस्थितियों के व्यापक सन्दर्भो को पहचाना हैं, और तीनों के गंझिन रुप को कहानियों में चित्रित किया हैं। अपरिचय, 'पड़ाव' ,'खंडित' ,'झपट्टा','घेरे' कहानियों मे पात्रों की मनः स्थिति का सफल तथा सूक्ष्मांकन हुआ हैं। चरित्रों की मूल संवेदनाओं को उभारने में कथाकार ने विशेष सफलता पायी हैं। तथा वह पात्रों के अनुरुप अवस्थाओं की निर्मित कर सका हैं। 'पड़ाव' कहानी में कथाकार की सहानुभूति और सहद्वयता में बाल मनः स्थिति के कुछ विशिष्ट पहलू उभारते हैं। 'खंडित' कहानी में वृद्वा की मनोस्थिति को उभारा गया है जो आजीवन अपने पति द्वारा बनाये आर्चाड से जुड़ी रहना चाहती हैं। अपने तरीके से वह अपनी पुत्री को भी उससे जोड़कर रखती है 'झपट्टा' कहानी का पात्र तीन भिन्न परिवेश से गुजरा हैं। कथाकार ने तीनों परिवेश में बदलती (ग्राम,कस्बे,शहर) पात्र की मनः स्थिति को उभारा हैं। तथा उसे वर्तमान समाज के सत्य से जोड़ा हैं। 'अपरिचय' कहानी भी पात्र की मनः स्थिति में वर्तमान सत्य को उभारती हैं। 'गलत नम्बर' कहानी में अन्तरंगता की अनिवार्य विनिर्मित को मनोरंजन ढंग से उभारा गया हैं। 'घेरे' कहानी अवकाश प्राप्त वृद्वों की मनः स्थिति को उभारती है। परन्तु अवकाश प्राप्त व्यक्तियों की मनः स्थिति के साथ दो गुटों के बीच बढ़ते द्वेष,वैमनस्य, ईर्ष्या के माध्यम से लेखक मानव की उस प्रवृत्ति की ओर संकेत करता है जो कब्र तक व्यक्ति का पीछा नही छोड़ती हैं। अन्तःपुर कहानी में छद्म सुविधापस्त कान्तिकारी बुद्वि जीवी की मानसिकता का चित्रण हुआ हैं। जो बिना किसी जोखिम उठाये कान्ति की गरिमा व सम्पूर्ण भौतिक सुख सुविधाओं को बटोर लेना चाहता हैं। कहानी की घटनायें और प्लाट की अनुपातता ज्यादा होने के कारण मनःस्थिति गौण पड़ जाती हैं। 'अपाहिज' और चीढ़ियॉ कहानियों निम्नमध्यवर्ग की मनः स्थितियों में यान्त्रिकी सभ्यता को कुरुपताओं, उसकी भयकरतम, कूर अमानवीय स्थितियों को उभारती परिस्थितियों को झेलते पात्रों की विवशता का चित्रण करती हैं। संग्रह की विशिष्ट कहानी में कचकौंध बूढ़े मास्टर के दृष्टिकोण में तत्कालीन भारतीय जीवन के वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रामणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया हैं। इस प्रकार अन्तःपुर संग्रह

की समस्त कहानियों में समकालीन मानसिकता से प्रभावित समकालीन सम्बन्धों में आए बदलाव को सहज रुप में उभारा गया हैं।

संग्रह की कहानियों में परिवेश के अनुरुप समर्थ भाषा का प्रयोग किया गया हैं। कहानियों की शैली वस्तु के साथ विकसित होती हैं। कहानी की सशक्त और प्रभावशाली भाषा युग से जुड़ी मानसिकता के विभिन्न उलझावों को चित्रित करने में सफल होती हैं।

'अन्तःपुर' कहानी संग्रह की कहानियों पर टिप्पणी करते हुए निर्मल वर्मा जी लिखते है कि 'एक अजीब किस्म की 'इनोसंस ने मुझे आर्कषित किा, जो इनकी कहानियों में मिलता हैं, हर कहानी जो इन्जर्ड चीज होती हैं, जो आहत होती हैं वह–एक ऐसा व्यक्ति, व्यक्तित्व या उसकी संवेदना हैं जो ..... जिसके बारे में ..... उस व्यक्ति या उसके यथार्थ के बारे में..... न तो हम अधिक जानते है और न ही गोविन्द उसके बारे में अधिक कहते भी है लेकिन आहत होने की जो भावना है वह जिस संवेदना के साथ आती हैं, वैसा दूसरे कहानीकारों में बहुत कम दिखायी पड़ता हैं।[10]

'धॉसू' कहानी संग्रह की कुछ कहानियों की विषय–वस्तु राजनीतिक चेतना संपन्न हैं। कहानियों में व्यवस्था के दोषों के साथ स्थितियों की विडम्बनाओं का बोध भी उजागर हुआ हैं। कथाकार ने विवरणों का संयोजन कुछ इस प्रकार किया हैं। जिसमें पात्रगत और स्थितिगत विसंगतियॉ, विडम्बनाएँ झलकने लगती हैं। यह पात्र की विडम्बना है कि 'जनतन्त्र' के पात्र को स्थितियों का शिकार बनना पड़ता हैं। उसकी मनः स्थिति में व्यवस्था के दोषों के साथ–साथ समसमायिक समाजिक सन्दर्भ उभारते हैं।"उसकी पीड़ा,उसकी चेतना आर–पार उन स्थितियों को देख सकती हैं। पर वह देश और काल के परिवेश की यंत्रणा को भोगने को विवश होता हैं। और इस कहानी में यह यंत्रणा ह्यूमर में व्यक्त होकर और भी गहन हो जाती हैं।"[11]

'झूला' कहानी में कथाकार ने पाश्चात्य प्रभाव कें कारण भारतीय समाज में आये बदलाव तथा मानवीय सम्बन्धों में होते उत्तरोत्तर बदलाव को चित्रित किया हैं। 'झूला' की मॉ भारतीय सामाजिक मान्यताओं और नैतिकता अनैतिकता में उलझती सुलझती पाश्चात्य जीवन शैली से प्रभावित पुत्र की शादी सम्बन्धी विदेशी मान्यताओं, धारणाओं का समर्थन नही कर पाती हैं। कथाकार ने पात्रा के ममत्व पर हुए कुठारघात को, उसकी प्रतिकियाओं उभारते हुए मनोवैज्ञानिक तथ्यों को कथात्मक रुप प्रदान करते हुए वर्तमान सामाजिकता को उद्घाटित किया हैं। "स्वरलहरीं" कहानी में अमानवीय यन्त्रणा से गुजरने वाली अपमानित जीवन व्यतीत करने वाली वृद्वा की प्रतिकियाओं का मनोवैज्ञानिक अंकन कर सांकेतिक रुप में कथाकार ने उसे सामाजिक व्यवस्था, के प्रति वृद्वा से क्षोभ व्यक्त करवाया हैं। जो व्यक्ति को पशुता का जीवन व्यतीत करने को विवश करती हैं।

कहानी साधारण होते हुए भी अपने उद्‌देश्य में सामाजिक व्यवस्था की नब्ज पर हाथ रखने के कारण विशिष्ट बन जाती हैं।

'धाँसू' 'गोबर गनेस' 'बहुधंधीय' तीनों कहानियाँ राजनीति से जुड़े व्यक्तियों की नकाब पोशी को क्रूरता के साथ उघाड़ती हैं। इसमें गोबर गनेस कहानी में राजनीति चेतना के अर्न्तगत अलग तरह की विवशता को चित्रित करती हैं। राजनीति से जुड़े व्यक्ति का ईमानादारीसे किया गया काम राजनीतिक सिद्धान्तों के प्रतिकूल पड़ता हैं और उसकी विवशता है कि काफी समय से राजनीति से जुड़े रहने के बावजूद भी उसे लोकसभा के चुनाव का टिकट नही दिया जाता हैं। 'पैतालीस अंश का कोण' कहानी विदेशी परिवेश और विदेशी पात्र के माध्यम से मानवीय सम्बन्धों में हो रहे उत्तरोत्तर अवमूल्यन को उद्‌घाटित करती हैं। संग्रह की एक अन्य 'सिलसिला' मानवीय संवेदनशून्यता का दिल दहला देने वाला उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। मानवीय संवेदना शून्यता का सिलसिला चलता ही चला जा रहा है ये धुरी समाज को किस ओर ले जायेगी ये विचारणीय मुद्‌दा हैं।

मिश्र जी के रचना विधान में कथ्य,संवेदना, सशक्त एवं सम्रग ढंग से व्यक्त हुई हैं। 'जनतन्त्र' कहानी में सार्थक ब्यौरा के प्रयोग से समसमायिक सामाजिक,राजनैतिक स्थितियाँ अपने यथार्थ रुप में उभरी हैं। कहानियों में व्यग्यात्मक पुट अर्थगत और स्थितिगत विविधता उभारता हैं। कथाकार ने व्यंग्य के पुट को सामाजिक राजनैतिक यथार्थ का बोध कराने के निमित जरुरी अस्त्रा के तौर पर इस्तेमाल किया हैं। जो सामाजिक राजनीतिक स्थितियों के साथ–साथ व्यक्ति की मानसिकताओं और नेताओं के टुच्चेपन छद्म और स्वार्थ परिता को चित्रात्मक ढंग से उद्‌घाटित करता हैं। कहानी के रचना विधान में पात्रों की यन्त्रणा पीड़ा संश्लिष्ट रुप में उपस्थित हो संवेदनाओं को प्रत्यक्ष रुप में उभारती हैं।

कुल मिलाकर'धाँसू' संग्रह की अधिकांश कहानियाँ राजनीतिक चेतना के अर्न्तगत लिखी गयी हैं। "केवल राजनीति ही नहीं समाज के दूसरे हिस्सों में भी जहाँ फफोले सड़ रहे है,उन पर भी गोविन्द जी का यह कहानी संग्रह मीठे व्यंग्य के माध्यम से प्रहार करता हैं।"(12)

'खुद के खिलाफ' कहानी संग्रह में मिश्र जी ने वर्तमान सामाजिक विंसगतियों, विद्रूपताओं,कुरुपताओं को सहज स्वाभाविक रुप में उद्‌घाटित किया हैं। इनकी कहानियों में यथार्थ अपेक्षाकृत अधिक कटुता में उभारता हैं। कहानियों में मध्यवर्ग की स्थितियों के प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की गयी हैं। समाज में नारी युगों से प्रतिताड़ित रही हैं, और लाचारी और विवशता को ढोने के लिये मजबूर रही है।नारी के हिस्से में गाली लाचारी और विवशता वर्तमान पारिवेशीय परिस्थितियों में नये–नये रुप में उभर रही हैं। समय

बदला है, समाज बदला और इनकी भी स्थितियों ने नयी शक्त अख्तियार की हैं। जिनका शिकार 'खुद के खिलाफ' कहानी की विमला 'गिद्व' की पात्री 'ज्वाला मुखी' की सावित्री 'किसी कीमत' की पात्री हैं। विमला के माध्यम से कथाकार ने परम्परावादी प्रेम और 'विवाह' जैसे प्रतिमानों पर प्रहार करवाया हैं। विशेष कर उन मानों पर जिसे पुरुष ने अपने लिये बनाये हैं। प्रेम की असफलता विमला को पंक के गह्वर तक ले जाती हैं। पर इन स्थितियों में भी वह अपने पति और बच्चों को छोड़कर प्रेमी के साथ जाने को तैयार होती हैं। पर प्रेमी की पुरुष मानसिकता उसे स्वीकार नहीं कर पाती हैं। कहानी पात्रा की वेदना और क्षोम को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं। विमला की वेदना और आक्रोश का विस्फोटन कुछ इस प्रकार हुआ 'तुम्हें औरत में' कोमलता चाहिए यह चाहिये वह चाहिये। कभी यह भी सोचा कि औरत को भी तुम कुछ चाहियें। उसका ये आक्रोश सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर एक सवाल बनकर खड़ा हो जाता हैं। कथाकार ने उसकी निराशाओं, विफलताओं, और संघर्षो को सामाजिक बन्धनों की भूमिका में बरीकी से है, कि पात्रा की मासंल पीड़ा सांकेतिक रुप में गहराई से उभरती हैं। मात्र शब्दों का संयोजन ही नहीं, शब्दों का सुनिश्चित सार्थक और साभिप्राय चयन करते है, एक शब्द के खिसकाने मात्र से कहानी की भित्ति ढहती नजर आती हैं। इसके विपरीत 'गिद्व' कहानी मे मिश्र जी पात्रा की पीड़ा उभारने के लिये सार्थक वाक्यांश तो लिखे है पर वाक्यांश उसकी पीड़ा की तीव्रता को पूर्ण रुप में नही उभार सके हैं। कहानी वर्तमान नारी की जीवन स्थितियों व अर्न्तद्वन्द्व को पूर्णरुप से अभिव्यक्ति प्रदान कर सकी हैं ज्वालामुखी की सावित्री पति के अत्याचारों का प्रतिकार करके अपने स्वत्व का अन्वेषण करती हैं। 'किस कीमत' पर कहानी में नौकरी पेशा, अविवाहित युवती के मनोभावों का सूक्ष्म निरीक्षण हैं। उसकी संवेदनाएँ अपने सहकर्मी से जुड़ती हैं,पर प्रेमी उसके नारी सुलभ मनोभावों को नही पहचान पाता हैं। उसका विवाहित पड़ोसी जब उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करता है तब उसके आक्रोश का विस्फोटन होता हैं। कम्बख्त जिसे सोचना चाहिये वह तो कुछ सोचता नही और जो कुछ नहीं कर सकते वे सोचने को बेताव है। संग्रह की अन्य कहानियो में 'शापग्रस्त' और 'निरस्त' के पात्रा मानवीय मूल्यों के टूटने की पीड़ा से संत्रस्त नजर आते हैं। 'निरस्त' का वृद्व पिता अपने समस्त जीवन मूल्यों को बदला हुआ पाकर परेशान हैं। 'शापग्रस्त' का अप्रवासी भारतीय पात्र लन्दन में अपनी पत्नी और बच्चों को गवॉ कर टूट जाता हैं। वह सोचता है कि उसकी पत्नी को उसका प्यार चाहिए, पर उसे लन्दन का बाजार चाहिए था। और वह गोरी चमड़ी पर फिदा अपने पति को रोते विलखते, तडफते छोड़ जाती हैं। पात्र की भारतीय मानसिकता अपने जीवन मूल्यों के टूटने पर दुःखी होती हैं। कथाकार ने दोनों पात्रों की संवेदनाओं को पूर्णरुपेण गहराई प्रदान की हैं। पात्र द्वारा मानवीय मूल्यों के टूटने की

[illegible] मूल्यों की प्रतिष्ठा के अन्वेषण की एक प्रक्रिया [illegible] करता है। '[illegible]' कहानी बेरोजगार युवाओं की पीड़ा को मार्मिकता से उभारती हैं आर्थिक रुप से विपन्न कहानी का युवा अपनी कैजुअल नौकरी की मुस्तकली के लिये मन्त्रियों के घर चक्कर लगाता है तथा उनके पी0ए0 द्वारा अर्जी पर आवश्यक कार्यवाही का मतलब कोई कार्यवाही नहीं वाक्य सुनकर हताश हो जाता हैं। निराशा ,हताशा भाग दौड़ का दबाव उसे अर्थमूर्छित रुप में सड़क ला देता हैं। सड़क पर चलते लोग सहानुभूति दर्शाते है। पर युवा का प्रश्न 'मुझे अपने पैरो पर खड़े होने की सुविधा चाहिए क्या दे सकते हो? सम्पूर्ण व्यवस्था के दोषों की ओर इशारा करता हैं। 'प्रभामण्डल' कहानी में व्यंग्य गर्मित वाक्यांश योगियों के स्टेटस को उघाड़ती हैं। प्राचीन महाराजाओं का सा योगी का स्टेटस ,और उस स्टेटस के तह मे छिपी एक दर्द भरी दास्तान चुभन टीस। इतने बड़े प्रभामण्डल के बीच पात्र की विचलितता को दर्शाती हैं। एक सवाल हमेशा उनके समक्ष तलवार की तरह लटकता रहता है कि अब वे उन्हें पाल रहे जो उनके बेटे जैसे सैकड़ों का जान लेते हैं 'जंग' कहानी में पात्रा की मां का मनोवैज्ञानिक चित्रण हैं पर उनके अतीत और वर्तमान व्यक्तित्व की जो छवियां कथाकार उभारता हैं। उन दोनों साम्य नहीं हैं। एक तरफ अपने अतीत में पति की तरफ से मिली हताशा के विरोध में वे अपने अन्दर क्षमताएँ पैदा करती हैं। समाज में अपने बलबूते पर अपना स्टेटस बनाती हैं। पर वर्तमान मे वे कुंठित वृद्वा के रुप में उभरती है दो तरह के व्यक्तित्व में विलोम नजर आता हैं। हो सकता हैकि उनमें ये बदलाव वृद्वावस्था के कारण आया हो, या परिस्थिति वश । कहानी नहीं ....का गाइड, वर्तमान यान्त्रिकी सभ्यता के बीच लोगों की बदलती अभिरुचियों पर प्रकाश डालता है जिनके पास प्राकृतिक सौन्दर्य को परखने के लिये समय का अभाव हैं।

लिजलिजी भावुकता से दूर ये कहानियॉ यथार्थ की परत–दर–परत उधेड़ती हुई यथार्थ के तल तक पहुँचती हैं। शिल्प की दृष्टि सहज और सरल थे कहानियॉ कथ्य को ज्यादा उलझाती नहीं हैं। कहानी की भाषा परिष्कृत और पारिमार्जित हैं। सवांद प्रभावशाली हैं और घटना चक्रों को जोड़ते हैं। सभ्रगत 'खुद के खिलाफ'की कहानियॉ कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर प्रभावित करती हुई अपने समय और परिवेश पर जागरुक लेखकीय प्रतिकियाएँ हैं।[13]

'खाक इतिहास' कहानी संग्रह में मिश्र जी इतिहास की बर्बरता के बीच अपने पात्रों के अस्तित्व खड़ा करके उनके जीवन को व्यापक सन्दर्भो से जोड़कर मानव के अन्तस् में छिपी क्षमता के अजस्त्र स्त्रोत्रों में से उस अनन्त क्षमता को उभारा हैं। जो घोरतम पीड़ा से मनुष्य को उबार कर उसमें ही जीने की लालसा ही नहीं जगाती हैं, अपितु उसके अन्तरम् को मानवीयता से जोड़ती हैं। ये कहानियों 'इतिहास और मानव

की चेतना को समानांतर विकासमान गतिशील सत्ता के रुप में स्वीकार करते हुए उसके संचालन में किसी अदृश्य सत्ता -की उपस्थिति एवं बड़ी आस्था से जुड़ने का अवलम्बन प्राप्त कराती है मनुष्य को।"[14] 'आल्हाखण्ड' और 'खाक इतिहास' जैसी कहानियों की घटनाएँ इतिहास के रास्ते पर गमन कराती हैं दोनों कहानियों के पात्र इतिहास क्रूरतम प्रहारों से टूटते नहीं हैं वरन् मानवीयता से ओत प्रोत हो अपने जीवन को व्यापक सन्दर्भो से जोड़ते हैं। 'खाक इतिहास' की पात्रा अर्न्तराष्ट्रीय कम्यूनिज्य बर्वरता का शिकार हो अपने आत्मीय जनों से हाथ धो बैठती है पर इन जुल्मों के बीच वह अपने स्वत्व की तलाशती है, और अन्धी औरतों को पढ़ाकर उनमें जीने का उत्साह जाग्रत करती हैं। आल्हाखण्ड का स्वतन्त्रता सेनानी अपने साथ होने वाले अत्याचार को गर्वित होकर बताता है उसे अफसोस इस बात का होता हैकि वह उस किस्म का बलिदान नहीं दे सका जो उसकी पूर्ववर्ती पीढ़ी के लोग दे गयें। दूसरी ओर उसका अफसोस अपनी परवर्ती पीढ़ी के प्रति है, जो यान्त्रिक और भौतिक वादी संस्कृति की नियामक बन संवेदनशून्य,भावहीन, शुष्क और स्वार्थी होती चली जा रही है। संग्रह की अन्य कहानियाँ भी हस तथ्य की ओर संकेत करती हैं। 'फॉस' कहानी की ग्रामीणा अपने निश्छल स्नेह से चोरों को द्रवित कर देती हैं और वे अपनी जेब कटाकर चले जाते है(संध्नानाद) का वृद्व अवस्था के इस पड़ाव पर चाहता है किउसकी पत्नी उसे समझे, और उसे सहवास का सुख दे। वह बच्चों के खातिर अलग अलग रहकर सारी उम्र काट देते हैं। और इस उम्र में वह छूटे जीवन को पकड़ना चाहता हैं। परन्तु बच्चों की दोगली प्रवृत्ति दोनो को अलग करने की फिराक में रहती हैं। वृद्व बच्चों की चाल समझ जाता हैं। 'संडाध और उल्कापात कहानियाँ मध्यवर्गीय पारिवारिक घटनाओं को लेकर बुनी गयी हैं।कथाकार का उद्देश्य पारिवारिक,सामाजिकसमस्याओं को उभारना नहीं हैं। अपितु सामाजिक नीतियों के बीच नारी अस्मिता की पहचान कराना हैं। कहानी की दोनों ही पात्रा अपनी अलग–अलग भूमिका में अपने स्वत्व का अन्वेषण करती हैं। परन्तु इस अन्वेषण में उल्कापात की पात्राा के बच्चों को उसके स्नेह से वंचित होना पड़ता हैं इसके विपरीत 'संडाध की पात्रा अपने बच्चों और सास ससुर कोअपने स्नेह वृत्त में सुरक्षित रख अपने संघर्षो का मुकाबला अकेले ही करने को तत्पर होती हैं। 'मुझे घर ले चलों' कहानी निम्नवर्ग की समस्या के साथ–साथ व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टता का पर्दाफाश करती हैं। 'न आने वाली सुबह' के पात्र के अन्दर लेखक मानवता की रोशनी भरता हैं जिस प्रकाश वृत में जातिगत,धर्मगत सभी संकीर्णताएँ समा जाती हैं। 'वरणार्जंलि'सन्तति विछोह का कारुणिक चित्र उपस्थित करने वाली ये कहानी पुत्र के विछोह की मासंल अनुभूति की चरमावस्था में पिता के अन्दर नये जीव के पनपने का–सा आभास देती हैं कहानी आध्यात्मिकता का पुट लिये हुए हैं। "वज्र को वेदना से झेलने की करुणा के कारण विष

को अमृत करने की सी दीप्ति है इसमें। यह विषाद के कोही चलने भर को पर्याप्त उजाले में बदले जा रहे होने का सा आभास देती कहानी हैं।"[15] आवाज खुलती हुई कहानी महानगरीय परिवेश में शैक्षिक विकास हेतु भेजे गये बच्चे की मनोवस्था को दर्शाते हैं। गॉव के प्राकृतिक वातावरण में विकास पाने वालेइस बच्चे की स्वतन्त्रता महानगरीय सभ्यता के बीच जब कैद होती हैं। तब उसकी छटपटाहट कथानायक फोन पर हुए वार्तालाप से उभरती हैं। कहानी बालमनोविज्ञान के सूक्ष्म पहलुओं के साथ–साथ उन सॉचों की ओर इशारा करती हैं। जिन सॉचों में अपने बच्चे फिट करने में मॉ बाप बच्चों के मनोभावों के समझे बिना उन पर जबरदस्ती दबाव डालते हैं ये कहानियॉ भिन्न कोणों को लिये हुए जीवन की विराटता,व्यापकता तथा गम्भीरता का बोध कराती हैं। तथा व्यक्ति के अन्तम् में छिपे अनन्त स्त्रोत्रों को उद्घाटित करती हैं।

पगला बाबा कहानी संग्रह की कहानियॉ में विशिष्ट कलात्मक सौन्दर्य हैं। इनमें जीवन सत्य के विकास को नये सिरे से जोहा गया हैं। फार्मूला बद्व लेखन अलग नये मुहावरों की तलाश हैं इनमें। जीवन के गहरे अर्थो को उकेरने वाली इन विशिष्ट कहानियों में मिश्र की कौशल क्षमता देखते ही बनती हैं। कहानियों के सभी पात्र सशक्त व्यक्तित्व सम्पन्न हैं। सन्त कवियों जैसा आत्म सन्तोष इन पात्रों में दिखायी देता हैं। ये पात्र समय की अधीनता स्वीकार नहीं करते । अपने समय में रहते हुए भी जैसे वे उसके बाहर खड़े हुए है "वे स्वाधीन है, समयाधीन नहीं। स्व की अधीनता में वे रिश्तों को भी लॉघ जाते हैं। अपने समकालीन यथार्थ या परिवेश से यह मुक्ति धुॅधले रुप में उजागर होती हैं।" [16] अपनी जीवन स्थितियों में अभावों में जी रहे वंचित, रिक्त विपन्न ये पात्रा आधुनिकता के संकट के सम्मुख मानवीय व्यवहारों का निरुपण करते हैं और आधुनिकता के घटाघोप में भी व्यक्ति को समर्द्व व्यक्तित्व सम्पन्न और उदात्त जीवन जीनें की की प्रेरणा प्रदान करते हैं। ये पात्र समाज में मूल्यात्मक आदर्श के बिम्ब हैं। इन पात्रों के माध्यम से कथा करने भारतीय समाज के जीवन मूल्य सौहार्द्व भ्रातृत्व और पारस्परिक स्नेह उभारकर एसे समाज की रचना की हैं। जो भारतीय मानस चेतना को जीवन के उच्चतम सिरे तक लो जाता हैं 'पगला बाबा' को जीवन की निरसरता का आभास उन्हें नये कर्म से जोड़ता हैं।सामाजिक दृष्टि से निकृष्ट कर्म, विशुद्व मानवीय सेवागत भावना उदात्त आयाम प्रस्तुत करता हैं। 'अर्द्ववृत' कहानी की उपपत्नी का त्याग सौता सम्बन्धी धारणा को बदलता ही नहीं अपितु सौता के आन्तरिक सौन्दर्य को दर्शाता हैं। 'अर्थ ओझल' कहानी गुरु की कर्मठता, पवित्रता और गरिमा को नवीन दृष्टि-कोण में परिभाषित करती हैं,जो अपनी पत्नी,पुत्र तथा समाज की उपेक्षाओं को सहकर भी अपने प्रतिभासम्पन्न छात्रों का बौद्विक विकास करने में पूरी तत्परता से सलंग्न रहता हैं। परन्तु समाज और परिवार की द्वारा गलत फहमियों के कारण सही मूल्यांकन के अभाव में

लांछना ग्रस्त मृत्यु को प्राप्त होता हैं। जिसके व्यक्तित्व के उज्जवल पहलू उनकी मृत्यु के कई साल बाद उनके छात्र के माध्यम से पुत्र के सामने उजागर होते हैं। 'मायकल लोबो' कहानी का पात्र पतन के गहन गहवर में पहुँच पुनः ऊपर उठता हैं उसकी बेटी के उसमें नवीन उद्भावनाएँ जाग्रत करते हैं। और उसका जीवन जुड जाता हैं। बृहतर आयामों से । वह शराब केलत में डूबे व्यक्तियों के जीवन को नयी दिशा में मोड़ता हैं। व उन्हें समाज में प्रतिष्ठा दिलाता हैं। 'प्रतिमोह' कहानी में साधनहीन व्यक्ति में करुणा और मानवीय संवेदना जाग्रत की गयी हैं। जो समाज द्वारा अपमानित और उपेक्षित होने पर मानवीय व्यवहार भूल जाता हैं। पर उसके झोपड़पट्टे में आने लड़के की दयनीयता उसके अन्दर करुणा उपजाती हैं। और वहउसे अपने झोपडपट्टे में पनाह ही नहीं देता,अपितु पुत्रवत स्नेह भी देता हैं। 'गुरु जी' कहानी हताशा,संघर्षो और असफलताओं के बीच जीवन की गतिशीलता बनाये रखने के लिये ईश्वरीय आस्था की समर्थन करती हैं। 'सिर्फ इतनी रोशनी' का सौतेला पिता का साधारण व्यक्तित्व मानवीयता से ओत–प्रोत हैं। कहानी के तीनों पात्र मानवीय अनुभूतियों को उभारते हुए सुख को परिभाषित करत हैं। और एक–दूसरे की झोली में अपने दुःख से परे सुख उडेल देने के लिये आतुर रहते हैं। इन तीनों के स्नेह वृत मे मानवीय भावनाएँ सूक्ष्मतः से उभारती हैं। ये अनुपम मानवीय स्नेह तन्तु धर्मगत, जातिगत,सगे–सौतेले की सीमाएँ समाप्त कर देने की क्षमता रखता हैं। 'सुनन्दों की खोली' कहानी महानगर बम्बई में चाल में रहने वाले व्यक्तियों के जीवन,स्थितियों,कुंठित मनोभावों,विवशता,हताशा, अवसाद,निराशा के कारणों पर प्रकाश डालती हैं। ये कहानी मिश्र की अनुभव सीमाओं को तोलती हैं। यानी भारतीय समाज का शायद ही कोई ऐसा कोना ही जो इनके सूक्ष्म आंकनाशक्ति से बच सका हैं। 'आदेश' कहानी में कथात्मक मनोरंजनता होने के साथ–साथ अधिकारियों के प्रतिष्ठा सम्बन्धी बदलते जीवन मूल्यों व परीक्षकों को अपनी लाग–लपेट में ले अंक पाने के पैतरों पर प्रकाश डालती हैं। 'एक बूँद उलझी' कहानी पैंसों को सार्थकता देने वाले पुलिस इंस्पेक्टर की अन्तिम परिणिति को चित्रित करती हैं। गलत तरीके से ऐंठा गया पैसा व जीवन में वरण की गयी आधुनिकता का हिसाब उसे सूद चुकाना पड़ता हैं। अन्त में रिक्तता ही ही, उसके हाथ लगती हैं। कहानी खाली हाथ आये खाली हाथ जायेगे की उक्ति को चरितार्थ करती हैं। और लोभ,लालच और आधुनिकता की परिणितियों को उद्घाटित करती हैं।

कहानी के संवाद और भाषा लेखक की प्रौढ़ साधना के परिचायक हैं। इन कहानियों के मिश्र जी ने दिशा दी हैं तथा एकदम नयी भूमि पर प्रतिष्ठित किया हैं। ये मानवीय सम्बन्धों को नया आयाम देती है, तथा मानवीय रिश्तों को पहचानने परखने के लिये प्रेरित करती हैं। तथा प्रकारांतरसे मानवता की विविधांगी व्याख्या करता हैं। संग्रह

की समस्त कहानियाँ हृदय रस में डूबी हैं। "वैयक्तिक जीवन का उनमें सार हैं। क्योंकि वे सहदयता में मानवीय आदर्श को प्रस्तुत करती हैं।" [1]

कथ्य और शिल्प दोनों रचनाओं को सोद्देश्य बनाते हैं।

उपाध्याय–2–कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धियाँ

मिश्र जी अनवरत रुप से रचना प्रकिया में रत है उनकी ये तत्परता साहित्य के प्रति उनके आस्थावान रहने की हामी भरता हैं। उनके कथा–साहित्य का केन्द्र–बिन्दु मानव है और उनके कथा–साहित्य का मुख्य लक्ष्य मानवीयता। परिवेश जीवन तथा मानव के अर्न्तमन की जटिलता का भयावह,भीषण, वीभत्स अति यथार्थ का रुपांकन भी उनके कथा साहित्य में हुआ हैं, पर इस भयावह यथार्थ से साक्षात्कृत होकर मनुष्य के समस्त व्यक्तित्व का रुपायन तथा मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना की हैं। वर्तमान युग की जटिलताओं के फलस्वरुप विखंडित मूल्यों,आस्थाओं, विश्वासों तथा मानवीय गुणों की निरर्थक धुन्ध से ही संश्लिष्ट रुप में मानव और उसके अस्तित्व व्यक्तित्व की खोंज आर आस्था रिस्ता एवं मानवीयता की पुर्नस्थापना। इनके कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि हैं।

मिश्र जी अपने कथा–साहित्य में आधुनिक नारी जीवन की शिक्षा,स्वतन्त्रता समानता आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों को वर्तमान युग के यथार्थ धरातल पर उतारा तथा नारी की व्यक्तिगत,शारीरिक,मानसिक परिवेशगत समस्याओं को व्यापक अभिव्यक्ति देकर नारी के अस्तित्व को नये सन्दर्भों में अन्वेषित किया इसे एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जाना चाहिए।

कथाकार के रुप में मिश्र जी के पास अपनी एक विशिष्ट जीवन दृष्टि हैं, वे साहित्य को एक विशिष्ट लक्ष्य की दिशा की ओर रुपायित करते हैं उनका कथाकार सामाजिक राजनैतिक आर्थिक,सॉस्कृतिक यथार्थ दृष्टि के आधार पर नवीन उपलब्धियों की ओर अग्रसर होता हैं। वे समाज के अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग मध्यवर्गीय चेतना के राजनैतिक,सामाजिक आर्थिक,सॉस्कृतिक,मनोवैज्ञानिक,दार्शनिक पक्षों को समग्रता के साथ उभारते हैं। मध्यवर्ग की जटिलता संघर्ष, पीड़ा संत्रास परिवारों की टूटन मध्यवर्गीय स्त्री पुरुषों की जटिल मानसिकता टेन्सन इत्यादि संवेदनाशील पहलुओं को नये सन्दर्भ प्रदानकर मध्यवर्गीय जीवन की समस्त संचेतनाओं के आलेख को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करना इनके कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि हैं।

मिश्र जी ने अपने कथा साहित्य में अपनी मातृभूमि बुन्देलखण्ड के एक विशेष अंचल के बहाने सम्पूर्ण समाज में व्याप्त हिंसा, अमानवीय कूरता,विकृत विरुपित तनाव पूर्ण स्थितियों का यथार्थ अंकन किया हैं। हिन्दी कथा साहित्य में बुन्देलखण्ड अंचल की समस्त स्थानगत तथा कालगत विशेषताओं को सूक्ष्मतः के साथ समेटना,सर्जनशील पुट देकर अंचल की वास्तविकताओं की पहचान कराना, अपने विषय, उद्देश्य तथा वातावरण की निर्मिति के लिये महत्वपूर्ण आंचलिक तत्वों को सहेजना तथा उसे अपने अनुभव विश्व

की प्रामाणिकता के साथ चित्रित करके उसे सजीव बना देना एक विशिष्ट उपलब्धि को जन्म देता हैं।

मिश्र जी ने अपने युगीन परिवेश के अनुरुप जीवन और समाज के असंख्य पहलुओं,अनछुए आयामों को आन्तरिक उत्पीड़न की गहरी संवेदनाओं की विस्तृत अनुभूतियों को उपन्यास जैसे विशाल कैनवास पर विविध शैलियों में उभारा तथा कथ्य,उद्देश्य, शिल्प, शैली बिम्बविधान भाषा जैसे मूल्यवान सर्जक तत्वों के नवीन प्रयोग कियें। भाषा की विभिन्न अनछुई विशेषताओं(व्यंग्यात्मकता प्रतीकात्मकता बिम्बात्मकता व्यजंना, संयोजन विस्फोटन) इत्यादि का निर्वाहन इनके कथा साहित्य में हुआ और इन्होंने भाषा, शैली, शिल्प, कथ्य में नवीन कीर्तिमान स्थापित किए। रचना प्रकिया में इस प्रकार की प्रयोगधर्मिता इनके कथा साहित्य की नवीन उपलब्धि कही ज़ा सकती हैं।

मिश्र जी ने स्वतन्त्रता के बाद परिवर्तनशील परिप्रेक्ष्यों में बदलती आम आदमी की सर्वथा नयी भूमिका से आम आदमी की जिन्दगी की पहचान को पुनस्सर्जित करनें में अनुभव,अनुभूति और संवेदना के नव्यतम आयामों का अन्वेषण कर मानव मन की भीतरी तथा उसकी बाहरी अर्थवत्ता को तथा दहशत पैदा करने वाली सच्चाइयों को उदघाटित कर अपनी तीव्र संवेदना चिन्ता तथा प्रचर वैचारिकता का परिचय दिया। साथ ही समय और परिवेश को उसकी वास्तविकताओं के माध्यम से मूर्त और परिभाषित किया और सामाजिक बदलाव की प्रकिया को आगामी इतिहास से जोड़ा। जो अपने आप में एक उपलब्धि हैं।

मिश्र जी का दृष्टिकोण अपने समकालीनों भिन्न हैं जो की विद्रूपताओं, विकृतियों,विसंगतियों के यथार्थ को उभारते हुए अपने पात्रों को परम्परा के स्त्रोत्रों से जोड़ते हैं। प्रेम,प्रकृति,सौन्दर्य मानवता जैसे साश्वत स्त्रोत इनके कथा साहित्य के विषय हैं। जो भारतीय धरातल से ऊर्जा ग्रहण करते हैं मिश्र जी का लक्ष्य बिन्दु भारतीयता के उस अविच्छन्न स्त्रोत्र में हैं जिसकी वापसी संभवतः संस्कृति के पतनोन्मुखी प्रवाह को सुखा दें। गोविन्द जी एक आस्थावान रोमांटिक की तरह अपनी सृजनात्मिका शक्ति को किसी बृहत्तर चेतना के सम्मुख कृष्णर्पण करना चाहते हैं। उनके लिये यह चेतना भारतीयता हैं।[18]

अतः अगर देखा जाए तो एक रचनाकार को दृष्टि से वे वैश्विक मानवता की दुहाई देते है पर रचना के स्तर पर भारतीय
मूल्यों की पुर्नस्थापना में दिलचस्पी है"। [19] जो उनके कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि कहीं जा सकती हैं।

उपध्याय–3–कथा–साहित्य में मिश्र जी का गौरवान्वित स्थानः–

मिश्र जी साहित्यिक आन्दोलनों,मंचों,साहित्यिक राजनीति से अलग अपनी रचना सामर्थ्य के बल पर एक रचनाकार के रुप में अपना दायित्व पूरा करने में अनवरत रुप से लगे हुए हैं। कथा–साहित्य के नाम पर आपने आठ श्रेष्ठ उपन्यास तथा नौ कहानी संग्रहों की रचना की। इनका कथा–साहित्य आधुनिक मानव जीवन और उसके जगत के परिवेश में हो रहे द्रुतगामी परिवर्तनों,बदलती स्थितियों,व्यक्ति की जटिल मानसिक अनुभूतियों तथा बौद्धिक चेतना के सूक्ष्म आयामों को पूरी संश्लिष्टता से उभरता हैं,और समकालीन युग उसके परिवेश के समस्त सामाजिक ,राजनैतिक,पारिवारिक,सांस्कृतिक, धार्मिक परिप्रेक्ष्यों का अत्यन्त प्रभावशाली एवं सर्जनात्मक एवं सर्जनात्मक रुपायन करके उनका यथार्थ एवं प्रामाणिक दस्तावेज भी प्रस्तुत करता हैं।

आधुनिक कथाकारों में मिश्र जी एक आधार स्तम्भ के रुप में प्रतिष्ठित हैं। इनके सम्बन्ध में विभिन्न श्रेष्ठ साहित्यकारों ने अपनी भिन्न टिप्पणियॉ देकर इन्हें उच्च श्रेणी के रचनाकारों के बीच अधिष्ठित किया हैं।

नरेश मेहता जी लिखते है→ ''आपके विविध लेखन को ठीक तरह से पहली बार जाना। आपने अपने आधारभूत निसर्ग–व्यक्तित्व को अपनी सर्जनात्मकता में जितने सहज रुप में अभिव्यक्त किया है वह स्पृहणीय हैं। प्रायः तो अधिकांश लेखकों की सर्जनात्मकता पर सहरातीपन तथा आधुनिकता का इतना ज्यादा रंग–रोगन चढ़ा मिलता है कि खोदने पर भी आदमी कहीं नहीं मिलता। इसके अलावा लेखन को कहने के स्तर पर खड़ा कर देने से व्यक्तियों,स्थितियों, और परिवेश का रवांटीपन ऐसी विश्वसनीय सुगन्ध देता है कि रचना प्रतिसृष्टि न रहकर स्वयं सृष्टि बन जाती हैं। सच,पढ़कर आपसे कुछ अधिक ही आत्मीयता अनुभव होती हैं।'' [20]

मिश्र जी के लेखन में प्रौढ़ता तथा संभावनाओं का आभास न पाकर शैलेश मटियानी इनकी तुलना प्रेमचन्द्र से करते हुए लिखते है'' कि जमीन,विरासत और परम्परागत मूल्यबोध से लगाव के मामाले में गोविन्द मिश्र में बहुत कुछ ऐसा हैं जो जैनेन्द्र,अज्ञेय या निर्मल वर्मा की जगह प्रेमचन्द्र की याद ज्यादा दिलाता हैं क्योंकि गोविन्द जिस दक्षता से मनोजगत,वैसे ही जमीन में उपस्थित को भी कहानियों में बॉधते हैं।''

''गोविन्द मिश्र अपनी पीढ़ी के शायद सबसे महत्वपूर्ण कहानीकार हैं,क्योंकि भाषा और कथ्य,दोनों धरातलों पर उनके यहॉ अपेक्षाकृत ज्यादा विस्तार हैं। बल्कि कहना तो यहॉ तक चाहूँगा कि अपनी पीढ़ी में भाषा और संवेदना के स्तर पर प्रेमचन्द्र के सबसे निकट गोविन्द दिखायी पड़ते हैं।''(21)

मिश्र जी की कहानियाँ सही कहानी के रचनात्मक आधार का एक मानव उपस्थित करती हैं इनकी कहानियों के विषय में मधु कांकरिया लिखते है कि "आपके कुछेक चुनिन्दा कहानियों को मैंने डूब–डूब कर पढ़ा है और इस हद तक उद्वेलित हुई है कि फिर सामान्य होने के कुछ समय लग गया।

एक अजीब किस्म की बौनापन को अनुभूति ने जैसे मुझको दबाया और साथ ही साथ यह अहसास भी गहराया कि लेखन हो तो ऐसा हों। आपके लेखन के लिये क्या लिखूँ?....... एक आस्था सी जगाता हैं।किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह से मुक्त एक किस्म एक रस–आनन्द देता लेखन।[22]

मिश्र जी की रचनाओं में उनके जीवन विषयक अनुभव और उस अनुभूति की अभिव्यक्ति अत्यन्त गहनता,प्रखरता एवं तटस्थता के साथ हुई,साहित्य में कथ्य की गहनता,संवेदना की व्यापकता शिल्प शैली की गतिमानता, अनुभूति की तीव्रता के कारण इन्होनें अपनी अलग पहचान बनायी। इस सम्बन्ध में रवीन्द्र नाथ त्यागी जी लिखते है कि आपके स्वर, शैली–थीम सब कुछ इतना अलग है कि अपने समकालीन कथा–कारो में आपके अलग से पहचाना जा सकता है मेरे विचार में यह स्वयं में ही एक विशिष्ट उपलब्धि हैं। मुझे पूरी आशा है कि आपकी साहित्य साधना आपको अमर करेगी।"[23]

आप उपन्यासकार के रुप में काफी सराहे गये। इनके श्रेष्ठ उपन्यास 'लाल पीली जमीन' की सराहना करते हुए डॉ लक्ष्मी नारायण लाल जी लिखते है कि " गोविन्द मिश्र में मुझे बड़े उपन्यासकार की क्षमता दिखायी देती हैं...... उनमें एक मस्ती हैं,निर्भरता का तत्व.... जो उपन्यासकार का एक बहुत बड़ा गुण हैं जो हमारे यहाँ पहले अमृत लाल नागर में बहुत अच्छे ढंग से आया था और भगवती बाबू के कुछ उपन्यासों में भी आया हैं। कोई चिन्ता नहीं अंकन ठीक हो रहा है या नहीं,गोविन्द मिश्र कहीं पतंग उड़ा रहे है तीतर बाजी कर रहे.... गुल्ली डंडा खेल रहे है...... नग धडंग धूम रहे हैं.... यह जो मिट्टी हैं.....हवा.....धूल......पूरा का पूरा माहौल उन्होंने इस उपन्यास में पकड़ा हैं।"[24]

आधुनिक नारी मन की आधुनिक जिजीविषा, जटिलताओं सूक्ष्म मनोविकारों और उसके व्यक्तित्व के अनुछुए आयामों को उभारने वाले उपन्यास 'तुम्हारी रोशनी में' की सराहना करते हुए बटरोही जी लिखते है कि अपने दौर की संवेदना के अनुरुप जो काम यशपाल ने 'दिव्या' के जरिए,शरत ने 'शेषप्रश्न' जैनेन्द्र ने 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' के माध्यम से किया, बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध की संवेदना को 'तुम्हारी रोशनी' में उपन्यास बड़े ही यथार्थ और रचनात्मक ढंग से उजागर करता हैं।"[25]

व्यास सम्मान से सम्मानित इनके सर्व श्रेष्ठ उपन्यास 'पॉच ऑगनों वाला घर' के विषय में सूर्यबाला जी लिखती है कि गुजरे दशकों के संवेदनात्मक क्षरण के इतिहास को आपने अपनी विशिष्ट किन्तु सहज मार्मिकता से बूँद–बूँद सहेजा हैं। यों तो यह तरल

संवेदन आपकी रचनाओं में सदैव प्रवाहित रहा हैं किन्तु पहले(धीरे समीरे–तुम्हारी रोशनी में.....) की कृतियों में यह ज्यादा विशिष्ट,गूढ़ चिन्तन और थोड़ी पेचीदगी से भरी, दर्शन से आप्लावित,कलात्मक तलाश के साथ सामने आया हैं...... प्रेम के भी अत्यन्त जटिल रेशे–दर रेशे उकेरने वाले विश्लेषण,चिन्तन........मानसिक खुराक देने की दृष्टि से वह भी उतना ही महत्वपूर्ण, लेकिन 'पॉच ऑगनों वाला घर' को पढकर ऐसा लगा जैसे दुर्गम घाटियों के बीच टेढ़े–मेढ़े घुमावों के बीच बहती धारा जैसे अनायास निर्बाध झरने के रुप में फूट पड़ी हो। विश्लेषण यहॉ भी दर्शन भी, लेकिन इतना सहज कि हर कोई समेट ले।"(26)

मिश्र जी के कथासाहित्य में समकालीन युग की समस्त चेतना,संवेदना की झॉकी देखी जा सकती हैं। साहित्यकार के रुप में जिस प्रकार इनकी शिखर–उपलब्धियॉ चकाचौध करती है उसी प्रकार आपका साधारण परन्तु प्रभावशाली व्यक्तित्व लोगों के मन में आस्था का भाव जागृत करता है इस सन्दर्भ में रामकमल राय जी लिखते है कि "आप मुझे बेहद अच्छे लगे,ऐसा लिखूॅ तो आपको असुविधा तो नहीं लगेगी? हॉ सचमुच। जिसे अपना अभिन्नतम कोना पूरे आश्वस्ति भाव से अर्पित किया जा सके ऐसा। लेखक के रुप में तो आप पहले से ही अच्छे लगते थें। व्यक्ति रुप में जिस अल्हड़ मस्ती और बेबाकी के साथ आपको पाया,जैसे एक उपलब्धि लगे।"(27)

अपने समकालीनों से और विशेष रुप से आन्दोलन धर्मा कहानी से मिश्र जी का लेखन भिन्न रहा। जहॉ अधिकांश समकालीन लेखकों ने अपने लेखकीय स्वातंत्रय और वैशिष्ट्य के आधार पर अपने लेखन में विशिष्ट कलात्मक रचाव और असन्तोष विद्रोह तथा नकार के स्वर बुलन्द किये वही मिश्र जी ने अपने लेखन में युगीन यथार्थ की उपस्थिति के साथ–साथ टूटे हुए मानवीय–मूल्यों के बीच नये व्यक्तित्व की खोज, आस्था,रिश्ता एवं मानवीयता की पुर्नस्थापना की जिससे कथा–साहित्य में उनकी प्रौढ़ता गरिमा, महिमा में श्रीवृद्धि हुई और वे वर्तमान कथा साहित्य में उच्च शिखर पर अधिष्ठित हुए।

1. श्याम अधिकारी ' चेहरा': सूक्ष्म स्थितियों और बारिकीयत का उपन्यास (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 70

2 (डा0) विनय 'उतरती हुई धूप': स्वप्न भंग का यथार्थ (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 86

3.(स्व0) सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, 'लाल पीली जमीन' : रास्ते की खोज पर कदम (सपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 87

4. (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम' पृ0 94

5 (डॉ0) परमानन्द श्रीवास्तव हिंसा की 'लाल पील जमीन' (संपा0). चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' सृजन के आयाम' पृ0 107

6. मधुरेश 'तुम्हारी रोशनी मे' रोशनी में एक सम्पन्न यात्रा (संपा0) चन्द्रकान्त बादिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' (संपा0) पृ0 158

7. (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 194

8. नन्द किशोर मित्तल 'धीरे समीरे' ब्रज यात्रा या कि जीवन यात्रा' (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' पृ0 185

9. राम जी तिवारी 'सृजन यात्रा गोविन्द मिश्र (संपा0)उर्मिला शिरीष पृ0 75

10. निर्मल वर्मा 'अन्तःपुर की कहानियां (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' पृ0 253

11 सुधीर चन्द 'धॉसू': मानवीय सम्बन्धों की अवमूल्यन की कहानियां (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 259

12. विमल लाठ 'गोविन्द मिश्र' की कहानियों में नाटकीय तत्व' (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 238

13.. (डा0) पुष्पपाल सिंह 'खुद के खिलाफ' कहानी में मूल टूटने का दर्द ,(संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 262

14. चिन्तरंजन मिश्र'खांक इतिहास': मानवीय आस्था का संसार (संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' पृ0 269

15. शैलेश मटियानी 'कहानी लिखने का सिद्धान्त और गोविन्द मिश्र की कहानियॉ', (संपा0) चन्द्रकान्त बाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम' पृ0 217

16. डॉ0 माधुरी छेड़ा गोविन्द मिश्र की कहानियों में उर्ध्वगामी चेतना (सपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र' 'सृजन के आयाम' पृ0 227

17. गोविन्द प्रसाद सिंह' 'पगला बाबा': हृदय के रस में डूबी कहानियॉ','(संपा0) चन्द्रकान्त वाडिवडेकर 'गोविन्द मिश्र 'सृजन के आयाम' पृ0 286

18.(डॉ0) भगवान दास ' गोविन्द मिश्र जी रचनाशीलता' (संपा0)चन्द्रकान्त वाडिवडेकर,गोविन्द मिश्र सृजन के आयाम पृ0 31
19.वही पृ0 16
20 (डा0)उर्मिला शिरीष,'सृजन यात्रा': गोविन्द मिश्र,मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति भोपाल, प्रथम संस्क 2000 पृ0 139

21उर्मिला शिरीष,सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र,मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति भोपाल, प्रथम संस्क 2000 पृ0 55
22 उर्मिला शिरीष,सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र,मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति भोपाल, प्रथम संस्क 2000 पृ0 140
23र्मिला शिरीष,सृजन यात्राः गोविन्द मिश्र,मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति भोपाल, प्रथम संस्क 2000 पृ0 140
24.वही पृ0 142
25.वही पृ0 144
26. डॉ उर्मिला शिरीष, सृजन यात्रा, गोविन्द मिश्र पृ0 147
27. डॉ उर्मिला शिरीष, सृजन यात्रा, गोविन्द मिश्र पृ0 140

शोध सकंलन हेतु साक्षात्कार गोविन्द मिश्र से

प्रश्न 1– आज के उपन्यास और कहानियों की रचना प्रकिया में अनुभूतियॉ कहॉ कारगर सिद्व होती है? क्या आप अनुभूतियों को रचना प्रकिया का महत्वपूर्ण तत्व मानते हैं?

उत्तर– अनुभव के सत्व को जो अनुभव के पीछे संवेदना से हिल्गी रह जाती है,उसे अनुभूति कह सकते हैं। चूंकि आधुनिक लेखन कोरी कल्पना की बजाय यथार्थ को अपना आधार बनाता है,इसलिए आज अनुभूति की उपादेयता और भी अंसदिग्ध हैं। बिना उसके लेखन संभव नहीं। जिन लेखकों की रचनात्मकता चुक जाती है,उनमें अनुभूतियों का भाप की तरह उड़ जाना ढूँढ़ा जा सकता है माने या तो अनुभवों की आवाजाही समाप्त हो गयी या संवेदना जो अनुभवों से अनुभूति बनाती थी वह सूख गयी।

प्रश्न 2–आपकी रचनाओं के पीछे आपका विशिष्ट लक्ष्य बिन्दु क्या होता हैं?

उत्तर–लक्ष्य जैसा कुछ नहीं होता। अगर कोई ढूंढ़ना ही हो तो कह सकते हैं– जीवन को कागज़ पर उतारना,जीवन की पुर्नस्रष्टि ....और ...कोई तरकीब ढूंढ़ना...माने कागज़ पर उतरे जीवन की व्याख्या भी करना।

प्रश्न 3– क्या आप मानते हैं, कि नयी औपान्यासिक रचना प्रकिया के दौर में भाषा को एक मूल्यवान सर्जक तत्व के रुप में परखकर किसी भी उपन्यास का मूल्यांकन करना चाहियें?

उत्तर–भाषा तो मुख्य चीज़ हैं। आज उपन्यास–लेखन का कोई बना बनाया सांचा नहीं हैं, हर उपन्यासकार अपने नये उपन्यास में पुराने ढांचों को तोड़ने,उनसे बाहर निकलने की कोशिश करता हैं। ऐसे में भाषा उसकी प्रयोगात्मकता का सबसे बड़ा आधार बनाती हैं– सर्जनात्मक आधार। शिल्प आदि के प्रयोग में सायासता होती है तो सर्जनात्मकता बह जाती हैं। भाषा अनायास आती हैं....इसलिए सचमुच का सर्जनात्मक प्रयोग उसी के माध्यम से होता हैं।

प्रश्न 4– आज के परिवेश और सामाजिक स्थितियों ने व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया को कहॉ तक विकसित अथवा अवरुद्ध किया हैं। मनुष्य के समस्त व्यक्तित्व का रुपायन व मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना के लिए आप कथा साहित्य में किस प्रकार के पात्रों का सृजन करते हैं?

उत्तर–व्यक्तित्व रहा ही कहां। परिवेश और सामाजिक स्थितियों में हमारी वैयक्तियता को इस कदर धो डाला हैं कि हर आदमी एक जैसा दिखता है... उसका आचरण,उसकी सोच...सब एक ही तरह का मरियल। आज के आदमी की इस मरियल तस्वीर से उचटकर ही शायद मैं बार बार पुरानी पीढ़ी के पात्रों की स्रष्टि में जाता रहा हूॅ। 'पॉच ऑगनों वाला घर' या कि 'धीरे समीरे' या 'हुजूर दरबार' में आज के पात्रों के बर–अक्स

पुरानी पीढ़ी के लोग भी आये है कि पाठक उन्हें आमने सामने रखकर स्वयं अनुमान लगा लें। इसी द्वन्द्व से मानवीय मूल्यों की स्रष्टि हुई हैं।

प्रश्न 5– आप पाश्चात्य जीवन दर्शन व विविध साहित्य प्रणालियों से कहॉ तक प्रभावित रहे?और किन–किन पाश्चात्य साहित्यकारों का प्रभाव आपके लेखन पर पड़ा?

उत्तर– मैंने अंग्रेजी में एम0ए0 किया था,1959 में। तब से और उसके बाद की पढ़ाई,भ्रमण आदि से पश्चिम के जीवन को काफी करीब से देखता चला आया हूँ। वहॉ की जीवन शैली जीवन दर्शन से अभिभूत कभी नहीं हुआ जितना कि अपने देश की इन चीजों से हुआ। इसी तरह पाश्चात्य साहित्य का प्रशंसक रहा...जैसे उनके क्लासिक्स, रुसी उपन्यासकार, आधुनिक साहित्य की प्रयोगधर्मिता आदि से..... लेकिन अपने लेखन में कभी उनसे प्रभावित हुआ–ऐसा कभी नहीं हो सका। उल्टे भारतीय जीवन दर्शन ही इस तरह या उस तरह मेरी रचनाओं में आता रहा है.....तब भी जब विदेशी परिवेश मेरी कहानियों या यात्रावृन्तों में चित्रित हो रहा था।

मैं जानबूझ कर इस शिल्प या उस शिल्प, यह साहित्य आलोचन या वह,यह विचारधारा या वह ..... इनके तहत नहीं लिखता। हर रचना मेरे भीतर से मुक्त हो निकलती है...... वह कौन से वाद या शिल्प या विचारधारा के तहत व्याख्यायित होती है– यह काम मैं आलोचकों पर छोड़ता हूँ.... पर मुझे आधार लगता है अगर लोग यह कहें कि मेरी रचना बाहर के उन घेरों के पार सिर्फ मुझसे जुड़ती है......क्योंकि अन्ततः उस रचना का अक्स तो मैं ही हूँ।

प्रश्न 6– क्या आधुनिक नारी के मन की जिजीविषा, उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को उभारने के लिए या उसके अर्न्तमन में छिपे अंसख्य भावों को उकरने के लिए विभिन्न पुरुषों का सानिध्य,आवश्यक है?जैसा कि आपने 'तुम्हारी रोशनी में' उपन्यास में दर्शाया हैं।

उत्तर– पुरुषों का सानिध्य नहीं ......उस व्यक्ति का सानिध्य जिससे आपको लगाव होता हैं। साधारणतः स्त्री के लिए एक विशेष पुरुष और पुरुष के लिए एक विशेष नारी। हम उसी से खुलते है, जो हमारा आत्मीय हैं, हमारे बहुत निकट हैं। वह व्यक्ति समलैंगिक भी हो सकता हैं।सुवर्णा सोचती है कि उसे अपने हर दोस्त से कुछ न कुछ मिलता है,वे उसके व्यक्तित्व में कुछ न कुछ जोड़ते है.....लेकिन अपनी उधेड़ बुने, कशमकश की हिस्सेदारी वह एक अनन्त से ही कर पाती हैं।

प्रश्न 7– कहानी के नाम पर होने वाले आन्दोलनों ने आपको कहॉ तक प्रभावित किया?

उत्तर– बिल्कुल नहीं। नयी कहानी नाम से आन्दोलन कुछ उन्हीं लोगों ने चलाया जो अपनी तरफ ध्यान खींचना चाहते थें..... वर्ना कहानी लेखन में थोड़ा बहुत बदलाव हर

नयी पीढ़ी के साथ आता हैं....और वह भी बहुत ही स्वाभाविक रुप से क्रमशः.....उतना बेआवाज कि लेखकों को पता नहीं चलता।

प्रश्न 8– साहित्य के क्षेत्र में आपने बहुआयामी सफलता प्राप्त की आपको प्रतिष्ठित 'व्यास सम्मान' से सम्मानित किया गया हैं। क्या ऐसी सफलता आपको अपने पारिवारिक जीवन में भी मिली हैं?

उत्तर– नहीं।

प्रश्न 9– आपकी दृष्टि में किसी कृति की श्रेष्ठता का मानदंड क्या हैं?

उत्तर– एक ऐसी कृति जो एक बार नहीं बारबार पढ़ी जाय और हर बार उसमें नये अर्थ मिलें। जैनेन्द्र जी कहा करते थे– जो हमें हमारे मनतव्यों से विलग कर अपने में डुबों लें। जो मन और मस्तिष्क दोनों को तृप्ति दें।

प्रश्न 10– 'पगला बाबा' कहानी संग्रह में आपने मानवीय मूल्यों एवं आदर्शो के पुर्नस्थापन का प्रयास किया हैं। आलोचकों ने इन्हीं कहानियों के सन्दर्भ में आप पर जो आदर्शवाद की चिप्पी लगायी है इससे आप कहॉ तक सहमत हैं?

उत्तर– यह आदर्शवाद नहीं हैं। आदर्शवाद माने तो यथार्थ की एक काल्पनिक स्थिति जिस तक शायद ही कभी पहुँचा जा सकें। 'पगला बाबा' की कहानियों में यथार्थ का एक वह पक्ष भी हैं जो सुन्दर हैं.... वह भी यथार्थ हैं, यों कि जीवन का हिस्सा जैसे कि कुरुप यथार्थ ही। लेखक ने उसकी तरफ भी नजर रखी क्योंकि वह जीवन में आस्था को गहराता हैं। उदाहरण के लिए 'पगला बाबा' कहानी ही.... जहॉ पगला बाबा मन्दिर में पूजा को ओट करते हुए लावारिस लाशों को उठाने वाले अपने कर्म की तरफ दौड़ जाते हैं। यह वह चीज़ हैं जो सुन्दर है। सुन्दरता माने सिर्फ स्त्री की सुन्दरता नहीं होती।

प्रश्न 11– क्या आप मानते है कि परम्परा और आधुनिकता का एक अटूट क्रम है और परम्परा से ही आधुनिकता का विकास हो सकता हैं?

उत्तर– हॉ यह सही है कि किसी परिवेश में वही आधुनिकता स्वीकृत हो सकती है, जो उसकी परम्परा से निकली हों। कही की कहीं लादी हुई आधुनिकता थोड़ी देर की चकाचौंध कर लुप्त हो जाती हैं, बेशक परम्परा का आधुनिकता तक विकसित होना एक बहुत धीमा,करीब–करीब अदृश्य– सा सिलसिला होता हैं। उसे बहुत प्रतिभावान लेखक या समाजशास्त्री ही पकड़ पाते हैं।

प्रश्न 12– आपकी किस रचना ने आपको सबसे ज्यादा सन्तुष्ट किया या किस कृति में आप अपने को पूरी तरह से अभिव्यक्त कर पाये?

उत्तर– कहना मुश्किल हैं।कुछ न कुछ छूट जाता है हर रचना में,उसी से तो फिर अगली रचना की–शुरुआत होती हैं। इसी तरह संतुष्ट भी किसी से नहीं हो पाया।

प्रश्न 13– आजकल साहित्यिक पुस्तकों का मूल्य बहुत ज्यादा होता हैं इससे आम पाठक तक में पुस्तकें नहीं पहुँच पाती हैं अतः साहित्य को जो विस्तार मिलना चाहिए,वह नहीं मिल पाता है उस सन्दर्भ में आपका क्या कहना हैं?

उत्तर– सही हैं।कुछ ऐसे प्रकाशक निकलें जो पुस्तकों की थोक खरीद पर निर्भर होने की बजाय उन्हें पेपर बैक या सस्ती कीमतों पर निकाल उन्हें पाठकों तक व्यक्तिगत पहुंचाने का बीड़ा उठायें.... तब बात बनेगी।

प्रश्न 14– साहित्य को किसी वाद में सिमटाना क्या साहित्य की गरिमा नष्ट करना नहीं हैं?

उत्तर– हॉ बिलकुल। साहित्य जिसका सरोकार भौगोलिक सीमाओं के बाद मनुष्य और ब्रह्मांड हैं, उसे किसी वाद में कैसे किया जा सकता हैं।